ekuuh; çdk'k rkfr ;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t ;k jk;] U;k;efr

न्यायालय स्वयं अपने प्रस्ताव पर

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (PIL) No. 7239 of 2012. Decided on 6th December, 2012.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—पी॰ आई॰ एल॰–बिजली की आपूर्ति–जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ के कर्मचारियों की हड़ताल जिसका परिणाम बिजली की आपूर्ति नहीं होने में हुआ–बिजली की आपूर्ति में बाधा का परिणाम झारखंड राज्य के अनेक भागों में जलापूर्ति में भी बाधा हो सकता है–बिजली की आपूर्ति नहीं होने के कारण डॉक्टर अस्पतालों में काम नहीं कर सकते है और मरीजों की मृत्यु हो सकती है–राज्य सरकार, मुख्य सचिव और जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ के अध्यक्ष को तुरन्त उपचारी उपायों को करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 2 से 4)

अधिवक्तागण.–Mr. Rajeev Kumar, For the Petitioner; None, For the Respondent

आदेश

विद्वान अधिवक्ता श्री राजीव कुमार ने निवेदन किया कि झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड (संक्षेप में 'जे॰ एस॰ ई॰ बी॰') के कर्मचारियों ने हड़ताल घोषित किया है और उस कारण से झारखंड राज्य के राजधानी सहित कुछ क्षेत्रों में बिजली की आपूर्ति नहीं है।

2. इस प्रभाव का समाचार अनेक समाचार पत्रों में प्रकाशित किया गया है जिसकी प्रति हमें दिखायी गयी है। मामले पर गंभीर विचार की आवश्यकता है कि क्या ऐसी अपरिहार्य सेवा जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ यूनियन के हड़ताल पर जाने के निर्णय पर निर्भर करती है। हम यहाँ स्मरण कर सकते हैं कि पहले कुछ डॉक्टर हड़ताल पर गए थे और अनेक समाचार पत्रों में रिपोर्ट किया गया था कि अनेक मरीजों की मृत्यु हो गयी थी। एक अन्य मामले में, आर॰ आई॰ एन॰ पी॰ ए॰ एस॰ के कर्मचारियों द्वारा हड़ताल की गयी थी और उस मामले में भी न्यायालय ने संज्ञान लिया और जनहित याचिका दर्ज किया।

3. यदि अस्पतालों में डॉक्टर उपलब्ध हैं और सुविधाएँ उपलब्ध हैं जो सामान्य अस्पताल, निजी अस्पताल अथवा आर॰ आई॰ एन॰ पी॰ ए॰ एस॰ जैसे अस्पताल में हो सकती हैं, फिर भी बिजली की गैर-आपूर्ति के कारण वे काम करने में सक्षम नहीं हो सकते हैं। केवल यही नहीं, ये बिजली की आपूर्ति न्यायालय के कामों में भी समस्या सृजित कर सकती है। बिजली की आपूर्ति में इस बाधा का परिणाम झारखंड राज्य के अनेक भागों में जलापूर्ति में बाधा हो सकता है।

4. अत:, जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ के यूनियन से किसी प्रत्युत्तर की प्रतीक्षा किए बिना हम राज्य सरकार और मुख्य सचिव, झारखंड राज्य तथा जे॰ एस॰ ई॰ बी॰, विशेषत: जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ के अध्यक्ष को तुरन्त उपचारी उपाय करने का निर्देश दे रहे हैं। विद्वान महाधिवक्ता से न्यायालय की सहायता करने का अनुरोध किया जाता है और कार्यालय को मामले को पहले मामले के रूप में सूची के शीर्ष पर कल अर्थात् दिनांक 7 दिसंबर, 2012 को सूचीबद्ध करने का निर्देश दिया जाता है।

5. इस आदेश की प्रति विद्वान अधिवक्ता, जो न्यायमित्र के रूप में न्यायालय की सहायता करेंगे, को दी जा सकती है। इस आदेश की प्रति मुख्य सचिव, झारखंड राज्य; अध्यक्ष, जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ और जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ के यूनियन को भी भेजी जा सकती है और यदि जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ का एक से अधिक

यूनियन है, उन पर भी आदेश की प्रति तामील की जा सकती है। समाचार पत्रों की प्रति को अभिलेख पर लिया जाता है।

6. सूची के शीर्ष पर दिनांक 7 दिसंबर, 2012 को मामला रखा जाए।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o ç'kkUr dekj] U;k;efrx.k

बालगोविंद तिर्की उर्फ बालगोविन्द ओराँव एवं अन्य (707 में)

बंधाना मुंडा एवं अन्य (800 में)

चिता देवी एवं अन्य (810 में)

cuke

झारखंड राज्य (सभी में)

Cr. Appeal (DB) Nos. 707, 800 with 810 of 2012. Decided on 6th November, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—दंडादेश का निलंबन–हत्या के लिए दोषसिद्धि–मृतक का शरीर किसी के द्वारा नहीं पहचाना गया–गवाहों द्वारा भिन्न साक्ष्य दिए गए–कुछ गवाहों ने कथन किया कि मृतक को आग लगाया गया था जबकि कुछ अन्य गवाहों ने कहा कि अस्थियों पर रक्त था–अपीलार्थीगण को अधिनिर्णीत दंडादेश 15000/- रुपया के जमानत बंध पत्र के निष्पादन पर निलंबित किया गया। (पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.–Mr. A.S. Dayal (in all cases), For the Appellants; M/s. D.K. Chakraberty (in 707), Pankaj Kumar, APP (in 800), S.S. Prasad, APP (in 810), For the State; Mr. A.K. Chaturvedi, Mr. Zaid Ahmad, For the Informant.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति के मुताबिक.–इन तीनों अपीलों में से दो को अर्थात् दांडिक अपील सं॰ 707 वर्ष 2012 और दांडिक अपील सं॰ 800 वर्ष 2012 को पहले ही ग्रहण किया जा चुका है। ये तीनों अपीलें एस॰ टी॰ सं॰ 446 वर्ष 2005 में न्यायिक कमिश्नर-II खूँटी द्वारा पारित दोषसिद्धि के एक ही निर्णय और दंडादेश से उद्भूत होती है। दंडादेश का आदेश दिनांक 22 मई, 2012 का है। दांडिक अपील सं॰ 810 वर्ष 2012 को भी ग्रहण किया गया है।

2. सत्र विचारण सं॰ 446 वर्ष 2005 के अभिलेख और कार्यवाही पहले ही इस न्यायालय द्वारा प्राप्त की गयी है।

3. हमने दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता और सूचक के अधिवक्ता को सुना है। अपीलार्थीगण के अधिवक्ता ने विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए मुख्यत: इस आधार पर तर्क किया है कि अ॰ सा॰ 2 को छोड़कर अधिकांश गवाह, जिनका परीक्षण किया गया है, मृतक के संबंधी हैं और अभियोजन विवरण में अनेक असंगतियाँ है जो मुख्य लोपों, विरोधाभासों और सुधारों के तुल्य है। अपीलार्थीगण के अधिवक्ता ने विस्तारपूर्वक मामले पर तर्क किया है किंतु इतना इंगित करना पर्याप्त है कि अ॰ सा॰ 2 और 5 के अभिसाक्ष्य को देखते हुए प्रतीत होता है कि मृतक के विरुद्ध मूल अभियुक्त सं॰ 1 अर्थात् बालगोविंद तिर्की द्वारा कुछ परिवाद दाखिल किए गए थे जिसे सक्षम विचारण न्यायालय द्वारा दंडित किया गया था। इसके अतिरिक्त, मृत शरीर दिनांक 26.2.2005 को पाया गया था और घटना दिनांक 20.2.2005 को दोपहर लगभग 3 बजे हुई थी। अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह प्रतिवाद भी किया गया है कि न तो किसी के द्वारा मृतक के मृत शरीर की पहचान की गयी है और न ही अन्वेषण

अधिकारी के साक्ष्य में यह आया है। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 4 और अन्य गवाहों ने कथन किया है कि अभियुक्तगण द्वारा मृतक को जलाया गया था जबकि अन्य गवाह कह रहे हैं कि मृतक, जो डाक विभाग में कार्यरत था, के पोशाक पर खून था और इसे सही सलामत पाया गया था। इस प्रकार, यदि मृत शरीर को जलाया गया था, मृतक के पोशाक की शिनाख्त का प्रश्न ही नहीं है और मृत्यु समीक्षा पंचनामा को देखते हुए, जो प्रदर्श 6 है, घटनास्थल अथवा जहाँ से मृत शरीर को पाया गया था, के निकट पोशाक अथवा पोशाक का भाग नहीं पाया गया था। कमीज का रंग बिल्कुल भिन्न है जैसा मृत्यु समीक्षा पंचनामा में कथन किया गया है। इस प्रकार, संपूर्ण साक्ष्य को देखते हुए, विश्वास उत्पन्न नहीं होता है जैसा अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है और इसके अलावा उन्होंने यह निवेदन भी किया है कि व्यक्तिगत दुश्मनी के कारण प्राथमिकी में अभियुक्तगण को नामित किया गया है। कुल मिलाकर 34 व्यक्ति थे जिन्हें नामित किया गया था जबकि आरोप-पत्र केवल 14 व्यक्तियों के विरुद्ध दाखिल किया गया था और अपीलार्थीगण के अधिवक्ता द्वारा यह भी निवेदन किया गया है कि ये समस्त अभियुक्तगण विचारण के दौरान जमानत पर थे और वे सदैव न्यायालय में उपस्थित रहे हैं जब और जैसे ही उनकी उपस्थिति आवश्यक थी। अत: इन दांडिक अपीलों के लंबित रहने के दौरान दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 389 के अधीन दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश को निलंबित किया जा सकता है।

4. हमने राज्य के ए॰ पी॰ पी॰ और सूचक के अधिवक्ता को भी सुना है जिन्होंने जोरदार निवेदन किया कि घटना दिनांक 20.2.2005 को दोपहर लगभग 3 बजे हुई थी। प्राथमिकी दिनांक 21.2.2005 को दाखिल की गयी थी। अपीलार्थीगण-अभियुक्तगण को प्राथमिकी में नामित किया गया था कि वे मृतक को उसके घर के बाहर खींचकर ले गए और अंतत: उसकी हत्या कर दी। मृत शरीर दिनांक 26.2.2005 को पाया गया था। मृतक डाक विभाग में काम कर रहा था और उसे उसकी पोशाक से पहचाना गया था। समस्त अभियोजन गवाहों ने स्पष्टत: अभियुक्त अपीलार्थीगण द्वारा निभायी गयी भूमिका का कथन किया और इसलिए इन अभियुक्त अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध करने में विद्वान विचारण न्यायालय ने कोई गलती नहीं की, अत: दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 389 के अधीन शक्ति के प्रयोग में इस न्यायालय द्वारा दंडादेश निलंबित नहीं किया जा सकता है।

5. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख पर साक्ष्यों को देखते हुए इन दांडिक अपीलों में इन अपीलार्थीगण के पक्ष में प्रथम दृष्टया मामला है। चूँकि दांडिक अपीलें लंबित हैं, हम अभिलेख पर साक्ष्यों का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष अभियोजन गवाहों के साक्ष्यों को देखते हुए; कुछ गवाहों ने कथन किया कि मृतक को आग लगाया गया था जबकि अन्य गवाह कह रहे हैं कि अस्थियों पर रक्त था जिन्हें दिनांक 26.2.2005 को पाया गया था। अभियोजन गवाहों के साक्ष्य से यह भी सामने आ रहा है कि मृतक की पोशाक मृत शरीर के निकट पड़ी हुई थी जिसे अन्वेषण अधिकारी द्वारा पाया गया था किंतु मृत्यु समीक्षा पंचनामा जो प्रदर्श 6 है को देखते हुए जली हुई अथवा किसी अन्य दशा में पोशाक के प्रति कोई निर्देश नहीं है। नीले रंग की कमीज के प्रति निर्देश है जो डाक विभाग की पोशाक का रंग नहीं है। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 2 और 5 के अभिसाक्ष्य को देखते हुए प्रतीत होता है कि मूल अभियुक्त सं॰ 1 बालगोविंद तिर्की ने कुछ परिवाद दाखिल किया था और सक्षम विचारण न्यायालय द्वारा मृतक को दंडित किया गया था, इस प्रकार मूल अभियुक्त सं॰ 1 और मृतक के बीच बैरपूर्ण संबंध है। इसके अतिरिक्त, अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य को देखते हुए किसी ने मृतक के मृत शरीर का पहचान नहीं किया है। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 9 द्वारा दिनांक 3.4.2005 को और दिनांक 17.5.2005 को शव परीक्षण किया गया था जबकि मृत शरीर दिनांक 26.2.2005 को पाया गया था। अभिलेख पर संपूर्ण साक्ष्य को देखते हुए

हमारा मत है कि अपीलार्थीगण के पक्ष में प्रथम दृष्टया मामला है। चूँकि दांडिक अपीलें लंबित हैं, हम अपीलार्थीगण द्वारा प्रचारित तर्कों पर विचार नहीं कर रहे हैं।

6. अत:, हम वर्तमान दांडिक अपीलों के लंबित रहने के दौरान विचारण न्यायालय/न्यायिक आयुक्त-II खूँटी की संतुष्टि के प्रति एवं समान राशि की दो प्रतिभूतियों के साथ इन तीनों दांडिक अपीलों में से प्रत्येक के अपीलार्थी द्वारा 15,000/- रुपयों के जमानत बंध-पत्र के निष्पादन पर और इस शर्त पर कि जब और जैसे ही उनकी उपस्थिति की आवश्यकता होगी, वे इस न्यायालय में उपलब्ध होंगे और इस शर्त पर भी कि वे इस न्यायालय की अनुमति के बिना अपना आवासीय पता नहीं बदलेंगे, एस॰ टी॰ सं॰ 446 वर्ष 2005 में न्यायिक आयुक्त-II खूँटी द्वारा वर्तमान अपीलार्थीगण को अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित करते हैं।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

इलेक्ट्रोस्टील स्टील्स लि॰

cuke

झारखंड राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड एवं अन्य

W.P. (C) No. 2247 of 2012. Decided on 5th November, 2012.

जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1974—धारा 25 (7)—वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1981—धारा 21 (1) सह-पठित धाराएँ 21 (4) एवं 21 (5)—ग्रीन फील्ड स्टील प्लांट की स्थापना—प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा सहमति देने से इनकार—शेष इकाईयों के लिए एन॰ ओ॰ सी॰ विस्तारण प्रदान करने के लिए आवेदन पर निर्णय नहीं लिया गया—प्रत्यर्थीगण को याची के आवेदन पर विचार करने और पाँच सप्ताहों के भीतर निर्णय लेने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 15 से 17)

अधिवक्तागण.—Mr. Y.V. Giri, Mr. Indrajit Sinha, For the Petitioner; Mr. Sohail Anwar, Mr. Prabhash Kumar, For the Respondent Nos. 1 and 2; Mr. Mokhtar Khan, ASGI, For the Respondent No.4; J.C. to A.A.G., For the Respondent No. 5.

आदेश

याची एक कंपनी है और जिला बोकारो में चास चाणक्यपुरी प्रखंड में 'ग्रीन फील्ड' 3 एम॰ टी॰ पी॰ ए॰ इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट स्थापित करने की प्रक्रिया में है। दस हजार करोड़ रुपयों के निवेश पर उद्योग लगाया जाना है। याची के अनुसार, उक्त राशि में से उन्होंने आठ हजार करोड़ रुपयों से अधिक का निवेश पहले ही कर दिया है। उक्त भारी राशि की व्यवस्था करने के लिए याची ने बैंक और अन्य वित्तीय संस्थानों से कर्ज लिया है जिस पर उन्हें ब्याज की भारी राशि का भुगतान करना है। शेयरों को जारी करके आम लोगों से भी विशाल राशि जुटाई गयी है।

2. याची ने दावा किया है कि प्रस्तावित स्टील प्लांट नवीनतम तकनीकी जानकारी के साथ निर्मित किया जा रहा है और अपशेष जल एवं वायु उत्सर्जन के कारण लगभग कोई प्रदूषण नहीं है। आधुनिक प्रौद्योगिकी को लागू करके अपशेष जल को पुन: चक्रित किया जाना है और वायु प्रदूषण भी नवीनतम यंत्रों से नियंत्रित किया जाएगा जो उत्सर्जन स्तर को प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा प्रावधानित मानकों के अंतर्गत लाएगा। कंपनी ने प्रदूषण नियंत्रण उपायों पर 525 करोड़ रुपयों का निवेश किया है।

3. परियोजना कार्य प्रारम्भ करने के पहले याची ने पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार से निर्देश निबंधनों को प्राप्त किया और उन्हें लोक सुनवाई/लोक परामर्श के लिए झारखंड राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के पास जाने का निर्देश दिया गया था। लोक सुनवाई के बाद, याची को पर्यावरण अनापत्ति प्रदान की गयी थी। तत्पश्चात् याची उक्त उद्योग स्थापित करने की सुनवाई के बाद याची को पर्यावरण अनापत्ति प्रदान की गयी थी। तत्पश्चात् याची उक्त उद्योग स्थापित करने की अनुमति लेने के लिए झारखंड राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के पास गया। उस प्रयोजन से याची ने जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1974 और वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1981 के अधीन आवेदन दिया।

4. इस बीच, याची को सहमति और झारखंड राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा 'अनापत्ति प्रमाण पत्र' दिया गया था। तत्पश्चात्, याची ने निर्माण कार्य आरंभ किया। उक्त 'अनापत्ति' अध्ययन क्षेत्र के अंतर्गत उद्धृत परियोजना का अंतरिम स्थान प्रस्तुत करने के आधार पर जारी की गयी थी। निर्माण आरंभ हुआ और प्रत्यर्थीगण को सम्यक रूप से सूचना दी गयी थी। पर्यावरण मानकों के अनुरुप याची के निर्माण कार्य से संतुष्ट होने के बाद समय-समय पर अनापत्ति की अवधि बढ़ायी गयी थी।

5. याची ने इसी तरीके से दिनांक 4.5.2010 के परे स्थापित करने की सहमति की वैधता को आगे बढ़ाने के लिए आवेदन दिया। इस पर प्रत्यर्थी बोर्ड ने यह अभिकथित करते हुए कि वन भूमि के भाग पर निर्माण कार्य किया जा रहा है, दिनांक 4.5.2010 के मेमो द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर तात्पर्यित रूप से कारण बताओ नोटिस तामील किया। याची को कारण बताने के लिए कहा गया था कि क्यों नहीं याची का आवेदन अस्वीकार कर दिया जाए और उस आधार पर बंद करने का आदेश पारित किया जाए।

6. याची ने अन्य बातों के साथ यह कथन करते हुए कारण बताओ का उत्तर दाखिल किया कि भूखंड सं॰ 1159, 1389 और 1120 सहित भागबांध में वन विभाग द्वारा दावा की गयी भूमि तुच्छ थी। संरक्षित वन के रूप में क्षेत्र को घोषित करते हुए कोई अधिसूचना कभी जारी नहीं की गयी थी। एक अन्य मामले हक वाद सं॰ 26/1989 में विभाग का समरुप दावा चुनौती के अधीन था और दावा अस्वीकार किया गया था और सर्वोच्च न्यायालय तक आदेश मान्य ठहराया गया था। उत्तर और अभिलेख पर सामग्री पर विचार करने के बाद संतुष्ट होने पर बोर्ड ने दिनांक 30.7.2010 के नए आदेश द्वारा (परिशिष्ट 5/1) दिनांक 4.5.2011 तक एन॰ ओ॰ सी॰ की वैधता अवधि को बढ़ा दिया। तत्पश्चात् याची ने निर्माण कार्य पुनः चालू किया और आगे निर्माण किया।

7. जब याची ब्लास्ट फरनेस का निर्माण पूरा करने वाला था, उन्होंने उक्त इकाई को 'चालू करने की सहमति' पाने के लिए आवेदन दिया जैसा दिनांक 5.5.2008 के 'स्थापना सहमति' के लिए एन॰ ओ॰ सी॰ में विनिर्दिष्ट किया गया था।

8. अनुमति प्रदान करने के बजाए प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने एक अन्य कारण बताओ नोटिस जारी किया और याची से पूछा कि क्यों नहीं 'चालू करने की सहमति' के लिए आवेदन अस्वीकार कर दिया जाए।

9. याची ने अन्य बातों के साथ यह कथन करते हुए उत्तर दाखिल किया कि सहमति से इनकार करने का कोई आधार नहीं था क्योंकि कंपनी ने प्रदूषण अधिनियम की समस्त आवश्यकताओं का अनुपालन किया है। सहमति के लिए आवेदन देने के बाद चार माह की सांविधिक अवधि का अवसान हो गया है और जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1974 की धारा 25 (7) और वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1981 की धारा 21 (1) सहपठित धारा 21 (4) और 21 (5) के प्रावधानों के अधीन संबंधित प्राधिकारी की समझी गयी सहमति है।

10. विहित अवधि के अवसान पर याची ने इकाई की जाँच की और प्रत्यर्थीगण को सूचना भी दी गयी थी। याची के प्रतिनिधियों ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 के साथ बैठक किया और उनकी संतुष्टि के प्रति प्रत्येक चीज को स्पष्ट किया और यह भी बताया कि क्षेत्र जहाँ इकाई स्थापित की गयी है, अध्ययन क्षेत्र का भाग है।

11. इसके बावजूद, प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा दिनांक 15.2.2011 का एक अन्य नोटिस जारी किया गया था और याची को उद्योग के स्थल को दक्षिण पर्वतपुर, चन्दनकियारी प्रखंड से भागबांध, चास प्रखंड ले जाने के परिवर्तन का स्पष्टीकरण देने के लिए कहा था।

12. याची ने अन्य बातों के साथ यह कथन करते हुए उस पत्र का उत्तर दिया कि ग्राम भाग बांध की भूमि प्रभाव अध्ययन के अध्ययन क्षेत्र के अंतर्गत थी जिसके संबंध में स्टील प्लांट स्थापित करने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 द्वारा अनापत्ति प्रदान की गयी थी। तत्पश्चात्, प्रत्यर्थीगण ने गाँव, प्रखंड, खाता सं॰ भूखंड सं॰, आदि का वर्णन देते हुए पूर्ण भूमि अनुसूची इप्सित किया जिसे भी प्रस्तुत किया गया था। सहमति की अवधि अर्थात् 'अनापत्ति प्रमाण पत्र' तब दिनांक 4.5.2011 तक बढ़ा दी गयी थी।

13. तत्पश्चात्, याची ने शेष इकाईयों के लिए दो वर्ष की आगे की अवधि के लिए उक्त 'अनापत्ति प्रमाण पत्र का विस्तारण प्रदान करने के लिए प्रार्थना करते हुए दिनांक 4.4.2011 का आवेदन दिया।

14. याची की शिकायत है कि चूँकि तत्पश्चात् एक से अधिक वर्ष बीत गया है किंतु प्रत्यर्थीगण ने प्रत्युत्तर नहीं दिया है।

15. याची के अनुसार, विहित अवधि बीत जाने के बाद विस्तारण दिया गया समझा जाता है जैसा वायु अधिनियम की धारा 21 (1) सह-पठित धारा 21 (4) और 21 (5) और जल अधिनियम की धारा 25 (7) के अधीन प्रावधानित है, किसी विवाद से बचने के लिए प्रत्यर्थीगण को अभिव्यक्ति 'अनापत्ति' जारी करने की आवश्यकता है चूँकि याची ने पूर्वोक्त अधिनियमों के प्रावधानों के अधीन समस्त मानकों को परिपूर्ण किया है। किंतु, आज की तिथि तक प्रत्यर्थीगण ने मामले पर निर्णय नहीं किया है। उस परिस्थिति के अधीन याची ने इस रिट याचिका को दाखिल किया है।

16. प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 की ओर से उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री एम॰ सोहेल अनवर ने निवेदन किया कि उद्योग स्थापित करने की प्रक्रिया को रोकना बोर्ड का आशय नहीं है। उनका सरोकार प्रदूषण नियंत्रण कानूनों के प्रावधानों के क्रियान्वयन के साथ है और प्रत्यर्थीगण ने इस रिट याचिका के लंबित रहने की दृष्टि में याची द्वारा दाखिल आवेदन पर आदेश पारित करने अथवा इसे निपटाने के लिए अग्रसर नहीं हुआ है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि और अधिक विलंब के बिना मामला बोर्ड के पास उठाया जा सकता है और पाँच सप्ताह के भीतर प्रभावकारी आदेश पारित किया जाएगा। उन्होंने आगे निवेदन किया कि आवश्यकता होने पर याची को सुनवाई का अवसर देने के लिए तिथि नियत की जाएगी।

17. पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण पर विचार करते हुए यह रिट याचिका इस निर्देश के साथ निपटायी जाती है कि प्रत्यर्थीगण सं॰ 1 और 2 याची के आवेदन पर विचार करेंगे और जैसा उनके द्वारा आश्वासन दिया गया है, आवश्यक होने पर याची को सुनवाई का अवसर देने और तथ्यों तथा विधि के प्रावधानों तथा संबंधित निर्णयों को विचार में लेने के बाद इस आदेश की प्रति की प्रस्तुति/प्राप्ति की तिथि से पाँच सप्ताह के भीतर याची के आवेदन को निपटाएँगे।

18. जब तक अंतिम आदेश पारित नहीं किया जाता है, प्रत्यर्थीगण याची के विरुद्ध प्रपीड़क कार्रवाई नहीं करेंगे।

आई॰ ए॰ सं॰ 2991 और 3305 वर्ष 2012

रिट याचिका के अंतिम निपटान की दृष्टि में ये अंतर्वर्ती आवेदन निष्फल होते हैं।

तद्नुसार, आई॰ ए॰ सं॰ 2991 और 3305 वर्ष 2012 निष्फल के रूप में अस्वीकार किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o ç'kkUr dekj] U;k;efrx.k

याकूब खान एवं एक अन्य (711 में)

मशरुद्दीन खान (761 में)

cuke

झारखंड राज्य (दोनों में)

Cr. Appeal (DB) Nos. 711 with 761 of 2012. Decided on 6th November, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—दंडादेश का निलंबन–हत्या के लिए दोषसिद्धि–मृतक के शरीर पर पाँच उपहतियाँ कारित की गयी–चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्यों पर आधारित अभियोजन मामले के मुताबिक समस्त अपीलार्थीगण द्वारा निभायी गयी भूमिका सर्वाधिक निर्णयकारी है–अपीलार्थीगण प्राथमिकी में नामित किए गए और अपीलार्थीगण द्वारा निभायी गयी भूमिका प्राथमिकी में वर्णित की गयी–अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है–अपराध की गंभीरता की दृष्टि में, दंड की मात्रा और तरीका जिससे अपीलार्थीगण अपराध में अंतर्ग्रस्त हैं, दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना अस्वीकार की जाती है। (पैराएँ 2 से 4)

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Kashyap, Mr. Ajit Kumar Dubey, For the Appellants; Mr. Sanjay Kumar Srivastava, A.P.P., For the State.

आदेश

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–अपीलार्थीगण के दंडादेश को निलंबित करने की प्रार्थना पर विचार करने के लिए इन दोनों अपीलों को पहले ही ग्रहण किया जा चुका है और विचारण न्यायालय से अभिलेख और कार्यवाही मंगायी गयी है। ये अपीलें सत्र विचारण सं॰ 75 वर्ष 1994 में पारित दिनांक 11 जून, 2012 के एक ही निर्णय और आदेश से उद्भूत होती है। विचारण न्यायालय के अभिलेख और कार्यवाही को प्राप्त किया गया है। दांडिक अपील सं॰ 711 वर्ष 2012 में अपीलार्थीगण मूल अभियुक्त सं॰ 2 और 3 हैं और दांडिक अपील सं॰ 761 वर्ष 2012 में अपीलार्थी मूल अभियुक्त सं॰ 1 है।

2. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख पर साक्ष्यों को देखते हुए प्रतीत होता है कि इन अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। चूँकि दांडिक अपीलें लंबित हैं, हम अभिलेखों का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि अभियोजन मामला अनेक चश्मदीद गवाहों पर आधारित है जो अ॰ सा॰ 5, अ॰ सा॰ 6 और अ॰ सा॰ 7 हैं और उनके अभिसाक्ष्यों को देखते हुए प्रतीत होता है कि उन्होंने घटना में इन अपीलार्थीगण द्वारा निभायी गयी भूमिका का स्पष्टतः कथन किया है। मूल अभियुक्त सं॰ 1 द्वारा प्रयुक्त हथियार तेज धार वाला हथियार है। मूल अभियुक्त सं॰ 2 और 3, जो दांडिक अपील सं॰ 711 वर्ष 2012 में अपीलार्थीगण हैं, ने मृतक को पकड़ रखा था और मूल

अभियुक्त सं० 1 ने मृतक पर उपहतियों को कारित किया है। चिकित्सीय साक्ष्यों को देखते हुए मृतक के शरीर पर पाँच उपहतियाँ हैं। इस प्रकार, चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्यों पर आधारित अभियोजन मामले के मुताबिक समस्त अपीलार्थीगण द्वारा निभायी गयी भूमिका सर्वाधिक निर्णयकारी है। इसके अतिरिक्त, प्राथमिकी तुरन्त दर्ज की गयी प्रकृति की है। घटना दिनांक 5.4.1990 को रात्रि लगभग 1 बजे हुई थी और प्राथमिकी दिनांक 6 अप्रिल, 1990 को लगभग 5.30 बजे दर्ज हुई थी। अपीलार्थीगण प्राथमिकी में नामित किए गए हैं और अपीलार्थीगण द्वारा निभायी गयी भूमिका भी प्राथमिकी में वर्णित की गयी है। अभिलेख पर इन साक्ष्यों को देखते हुए, इन दोनों अपीलों में इन अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है।

3. अपीलार्थीगण के अधिवक्ता ने अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य पर सूक्ष्मता के साथ विस्तारपूर्वक मामले पर तर्क किया है और उन्होंने इंगित किया है कि इस मामले में न तो डॉक्टर और न ही आई० ओ० का परीक्षण किया गया है और इसलिए अपीलार्थीगण को अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, यह तर्क भी किया गया है कि दर्ज की गयी प्राथमिकी दिनांक 9 अप्रिल, 1990 को संबंधित दंडाधिकारी के पास पहुँची थी। विचारण न्यायालय के निर्णय के पैराग्राफ सं० 15 (iii) और (iv) को देखते हुए इस न्यायालय द्वारा इन तर्कों को स्वीकार नहीं किया गया है।

4. इन तथ्यों की दृष्टि में और अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसमें अपीलार्थीगण अपराध में अंतर्ग्रस्त हैं, जैसा अभियोजन द्वारा अभिकथित किया गया है, हम इन दोनों अपीलों में वर्तमान अपीलार्थीगण को विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं। अतः दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना एतद् द्वारा अस्वीकार की जाती है।

---

ekuuh; ç'kkr dekj] U;k;efr

विशेश्वर मंडल एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. M.P. No. 675 of 2009. Decided on 9th November, 2012.

आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955—धारा 7—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—अनाज की कालाबाजारी–संज्ञान–याचीगण ने अंत्योदय योजना के अधीन बी० पी० एल० धारकों के बीच इसे वितरित करने के लिए गेहूँ और चावल उठाया किंतु उन्होंने इन वस्तुओं को कालाबाजार में बेच दिया–याचीगण के विरुद्ध प्राथमिकी में प्रत्यक्ष अभिकथन है–विनिर्दिष्ट अभिकथन यह है कि याचीगण ने बिहार व्यापारिक वस्तु (अनुज्ञप्ति एकीकरण) आदेश, 1984 और बिहार लोक वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश, 2001 के प्रावधानों का उल्लंघन किया–आवेदन खारिज। (पैराएँ 5 से 7)

निर्णयज विधि.–2003 (4) JCR 630 (Jhr); 2005 (1) East Cr.C. 65 (Jhr.); 2012 (2) East Cr.C. 360 (Jhr)—Distinguished.

अधिवक्तागण.–Mr. M.B. Tripathy, For the Petitioners; Mr. R. Mukhopadhyay, APP, For the State.

प्रशांत कुमार, न्यायमूर्ति.–यह आवेदक मोहनपुर पी० एस० केस सं० 77 वर्ष 2008, जी० आर० केस सं० 331 वर्ष 2008 (टी० आर० सं० 1229 वर्ष 2009) के तत्सम, के संबंध में विद्वान सी० जे० एम०,

देवघर द्वारा पारित दिनांक 12.1.2009 के आदेश के अभिखंडन के लिए है जिसके द्वारा और जिसके अधीन उन्होंने आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया।

2. अभिकथित किया गया है कि दिनांक 1.5.2008 को सायं लगभग 4.05 बजे देवघर जिला में जमुआ पंचायत के अधीन पथरी गाँव अवस्थित याची सं॰ 2 दुलार मांझी के उचित मूल्य की दुकान में छापा मारा गया था और पाया गया था कि याची सं॰ 2 की दुकान बंद थी। आगे अभिकथित किया गया है कि दुकान के बाहर नोटिस बोर्ड लटका हुआ था किंतु उक्त नोटिस बोर्ड में गोदाम में भंडारण के संबंध में कोई वर्णन नहीं दिया हुआ था। प्रतीत होता है कि छापामार दल आंगन में गया और पाया कि यह खाली था। अभिकथित किया गया है कि दिनांक 30.1.2008 को याची सं॰ 2 ने 3.68 क्विंटल गेहूँ, 5.76 क्विंटल चावल (जिसका वितरण बी॰ पी॰ एल॰ व्यक्तियों के बीच किया जाना था) और 6.73 क्विंटल गेहूँ और 17.81 क्विंटल चावल (जिसका वितरण अंत्योदय योजना के अधीन किया जाना था) राज्य खाद्य निगम, देवघर से उठाया था। अभिकथित किया गया है कि उक्त वस्तुएँ कालाबाजार में बेच दी गयी थी।

आगे अभिकथित किया गया है कि उसी तिथि को सायं लगभग 5.30 बजे देवघर जिला में जमुआ पंचायत, खड़गडीह अवस्थित याची सं॰ 1 विशेश्वर मंडल की उचित मूल्य की दुकान में छापा मारा गया था और उक्त छापा के दौरान याची की दुकान बंद पायी गयी थी। किंतु, इसे उसके पुत्र द्वारा खोला गया था। भौतिक सत्यापन पर, दुकान के अंदर कोई वस्तु नहीं पायी गयी थी यद्यपि याची ने (बी॰ पी॰ एल॰ व्यक्तियों के बीच वितरण के लिए) 10.73 क्विंटल गेहूँ और 28.43 क्विंटल चावल और (अंत्योदय योजना के अधीन वितरण के लिए) 6.55 क्विंटल गेहूँ और 10.24 क्विंटल चावल राज्य खाद्य निगम, देवघर से उठाया था। तद्नुसार, उपधारित किया गया था कि उसने इन वस्तुओं को कालाबाजार में बेच दिया था। छापा के दौरान यह भी पाया गया था कि नोटिस बोर्ड पर वितरण के लिए उठायी गयी वस्तुओं के भंडारण के संबंध में कोई वर्णन उल्लिखित नहीं किया गया था। प्रतीत होता है कि उक्त अभिकथन के आधार पर मोहनपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 77 वर्ष 2008 संस्थापित किया गया था और पुलिस ने अन्वेषण किया था। अन्वेषण के बाद पुलिस ने ई॰ सी॰ अधिनियम की धारा 7 के अधीन आरोप पत्र दाखिल किया, जिसके अधीन उल्लिखित किया गया है कि याची ने बिहार व्यापारिक वस्तु (अनुज्ञप्ति एकीकरण) आदेश, 1984 और बिहार लोक वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश, 2001 के प्रावधानों का उल्लंघन किया है। तद्नुसार आरोप-पत्र दाखिल किए जाने पर विद्वान सी॰ जे॰ एम॰, देवघर ने आक्षेपित आदेश पारित करके अपराध का संज्ञान लिया जिसे इस आवेदन में चुनौती दी गयी है।

3. याचीगण की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री बी॰ एम॰ त्रिपाठी ने निवेदन किया है कि आक्षेपित आदेश अवैध है क्योंकि प्राथमिकी में और आरोप-पत्र में भी यह उल्लिखित नहीं किया गया है कि याचीगण ने ई॰ सी॰ अधिनियम की धारा 3 के अधीन प्रख्यापित किसी नियंत्रण आदेश के प्रावधानों का उल्लंघन किया है। पूर्वोक्त प्रतिवाद के समर्थन में याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने **गोविंद महतो एवं अन्य बनाम झारखंड राज्य, 2003 (4) JCR 630 (Jhr.) अमित कुमार बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, 2005 (1) East. Cr. C. 65 (Jhr.)** और **अरुण कुमार सिंह एवं एक अन्य बनाम झारखंड राज्य, 2012 (2) East. Cr.C. 360 (Jhr.)** में निर्णयों पर विश्वास किया है।

4. दूसरी ओर, विद्वान अपर लोक अभियोजक निवेदन करते हैं कि याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए पूर्वोक्त निवेदन अस्वीकार किए जाने योग्य हैं क्योंकि आरोप-पत्र में अन्वेषण अधिकारी

ने विनिर्दिष्टत: उल्लिखित किया था कि याचीगण ने बिहार व्यापारिक वस्तु (अनुज्ञप्ति एकीकरण) आदेश, 1984 और बिहार जन वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश, 2001 के प्रावधानों का उल्लंघन किया है। तद्नुसार, वह निवेदन करते हैं कि इस आवेदन में गुणागुण नहीं है, अत: इसे खारिज किया जाए।

5. निवेदन सुनने पर, मैंने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है। प्राथमिकी में प्रत्यक्ष अभिकथन है कि बी॰ पी॰ एल॰ व्यक्तियों के बीच और अंत्योदय योजना के अधीन इसके वितरण के लिए गेहूँ और चावल उठाया था किंतु उन्होंने कालाबाजार में इन वस्तुओं को बेच दिया। अन्वेषण के बाद अन्वेषण अधिकारी ने आरोप-पत्र दाखिल किया और आरोप पत्र में विनिर्दिष्टत: उल्लिखित किया गया है कि याचीगण ने बिहार व्यापारिक वस्तुओं (अनुज्ञप्ति एकीकरण) आदेश, 1984 और बिहार जन वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश, 2001 के अनेक प्रावधानों का उल्लंघन किया। इस प्रकार, याचीगण के विद्वान अधिवक्ता का निवेदन कि आरोप-पत्र में यह उल्लेख नहीं किया गया था कि याचीगण ने किस नियंत्रण आदेश का उल्लंघन किया था, विश्वास उत्पन्न नहीं करता है।

6. याचीगण द्वारा विश्वास किए पूर्वोक्त निर्णयों के परिशीलन से स्पष्ट है कि उक्त निर्णय इसलिए पारित किए गए थे क्योंकि उन मामलों में यह अभिकथित नहीं किया गया था कि याचीगण को ई॰ सी॰ अधिनियम की धारा 3 के अधीन प्रख्यापित किसी आदेश का उल्लंघन करता हुआ पाया गया था। वर्तमान मामले में, जैसा ऊपर गौर किया गया है कि याचीगण के विरुद्ध विनिर्दिष्ट अभिकथन है कि याचीगण ने बिहार व्यापारिक वस्तु (अनुज्ञप्ति एकीकरण) आदेश, 1984 और बिहार जन वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश, 2001 के प्रावधानों का उल्लंघन किया था। इस प्रकार, इस मामले के तथ्य पूर्वोक्त मामले के तथ्यों से भिन्न हैं। उक्त परिस्थिति के अधीन, पूर्वोक्त मामलों में विनिश्चित निर्णयाधार इस मामले पर प्रयोज्य नहीं है।

7. ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं इस आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

बृज मोहन सिंह

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 834 of 2012. Decided on 8th November, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 451—वन अधिनियम, 1927—धाराएँ 33 एवं 34—वन अपराध–कोयला ले जाने वाले ट्रक की निर्मुक्ति के लिए आवेदन अवर न्यायालय द्वारा इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया कि याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया जा चुका है और अभिग्रहित सामग्रियाँ इस मामले में तात्विक प्रदर्श हैं–सक्षम प्राधिकारी द्वारा अधिहरण कार्यवाही छोड़ दी गयी है–वाणिज्यिक वाहन होने के नाते ट्रक को अवर न्यायालय द्वारा निर्मुक्त कर दिया जाना चाहिए था यदि याची को ट्रक का स्वामी पाया गया था–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया और अवर न्यायालय को विधि के अनुरूप नया आदेश पारित करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 5 से 10)

अधिवक्तागण.–Mrs. Vandana Singh, For the Petitioner; Mr. S.P. Jha, A.P.P., For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ सुने गए।

2. याची विष्णुगढ़ पी॰ एस॰ केस सं॰ 62 वर्ष 2012, जी॰ आर॰ सं॰ 1479 वर्ष 2012 के तत्सम, में विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, हजारीबाग श्री ए॰ के॰ सिंह द्वारा पारित दिनांक 12.9.2012 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा कोयला से लदे अभिग्रहित ट्रक की निर्मुक्ति के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है।

3. विष्णुगढ़ पी॰ एस॰ केस सं॰ 62 वर्ष 2012, जी॰ आर॰ सं॰ 1479 वर्ष 2012 के तत्सम, में प्राथमिकी से प्रतीत होता है कि रजिस्ट्रेशन सं॰ JH 02N 3127 वाला ट्रक कोयला से लदा हुआ पकड़ा गया था। चूँकि ट्रक 4.18 टन अधिक कोयले से ओवरलोडेड पाया गया था, कोयला के साथ ट्रक को अभिग्रहित कर लिया गया था और याची को ट्रक का स्वामी होने के नाते इस मामले में अभियुक्त बनाया गया है।

4. याची ने ट्रक का स्वामी होने का दावा करते हुए कोयला और ट्रक की निर्मुक्ति के लिए अपना आवेदन दाखिल किया, किंतु इसे इस तथ्य की दृष्टि में कि ट्रक और कोयला के संबंध में अधिहरण कार्यवाही थी, अवर न्यायालय द्वारा पहले इसे अस्वीकार कर दिया गया था। आगे प्रतीत होता है कि उक्त अधिहरण कार्यवाही सं॰ 28 वर्ष 2012 में सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित दिनांक 5.9.2012 के आदेश द्वारा तब से अधिहरण कार्यवाही छोड़ दी गयी है, जिसे इस पुनरीक्षण आवेदन में परिशिष्ट-2 के रूप में अभिलेख पर लाया गया है जो दर्शाता है कि सक्षम प्राधिकारी ने पाया था कि यह सिद्ध नहीं किया जा सकता था कि अभिग्रहित कोयला वन क्षेत्र का था और इस प्रकार, वन अधिनियम की धाराओं 33 और 34 के अधीन कोई अपराध किया गया नहीं पाया गया था। तद्नुसार, अधिहरण कार्यवाही छोड़ दी गयी थी।

5. याची ने पुनः कोयला और ट्रक की निर्मुक्ति के लिए अपना आवेदन दाखिल किया किंतु इसे भी अवर न्यायालय द्वारा इस आधार पर दिनांक 12.9.2012 के आक्षेपित आदेश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था कि याची के विरुद्ध आरोप पत्र दाखिल किया जा चुका है और अभिग्रहित सामग्रियाँ इस मामले में तात्विक प्रदर्श है और तद्नुसार आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था।

6. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, मेरा सुविचारित मत है कि चूँकि सक्षम प्राधिकारी द्वारा अधिहरण कार्यवाही छोड़ दी गयी है और ट्रक वाणिज्यिक वाहन होने के नाते, इस पर कोयला लदा हुआ प्रश्नगत ट्रक अवर न्यायालय द्वारा निर्मुक्त कर दिया जाना चाहिए था यदि याची को ट्रक का स्वामी पाया गया था।

7. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची ऐसे वचन सहित कि ट्रक और कोयला की निर्मुक्ति किसी भी तरीके से अभियोजन मामले पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेगी, कोई वचन और ऐसा बंध/प्रत्याभूति/वचन जैसा अवर न्यायालय द्वारा विहित किया जा सकता है, देने के लिए तैयार है। तद्नुसार विद्वान अधिवक्ता ने याची के पक्ष में ट्रक और कोयला की निर्मुक्ति की प्रार्थना की है।

8. किंतु, आक्षेपित आदेश के परिशीलन से प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय ने याची के स्वामित्व के संबंध में किसी चीज पर चर्चा नहीं किया है। किंतु, यदि अभिग्रहित ट्रक याची का है, अवर न्यायालय ऐसा वचन/बंध पत्र/प्रत्याभूति, जैसा मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में सुयोग्य और समुचित समझा जाता है, लेकर याची के पक्ष में ट्रक और कोयला निर्मुक्त करेगा।

9. मामले के तथ्यों में, विष्णुगढ़ पी॰ एस॰ केस सं॰ 62 वर्ष 2012, जी॰ आर॰ सं॰ 1479 वर्ष 2012 के तत्सम, में श्री ए॰ के॰ सिंह, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक

12.9.2012 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और अवर न्यायालय को ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में और विधि के अनुरूप नया आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाता है।

10. यह पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

रमा शंकर सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Cr. M.P. No. 1060 of 2011. Decided on 5th November, 2012.

भारतीय वन अधिनियम, 1927—धारा 33 सह-पठित वन संरक्षण अधिनियम, 1980—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—वन भूमि का अतिक्रमण–संज्ञान–भूमि के ऊपर अधिकार, हक और हित अभी भी सुनिश्चित नहीं किया गया है क्योंकि पक्षों के बीच हक वाद लंबित है जहाँ दोनों पक्ष अपने अधिकार एवं हक का दावा कर रहे हैं–याची ने रैयत से प्राप्त अधिकारों के प्रयोग में अभिकथित कृत्य किया–दांडिक मामला जारी रखना अनपेक्षणीय है–संज्ञान के आदेश सहित संपूर्ण कार्यवाही अपास्त–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 7 से 12)

निर्णयज विधि.–2005(3) JCR 464 (Jhr.)—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Indrajit Sinha & Fayyaz Ahmad, For the Petitioners; Mr. R. Mukhopdhyay, S.C.-II, For the State.

आदेश

इस न्यायालय की अंतर्निहित अधिकारिता का अवलंब लेते हुए याची ने वन केस सं॰ 8 वर्ष 2011 के संपूर्ण दांडिक कार्यवाही सहित आदेशों के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन इस अभिकथन पर कि याची–मेसर्स इलेक्ट्रो स्टील इंटीग्रेटेड लिमिटेड (अब मेसर्स इलेक्ट्रो स्टील स्टील्स लिमिटेड) जिला बोकारो ने वन क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले ग्राम भाग बंध, जिला बोकारो के भूखंड सं॰ 1120 और 1159 से संबंधित भूमि का अतिक्रमण करके निर्माण कार्य शुरू किया है और तद्द्वारा उसने वन संरक्षण अधिनियम की धारा 2 के प्रावधान के अधीन केंद्र सरकार की अनुमति लिए बिना स्वयं को गैर–वनीय गतिविधियों में आलिप्त किया, भारतीय वन अधिनियम (बिहार संशोधन अधिनियम, 1989) की धारा 33 के अधीन और वन संरक्षण अधिनियम की धारा 2 के अधीन भी याची के विरुद्ध दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया गया है।

2. पहले भी गाँव भागबंध, जिला बोकारो अवस्थित खाता सं॰ 58, मौजा सं॰ 83 से संबंधित भूखंड सं॰ 1120, 1105, 1159, 1389 और 1321 वाले भूमि के ऊपर चारदीवारी का निर्माण करने के इसी अभिकथन पर मेसर्स इलेक्ट्रो स्टील इंटीग्रेटेड लिमिटेड के निदेशक सहित अनेक कर्मचारियों के विरुद्ध अनेक मामले दर्ज किए गए थे जिस पर अधिनियम की धारा 33 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया था।

3. उन आदेशों को दांडिक विविध याचिका सं॰ 1653 वर्ष 2009 और सदृश मामलों में चुनौती दी गयी थी। इस न्यायालय ने इन तथ्यों को ध्यान में लेने पर कि अधिसूचना की प्रक्रिया, जैसा भारतीय

वन अधिनियम की धारा 29 (3) के अधीन जारी किए जाने का दावा किया गया था, को कभी पूरा नहीं किया गया था और कि पक्षगण रैयतों, जिनके पक्ष में अधिकार और हक की घोषणा सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा पारित की गयी थी, द्वारा निष्पादित रजिस्टर्ड विक्रय विलेखों के आधार पर भूमि के ऊपर अपने परस्पर अधिकारों, हकों और कब्जा का दावा कर रहे हैं, दिनांक 31.7.2010 के आदेशों के तहत संज्ञान लेने वाले आदेशों सहित समस्त मामलों की कार्यवाही को अभिखंडित कर दिया।

4. उस आदेश को माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष एस॰ एल॰ पी॰ (दांडिक) सं॰ 9884 से 9887 में चुनौती दी गयी थी जिसे खारिज कर दिया गया था। किंतु, खारिज करते हुए संप्रेक्षित किया गया था कि आक्षेपित आदेश और इस न्यायालय का आदेश भी राज्य को मामले में समुचित कार्रवाई करने से अपवर्जित नहीं करेंगे जो विधि में उपलब्ध हो सकती है।

5. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि मुख्यत: उन दो आधारों पर संपूर्ण दांडिक कार्यवाही का अभिखंडन इप्सित किया जा रहा है क्योंकि याची ने रैयतों, जिनके पक्ष में सक्षम अधिकारिता के न्यायालय द्वारा अधिकार, हक और हित के संबंध में डिक्री पारित की गयी थी, द्वारा निष्पादित रजिस्टर्ड विक्रय विलेखों के फलस्वरुप प्रश्नगत भूमि के ऊपर अधिकार, हक और हित प्राप्त किया है और तद्द्वारा याची को भारतीय वन अधिनियम अथवा वन संरक्षण अधिनियम के अधीन किसी अपराध को करता हुआ नहीं कहा जा सकता है और इसलिए संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित किए जाने योग्य है।

6. प्रति शपथपत्र दाखिल किया गया है जिसमें कथन किया गया है कि अधिनियम की धारा 29 (3) के अधीन वर्ष 1958 में जारी अधिसूचना के फलस्वरुप प्रश्नगत भूमि को संरक्षित वन के रूप में घोषित किया गया था और इसलिए, किसी के द्वारा गैर वनीय कृत्य वन अधिनियम के अधीन उस पर दांडिक दायित्व डालेगा।

7. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और दांडिक विविध याचिका सं॰ 1653 वर्ष 2009 और अन्य सदृश मामलों में पारित आदेशों सहित अभिलेख के परिशीलन पर प्रतीत होता है कि न्यायालय ने उन मामलों से संबंधित मामले पर विचार करते हुए दर्ज किया कि वन विभाग के विरुद्ध रैयतों द्वारा दाखिल हक वाद में अभिनिर्धारित किया गया था कि भारतीय वन अधिनियम की धारा 29 (3) के अधीन अनुध्यात अधिसूचना की प्रक्रिया कभी पूरी नहीं की गयी थी और तद्द्वारा तात्पर्यित अधिसूचना का लक्षण उपधारित कभी नहीं करेगा, जैसा भारतीय वन अधिनियम की धारा 29 (3) के अधीन अनुध्यात किया गया है, और तद्द्वारा यह रैयतों के अधिकारों को निर्वापित नहीं करेगा और इसलिए, भूमि जिसे संरक्षित वन की भूमि कभी नहीं पाया गया था, के ऊपर अपने अधिकार के प्रयोग में रैयतों अथवा हित उत्तराधिकारी द्वारा किया गया कृत्य दांडिक दायित्व नहीं डालेगा।

8. ब्रजेश कुमार राय एवं अन्य बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, 2005 (3) JCR 464 (Jhr.) में समरुप विवाद था जहाँ वन विभाग द्वारा याचियों का अभियोजन इप्सित किया गया था जब उन्होंने विभाग द्वारा वन भूमि होने का दावा किए गए भूमि का उपयोग अपने अधिकार के प्रयोग में किया था। मामला अनुज्ञात करते हुए इस न्यायालय द्वारा संप्रेक्षित किया गया था जिसका पठन निम्नलिखित है:–

^^;g lc ek= ;g n'kkrk g fd i{kx.k d chp ednek g vkj nkuk viu ijLij vfèkdkj] gd vkj dCtk dk nkok dj jg gA ;kphx.k j;rk l çkIr

*jftLVM foØ; foy[k d vkèkkj ij vfèkdkj] gd dk nkok dj jg g tcfd jkT; nkok dj jgk g fd ;g ^^ljf{kr ou** g vkj rn}kjk jkT; dh Hkfe gA*

*iokDr ifjfLFkfr;k e vfèkdkj vkj gd dk okLrfod fookn gku d dkj.k e vfHkfuèkkfjr djrk g fd fofèk e nkfMd dk;okgh vif{kr ugh gA oLrr% jkT; dk viu ou foHkkx lfgr l{ke vfèkdkfjrk oky flfoy U;k;ky; d le{k yfcr vFkok bl U;k;ky; d le{k okn@vihy e mipkj dk vulj.k djuk pkfg,A***

9. इस न्यायालय ने उक्त मामले पर विश्वास करते हुए दांडिक विविध याचिका सं॰ 1653 वर्ष 2009 और सदृश मामलों को अनुज्ञात किया क्योंकि उन समस्त मामलों में तथ्य लगभग समान थे।

10. याची का मामला भी समरुप है जहाँ याची ने रैयतों से प्राप्त अपने अधिकारों के प्रयोग में अभिकथित कृत्य किया। भूमि के ऊपर अधिकार, हक और हित के संबंध में गंभीर विवाद प्रतीत होता है जिसे अभी तक सुनिश्चित नहीं किया गया है क्योंकि जैसा याची की ओर से सूचित किया गया है, पक्षों के बीच अभी भी हक वाद लंबित है जहाँ दोनों पक्ष अपने अधिकार और हक का दावा कर रहे हैं। इन स्थितियों के अधीन, पक्षों के बीच दांडिक मामला जारी रखना अनपेक्षणीय है।

11. इन परिस्थितियों के अधीन, अवर न्यायालय के समक्ष लंबित वन केस सं॰ 8 वर्ष 2011 की संपूर्ण कार्यवाही सहित आदेश जिसके अधीन भारतीय वन अधिनियम की धारा 2 के अधीन और वन संरक्षण अधिनियम की धारा 2 के अधीन भी अपराधों का संज्ञान याची के विरुद्ध लिया गया है, एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है।

12. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

डॉ॰ (श्रीमती) ज्योतिका श्रीवास्तव एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Criminal Revision No. 43 of 2004. Decided on 2nd November, 2012.

सी॰/1 केस सं॰ 230 वर्ष 2001 में मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 17.12.2003 के आदेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 420, 406, 427, 428 एवं 448—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 239—छल, न्यास का दांडिक भंग, रिष्टि एवं गृह अतिचार–आरोप की विरचना पक्षों के बीच अभिधृति विवाद–जब एक बार उच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है कि मात्र इसलिए कि सिविल मामला भी पोषणीय है याची के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही समाप्त नहीं की जा सकती है, उसी कार्यवाही के विभिन्न चरणों पर बार-बार नए आवेदनों को दाखिल करके उसी प्रश्न को उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है–पुनरीक्षण आवेदन खारिज। (पैराएँ 3 से 6)

अधिवक्तागण.–M/s M. Tewari & S. Saxena, For the Petitioners; Mr. S.S. Sahay, A.P.P., For the State; Ms. Amrita Banerjee, For the O.P. No.2.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और विरोधी पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह पुनरीक्षण आवेदन सी॰/1-230 वर्ष 2001 में श्री वी॰ के॰ सिंह, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 17.12.2003 के आदेश के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा आरोप के बिंदु पर सुनने पर अवर न्यायालय ने पाया कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 406, 427, 428, 448 के अधीन इन याचीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है और उनको आरोप विरचित किए जाने के लिए न्यायालय में उपस्थित होने का निर्देश दिया।

3. यह प्रतीत होता है कि मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, जमशेदपुर के न्यायालय के समक्ष परिवादी विरोधी पक्षकार सं॰ 2 द्वारा परिवाद याचिका दाखिल की गयी थी जिसे C/1-230 वर्ष 2001 के रूप में दर्ज किया गया था। परिवाद याचिका के परिशीलन से प्रतीत होता है कि परिवादी और अभियुक्तगण मकानमालिक और किराएदार हैं और किराया परिसर खाली करने के लिए उनके बीच विवाद है। परिवाद याचिका दाखिल किए जाने के बाद, याचीगण ने अपने विरुद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित करने के लिए दां॰ वि॰ या॰ सं॰ 4537 वर्ष 2001 में इस न्यायालय के पास आए जिसे दिनांक 8.7.2002 के विस्तृत आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था, जिसमें इस न्यायालय ने इस तथ्य को विचार में लिया कि मकान मालिक और किराएदार के बीच विवाद था और सिविल न्यायालय में वैकल्पिक उपाय मौजूद था। किंतु, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह सुनिश्चित है कि दांडिक कार्यवाही केवल इसलिए समाप्त नहीं की जा सकती है कि सिविल मामला भी पोषणीय है, और तद्नुसार, याचीगण द्वारा दाखिल दांडिक विविध याचिका इस न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गयी थी। किंतु, इस न्यायालय द्वारा याचीगण को आरोप विरचित किए जाने के समय पर अपने समस्त बिंदुओं को उठाने की स्वतंत्रता दी गयी थी।

4. बाद में, याचीगण को आरोप विरचित किए जाने के समय पर सुना गया था और यह पाते हुए कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 406, 427, 428 और 448 के अधीन इन याचीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया अपराध बनता है, अवर न्यायालय द्वारा दिनांक 17.12.2003 को आक्षेपित आदेश पारित किया गया था। आक्षेपित आदेश के परिशीलन से प्रकट है कि अवर न्यायालय के समक्ष याचीगण द्वारा उठाया गया एकमात्र बिंदु यह था कि परिवादी के पास सिविल उपाय था और अवर न्यायालय ने दांडिक विविध याचिका सं॰ 4537 वर्ष 2001 में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश पर विश्वास करते हुए याचीगण का प्रतिवाद ठुकरा दिया। अवर न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों पर भी चर्चा किया और पूर्वोल्लिखित प्रथम दृष्टया अपराध पाया और आरोप विरचित करने के लिए याचीगण को न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने का निर्देश दिया।

5. इस प्रकार, आक्षेपित आदेश से प्रकट है कि अवर न्यायालय के समक्ष याचीगण द्वारा एकमात्र बिंदु यह था कि परिवादी के पास सिविल उपाय उपलब्ध था और अवर न्यायालय द्वारा दांडिक विविध याचिका सं॰ 4537 वर्ष 2001 में इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 8.7.2002 के आदेश की दृष्टि में सही प्रकार से उक्त प्रतिवाद को नकार दिया गया था, जिसमें इस न्यायालय ने याचीगण के विरुद्ध उक्त प्रश्न का विनिर्दिष्टत: उत्तर दिया था। इस न्यायालय द्वारा दिए गए निष्कर्षों की दृष्टि में, अवर न्यायालय के पास याचीगण द्वारा किए गए एकमात्र परिवाद कि परिवादी के पास सिविल उपाय भी उपलब्ध था, को नकारने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। अवर न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों को भी विचार में लिया और आक्षेपित आदेश पारित किया है। जब एक बार इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित

किया है कि केवल इसलिए कि सिविल मामला भी पोषणीय है, याचीगण के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही समाप्त नहीं की जा सकती है, मेरे सुविचारित मत में उसी कार्यवाही के विभिन्न चरणों पर बार-बार नए आवेदनों को दाखिल करके उसी प्रश्न को उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इसी आधार पर इस चरण पर इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप समन्वय पीठ द्वारा पारित आदेश को निरसित करने के तुल्य होगा, जो मेरे सुविचारित मत में अनुज्ञेय नहीं है।

6. उक्त कारणों से, मैं पुनरीक्षण अधिकारिता में आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने लायक कोई अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं पाता हूँ। इस पुनरीक्षण आवेदन में गुणागुण नहीं है, जिसे तद्नुसार खारिज किया जाता है। अवर न्यायालय अभिलेख संबंधित न्यायालय को तुरन्त वापस भेजा जाए।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

सुरेन्द्र उपाध्याय

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 738 of 2012. Decided on 6th November, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406/420 सह-पठित परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक भंग और छल—संज्ञान—जब तक प्रवंचना नहीं है, छल का अपराध आकृष्ट नहीं होता है—छल का अपराध गठित करने वाला प्रवंचना का प्रथम तत्व नहीं है क्योंकि परिवाद में किया गया अभिकथन कहीं नहीं दर्शाता है कि याची द्वारा कपटपूर्वक अथवा गैर ईमानदार रूप से उत्प्रेरित किए जाने पर परिवादी धन से अलग हुआ—भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 406 के अधीन अपराध गठित करने के लिए आवश्यक अवयव भी नहीं है—आदेश का वह भाग जिसके अधीन याची के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 406/420 के अधीन संज्ञान लिया गया है, अभिखंडित किया गया—आवेदन अंशतः अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 11 से 15)

अधिवक्तागण.—Mr. G.N. Chandra, For the Petitioner; APP, For the State; Mr. Atanu Banerjee, For the O.P. No.2.

आदेश

याची, राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन दिनांक 11.8.2010 के आदेश, जिसके द्वारा और जिसके अधीन याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406/420 के अधीन और परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन भी दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया है, सहित चास पी॰ एस॰ केस सं॰ 126 वर्ष 2007 (जी॰ आर॰ सं॰ 1095 वर्ष 2007) की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

3. पक्षों की ओर से किए गए निवेदनों को ध्यान में लेने से पहले परिवादी के मामले को ध्यान में लेने की आवश्यकता है:—

4. परिवादी का मामला यह है कि परिवादी और याची के बीच व्यावसायिक संबंध था और उस क्रम में याची ने यह वादा करते हुए मित्रवत कर्ज लिया कि इसे चार माह के भीतर लौटा दिया जाएगा।

चार माह बीतने के बावजूद, जब धन का भुगतान नहीं किया गया था, याची को भुगतान करने के लिए रिमांइडर दिया गया था और तब परिवादी के पक्ष में 1,00,000/- रुपयों का चेक जारी किया गया था जिसका जमा किए जाने पर अनादर कर दिया गया था।

5. ऐसे अभिकथन पर, परिवाद मामला सं॰ 186 वर्ष 2002 दर्ज किया गया था जिसे संबंधित पुलिस थाना के समक्ष इसके संस्थापन एवं अन्वेषण के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 156 (3) के अधीन भेजा गया था जिस पर भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406/420 के अधीन और परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन भी चास पी॰ एस॰ केस सं॰ 126 वर्ष 2007 (जी॰ आर॰ सं॰ 1095 वर्ष 2007) दर्ज किया गया था।

6. आरोप-पत्र दाखिल करने के बाद भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406/420 के अधीन और परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन भी दिनांक 11.8.2010 के आदेश के तहत अपराध का संज्ञान लिया गया था जो चुनौती के अधीन है।

7. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि संपूर्ण अभिकथन को सत्य मानने पर भी भारतीय दंड संहिता की धारा 406 अथवा 420 के अधीन अपराध नहीं बनता है, चूँकि याची जो कपटपूर्वक अथवा गैरईमानदार रूप से परिवादी को धन से अलग होने के लिए उत्प्रेरित करने का अभिकथन कभी नहीं किया गया है बल्कि यह केवल वादा भंग करने का मामला है और तद्द्वारा न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406 और 420 के अधीन अपराध का संज्ञान लेने में अवैधता किया था।

8. इसके विरुद्ध, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता श्री अतानु बनर्जी निवेदन करते हैं कि आरंभ से ही परिवादी से कर्ज लेने के बाद धन वापस करने का आशय नहीं था और, तद्द्वारा छल का अपराध निश्चय ही बनता है और इसलिए, संज्ञान लेने वाले आदेश का अभिखंडन अपेक्षणीय नहीं है।

9. पक्षों की ओर से किए गए निवेदनों के संदर्भ में भारतीय दंड संहिता की धारा 415 को ध्यान में लेने की आवश्यकता है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*^^**Ny-**&tk dkb fdlh 0;fDr l iopuk dj ml 0;fDr dk] ftl bl idkj iofpr fd;k x;k g] diViod ;k cbekuh l mRifjr djrk g fd og dkb lifUk fdlh 0;fDr dk ifjnÙk dj n] ;k ;g lEefr n n fd dkb 0;fDr fdlh lifÙk dk j[k j[k ;k lk'k; ml 0;fDr dk] ftl bl idkj iofpr fd;k x;k g] mRifjr djrk g fd og dkb ,lk dk; dj] ;k dju dk yki dj ftl og ;fn ml gj idkj iofpr u fd;k x;k gk rk] u djrk] ;k dju dk yki u djrk] vkj ftl dk; ;k yki l ml 0;fDr dk 'kkjhfjd] ekufld] [;kfr lcèkh ;k lkifÙkd udlku ;k vigkfu dkfjr gkrh g] ;k dkfjr gkuh lHkk0; g] og ^^Ny** djrk g] ;g dgk tkrk gA***

10. इसके पठन से प्रतीत होता है कि छल का अपराध गठित करने के लिए निम्नलिखित अवयवों को आवश्यकत: होना चाहिए:–

(1) mldk çofpr djr g, 0;fDr dk diVi.k vFkok xjbekunkj vk'k; gkuk pkfg,A

(2) (a) bl çdkj çofpr 0;fDr dk fdlh 0;fDr dk dkb lifÙk nu vFkok ;g lgefr nu fd dkb 0;fDr fdlh lifÙk dk viu ikl j[k ldrk g] d fy, mRçfjr fd;k tkuk pkfg,] vFkok

(b) bl çdkj çofpr 0;fDr dk fdlh pht dk dju vFkok ugh dju tk og lkekU;r% ugh djxk vFkok djxk ;fn ml bl çdkj çofpr ugh fd;k x;k gkrk] d fy, vk'k;iod çofpr fd;k tkuk pkfg,A

(3) 2 (b) }kjk vkPNkfnr ekeyk e ÑR; vFkok yki , lk gkuk pkfg, tk mRçfjr fd, x, 0;fDr dk 'kkjhfjd :i l vFkok mldh çfr"Bk ;k lifÙk dk udlku ;k gkfu dkfjr djrk g vFkok bld dkfjr fd, tku dh lHkkouk gA

11. इस प्रकार, छल का अपराध गठित करने के लिए आवश्यक प्रथम तत्व अभियुक्त द्वारा परिवादी की प्रवंचना है। जब तक प्रवंचना नहीं है, छल का अपराध आकृष्ट नहीं होता है। प्रवंचित किए जाने के बाद प्रवंचित किए गए व्यक्ति को कुछ करने अथवा नहीं करने के लिए उत्प्रेरित किया जाना चाहिए।

12. अभिकथन के संदर्भ में छल का दांडिक अपराध गठित करने वाले सिद्धांत को लागू करने पर प्रतीत होता है कि छल का अपराध गठित करने वाले प्रवंचना का प्रथम तत्व नहीं है क्योंकि परिवाद में किया गया अभिकथन कहीं नहीं उपदर्शित करता है कि याची द्वारा कपटपूर्वक अथवा गैरईमानदार रूप से प्रवंचित किए जाने पर परिवादी धन से अलग हुआ और इसलिए, प्रवंचना के आवश्यक अवयव नहीं हैं।

13. इसी प्रकार, भारतीय दंड संहिता की धारा 406 के अधीन अपराध गठित करने के लिए आवश्यक अवयव नहीं है।

14. तद्नुसार, न्यायालय भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406/420 के अधीन अपराध का संज्ञान लेने में अवैधता करता प्रतीत होता है और इसलिए, आदेश का वह भाग जिसके अधीन याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406/420 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया है, एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

15. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अंशतः अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

श्रीमती लिलमुनि मांझीयाइन

cuke

भारत कोकिंग कोल लि॰ एवं अन्य

WP(S) No. 5172 of 2004. Decided on 7th November, 2012.

श्रम एवं औद्योगिक विधि—अनुकंपा पर नियुक्ति—आवेदन पर निर्णय नहीं लिया गया—मृतक कर्मकार अपनी मृत्यु के पहले 12 वर्ष तक कर्तव्य से अनुपस्थित बना रहा—उसे अनुपस्थिति की संपूर्ण अवधि के लिए वेतन का भुगतान नहीं किया गया था—मृतक कर्मचारी की मृत्यु की तिथि के पहले 12 वर्ष तक भी विधवा और उसके परिवार के सदस्य मृतक कर्मचारी के किसी वेतन के बिना जीवित रहे—मृतक कर्मचारी के परिवार को तुरन्त अनुतोष प्रदान करने के आशय से अनुकंपा पर नियुक्ति किया जाता है—याचिका खारिज। (पैराएँ 6 से 8)

निर्णयज विधि.—2007 (4) JLJR 144 (SC)—Referred.

अधिवक्तागण.—M/s. R. Pradhan & S. Bhattacharjee, For the Petitioner; Mr. Amit Kumar Sinha, For the Respondents.

आदेश

दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची विधवा इस न्यायालय के समक्ष इस तथ्य के कारण कि उसके पति की मृत्यु प्रत्यर्थी बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ की सेवा में रहते हुए दिनांक 31.10.2000 को हो गयी थी, राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार के खंड 9.3.2 के अधीन योजना के निबंधनानुसार उसको रोजगार देने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश जारी करने के लिए आयी है। तत्पश्चात् याची ने दिनांक 14 मई, 2001 को अपना आवेदन, परिशिष्ट–2, दाखिल किया। तत्पश्चात् याची को अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए विहित फॉर्म, (परिशिष्ट–3), में आवेदन देने के लिए कहा गया था और तद्नुसार उसने पहचान प्रमाण पत्र के साथ सम्यक रूप से सत्यापित और अनुप्रमाणित आवेदन, परिशिष्ट 4, दिया किंतु प्रत्यर्थीगण ने न तो अनुकंपा पर नियुक्ति देने से इनकार किया और न ही इसे प्रदान किया। अत: याची विधवा पूर्वोक्त अनुतोष के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय के पास आयी।

3. याची के अधिवक्ता ने **मोहन महतो बनाम सी॰ सी॰ एल॰, 2007 (4) JLJR 144 (SC),** मामले में निर्णय पर विश्वास किया है और निवेदन किया है कि प्रत्यर्थीगण आई॰ डी॰ अधिनियम की धारा 18 के अधीन कर्मचारी और यूनियन के साथ किए गए राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार से बाध्य है और करार के निबंधनों और शर्तों से मुकर नहीं सकते हैं जिसके द्वारा वे मृतक कर्मकार, जिसकी मृत्यु सेवा में रहते हुए हो गयी, के आश्रित को अनुकंपा पर नियुक्ति देने के लिए बाध्य है। आगे निवेदन किया गया है कि याची को प्रत्यर्थीगण द्वारा 30,000/- रुपयों की राशि का जीवन आच्छादन योजना का लाभ दिया गया है जिसका अर्थ है कि नियोक्ता ने कर्मकार को सेवारत माना है। आगे निवेदन किया गया है कि मृतक कर्मकार की सेवा कभी समाप्त नहीं की गयी थी और वह अपनी मृत्यु तक सेवा में बना रहा है।

4. प्रत्यर्थीगण उपस्थित हुए हैं और अपना प्रति शपथपत्र दाखिल किया है। प्रत्यर्थीगण का दृष्टिकोण है कि याची का पति स्व॰ रामू मांझी दिनांक 23.4.1988 से अपनी मृत्यु तक कर्तव्य से लगातार अनुपस्थित रहा था। पूर्वोक्त कारण से छुट्टी की मंजूरी के बिना कर्तव्य से आदतवश अनुपस्थित रहने के कारण वर्ष 1994 में उसके विरुद्ध आरोप–पत्र जारी किया गया था। कर्मकार द्वारा प्रस्तुत लिखित स्पष्टीकरण संतोषजनक नहीं पाया गया था और तत्पश्चात उसे जाँच अधिकारी के समक्ष उपस्थित होने के लिए कहा गया था और अवसर दिए जाने के बावजूद वह ऐसा करने में विफल रहा और न तो उसने अपना कर्तव्य पुन: ग्रहण करने के लिए रिपोर्ट किया और न ही किसी वेतन के भुगतान के संबंध में कोई दावा किया। तत्पश्चात् दिनांक 31 अक्टूबर, 2000 को कर्मकार की मृत्यु हो गयी। आगे निवेदन किया गया है कि मृतक कर्मकार की विधवा को 41,642/- रुपयों के अनुदान और अन्य लाभों का भुगतान किया गया है।

5. अत:, प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अनुकंपा पर नियुक्ति मृतक कर्मचारी, जिसकी मृत्यु सेवा में रहते हुए हो गयी, के परिवार को तुरन्त अनुतोष प्रदान करने के लिए अभिप्रेत है किंतु वर्तमान मामले में चूँकि प्रश्नगत कर्मकार वर्ष 1988 से अपनी मृत्यु की तिथि तक कर्तव्य से अनुपस्थित बना रहा है, कर्मकार को वेतन का भुगतान नहीं किया गया था और इसलिए मृतक कर्मकार के वेतन के स्रोत के बिना परिवार जीवित प्रतीत होता है। अत: निवेदन किया गया है कि वर्तमान मामले में मृतक के आश्रित को अनुकंपा पर नियुक्ति प्रदान करने के लिए मामला नहीं बनता है क्योंकि मृतक कर्मकार के आय के स्रोत के बिना उसका परिवार इतने दिनों तक जीवित रहा। आगे निवेदन किया गया है कि याची के अनुसार वह आवेदन के समय पर 40 वर्ष की थी और एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ मार्गदर्शक सिद्धांत के मुताबिक 45 वर्ष की आयु तक मृतक के महिला आश्रित को रोजगार दिया जा सकता है और इस समय पर याची विधवा की आयु काफी ज्यादा है।

6. मैंने पक्षों के अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। पक्षों के निवेदन से सामने आने वाले निर्विवादित तथ्य ये हैं कि मृतक कर्मकार अपनी मृत्यु के पहले कम से कम 12 वर्षों तक कर्तव्य से अनुपस्थित बना रहा था। उसे आरोप पत्रित किया गया था पर उसने जाँच में भाग नहीं लिया था, न ही वह अपनी मृत्यु तक अपने कर्तव्य पर वापस लौटा था। संपूर्ण अवधि जिसके दौरान वह अनुपस्थित था के लिए उसे वेतन भुगतान नहीं किया गया था। मृतक कर्मकार की विधवा ने कर्मकार की मृत्यु पर अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए इस आधार पर आवेदन दिया कि मृतक कर्मचारी की मृत्यु सेवा में रहते हुए हो गयी थी। वर्तमान मामले में मृतक कर्मचारी के किसी वेतन के बिना मृतक कर्मचारी की मृत्यु की तिथि के पहले 12 वर्षों से ही विधवा और उसका परिवार जीवित रहा। याची द्वारा विश्वास किए गए निर्णय के मुताबिक यह सुनिश्चित है कि प्रबंधन और कर्मचारी यूनियन के बीच करार विरोधी पक्ष पर बाध्यकारी है। किंतु मृतक के आश्रित को अनुकंपा पर नियुक्ति प्रदान करना माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपने अनेक निर्णयों में अधिकथित सुनिश्चित सिद्धांत को ध्यान में लेकर करना है जिसमें यह मृतक कर्मचारी के परिवार को तुरन्त राहत अथवा अनुतोष प्रदान करने के लिए अभिप्रेत है।

7. इन तथ्यों और परिस्थितियों में, विधवा याची को अनुकंपा पर नियुक्ति नहीं प्रदान करने की प्रत्यर्थीगण की कार्रवाई में गलती नहीं निकाली जा सकती है। अतः, मैं इस मामले में कोई रिट अथवा निर्देश जारी करने का कारण नहीं पाता हूँ।

8. तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

अशोक कुमार साहनी उर्फ अशोक साहनी एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 305 of 2006. Decided on 2nd November, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 323/324/34—घोर उपहति–दोषसिद्धि–गवाहों के साक्ष्य में कोई तात्विक विरोधाभास नहीं है जिससे चश्मदीद गवाहों जिन्होंने मामले का समर्थन किया है के परिसाक्ष्य को झुठलाया जा सके–सूचक पर उपहति डॉक्टर द्वारा सिद्ध की गयी है–यद्यपि अवर विचारण न्यायालय द्वारा याचीगण के विरुद्ध मुख्य दंडादेश पारित किए गए थे किंतु अपीलीय न्यायालय ने याचीगण को परिवीक्षा का लाभ दिया है और पीड़ितों को मुआवजा अधिनिर्णीत किया है–अवर न्यायालयों द्वारा पारित आक्षेपित निर्णयों में अवैधता नहीं है–पुनरीक्षण आवेदन खारिज। (पैराएँ 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Manoj Kr. Sah, For the Petitioners; Miss Anita Sinha, A.P.P., For the State.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याचीगण दांडिक अपील सं॰ 35 वर्ष 2005 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, पाकुड़ द्वारा पारित दिनांक 28.3.2006 के निर्णय से व्यथित है जिसके द्वारा जी॰ आर॰ सं॰ 243 वर्ष 2003/टी॰ आर॰ सं॰ 64 वर्ष 2005 में विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, पाकुड़ द्वारा पारित दिनांक 14.9.2005 के निर्णय के विरुद्ध

दाखिल अपील विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा दंडादेश में उपांतरण के साथ खारिज कर दी गयी थी। यह कथन किया जा सकता है कि अवर विचारण न्यायालय ने याचीगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 323/324/34 के अधीन अपराधों का दोषी पाया था और उनको इसके लिए दोषसिद्ध किया था। दंडादेश के बिंदु पर सुनने पर विचारण न्यायालय ने याचीगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन अपराध के लिए छह माह का कठोर कारावास और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 324 के अधीन एक वर्ष का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया था और दोनों दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निर्देश दिया गया था। उक्त निर्णय के विरुद्ध दाखिल अपील अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा पारित दंडादेश को अपास्त करते हुए और याचीगण को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम का लाभ देते हुए और दो वर्षों की अवधि के लिए शांति बनाए रखने के लिए और अच्छा आचरण करने के लिए समान राशि की दो प्रतिभूतियों के साथ प्रत्येक को 2000/- रुपयों का परिवीक्षा बंध पत्र भरने का निर्देश देते हुए खारिज कर दी गयी थी। प्रत्येक याचीगण को मुआवजा के रूप में सूचक को 1000/- रुपयों का भुगतान करने का निर्देश भी दिया गया था। दंडादेश में इस उपांतरण के साथ याचीगण द्वारा दाखिल अपील खारिज कर दी गयी थी।

3. अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि सूचक रमेश चंद्र साहनी द्वारा दिए गए फर्दबयान के आधार पर यह अभिकथन करते हुए कि अभियुक्तगण विभिन्न हथियारों से लैस होकर उसके घर आए और उस पर प्रहार किया और उसे घायल किया, भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 448/323/325/307/504/34 के अधीन अपराधों के लिए पकुड़िया पी॰ एस॰ केस सं॰ 23 वर्ष 2003, जी॰ आर॰ सं॰ 243 वर्ष 2003 के तत्सम, संस्थापित किया गया था और अन्वेषण किया गया था। अन्वेषण के बाद, पुलिस ने याचीगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया।

4. अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि याचीगण का अंततः भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 और 324 के अधीन अपराधों के लिए विचारण किया गया था। विचारण के अनुक्रम में, सूचक और डॉक्टर सहित छह गवाहों का परीक्षण अभियोजन द्वारा किया गया था। इस मामले में आई॰ ओ॰ का परीक्षण नहीं किया गया था और एक गवाह अर्थात् अ॰ सा॰ 4 का साक्ष्य पूर्ण नहीं था और इस प्रकार उसका साक्ष्य अवर न्यायालय द्वारा विचार में नहीं लिया गया था। आक्षेपित निर्णय दर्शाता है कि अवर न्यायालयों ने अभियोजन द्वारा अभिलेख पर लाए गए साक्ष्यों को विचार में लिया था और इस तथ्य की दृष्टि में कि गवाहों ने अभियोजन मामले का पूरा समर्थन किया था, याचीगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 323 और 324 के अधीन दोषसिद्ध किया था। दंडादेश के बिंदु पर सुनवाई पर याचीगण को पूर्वोक्तानुसार दंडित किया गया था। उक्त निर्णय के विरुद्ध दाखिल अपील दंडादेश में उपांतरण के साथ खारिज कर दी गयी थी जैसा ऊपर उल्लिखित किया गया है।

5. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याचीगण को इस मामले में झूठा आलिप्त किया गया है और गवाहों के साक्ष्य में तात्विक विरोधाभास हैं और तद्नुसार, यह सुयोग्य मामला है जिसमें याचीगण को संदेह का लाभ दिया जाना चाहिए था। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आक्षेपित निर्णय विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

6. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालयों द्वारा पारित निर्णयों में अवैधता नहीं है और याचीगण की दोषसिद्धि और दंडादेश अभियोजन द्वारा दिए गए तर्कपूर्ण साक्ष्य पर आधारित है।

7. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि अवर न्यायालयों ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विस्तारपूर्वक चर्चा किया है और मैं गवाहों

के साक्ष्य में ऐसा कोई तात्विक विरोधाभास नहीं पाता हूँ जो चश्मदीद गवाहों, जिन्होंने मामले का समर्थन किया है, के परिसाक्ष्य को झुठला सके। सूचक पर उपहति अ॰ सा॰ 6 डॉ॰ अखिलेश कुमार द्वारा सिद्ध की गयी है और उपहति रिपोर्ट को प्रदर्श 2 के रूप में चिन्हित किया गया है। मैं यह भी पाता हूँ कि यद्यपि विद्वान अवर विचारण न्यायालय द्वारा याचीगण के विरुद्ध मुख्य दंडादेश पारित किए गए थे, किंतु विद्वान अपीलीय न्यायालय ने याचीगण को परिवीक्षा बंध पत्र भरने और मुआवजा के रूप में पीड़ित को भुगतान करने का निर्देश देते हुए उनको अपराधी परिवीक्षा अधिनियम का लाभ दिया है।

8. मैं अवर न्यायालयों द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय में पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप करने लायक कोई अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं पाता हूँ। इस पुनरीक्षण आवेदन में कोई गुणागुण नहीं है और तद्नुसार इसे अस्वीकार किया जाता है। अवर न्यायालय अभिलेख तुरन्त वापस भेजा जाए।

---

ekuuh; çkr dekj] U;k;efr

गौतम मंडल एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 626 of 2009. Decided on 2nd November, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 177, 178 एवं 407—क्षेत्रीय अधिकारिता–संपूर्ण घटना गोड्डा अवस्थित परिवादी के दांपत्य गृह में हुई–राजमहल न्यायालय को मामले का विचारण करने की क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं है–किंतु, चूँकि राजमहल और गोड्डा झारखंड उच्च न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकारिता के अंतर्गत अवस्थित हैं, अवर न्यायालय को परिवाद याचिका परिवादी को लौटाने के लिए निर्देश देने के बजाए परिवाद मामला एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, राजमहल के न्यायालय से एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, गोड्डा के न्यायालय को विचारण के लिए अंतरित किया गया। (पैराएँ 4 से 7)

निर्णयज विधि.–2008 (3) JLJR 287 (SC)—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Uday Kant Thakur, For the Petitioners; Mr. Prem Prakash, APP, For the State; Mr. Din Dayal Saha, For the O.P. No.2.

आदेश

यह आवेदन विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, राजमहल, साहेबगंज के न्यायालय में लंबित पी॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 594 वर्ष 2008 के संबंध में संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है।

2. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि संपूर्ण घटना घाटपहाड़पुर कस्बा, गोड्डा में हुई थी। अत:, राजमहल न्यायालय को वर्तमान परिवाद याचिका ग्रहण करने की अधिकारिता नहीं है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने 2008 (3) JLJR SC 287 में प्रकाशित माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया।

3. विरोधी पक्षकार के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि उक्त निर्णय के परिशीलन से स्पष्ट है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्देश दिया है कि सक्षम न्यायालय के समक्ष इसे दाखिल करने के

लिए परिवादी को परिवाद वापस लौटा दिया जाए। उक्त परिस्थिति के अधीन वह निवेदन करते हैं कि चूँकि सिविल न्यायालय, राजमहल और सिविल न्यायालय, गोड्डा इस न्यायालय की क्षेत्रीय अधिकारिता के अंतर्गत आते हैं, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 407 में अंतर्विष्ट प्रावधानों के मुताबिक मामला गोड्डा के सक्षम न्यायालय को अंतरित किया जाए।

4. निवेदनों को सुनने पर मैंने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है। परिवाद याचिका के परिशीलन से, यह स्पष्ट है कि समस्त घटना परिवादी के ससुराल में हुई थी जो घाटपहाड़पुर, कस्बा–गोड्डा में अवस्थित है। इस प्रकार, मैं पाता हूँ कि राजमहल न्यायालय को वर्तमान मामला का विचारण करने की क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं है। किंतु, चूँकि राजमहल और गोड्डा इस न्यायालय की क्षेत्रीय अधिकारिता के अधीन अवस्थित हैं, अत:, अवर न्यायालय को परिवाद याचिका परिवादी को लौटाने का निर्देश देने के बजाए मैं एतद् द्वारा पूर्वोक्त परिवाद मामला को विचारण के लिए एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, राजमहल के न्यायालय से एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, गोड्डा के न्यायालय को अंतरित करता हूँ।

5. दोनों पक्षों, जिनका प्रतिनिधित्व उनके अधिवक्ता द्वारा किया गया है, को एस॰ डी॰ जे॰ एम॰ गोड्डा के समक्ष 7 दिसंबर, 2012 को उपस्थित होने का निर्देश दिया जाता है।

6. एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, राजमहल को जिला न्यायाधीश, साहेबगंज के माध्यम से पूर्वोक्त परिवाद मामले के अभिलेख को जिला न्यायाधीश, गोड्डा के पास आवश्यक कार्यों के लिए भेजने का निर्देश दिया जाता है।

7. पूर्वोक्त संप्रेक्षण और निर्देश के साथ यह आवेदन निस्तारित किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o ç'kkr dekj] U;k;efrx.k

महादेव सिंह

cuke

झारखण्ड राज्य

I.A. No. 2151 of 2011 in Cr. App.(DB) No. 1519 of 2007. Decided on 6th November, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—दंडादेश का निलंबन–हत्या के लिए दोषसिद्धि–चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य डॉक्टर, जिन्होंने मृतक का शव परीक्षण किया है, द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य से पर्याप्त संपुष्टि पाता है उच्च न्यायालय द्वारा पहले दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना अस्वीकार कर दी गयी और समय बीतने के सिवाए परिस्थिति में कोई परिवर्तन नहीं है–यह अभिवचन कि अपीलार्थी 70 वर्ष की आयु का है और उस आधार पर दंडादेश के आदेश को निलंबित करना ही होगा, स्वीकार नहीं किया गया–अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा निभायी गयी भूमिका, अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसमें अपीलार्थी अपराध में अंतर्ग्रस्त है को देखते हुए न्यायालय अपीलार्थी-अभियुक्त को अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित करने का इच्छुक नहीं है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 2, 7 एवं 8)

निर्णयज विधि.–AIR 2008 S.C. 1882; (2002)9 SCC 366; (2004)6 SCC 175—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Kailash Prasad Deo, For the Appellant; A.P.P., For the State.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति के मुताबिक.–वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन सत्र केस सं॰ 57 वर्ष 1995/ 32 वर्ष 2003 में विद्वान प्रथम सत्र न्यायाधीश, जामतारा द्वारा वर्तमान अपीलार्थी जो मूल अभियुक्त सं॰

1 है को अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन दाखिल की गयी है।

2. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों को देखते हुए प्रतीत होता है कि वर्तमान अपीलार्थी–अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, अत: हम अभिलेख पर साक्ष्यों का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे है किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि अभियोजन का मामला अनेक चश्मदीद गवाहों पर आधारित है जो अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3 और अ॰ सा॰ 4 हैं। इन चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 5 डॉ॰ एन॰ के॰ लाल, जिन्होंने मृतक का शव परीक्षण किया है, द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य से पर्याप्त संपुष्टि पा रहे हैं। अपीलार्थी–अभियुक्त द्वारा कारित मस्तक की उपहति हुई है। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 3 घायल चश्मदीद गवाह हैं। इसके अतिरिक्त, इस न्यायालय द्वारा पहले दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना अस्वीकार कर दी गयी है और समय बीतने के सिवाए परिस्थिति में कोई परिवर्तन नहीं है।

3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया कि अपीलार्थी 70 वर्ष की आयु का है और अपीलार्थी एवं पीड़ितों के विरुद्ध मामला और प्रति मामला है।

4. खिलाड़ी बनाम उ॰ प्र॰ राज्य एवं एक अन्य, AIR 2008 SC 1882, में विशेषत: पैराग्राफ 10 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

"10. vuojh cxe cuke 'kj ekgEen ,o ,d vU;] [2005 (7) SCC 326], e vU; ckrk d lkFk fuEufyf[kr lçf{kr fd;k x;k Fkk%

"7. mPp U;k;ky; d vkn'k dk ljlj ifj'kyu Hkh n'kkrk g fd food dk bLreky ugh fd;k x;k gA ;|fi tekur vkonuk ij vkn'kk dk ikfjr djr g, U;k;ky; dk lk{; dk foLrr ijh{k.k vkj ekey d x.kkx.kk d foLrr nLrkoth dj.k l cpuk gkxk] fQj Hkh tekur vkonuk ij fopkj djr g, U;k;ky; dk lr"V gkuk pkfg, fd D;k çFke n"V;k ekeyk curk g fdr ekey d x.kkx.k dh lokxh.k Nkuchu vko';d ugh gA tekur vkonu ij fopkj dju oky U;k;ky; dk U;k;kfpr rjhd l vkj u fd LokHkkfod :i l viu Lofood dk bLreky dju dh vko';drk gkrh gA

8. çFke n"V;k ;g fu"df"kr dju oky dkj.kk dk vkn'k e minf'kr dju dh vko';drk g fd D;k tekur çnku fd;k tk jgk Fkk fo'k"kr% tgk vfHk;Dr ij xHkhj vijkèk dju dk vkjki yxk;k x;k gA tekur vkonu ij fopkj dju oky U;k;ky;k d fy, tekur çnku dju d igy vU; ifjfLFkfr;k d lkFk fuEufyf[kr dkjdk ij fopkj djuk vko';d g%&

(1) vfHk;kx dh çÑfr vkj nk"kf If) dh fLFkfr e nM dh dBkjrk vkj leFkudkjh lk{; dh çÑfr(

(2) xokg d lkFk NMNkM dju dh ;fDr;Dr vk'kdk vFkok ifjokn dk èkedku dh vk'kdk(

(3) vkjki d leFku e U;k;ky; dh çFke n"V;k lrf"VA

*,l dkj.kk l vlc) dkb vkn'k food d xj bLreky l ihfMr gkrk g tl jkexkfoUn mikè;k; cuke ln'ku flg ,o vU;] (2002)3 SCC 598, iju vkfn cuke jkefcykl ,o ,d vU;] (2001)6 SCC 338; vkj dY;k.k pn ljdkj cuke jkt'k jtu ÅQ ili ;kno ,o ,d vU;] JT 2004 (3) SC 442 e bl U;k;ky; }kjk xkj fd;k x;k FkkA** (tkj fn;k x;k)*

5. रामजी प्रसाद बनाम रतन कुमार जायसवाल एवं एक अन्य, (2002)9 SCC 366 में पैराग्राफ सं॰ 3 पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

*"3. ,l ekey e bl vkiokfnd jkLrk dk viuku dfy, fo}ku ,dy U;k;kèkh'k }kjk dkb dkj.k fcYdy ugh fn;k x;k g tgk vfHk;Dr dk Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 302 d vèkhu fopkj.k U;k;ky; }kjk nk"kh ik;k x;k FkkA ,l ekeyk e lkekU; çFkk nMkn'k dk fuycu ugh g vkj doy vkiokfnd ekeyk e nMkn'k d fuycu dk ykHk çnku fd;k tk ldrk gA*** (tkj fn;k x;k)*

6. हरियाणा राज्य बनाम हसमत, (2004)6 SCC 175, के मामले में पैराग्राफ सं॰ 6 से 9 परं माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

"6. lfgrk dh èkkjk 389 vihy yfcr jgr g, nMkn'k d fu"iknu d fuycu vkj tekur ij vihykFkh dh fuefDr ij fopkj djrh gA tekur vkj nMkn'k d fuycu d chp lfHkUurk gA nMkn'k d fu"iknu vFkok vihy fd, x, vkn'k d fuycu dk vkn'k nu d fy, fyf[kr e dkj.kk dk nt dju dh vihyh; U;k;ky; dh vko';drk èkkjk 389 d vko';d vo;ok e l ,d gA ;fn og dkjk e cn g] mDr U;k;ky; fun'k n ldrk g fd ml tekur ij vFkok Lo; mld cèk i= ij fueDr fd;k tk,A fyf[kr e dkj.k nt dju dh vko';drk minf'kr djrh g fd çklfxd igyvk ij lkoèkkuhiod fopkj djuk gkxk vkj nMkn'k d fuycu dk fun'k nu okyk vkn'k vkj tekur dk çnku #Vhu rjhd l ikfjr ugh fd;k tkuk pkfg,A

7. vihyh; U;k;ky; ekey dk oLrijd vkdyu dju vkj bl fu"d"k fd ekeyk nMkn'k d fu"iknu dk fuycu vkj tekur çnku dju dh vi{kk djrk g] d fy, dkj.k nt dju d fy, drO;c) gA oreku ekey e] ,dek= dkjd] tk nMkn'k d fuycu vkj tekur çnku dju dk fun'k nu d fy, mPp U;k;ky; ij otu Mkyrk g] vfHk;Dr çR;Fkh dk çnku fd, x, ijky dh vofèk d nkjku Lor=rk d n#i;kx d vfHkdFku dh vuifLFkfr gA

8. fo}ku l= U;k;kèkh'k] xMxko u fnukd 24.10.2001 d fu.k; }kjk vfHk;Dr çR;Fkh dk nk"kh ik;k FkkA çR;Fkh }kjk nkfMd vihy lO 100 (MhO chO) o"k 2002 nkf[ky fd;k x;k FkkA ;g rF; fd vihy yfcr jgu d nkjku vfHk;Dr&çR;Fkh ijky ij Fkk] n'kkrk g fd vkjHk e vfHk;Dr çR;Fkh dk nMkn'k d fu"iknu d fuycu dk ykHk ugh fn;k x;k FkkA ;g rF; ek= fd ijky dh vofèk d nkjku vfHk;Dr u Lor=rk dk n#i;kx ugh fd;k g] Lor% nMkn'k d fu"iknu d fuycu vkj tekur çnku dju dh vi{kk ugh djrk gA mPp U;k;ky; dk ftl ij fopkj dju dh oLrr% vko';drk Fkh] og ;g Fkk fd D;k nMkn'k d fu"iknu dk fuyfcr dju vkj rRi'pkr tekur çnku dju dk dkj.k fo|eku FkkA mPp U;k;ky; lgh fl)kr dk nf"V e j[krk çrhr ugh gkrk gA

9. fot; dekj cuke ujUn vkj jketh çlkn cuke jru dekj tk;loky e bl U;k;ky; }kjk vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd HkkO nO lO dh èkkjk 302 d vèkhu nk"kflf) vrxLr dju oky ekeyk e] doy vkiokfnd ekeyk e nMkn'k d fuycu dk ykHk çnku fd;k tk ldrk gA mPp U;k;ky; dk vk{kfir vkn'k bl vko';drk dk ijk ugh djrk gA fot; dekj ekey e vfHkfuèkkfjr fd;k

*x;k Fkk fd HkkO nO lO dh èkkjk 302 d vèkhu nMuh; gR;k tl xHkhj vijkèk dk vrxLr dju oky ekey e tekur dh çkFkuk ij fopkj dju e U;k;ky; dk vfHk;Dr d fo#) yxk, x, vkjki dh çÑfr] rjhdk ftl l vijkèk vfHkdfFkr :i l fd;k x;k g] vijkèk dh xHkhjrk vkj gR;k d xHkhj vijkèk dk dju d fy, mudk nk"kfl) fd, tku d ckn vfHk;Dr dk tekur ij fueDr dju dh okNuh;rk tl çklfxd dkjdk ij fopkj djuk pkfg,A vk{kfir vkn'k ikfjr djr g, mPp U;k;ky; }kjk bu igyvk ij fopkj ugh fd;k x;k gA** (tkj fn;k x;k)*

7. पूर्वोक्त निर्णयों की दृष्टि में, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता का प्रतिवाद कि अपीलार्थी 70 वर्ष का है और, इसलिए, दंडादेश का आदेश निलंबित किया जाना चाहिए, इस न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है। यह ध्यान में रखना होगा कि यह सब प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

8. पूर्वोक्त तथ्यों की दृष्टि में और अपीलार्थी अभियुक्त द्वारा निभायी गयी भूमिका को देखते हुए और अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीके जिसमें वर्तमान अपीलार्थी अपराध में अंतर्ग्रस्त है, जैसा अभियोजन द्वारा अभिकथित किया गया है को देखते हुए हम वर्तमान अपीलार्थी अभियुक्त को विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं। अतः, निलंबन की प्रार्थना अस्वीकार की जाती है।

9. तद्नुसार, आई॰ ए॰ सं॰ 2151 वर्ष 2011 खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

डालो राम उर्फ डालो रवानी एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 585 of 2003. Decided on 1st November, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 147, 148, 149, 323 एवं 324—घोर उपहति एवं बलवा–दोषसिद्धि–अवर न्यायालयों द्वारा अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य पर समुचित रूप से विचार किया गया–अवर अपीलीय न्यायालय ने याचीगण के विरुद्ध पारित दंडादेश अपास्त कर दिया और प्रत्येक याची को 5000/- रुपया का मिश्रित जुर्माना जमा करने का निर्देश दिया गया–आक्षेपित निर्णयों में कोई अवैधता नहीं है–पुनरीक्षण आवेदन खारिज। (पैराएँ 3 से 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Shailesh, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याचीगण ने दांडिक अपील सं॰ 15 वर्ष 2002 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश–IX, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 4.3.2003 के निर्णय को चुनौती दिया है, जिसके द्वारा जी॰ आर॰ केस सं॰ 1318 वर्ष 1986/टी॰ आर॰ सं॰ 133 वर्ष 2002 में श्री डी॰ के॰ मिश्रा, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 28.1.2002 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध दाखिल अपील विद्वान अपीलीय न्यायालय द्वारा दंडादेश में उपांतरण के साथ अंशतः अनुज्ञात की गयी थी।

3. अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि याचीगण को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 148, 149, 323 और 324 के अधीन अपराधों का दोषी पाया गया था और उन्हें इसके लिए दोषसिद्ध किया गया है और दंडादेश के बिंदु पर सुनवाई करने पर याचीगण को पूर्वोक्त अपराधों के लिए प्रत्येक को एक वर्ष का साधारण कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था। तत्पश्चात्, याचीगण ने उक्त निर्णय के विरुद्ध अपील दाखिल किया जिसे विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा दंडादेश में उपांतरण के साथ अंशत: अनुज्ञात किया गया था और अवर विचारण न्यायालय द्वारा पारित दंडादेश अपास्त कर दिया गया था और इन दोनों याचीगण को पूर्वोक्त अपराधों के लिए प्रत्येक को 5000/- रुपया के मिश्रित जुर्माना का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था।

4. अवर न्यायालयों द्वारा पारित निर्णयों से प्रकट है कि अवर न्यायालयों ने अभियोजन द्वारा अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य पर समुचित रूप से विचार किया है और याचीगण के विरुद्ध दोषसिद्धि का निर्णय दर्ज किया है। अवर अपीलीय न्यायालय ने याचीगण के विरुद्ध पारित दंडादेश को अपास्त कर दिया है और याचीगण में से प्रत्येक को पूर्वोक्त अपराधों के लिए 5000/- रुपयों का मिश्रित जुर्माना जमा करने का निर्देश दिया गया था।

5. मामले के तथ्यों में, मैं पुनरीक्षण अधिकारिता में आक्षेपित निर्णयों में हस्तक्षेप करने लायक कोई अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं पाता हूँ। इस पुनरीक्षण आवेदन में गुणागुण नहीं है जिसे तद्नुसार खारिज किया जाता है। अवर न्यायालय अभिलेख को तुरन्त वापस भेजा जाए।

---

ekuuh; vkjs vkjs çlkn] U;k;efr

चंद्रानाथ बनर्जी

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 358 of 2010. Decided on 6th November, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 420—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—छल–समय पर भवन निर्माण नहीं किया गया और कम क्षेत्रफल वाला फ्लैट परिवादी को आवंटित किया गया–करार किए जाते समय जब व्यपदेशन किया गया था कि वह परिवादी को 2000 वर्गफीट क्षेत्रफल वाला फ्लैट बेचेगा, ऐसे आश्वासन पर 15 लाख रुपयों की राशि का भुगतान किया गया था किंतु 1690 वर्ग फीट क्षेत्रफल माप वाला फ्लैट आवंटित किया गया था–परिवाद में किए गए अभिकथन की दृष्टि में सत्र न्यायाधीश ने सही प्रकार से नए जाँच के लिए आक्षेपित आदेश पारित किया–आवेदन खारिज। (पैराएँ 9 से 11)

निर्णयज विधि.–(2009)3 SCC 78—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Rajesh Kumar, For the Petitioner; A.P.P., For the State; Mr. Sumeer Gadodia, For the O.P. No.2.

आदेश

यह आवेदन दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 143 वर्ष 2009 में विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 15.2.2010 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन विद्वान सत्र न्यायाधीश ने परिवाद खारिज करते हुए सी॰–1 केस सं॰ 2107 वर्ष 2008 में पारित दिनांक 18.3.2009 के आदेश को अपास्त करके आगे जाँच करने और नया आदेश पारित करने के लिए मामला वापस भेज दिया।

2. परिवादी का मामला, जैसा परिवाद याचिका से यह प्रतीत होता है, कि परिवादी यह जानने पर कि मेसर्स लोकनाथ बिल्डर्स प्रा॰ लि॰, जिसका याची निदेशक है, भूमि के एक टुकड़े के ऊपर आवासीय फ्लैट, पार्किंग स्थल, आदि से गठित बहुमंजिला इमारत के निर्माण का प्रस्ताव दे रहा है, एक आवासीय फ्लैट खरीदने के लिए याची के पास गया जिस पर याची 850/- रुपया प्रति वर्ग फीट की दर पर 2000 वर्ग फीट माप वाला सामने के निकास वाला आवासीय फ्लैट देने के लिए सहमत हुआ। ऐसा प्रस्ताव स्वीकार करने पर परिवादी ने याची को अग्रिम 15 लाख रुपयों का भुगतान किया ताकि वादा किए गए छह माह के भीतर फ्लैट पा सके। भवन समय के भीतर, जैसा वादा किया गया था, नहीं बनाया गया था। जब निर्माण शुरू हुआ, परिवादी द्वारा एक पत्र प्राप्त किया गया था जिसके द्वारा सूचित किया गया था कि 1690 वर्ग फीट क्षेत्रफल वाला प्रथम तल का एक फ्लैट उसे आवंटित किया गया है यद्यपि करार करते समय अभियुक्तगण ने 2000 वर्ग फीट माप वाला फ्लैट आवंटित करने का वादा किया था।

3. आगे मामला यह है कि यदि करार के समय स्पष्ट कर दिया जाता कि वे 2000 वर्ग फीट माप वाला फ्लैट आवंटित नहीं करेंगे, उसने फ्लैट बुक नहीं किया होता। इस प्रकार, इस अभिकथन पर कि अभियुक्तगण ने छल किया था, परिवादी ने परिवाद दाखिल किया जिसे परिवाद केस सं॰ 407 वर्ष 2008 के रूप में दर्ज किया गया था।

4. परिवाद दाखिल करने पर, विद्वान दंडाधिकारी ने जाँच किया और जाँच करने के बाद जब यह पाया गया था कि कोई मामला नहीं बनता है, उन्होंने परिवाद खारिज कर दिया।

5. परिवाद खारिज करने वाले आदेश के विरुद्ध विद्वान सत्र न्यायाधीश के समक्ष दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 143 वर्ष 2009 दाखिल किया गया था। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर पाया कि विद्वान दंडाधिकारी ने परिवाद खारिज करने में गलती किया था क्योंकि परिवाद में किया गया अभिकथन अपराध गठित करता था। तद्नुसार, विद्वान दंडाधिकारी द्वारा पारित आदेश अपास्त कर दिया गया था और जाँच करने एवं नया आदेश पारित करने के लिए मामला दंडाधिकारी के समक्ष भेज दिया गया था। वह आदेश चुनौती के अधीन है।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि संपूर्ण अभिकथन को सत्य मानने पर भी छल का मामला नहीं बनता है बल्कि यह सिविल दायित्व का मामला बनाता है, क्योंकि परिवाद में किए गए अभिकथन के अनुसार याची अपना वादा पूरा करने में विफल रहा और याची की ओर से कोई आपराधिक आशय की अनुपस्थिति में याची को छल का अपराध करता नहीं कहा जा सकता है।

7. इस संबंध में विद्वान अधिवक्ता ने **वी॰ वाई॰ जोश एवं एक अन्य बनाम गुजरात राज्य एवं एक अन्य, (2009)3 SCC 78;** और दां॰ वि॰ या॰ सं॰ 0280 वर्ष 2010 के साथ दां॰ वि॰ या॰ सं॰ 806 वर्ष 2010 में इस न्यायालय द्वारा विनिश्चित **अभिजीत दास उर्फ बाबू उर्फ नारायण दास एवं निखिल सेन गुप्ता बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य** में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है।

8. इसके विरुद्ध, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि परिवाद में किए गए अभिकथन से, आसानी से इस निष्कर्ष पर आया जा सकता है कि यह केवल संविदा के भंग का मामला नहीं है बल्कि आरंभ से ही परिवादी के साथ छल करने का आपराधिक आशय था क्योंकि करार करते समय पर वादा किया गया था कि 2000 वर्गफीट माप वाला फ्लैट आवंटित किया जाएगा और केवल ऐसे वादा पर परिवादी ने फ्लैट बुक किया और 15 लाख रुपयों का भुगतान किया जो कुल प्रतिफल राशि का 88% है और तद्द्वारा छल का मामला बनता है।

9. इस संबंध में विधि के सिद्धांत सुनिश्चित हैं और इसे याची की ओर से निर्दिष्ट **वी॰ वाई॰ जोश एवं एक अन्य बनाम गुजरात राज्य एवं एक अन्य (ऊपर)** में दोहराया गया है कि छल का अपराध सिद्ध करने के लिए परिवादी अथवा अभियोजक को यह दर्शाने की आवश्यकता है कि वादा अथवा व्यपदेशन करते समय अभियुक्त का कपटपूर्ण अथवा गैरईमानदार आशय था। ऐसे मामले में जहाँ अपना वादा पूरा करने में अभियुक्त की ओर से विफलता के संबंध में अभिकथन किया जाता है, आरंभिक वादा करने के समय आपराधिक आशय की अनुपस्थिति में छल का मामला नहीं बनता है।

10. यहाँ वर्तमान मामले में, विद्वान सत्र न्यायाधीश ने परिवाद में किए गए अभिकथन कि करार करते समय जब वादा किया गया था कि वह परिवादी को 2000 वर्गफीट क्षेत्रफल वाला फ्लैट बेचेगा और ऐसे आश्वासन पर 15 लाख रुपयों का भुगतान किया गया था किंतु 1690 वर्गफीट माप वाला फ्लैट आवंटित किया गया था, को विचार में लेने पर पाया कि दंडाधिकारी ने यह अभिनिर्धारित करके कि छल का अपराध नहीं बनता है, परिवाद खारिज करने में गलती किया। मैं इस चरण पर कोई मत अभिव्यक्त नहीं करना चाहता हूँ क्योंकि याची सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में दंडाधिकारी द्वारा पारित किए जाने वाले आदेश की प्रतीक्षा किए बिना इस न्यायालय के पास आया है जबकि विद्वान दंडाधिकारी को संज्ञान के बिंदु पर अभी भी आदेश पारित करना है किंतु परिवाद में किए गए अभिकथन को दृष्टि में रखते हुए यह आसानी से कहा जा सकता है कि विद्वान सत्र न्यायाधीश ने आक्षेपित आदेश पारित करने में कोई गलती नहीं किया है और इसलिए, इसमें इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

11. तद्नुसार, यह आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

श्री प्रकाश सिंह उर्फ श्री बाबू

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (Cr.) No. 230 of 2011. Decided on 8th November, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 420, 467, 468 एवं 471—झारखंड उच्च न्यायालय नियमावली, 2001—नियम 397—याची पिता द्वारा संतानों का दोषपूर्ण परिरोध–उच्च न्यायालय द्वारा इस प्रभाव के निर्देश के बावजूद न्यायालय में संतानों को प्रस्तुत नहीं किया गया–माता न्याय इप्सित करते हुए यत्र-तत्र भटक रही है किंतु याची और उसके परिवार के सदस्य जो समझते हैं कि उन्हें धन, साधन और बाहुबल का घमंड है और वे अपने इच्छानुसार विधि का शासन दरकिनार करते हुए स्थिति अपने पक्ष में कर सकते हैं–स्वप्रेरणा पर याची के विरुद्ध अवमान कार्यवाही आरंभ की जानी चाहिए जो पूरी जानकारी रखते हुए आशयपूर्वक आदेश का अनुपालन करने से बचता रहा–झारखंड उच्च न्यायालय नियमावली, 2001 के नियम 397 के मुताबिक अवमान नोटिस जारी किया जाए। (पैराएँ 5, 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.–M/s P.C. Tripathy, Suman Tripathy, Bishnu Shankar Prasad, For the Petitioner; Mr. Abhay Mishra, For the State; M/s Manoj Choubey, Bhola Nath Ojha, For the Respondent No.2.

आदेश

यह अंतर्वर्ती आवेदन विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 द्वारा दाखिल किया गया है जिसमें प्रार्थना की गयी है कि चूँकि याची आशयपूर्वक दिनांक 31.10.2012 को पारित न्यायालय के आदेश की अवज्ञा कर रहा है और तीन संतानों, अर्थात् ऋषभ सिंह (पुत्र), तान्या एवं माही (दोनों पुत्रियाँ) को अपनी अभिरक्षा में अवैध रूप से दोषपूर्ण रूप से परिरुद्ध किया है, अत: इस रिट याचिका में इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 31.10.2012 के आदेश का अनुपालन करने के लिए गिरफ्तारी वारंट जारी किया जा सकता है।

2. उक्त आई॰ ए॰ के उत्तर में, याची ने भी अपना प्रत्युत्तर दाखिल किया है और इसमें कथन किया है कि आरक्षित टिकटों की अनुपलब्धता के कारण वह इस न्यायालय के समक्ष दो संतानों को पेश करने में सक्षम नहीं हो सका था जबकि लड़की तान्या बीमार पड़ी हुई है। यहाँ यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि पूर्व अवसर पर याची ने वायुमार्ग टिकटों को दिखाया था कि किस प्रकार संतानों की देखभाल की जा रही है और किस प्रकार की सुविधा उन्हें दी जा रही है किंतु वर्तमान में वे अभिवचन कर रहे हैं कि उन्हें आरक्षित टिकट नहीं मिले थे।

3. मैंने इस रिट याचिका में पारित दिनांक 31.10.2012 के आदेश के प्रवर्तित भाग का परिशीलन किया है जिसके द्वारा याची प्रकाश सिंह उर्फ श्री बाबू और शेखर सिंह, जो तीनों संतानों के क्रमश: दादा और पिता हैं, को इस न्यायालय के समक्ष 7 नवंबर, 2012 तक रिषभ सिंह (पुत्र), तान्या एवं माही (दोनों पुत्रियाँ) को पेश करने का निर्देश दिया था ताकि संतानों को माता को सौंपा जा सके और संतानों के दादा और पिता को प्राथमिकत: सप्ताहांत पर दो माह के अंतराल पर बच्चों के रहने के स्थान पर जाने की स्वतंत्रता भी प्रदान की गयी थी।

4. यह कहना अनावश्यक है कि विविध केस सं॰ 7/2011 में विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा पारित दिनांक 1.8.2011 का आदेश चुनौती के अधीन था जो उपदर्शित करता है कि संतानों की अभिरक्षा का मामला एक वर्ष से अधिक से लटका हुआ है और अभागी माता न्याय इप्सित करते हुए यत्र-तत्र भटक रही है किंतु याची और उसके परिवार के सदस्य समझते हैं कि उन्हें धन, साधन और बाहुबल का घमंड है और वे विधि के शासन को दरकिनार करके अपने तरीके से स्थिति को वश में कर सकते हैं। मैंने पूर्वोक्त आवेदन को सुनते हुए याची और उसके परिवार के सदस्यों के दृष्टिकोण और प्रवृत्ति का अनुभव किया था जो एक या दूसरे तरीके से, एक या दूसरे साधन द्वारा न्यायालय के आदेशों की अवज्ञा करने के आशय से व्यक्तिगत रूप से अथवा अधिवक्ता के माध्यम से न्यायालय में सदैव उपस्थित हो रहे थे और कुछ सीमा तक आज की तिथि तक वे अपने मिशन में कामयाब हुए हैं।

5. इस रिट याचिका में पारित दिनांक 31.10.2012 का आदेश दोनों पक्षों के अधिवक्ता की उपस्थिति में स्वयं आदेश की तिथि पर खुले न्यायालय में उद्घोषित किया गया था और स्पष्ट किया गया था कि आदेश के अनुपालन के लिए इस न्यायालय के समक्ष संतानों को 7 नवंबर, 2012 को पेश किया जाएगा।

6. एक अन्य दुर्भाग्यपूर्ण घटना कल हुई थी जब मामला संचालित करने वाले अधिवक्ता उपस्थित नहीं हुए थे बल्कि पटना से एक अन्य अधिवक्ता अर्थात् श्री विष्णु शंकर प्रसाद आए और निवेदन किया कि याची माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विशेष अनुमति याचिका दाखिल करना चाहता है जिसके लिए समय दिया जाय। पुन: खुले न्यायालय में दिनांक 31.10.2012 के आदेश का अनुपालन करने का निर्देश दिया गया था और विद्वान अधिवक्ता, जो कल उपस्थित थे, ने न्यायालय को आश्वासन दिया कि

तीनों संतानों को आज पेश किया जाएगा और उनकी प्रार्थना पर 'आदेश' शीर्ष के अधीन दोपहर तीन बजे मामला रखने के लिए कहा गया था। पटना से आए अधिवक्ता आज उपस्थित हैं किंतु उनके पास कोई स्पष्टीकरण नहीं है कि दिनांक 31.10.2012 के आदेश का अनुपालन क्यों नहीं किया गया है अथवा उनके द्वारा कल दिए गए आश्वासन का क्या हुआ।

7. यह सुयोग्य मामला है जिसमें याची के विरुद्ध स्वप्रेरणा पर अवमान कार्यवाही आरंभ की जानी चाहिए जो अच्छी तरह जानते हुए आशयपूर्वक आदेश का अनुपालन करने से बच रहा है, अत: परिणामस्वरुप, झारखंड उच्च न्यायालय नियमावली, 2001 के नियम 397 के मुताबिक अवमान नोटिस जारी किया जाए।

8. मामले के इस दृष्टिकोण में, याची प्रकाश सिंह उर्फ श्री बाबू और शेखर सिंह (वि॰ प॰ सं॰ 2 का पति) के विरुद्ध कारण बताने के लिए नोटिस जारी की जाए कि झारखंड उच्च न्यायालय नियमावली, 2001 के नियम 397 के प्रावधानों के अधीन उनके विरुद्ध अवमान कार्यवाही क्यों नहीं आरंभ की जाए।

9. आई॰ ए॰ सं॰ 1653 वर्ष 2012 निपटाया जाता है।

10. यह स्पष्ट है कि विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, बोकारो ने विविध केस सं॰ 7/2011 में पारित दिनांक 1.8.2011 के आदेश के तहत तुरन्त सर्च वारन्ट जारी करने का निर्देश दिया है और इस न्यायालय द्वारा इस रिट याचिका में आदेश के समापन भाग के सिवाए आदेश को मान्य ठहराया गया है और, इसलिए, विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत निम्नलिखित अपेक्षित पता पर पूर्वोक्त तीन संतानों अर्थात् ऋषभ सिंह (पुत्र), तान्या एवं माही (दोनों पुत्रियाँ) को पेश करने के लिए सर्च वारन्ट जारी करने का निर्देश दिया जाता है और उन जिलों के आरक्षी अधीक्षक द्वारा सर्च वारन्ट का अनुपालन किया जाएगा और कोई व्यक्ति जो सर्च वारन्ट के निष्पादन में रूकावट डालेगा, को अभिरक्षा में लिया जाएगा और उसके विरुद्ध तुरन्त विधि के अनुरुप समुचित कार्रवाई की जाएगी। विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के अधिवक्ता द्वारा उपलब्ध कराये गए पते अभिलेख पर रखे जा सकते हैं।

क्रमांक	नाम	परिवादी/वि॰ प॰ सं॰ 2 के साथ संबंध	कामचलाऊ पता
1.	श्री प्रकाश सिंह उर्फ श्री बाबू पुत्र स्व॰ रामेश्वर सिंह	ससुर	रेखा हाऊस, न्यू डाकबंगला रोड, उत्सव होटल के निकट, पी॰ एस॰ गांधी मैदान नगर एवं जिला–पटना, बिहार
2.	श्री शेखर सिंह, पुत्र श्री प्रकाश सिंह उर्फ श्रीबाबू	पति	
3.	श्रीमती रेखा सिंह, पत्नी श्री प्रकाश सिंह उर्फ श्रीबाबू		
4.	रेशमा सिंह, पुत्री श्री प्रकाश सिंह उर्फ श्री बाबू	भाभी/ननद	फ्लैट सं॰ 1703-1704 टावर सं॰ 1, रुस्तम जी ओजोन पश्चिम मुंबई, पी॰ एस॰ गोरेगाँव, महाराष्ट्र

5.	राम बालक सिंह, पुत्र स्व॰ जी॰ बी॰ सिंह	कजिन ब्रदर-इन-लॉ	अशोक राजपथ, पी॰ ओ॰ और पी॰ एस॰ पीरबहोर, जिला-पटना, बिहार।

11. संबंधित एस॰ पी॰ को संसूचित करने के लिए डी॰ जी॰ पी॰ झारखंड राज्य को सर्च वारन्ट कल ही संसूचित किया जाए।

12. अधोहस्ताक्षरी के निवास स्थान पर अवकाश के दौरान भी सर्चवारन्ट के अनुपालन को इस न्यायालय को संसूचित किया जाए।

13. इस आदेश की प्रति पक्षों के अधिवक्ता को सौंपी जाए।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o ç'kkUr dekj] U;k;efrx.k

श्रीमती मीरा देवी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (H.B. Cr.) No. 331 of 2012. Decided on 7th November, 2012.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका–प्रत्यर्थी याची के पुत्र को अवैध अभिरक्षा में रखे हुए हैं–पुलिस न तो प्रत्यर्थी को गिरफ्तार कर रही है और न ही याची के पुत्र को पेश कर रही है–याची द्वारा तामील किए गए याचिका के प्रति के बावजूद याचिका के मेमो में किए गए अभिकथन के बारे में शपथ पर इंगित करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया गया है–आशंका है कि याची के पुत्र को काफी उपहतियाँ कारित की जा सकती है जिसे प्रत्यर्थी द्वारा पीटा गया था–परिस्थितियों की गंभीरता को देखते हुए प्रत्यर्थी-राज्य को न्यायालय के समक्ष लड़के के साथ प्रत्यर्थी को पेश करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 1, 3, 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Nitin Kumar Pasari, For the Petitioner; Mr. R. Mukhopadhyay, For the Respondents.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति के मुताबिक.–याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उसका पुत्र दिनांक 17.3.2010 से गायब है, उस प्रभाव की सूचना पहले ही संबंधित पुलिस थाना को दी गयी है किंतु प्रत्यर्थी-प्राधिकारियों द्वारा कोई कदम नहीं उठाया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि उसे स्थान विशेष पर अपने पुत्र के होने का पता चला और उसने थाने को पुन: सूचना दिया है और पुलिस के साथ याची और याची के अन्य संबंधी ग्राम गणेशपुर चन्हो बस्ती, जिला राँची गए थे। याची के पुत्र ने याची, भाई और बहन को भी पहचाना है किंतु प्रत्यर्थी सं॰ 6, जो याची के पुत्र को अवैध अभिरक्षा में रखे हुए है, याची को पुत्र की अभिरक्षा नहीं दे रहा है और न तो पुलिस प्रत्यर्थी सं॰ 6 को गिरफ्तार कर रही है और न ही वे रविश उर्फ किट्टू कुमार, 11 वर्षीय अर्थात याची के पुत्र को पेश कर रहे हैं।

2. राज्य के अधिवक्ता अनुदेश पाने के लिए समय इप्सित कर रहे हैं।

3. याची का दुर्भाग्य है कि दिनांक 1 अक्टूबर, 2012 को याची द्वारा याचिका की प्रति तामील किए जाने के बावजूद याचिका के मेमो में किए गए अभिकथन के बारे में शपथ पर इंगित करने के लिए प्रत्यर्थी द्वारा कोई कदम नहीं उठाया गया है।

4. मामले की गंभीरता से देखते हुए और याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रचारित तर्कों को ध्यान में रखते हुए, जब लड़के ने याची, भाई और बहन को पहचाना, प्रत्यर्थी सं॰ 6 लड़के को पीटने लगा। आशंका की जाती है कि याची के पुत्र को काफी उपहतियाँ कारित की जा सकती है। यह तथ्य याचिका के मेमो के पैराग्राफ सं॰ 15 और 19 में कथित किया गया है।

5. परिस्थितियों की गंभीरता को देखते हुए हम प्रत्यर्थी राज्य को लड़के अर्थात् रविश उर्फ किट्टू कुमार के साथ प्रत्यर्थी सं॰ 6 को कल प्रात: 10.30 बजे तक इस न्यायालय के समक्ष पेश करने का निर्देश एतद् द्वारा देते हैं।

6. मामला दिनांक 8 नवंबर, 2012 तक स्थगित किया गया।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

शैलेन्द्र कुमार सिन्हा

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 1158 of 2004. Decided on 1st November, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 408, 409 एवं 420—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 239—लोक सेवक द्वारा छल और न्यास का दांडिक भंग–उन्मोचन आवेदन अस्वीकार–याची ने अभिकथित रूप से इंदिरा आवास योजना के अधीन लाभार्थियों की राशि का दुर्विनियोग किया–याची ने कुछ लोक प्रतिनिधियों के समक्ष लिखित में स्वीकार किया था कि वह कुछ व्यक्तियों का पैसा रखे हुए था और इसे लौटाने के लिए सहमत हुआ था–कुछ गवाहों ने पुलिस के समक्ष मामले का समर्थन किया और याची के विरुद्ध आरोप पत्र दाखिल किया गया है–याची को केवल इस आधार पर उन्मोचित नहीं किया जा सकता है कि कुछ गवाहों ने पुलिस के समक्ष मामले का समर्थन नहीं किया था अथवा कि गवाहगण अनुश्रुत गवाह हैं–पुनरीक्षण आवेदन खारिज। (पैराएँ 3, 4, 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–M/s B.M. Tripathy, Mahesh Kr. Sinha, For the Petitioner; Mr. Sardhu Mahto, For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची जयनगर पी॰ एस॰ केस सं॰ 70 वर्ष 2001, जी॰ आर॰ सं॰ 449 वर्ष 2001/टी॰ आर॰ सं॰ 446 वर्ष 2004 के तत्सम, में विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, कोडरमा द्वारा पारित दिनांक 24.11.2004 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा उन्मोचन के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है और याची को आरोप विरचित करने के लिए न्यायालय में उपस्थित होने का निर्देश दिया गया है।

3. अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि याची जयनगर प्रखंड कार्यालय में नाजीर के रूप में कार्यरत था और याची के विरुद्ध इंदिरा आवास योजना के अधीन लाभार्थियों की राशि का दुर्विनियोग करने का अभिकथन है। याची ने कुछ लोक प्रतिनिधियों के समक्ष लिखित में स्वीकार किया कि वह कुछ व्यक्तियों

का पैसा रखे हुए था और धन वापस करने के लिए सहमत हुआ था और उक्त दस्तावेज के आधार पर पुलिस मामला संस्थापित किया गया था और अन्वेषण किया गया था। यह प्रतीत होता है कि अन्वेषण के बाद याची के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 408, 409 और 420 के अधीन अपराधों के लिए आरोप-पत्र दाखिल किया गया था। तत्पश्चात् याची ने उन्मोचन के लिए अपना आवेदन दाखिल किया जिसे अवर न्यायालय द्वारा आक्षेपित आदेश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था।

4. आक्षेपित आदेश के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय ने केस डायरी का परिशीलन करने पर पाया है कि कुछ गवाहों ने पुलिस के समक्ष मामले का समर्थन किया है और याची के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 408, 409 और 420 के अधीन अपराध के लिए आरोप-पत्र दाखिल किया गया है। तद्नुसार, अवर न्यायालय ने याची द्वारा दाखिल उन्मोचन आवेदन अस्वीकार कर दिया है।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि गवाहों ने अन्वेषण के दौरान मामले का समर्थन नहीं किया है और तद्नुसार, निवेदन किया है कि यह उन्मोचन के लिए सुयोग्य मामला है।

6. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय का ध्यान कुछ गवाहों के बयान की ओर आकृष्ट किया है जिन्होंने कथन किया है कि उन्होंने सुना था कि याची द्वारा लाभार्थियों का धन काट लिया गया था। राज्य के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि अन्वेषण के बाद याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया है और तद्नुसार, उन्मोचन आवेदन अस्वीकार करने वाले आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है।

7. इस मामले के तथ्यों में, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि इस चरण पर उन्मोचन के लिए मामला नहीं बनता है। यह तथ्य कि क्या याची के विरुद्ध अपराध बनता है, केवल मामले के विचारण के बाद स्थापित किया जा सकता है। इस चरण पर याची को केवल इस आधार पर उन्मोचित नहीं किया जा सकता है कि कुछ गवाहों ने पुलिस के समक्ष मामले का समर्थन नहीं किया है अथवा इस कारण से कि गवाहगण केवल अनुश्रुत गवाह हैं। इस प्रकार, मैं पुनरीक्षण अधिकारिता में अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप लायक कोई अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं पाता हूँ। इस पुनरीक्षण आवेदन में कोई गुणागुण नहीं है और तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है। अवर न्यायालय अभिलेख तुरन्त वापस भेजा जाए।

---

ekuuh;k t ;k jk;] U;k;efr

रविन्द्र नाथ

cuke

झारखंड राज्य, सी॰ बी॰ आई॰ के माध्यम से

Cri. App. (S.J.) No. 183 of 2007. Decided on 2nd November, 2012.

आर॰ सी॰ केस सं॰ 10A/96 (R) में अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश VIII-सह-विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 31.1.2007 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध।

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988—धाराएँ 7 एवं 13(2) सह-पठित धारा 13 (1) (d)—अवैध परितोषण–दोषसिद्धि–स्वतंत्र गवाह ने न तो मांग सुना और न ही अभियुक्त-अपीलार्थी

द्वारा घूस स्वीकार करते देखा है–आई॰ ओ॰ का बयान अन्य गवाहों के साक्ष्य के बिल्कुल विरोधाभासी है–सी॰ बी॰ आई॰ अधिकारी द्वारा कोई आरंभिक जाँच नहीं की गयी जो सी॰ बी॰ आई॰ निर्देश पुस्तिका के खंड 9.1 के अनुसार अत्यंत आवश्यक है–प्री ट्रैप और पोस्ट-ट्रैप सहित संपूर्ण ट्रैप कार्यवाही एक ही दिन की गयी–अभियोजन का कोई स्पष्टीकरण नहीं है कि ऐसी संक्षिप्त अवधि के भीतर किस प्रकार अभियोजन ने संपूर्ण चीजों को निपटाया–अभियोजन समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप सिद्ध करने में विफल रहा–दोषसिद्धि एवं दंडादेश अपास्त–अपील अनुज्ञात। (पैराएँ 8 से 15)

अधिवक्तागण.–M/s. A.K. Kashyap & Lina Shakti, For the Appellant; Mr. Md. Mokhtar Khan, For the C.B.I..

जया रॉय, न्यायमूर्ति.–अपीलार्थी ने इस अपील को आर॰ सी॰ केस सं॰ 10A/96 (R) में अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश VIII-सह-विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 31.1.2007 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश को अपास्त करने के लिए दाखिल किया है जिसके द्वारा अपीलार्थी को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धाराओं 7 और 13(2) सह-पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया है। उसे पी॰ सी॰ अधिनियम की धारा 7 के अधीन एक वर्ष के कठोर कारावास का दंडादेश दिया गया है। उसे 200/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने का भी दंडादेश दिया गया है जिसके व्यतिक्रम में उसे एक माह का कठोर कारावास भुगतना है। उसे आगे पी॰ सी॰ अधिनियम की धाराओं 13 (2) सह-पठित धारा 13(1)(d) के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और पी॰ सी॰ अधिनियम की धारा 13 (2) सह-पठित धारा 13(1)(d) के अधीन एक वर्ष का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है और 200/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने का दंडादेश भी दिया गया है जिसके व्यतिक्रम में उसे एक माह का कठोर कारावास भुगतना है और दोनों दंडादेश साथ-साथ चलेंगे।

2. संक्षेप में अभियोजन मामला यह है कि दिनांक 15.6.1996 को किसी स्रोत के माध्यम से दूरभाष पर सूचना प्राप्त की गयी थी। सूचना के मुताबिक, किसी रबिन्द्र नाथ (अपीलार्थी), सहायक, कार्मिक विभाग, बोकारो स्टील प्लांट, बोकारो स्टील सिटी ने किसी सदानंद, बोकारो स्टील प्लांट के जी॰ एम॰ एम॰ विभाग का खलासी से पहली बार की कार्यवाही के लिए और एडवांस एल॰ टी॰ सी॰ के लिए परिवादी का आवेदन अग्रसर करने के लिए 500/- रुपयों का अवैध परितोषण मांगा है और आंशिक भुगतान स्वीकार करने के लिए सहमत हुआ है। एस॰ पी॰, सी॰ बी॰ आई॰, राँची ने पी॰ के॰ पाणिग्रही, इंस्पेक्टर, सी॰ बी॰ आई॰, राँची को मामले में विधिक कार्रवाई करने का निर्देश दिया। टीम गठित की गयी थी। पी॰ के॰ पाणिग्रही और अन्य अधिकारी तथा कॉंस्टेबल दिनांक 16.6.1996 को रात में बोकारो स्टील सिटी आए। परिवादी सदानंद पासवान दिनांक 17.6.1996 को प्रातः इंस्पेक्टर पी॰ के॰ पाणिग्रही और टीम के अन्य सदस्यों से मुलाकात किया और यह अभिकथन करते हुए अपने द्वारा हस्ताक्षरित परिवाद दिया कि उसने एडवांस एल॰ टी॰ सी॰ की मंजूरी के लिए आवेदन दिया था। इसे विभाग में प्रस्ताव दिया गया था और अनुमोदन के लिए और लेखा विभाग को अग्रसारित करने के लिए इसे कार्मिक विभाग को भेजा गया था। रबीन्द्र नाथ (अपीलार्थी), कार्मिक विभाग में सहायक, द्वारा इस मामले पर विचार किया जा रहा था। परिवादी आवेदन की प्रक्रिया के संबंध में दिनांक 14.6.1996 को उससे मिला था किंतु, रबीन्द्र नाथ (अपीलार्थी) ने 500/- रुपयों के घूस का भुगतान करने के लिए कहा था और तब काम किया जाएगा। अनेक अनुरोध के बाद, रबीन्द्र नाथ (अपीलार्थी) ने परिवादी को दिनांक 17.6.1996 को आंशिक भुगतान के रूप में 100/- रुपयों का भुगतान करने के लिए कहा और काम होने के बाद 400/- रुपयों की शेष राशि का भुगतान करने के लिए कहा। इंस्पेक्टर पी॰ के॰ पाणिग्रही द्वारा मामले की पूरी जाँच की गयी

थी और स्वतंत्र गवाहों की व्यवस्था की गयी थी। ट्रैप–पूर्व औपचारिकताओं को पूरा किया गया था। तत्पश्चात्, परिवादी अभियुक्त रबीन्द्र नाथ (अपीलार्थी) के पास गया जिसने 100/- रुपया घूस मांगा और इसे स्वीकार किया और अपीलार्थी को रंगे हाथों पकड़ा गया था। इस क्रम में, ट्रैप–पूर्व ज्ञापन और ट्रैप–पश्चात ज्ञापन दर्ज किया गया था और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 7 और धारा 13(2) सह–पठित 13(1)(d) के अधीन अपराध के लिए दिनांक 18.6.1996 को आर॰ सी॰ केस सं॰ 10A/96 (R) वाली प्राथमिकी अपीलार्थी के विरुद्ध संस्थापित की गयी थी।

3. अभियोजन ने अपने मामले के समर्थन में कुल मिलाकर सात गवाहों का परीक्षण किया है। अ॰ सा॰ 1 नारायण विजय कुमार औपचारिक गवाह है; अ॰ सा॰ 2 योगेश नारायण चतुर्वेदी स्वतंत्र गवाह है; अ॰ सा॰ 3 कृष्ण प्रसाद एक अन्य स्वतंत्र गवाह है; अ॰ सा॰ 4 सदानंद पासवान परिवादी है; अ॰ सा॰ 5 बिमलेंदु दास रासायनिक परीक्षक है; अ॰ सा॰ 6 प्रसन्न कुमार पाणिग्रही अन्वेषण अधिकारी है और अ॰ सा॰ 7 अनिल कुमार श्रीवास्तव भी औपचारिक गवाह है। बचाव पक्ष ने किसी गवाह का परीक्षण नहीं किया है।

4. अभियोजन ने अनेक दस्तावेजों को प्रदर्शित किया है जिनमें से प्रदर्श 1 मंजूरी आदेश है; प्रदर्श 2 से 2/63 विभिन्न दस्तावेजों पर हस्ताक्षर हैं, प्रदर्श 3 बरामदगी के ज्ञापन पर अभियुक्त रविन्द्र दास का पृष्ठांकन और हस्ताक्षर है; प्रदर्श 4 रिपोर्ट और फॉरवार्डिंग पत्र है; प्रदर्श 5 ट्रैप–पूर्व ज्ञापन है; प्रदर्श 6 ट्रैप–पूर्व ज्ञापन है; प्रदर्श 7 प्राथमिकी है। अभियोजन ने अनेक सामग्रियों को प्रदर्शित किया हैं अर्थात् प्रदर्श I प्रदर्शन घोल अंतर्विष्ट करने वाला बोतल; प्रदर्श II कागजों के ट्रीटेड टुकड़े अंतर्विष्ट करता लिफाफा; प्रदर्श III पी॰ पाउडर अंतर्विष्ट करने वाला लिफाफा; प्रदर्श–IV अभियुक्त के आर॰ एच॰ वाश को अंतर्विष्ट करने वाला बोतल, प्रदर्श V 100/- रुपए के जी॰ सी॰ नोट अंतर्विष्ट करने वाला लिफाफा; प्रदर्श VI 100/- रुपए (एक) का जी॰ सी॰ नोट; प्रदर्श VII शर्ट वाश अंतर्विष्ट करने वाला बोतल; प्रदर्श VIII अभियुक्त की कमीज अंतर्विष्ट करने वाला लिफाफा; प्रदर्श IX अभियुक्त की कमीज, प्रदर्श X एल॰ टी॰ सी॰ आवेदन की पहचान है।

5. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अपीलार्थी का बचाव यह है कि उसे इस मामले में झूठा आलिप्त किया गया है। अपीलार्थी ने परिवादी से घूस कभी नहीं मांगा और स्वीकार किया था और उसके कब्जा से कुछ भी बरामद नहीं किया गया है। उन्होंने आगे प्रतिवाद किया है कि कोई साक्ष्य नहीं है जो दर्शाता हो कि अपीलार्थी ने घूस मांगा और स्वीकार किया है और इसे उसके कब्जा से बरामद किया गया है। अभियुक्त अपीलार्थी ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन दिए गए अपने बयानों में अपने विरुद्ध किए गए समस्त अभिकथनों से इनकार किया है।

6. इस मामले में क्या अभियुक्त अपीलार्थी ने अपराध किया है अथवा अभियोजन ने अभियुक्त अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप स्थापित किया है, इसके लिए गवाहों विशेषत: तात्विक गवाहों के साक्ष्य का संवीक्षण अत्यन्त आवश्यक है।

7. अ॰ सा॰ 4 स्वयं परिवादी है। उसने अपने मुख्य परीक्षण में कथन किया है कि वह बोकारो स्टील प्लांट में खलासी के रूप में कार्यरत था। उसने एल॰ टी॰ सी॰ सुविधा पाने के लिए दिनांक 11.6.1996 को आवेदन दिया था और उस समय अभियुक्त अपीलार्थी रबीन्द्र नाथ डीलिंग सहायक था। जब वह अपने एल॰ टी॰ सी॰ आवेदन के संबंध में रबीन्द्र नाथ से मिला था, तब उसने 500/- रुपया घूस मांगा था। उसने दिनांक 17.6.1996 को सी॰ बी॰ आई॰ को यह मामला रिपोर्ट किया था।

8. अ॰ सा॰ 4 (परिवादी) के साक्ष्य से आया है कि अ॰ सा॰ 4 ने सी॰ बी॰ आई॰ को केवल 17.6.1996 को अभियुक्त अपीलार्थी द्वारा घूस मांगने के संबंध में सूचित किया है। उसके पहले, उसने सी॰ बी॰ आई॰ प्राधिकारी को इसकी सूचना नहीं दी है। उसके साक्ष्य से यह भी स्पष्ट है कि सी॰ बी॰ आई॰ के किसी अधिकारी द्वारा आरंभिक जाँच नहीं की गयी थी जो सी॰ बी॰ आई॰ की निर्देश पुस्तिका के खंड 9.1 के अनुसार अत्यन्त आवश्यक है। यह भी सामने आया है कि ट्रैप-पूर्व और ट्रैप-पश्चात सहित संपूर्ण ट्रैप कार्यवाही एक ही दिन अर्थात् दिनांक 17.6.1996 को की गयी थी। आश्चर्यजनक रूप से, स्वतंत्र गवाहों सहित समस्त गवाह उसी दिन पर प्रातः लगभग 9 से 9.30 बजे ट्रैप कार्यवाही के लिए होटल में एकत्रित हुए थे। अभियोजन द्वारा कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है कि ऐसी संक्षिप्त अवधि के भीतर किस प्रकार अभियोजन ने सारी व्यवस्था की।

9. अ॰ सा॰ 2 और 3 स्वतंत्र गवाह हैं; अ॰ सा॰ 3 हिंदुस्तान स्टील प्रोड्क्शन, बोकारो का कर्मचारी है। उसने अपने साक्ष्य में स्पष्टतः कथन किया है कि उसने परिवादी और अभियुक्त-अपीलार्थी के बीच किसी वार्तालाप को नहीं सुना था यद्यपि वह उनके निकट था। उसने अपने साक्ष्य में आगे कथन किया है कि उसे परिवादी द्वारा सूचित किया गया था कि अभियुक्त-अपीलार्थी को पहले ही धन दे दिया गया है। अतः, यह स्पष्ट है कि अ॰ सा॰ 3 ने स्वतंत्र गवाहों में से एक होने के नाते न तो मांग सुना था और न ही अभियुक्त-अपीलार्थी को घूस स्वीकार करते हुए देखा था। अ॰ सा॰ 3 ने अभियुक्त अपीलार्थी से घूस की बरामदगी के संबंध में कुछ भी नहीं कहा है। इस प्रकार, अ॰ सा॰ 3 ने अभियोजन मामले का समर्थन नहीं किया है। एक अन्य चश्मदीद गवाह अ॰ सा॰ 2 ने निवेदन किया कि वह दिनांक 17.6.1996 को कार्मिक विभाग में सहायक के रूप में पदस्थापित था। उस दिन उसके वरीय अधिकारी ने उसे बोकारो होटल में श्री पी॰ के॰ पाणिग्रही से मिलने के लिए कहा। तद्नुसार, वह वहाँ गया और प्रातः लगभग 9.30 बजे वहाँ पहुँचा। उस समय पर उक्त होटल में राजवीर सिंह, एस॰ आई॰ (परीक्षण नहीं किया गया), परिवादी एस॰ एन॰ पासवान और कृष्ण प्रसाद (अ॰ सा॰ 3) और श्री पाणिग्रही सब लोग वहाँ उपस्थित थे। अपीलार्थी के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यद्यपि इस गवाह ने अपने बयान में अभियोजन मामले का समर्थन किया है किंतु उसके साक्ष्य में अनेक विरोधाभास हैं। इसके अतिरिक्त, यह स्पष्ट नहीं है कि दिनांक 17.6.1996 को अ॰ सा॰ 4 ने कब सी॰ बी॰ आई॰ प्राधिकारी को सूचित किया किंतु उसी दिन प्रातः 9.30 बजे तक समस्त पूर्वोक्त व्यक्ति ट्रैप कार्यवाही के लिए होटल में जमा हुए।

10. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने परिवादी अ॰ सा॰ 4 स्वतंत्र गवाह अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 6 (आई॰ ओ॰) के साक्ष्य में अनेक विरोधाभासों को इंगित किया है। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि परिवादी के साक्ष्य के अनुसार सी॰ बी॰ आई॰ प्राधिकारी अभियुक्त अपीलार्थी को पकड़ने के बाद अनूप कुमार हेम्ब्रम, कार्मिक प्रबंधक के कमरे में ले गए और उक्त अनूप कुमार हेम्ब्रम की उपस्थिति में उसके जेब से धन बरामद किया गया था किंतु अभियोजन द्वारा उक्त अनूप कुमार हेम्ब्रम का परीक्षण नहीं किया गया था। यह निवेदन भी किया गया है कि यद्यपि परिवादी द्वारा कथन किया गया है कि अभियुक्त अपीलार्थी ने उससे धन लेने के बाद अपनी कमीज की ऊपरी जेब के बाएँ हिस्से में इसे रखा था किंतु कमीज, जिसे विचारण न्यायालय के समक्ष पेश किया गया है के बाएँ हिस्से में कोई ऊपरी जेब नहीं थी। उन्होंने आगे इंगित किया कि अ॰ सा॰ 2 जो स्वतंत्र गवाह है, ने अपने साक्ष्य में कथन किया है कि उसने दिनांक 17.6.1996 को सी॰ बी॰ आई॰ कार्यालय में किसी कागज/दस्तावेज पर हस्ताक्षर नहीं किया है यद्यपि वह सायं 5.30 बजे तक वहाँ (सी॰ बी॰ आई॰ कार्यालय) था। अतः, ये समस्त चीजें अभियोजन मामले पर गंभीर संदेह उत्पन्न करती हैं क्योंकि आई॰ ओ॰ के अनुसार ये समस्त गवाह ट्रैप-पश्चात कार्यवाही के समय उपस्थित थे और उन सबों ने दिनांक 17.6.1996 के ट्रैप पश्चात ज्ञापन पर अपना हस्ताक्षर किया था।

11. सी॰ बी॰ आई॰ की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अ॰ सा॰ 6 श्री पाणिग्रही (आई॰ ओ॰) ने अपने साक्ष्य में कथन किया है कि उसे श्री एन॰ सी॰ ढोंढियाल, एस॰ पी॰, सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा सूचित किया गया था। उन्होंने उसे सूचित किया कि उन्होंने दिनांक 16.6.1996 को दूरभाष पर सूचना पाया है कि किसी रबीन्द्र नाथ (अभियुक्त अपीलार्थी), जो कार्मिक विभाग, बोकारो स्टील प्लांट में सहायक था, ने सदानंद पासवान से अवैध परितोषण मांगा है और आंशिक भुगतान प्राप्त करने के लिए सहमत हुआ है। श्री खान द्वारा यह भी प्रतिवाद किया गया है कि तत्पश्चात् श्री पाणिग्रही (आई॰ ओ॰) ने समस्त ट्रैप कार्यवाही की व्यवस्था की और स्वतंत्र गवाह तथा अन्य व्यक्ति दिनांक 16.6.1996 को अर्थात् उसी दिन जैसा श्री पाणिग्रही द्वारा अपने साक्ष्य में कथन किया गया है, रात में बोकारो होटल में एकत्रित हुए थे।

12. अभिलेख से, मैं पाती हूँ कि दोनों स्वतंत्र गवाह, अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 3 और अन्य गवाहों ने भी अपने साक्ष्य में कथन किया है कि वे दिनांक 17.6.1996 को प्रातः लगभग 9 से 9.30 बजे बोकारो होटल पहुँचे। इस प्रकार, अ॰ सा॰ 6 आई॰ ओ॰ का बयान अन्य गवाहों के साक्ष्य के बिल्कुल विरोधाभासी है, इसके अलावा, किसी भी प्राधिकारी द्वारा किसी आरंभिक जाँच के बारे में कोई चर्चा नहीं की गयी है। इस मामले में श्री एन॰ एस॰ ढोंढियाल का परीक्षण नहीं किया गया है और इसके लिए कोई कारण नहीं दिया गया है।

13. अपीलार्थी के अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि के॰ ए॰ पी॰ सिंह, प्रबंध निदेशक, सेल, बोकारो स्टील प्लांट, जिन्होंने अभियोजन के लिए मंजूरी दिया, का परीक्षण अभियोजन द्वारा नहीं किया गया है। यह निवेदन भी किया गया है कि मंजूरी आदेश पारित करने के पहले उन्होंने अभियुक्त अपीलार्थी के विरुद्ध संग्रहित सभी सामग्रियों पर विचार नहीं किया है और न ही समस्त सामग्री उनके समक्ष रखी गयी थी। अभिलेख से मैं पाती हूँ कि अ॰ सा॰ 1 जिसने मंजूरी आदेश टंकित किया, का परीक्षण किया गया है और मंजूरी आदेश प्रदर्श 1 सिद्ध किया गया है। स्वयं मंजूरी आदेश दर्शाता है कि अभियुक्त अपीलार्थी के विरुद्ध संग्रहित समस्त सामग्री पर विचार करने के बाद मंजूरी प्रदान की गयी थी। अतः, मैं मंजूरी आदेश में अवैधता नहीं पाती हूँ।

14. गवाहों के साक्ष्य और अभिलेख पर मौजूद अन्य सामग्रियों के संवीक्षण के बाद मैं पाती हूँ कि साक्ष्य में निम्नलिखित तथ्य सामने आए हैं:–

(i) v0 lk0 4 u doy fnukd 17.6.1996 dk vfHk;Dr&vihykFkh }kjk ?kl dh ekx d lcèk e lh0 ch0 vkb0 çkfèkdkjh dk lfpr fd;k gA bld igy mlu lh0 ch0 vkb0 çkfèkdkjh dk bldh lpuk ugh nh FkhA nljh vkj] v0 lk0 6 Jh ikf.kxgh (vkb0 vk0) u viu lk{; e dFku fd;k g fd ml ,u0 lh0 <kf<;ky] ,l0 ih0] lh0 ch0 vkb0 }kjk lfpr fd;k x;k Fkk fd mUgku fnukd 16.6.1996 dk njHkk"k ij lpuk ik;k g fd vfHk;Dr vihykFkh u ifjoknh lnkun ikloku l voèk ifjrk"k.k ekxk gA bld vfrfjDr] Jh ikf.kxgh (vkb0 vk0) u viu lk{; e dFku fd;k g fd mlu mlh fnu vFkkr fnukd 16.6.1996 dk Vi dk;okgh d fy, lkjh 0;oLFkk dh vkj Lor= xokg rFkk vU; leLr 0;fDr fnukd 16.6.1996 dh jkr e ckdkjk gkVy e tek g, Fk tcfd v0 lk0 2 vkj 3 rFkk vU; xokgk u viu lk{; e dFku fd;k g fd o fnukd 17.6.1996 dk çkr% yxHkx 9 l 9.30 ct ckdkjk gkVy igp FkA bl çdkj] xokgk d lk{; vkb0 vk0 d lk{; d fcYdy fojkèkkHkklh gA

(ii) LohÑr :i l] lh0 ch0 vkb0 d fdlh çkfèkdkjh }kjk vkjfHkd tkp ugh dh x;h Fkh tk lh0 ch0 vkb0 fun'k ifLrdk d [kM 9.1 d vulkj vR;Ur vko';d gA

(iii) tc v0 lk0 4 u fnukd 17.6.1996 dk vfHk;Dr vihykFkh }kjk ?kl dh ekx d lcèk e lh0 ch0 vkb0 çkfèkdkjh dk lfpr fd;k] fnukd 17.6.1996 dk Vi&io vkj Vi&i'pkr dk;okgh lfgr Vi dk;okgh dh 0;oLFkk dh x;h Fkh vkj mlh fnu bl fd;k x;k Fkk vkj bld vykok Lor= xokg lfgr leLr xokg mlh fnu çkr% yxHkx 9 l 9.30 ct tek g, FkA ;g fo'okl djuk vR;Ur ef'dy g fd vfHk;ktu fdl çdkj ,l lf{kIr le; e li.k 0;oLFkk dj ldrk FkkA

(iv) v0 lk0 3 u Lor= xokgk e l ,d gku d ukr viu lk{; e fofufn"Vr% dFku fd;k g fd mlu u rk ekx d ckj e luk Fkk vkj u gh vihykFkh dk ?kl Lohdkj djr g, n[kk FkkA oLrr%] mlu vfHk;ktu ekey dk leFku ugh fd;k gA

(v) xokgk d lk{; e Hkh ,d&nlj d çfr vud e[; fojkèkkHkk l gA

(vi) Jh <kf<;ky] ,l0 ih0] lh0 ch0 vkb0] tk vkb0 vk0 d vulkj og 0;fDr g ftUgku ml igyh ckj lfpr fd;k fd mUgku vfHk;Dr vihykFkh }kjk lnkun ikIoku l voèk ikfjrk"k.k dh ekx d lcèk e njHkk"k ij lpuk ik;k] dk ijh{k.k vfHk;ktu }kjk ugh fd;k x;k g vkj bld fy, dkb dkj.k ugh fn;k x;k gA

(vii) vihykFkh d vfèkoDrk u v0 lk0 4 (ifjoknh) v0 lk0 2 Lor= xokg vkj v0 lk0 6 vkb0 vk0 d lk{; e vud fojkèkkHkk lh c;kuk dk bfxr fd;k gA bl çdkj] mDr fojkèkkHkk l vfHk;ktu ekey ij xHkhj lng m?iUu djr gA

(viii) lh0 ch0 vkb0 çkfèkdkjh }kjk vfHk;Dr vihykFkh dk ,0 d0 gEce] dkfed çcèkd] d dej e y tk;k x;k Fkk ftudh mifLFkfr e vfHk;Dr vihykFkh l èku cjken fd;k x;k g fdr vfHk;ktu }kjk mDr ,0 d0 gEce dk ijh{k.k ugh fd;k x;k g vkj bld fy, dkb dkj.k Hkh ugh fn;k x;k gA ,l xokg dk vijh{k.k vfHk;ktu ekey d fo#) tkrk gA

15. उक्त कथित इन समस्त पहलूओं पर विचार करते हुए मेरे मत में अभियोजन समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे अपीलार्थी अभियुक्त के विरुद्ध आरोप सिद्ध करने में विफल रहा है। यह विधि का सुनिश्चित सिद्धांत है कि यदि कोई संदेह है, अभियुक्त को संदेह का लाभ दिया जाना चाहिए। अतः, मैं संदेह का लाभ देते हुए इस अपील को अनुज्ञात करती हूँ और आर॰ सी॰ केस सं॰ 10(A)/96 (R) में अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश VIII सह-विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰ धनबाद द्वारा पारित दिनांक 31.1.2007 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के आदेश को अपास्त करती हूँ।

16. अभियुक्त अपीलार्थी को जमानत बंध पत्र के दायित्व से उन्मोचित किया जाता है।

---

ekuuh; ,p lh feJk] U;k;efr

झगडू महतो

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cri. Rev. No. 119 of 2005. Decided on 1st November, 2012.

दांडिक विविध केस सं॰ 35 वर्ष 2003 में प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 7.1.2005 के आदेश के विरुद्ध।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 125—भरण-पोषण—कुटुंब न्यायालय ने परित्यक्त पत्नी को मासिक भरण-पोषण के रूप में 1000/- रुपया प्रदान किया—अवर न्यायालय ने इस तथ्य कि याची द्वारा झूठा दावा किया गया था, को विचार में लेते हुए याची द्वारा दाखिल आवेदन अस्वीकार कर दिया—याची को झूठे बहाने पर अपना मामला संपोषित करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है—अवर न्यायालय याची द्वारा दाखिल आवेदन अस्वीकार करने में बिल्कुल न्यायोचित था—पुनरीक्षण आवेदन खारिज। (पैराएँ 5 से 8)

अधिवक्तागण.—Mr. Sanjay Kumar Sinha, For the Petitioner; Mr. S.K. Srivastava, For the State; M/s Rajesh Prasad, M.B. Lal, For the O.P. No.2.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और विरोधी पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची दांडिक विविध केस सं॰ 35 वर्ष 2003 में विद्वान प्रधान न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 7.1.2005 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा 1000/- रुपया प्रतिमाह का भरण-पोषण परित्यक्त पत्नी को प्रदान करने के लिए विद्वान प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, धनबाद द्वारा एम॰ पी॰ केस सं॰ 237 वर्ष 2002 में पारित दिनांक 20.11.2003 के आदेश को अपास्त करने के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है।

3. यह प्रतीत होता है कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2, जो याची की परित्यक्त पत्नी है, ने अवर न्यायालय में भरण-पोषण के लिए आवेदन दाखिल किया था, जिसे एम॰ पी॰ केस सं॰ 237 वर्ष 2002 के रूप में दर्ज किया गया था। स्वयं का याची की विधिवत ब्याहता पत्नी होने का दावा करते हुए और यह कथन भी करते हुए कि याची की एक अन्य पत्नी है, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने भरण-पोषण के लिए आवेदन दाखिल किया। उक्त एम॰ पी॰ केस सं॰ 237 वर्ष 2002 के अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि उसमें याची ने अपना साक्ष्य दिया था और दिनांक 2.8.2003 को अपना साक्ष्य समाप्त कर दिया था। तत्पश्चात्, अवर न्यायालय में इस याची के साक्ष्य के लिए मामला दिनांक 3.9.2003 के लिए नियत किया गया था। नियत तिथि पर याची को बुलाए जाने पर अवर न्यायालय में उपस्थित नहीं हुआ यद्यपि उसकी ओर से हाजिरी दी गयी थी। अवर न्यायालय ने याची को आगे भी अवसर दिया और यह स्पष्ट करते हुए कि यदि याची उस तिथि पर उपस्थित होने में विफल रहता है, उसका साक्ष्य बंद कर दिया जाएगा, दिनांक 20.11.2003 की एक अन्य तिथि नियत किया। इस तिथि पर भी याची उपस्थित नहीं हुआ था और तद्नुसार अवर न्यायालय ने याची का साक्ष्य बंद कर दिया और आदेश पारित किया जिसके द्वारा अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य के आधार पर परित्यक्त पत्नी अर्थात् विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को 1000/- रुपया प्रतिमाह भरण-पोषण अनुज्ञात किया गया था।

4. बाद में, याची ने यह अभिवचन करते हुए कि उक्त तिथि पर अर्थात् दिनांक 20.11.2003 को वह डायरिया से पीड़ित था, एम॰ पी॰ केस सं॰ 237 वर्ष 2002 में पारित दिनांक 20.11.2003 के आदेश को अपास्त करने के लिए अवर न्यायालय में दांडिक विविध केस सं॰ 35 वर्ष 2003 दाखिल किया। उक्त मामले में, याची की पत्नी विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को नोटिस दिया गया था और दोनों पक्ष उपस्थित हुए थे और अपना साक्ष्य दिया था। अभिलेख से प्रतीत होता है कि याची ने अ॰ सा॰ 1 के रूप में स्वयं का परीक्षण कराया जिसमें उसने अभिसाक्ष्य दिया कि दिनांक 20.11.2003 को वह न्यायालय नहीं आ पाया था क्योंकि वह डायरिया से पीड़ित था। अवर न्यायालय के समक्ष चिकित्सीय साक्ष्य नहीं दिया गया

था। किंतु, उसने अपने साक्ष्य में स्वीकार किया उसने दिनांक 20.11.2003 को बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ में कर्तव्य ग्रहण किया था और उसने वहाँ दिनांक 20.11.2003 को और दिनांक 21.11.2003 को भी काम किया था। विरोधी पक्षकार सं॰ 2 का ओ॰ पी॰ डब्ल्यू॰ 1 के रूप में परीक्षण किया गया था। अवर न्यायालय अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य के आधार पर इस निष्कर्ष पर आया कि याची द्वारा झूठा आधार लिया गया था कि वह डायरिया से पीड़ित था क्योंकि उसने अपने साक्ष्य में स्वीकार किया था कि वह दिनांक 20.11.2003 और दिनांक 21.11.2003 को कोलियरी में काम कर रहा था और तद्नुसार, अवर न्यायालय ने एम॰ पी॰ केस सं॰ 237 वर्ष 2002 में पारित दिनांक 20.11.2003 के आदेश को अपास्त करने के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन खारिज कर दिया था।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश बिल्कुल अवैध है क्योंकि दी गयी तिथि पर याची डायरिया से पीड़ित था और तद्नुसार अवर न्यायालय में उपस्थित नहीं हो सका था और उसका साक्ष्य बंद कर दिया गया था और आदेश पारित किया गया था। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि विधि की दृष्टि में आक्षेपित आदेश संपोषित नहीं किया जा सकता है।

6. राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने दूसरी ओर प्रार्थना का विरोध किया है और निवेदन किया है कि याची के साक्ष्य से प्रकट था कि याची ने झूठा दावा किया था क्योंकि उसने अपने साक्ष्य में स्वीकार किया था कि दिनांक 20.11.2003 और दिनांक 21.11.2003 को वह कोलियरी में कार्यरत था। अवर न्यायालय ने इस तथ्य कि याची द्वारा झूठा दावा किया गया था, को विचार में लेते हुए याची द्वारा दाखिल आवेदन अस्वीकार कर दिया था। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप करने लायक अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है।

7. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख पर मौजूद सामग्री का परिशीलन करने पर, मैं विरोधी पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन में बल पाता हूँ। याची को झूठे बहाने पर अपने मामले को संपोषित करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। एक ओर, याची ने दावा किया कि वह डायरिया से पीड़ित था जिस कारण वह अपने साक्ष्य के लिए अवर न्यायालय में उपस्थित नहीं हो सका था, किंतु उसने दूसरी ओर अवर न्यायालय में स्वीकार किया कि उसने दिनांक 20.11.2003 और दिनांक 21.11.2003 को कोलियरी में काम किया था।

8. इन तथ्यों की दृष्टि में, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि अवर न्यायालय याची द्वारा दाखिल आवेदन अस्वीकार करने में बिल्कुल न्यायोचित था। पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप करने लायक आक्षेपित आदेश में अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं है। इस पुनरीक्षण आवेदन में गुणागुण नहीं है जिसे तद्नुसार खारिज किया जाता है। अवर न्यायालय अभिलेख को तुरन्त संबंधित न्यायालय को भेजा जाए।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efrx.k

निभय करकेट्टा एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

I.A. No. 1157 of 2012 In Cr. App. (DB) No. 998 of 2004. Decided on 8th November, 2012.

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—दण्डादेश का निलम्बन—पति एवं पत्नी की हत्या—अभियुक्त-अपीलार्थीगण के विरूद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है—चश्मदीद गवाहों ने पति एवं पत्नी की हत्या कारित करने में अभियुक्त-अपीलार्थीगण द्वारा निभायी गयी भूमिका का स्पष्ट वर्णन किया—अपराध की गंभीरता, दण्ड की मात्रा एवं उस रीति जिसमें अपीलार्थीगण अपराध में अंतर्ग्रस्त हैं, को देखते हुए न्यायालय विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थीगण को अधिनिर्णित दण्डादेश को निलंबित करने का ईच्छुक नहीं—आवेदन खारिज। (पेराएँ 2 से 4)

अधिवक्तागण.—Mr. A.K. Kashyap, For the Appellants; Mr. M.B. Lal, For the State.

डी॰ एन॰ पटेल के मुताबिक.—वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन सत्र विचारण सं॰ 150 वर्ष 2003 में विद्वान अपर जिला न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट III, गुमला द्वारा क्रमशः दिनांक 24 अप्रिल, 2004 और दिनांक 27 अप्रिल 2004 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश द्वारा वर्तमान अपीलार्थीगण को अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन दाखिल की गयी है।

2. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि वर्तमान अपीलार्थीगण-अभियुक्तगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर साक्ष्यों का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि अभियोजन का मामला एक से अधिक चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्यों पर आधारित है। अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 3 चश्मदीद गवाह हैं और उनके अभिसाक्ष्य स्पष्टतः पति-पत्नी की हत्या करने में इन अभियुक्त अपीलार्थीगण द्वारा निभायी गयी भूमिका का कथन कर रहे हैं। प्रयुक्त हथियार तेज धार वाले हथियार हैं। दोनों मृतकों के शरीरों पर कई उपहतियाँ हैं। अ॰ सा॰ 1, जो डॉ॰ अजित कुमार अग्रवाल है, द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य को देखते हुए प्रतीत होता है कि चश्मदीद गवाहों द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य को पर्याप्त संपुष्टि मिलती है। इसके अतिरिक्त, पूर्व अवसर पर, इस न्यायालय द्वारा दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना स्वीकार नहीं की गयी है। अभिलेख पर इन साक्ष्यों की दृष्टि में वर्तमान अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है।

3. पूर्वोक्त तथ्यों की दृष्टि में और अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और जिस तरीके से वर्तमान अपीलार्थीगण अपराध में अंतग्रस्त हैं को देखते हुए हम विचारण न्यायालय द्वारा वर्तमान अपीलार्थीगण को अधिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं है। अतः, दण्डादेश के निलम्बन की उनकी प्रार्थना अस्वीकार की जाती है।

4. तद्नुसार, आई॰ ए॰ सं॰ 1157 वर्ष 2012 खारिज की जाती है।

5. फिर भी, अभिरक्षा की अवधि को देखते हुए हम एतद् द्वारा इस न्यायालय की रजिस्ट्री को इस दांडिक अपील को जनवरी, 2013 के दूसरे सप्ताह में अंतिम सुनवाई के लिए सूचीबद्ध करने का निर्देश देते हैं।

---

ekuuh; vij'k dekj] flg] U;k;efr

पृथ्वी सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 1576 of 2007. Decided on 5th October, 2012.

बिहार मोटर यान कराधान अधिनियम, 1994—धारा 17—पथ कर–छूट–वन मामले में ट्रक के अधिहरण के अधीन रहने की अवधि के दौरान पथ कर के भुगतान से छूट का दावा–याची ने प्रश्नगत अवधि के लिए पथ कर जमा किया है–याची ने विलंब से आवेदन दिया है–याची के दावा पर विचार करने का निर्देश जिला परिवहन अधिकारी को देकर रिट याचिका निपटायी गयी। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–M/s Jitendra S. Singh, Warda Khan, For the Petitioner; JC to SC-I, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने दिनांक 20.7.2005 से दिनांक 15.1.2007 की अवधि के दौरान ट्रक सं॰ CG-04G-0701 के संबंध में पथकर का भुगतान करने से छूट के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश इप्सित किया है क्योंकि याची के अनुसार ट्रक वन केस सं॰ G325/2005 के संबंध में अभिग्रहण के अधीन था जिसे डब्ल्यू॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 365 वर्ष 2005 में पारित दिनांक 15.9.2006 के निर्णय के फलस्वरुप निर्मुक्त किया गया था जिसके द्वारा अधिहरण कार्यवाही में पारित आदेश अपास्त कर दी गयी थी।

3. याची का प्रतिवाद यह है कि याची का ट्रक दिनांक 20.7.2005 को जब्त किया गया था जिसके लिए याची ने दिनांक 14.8.2005 से दिनांक 13.2.2007 तक की अवधि के लिए विरोध के साथ पथकर का भुगतान किया था। याची ने परिशिष्ट 6 के तहत दिनांक 31.1.2007 को जिला परिवहन अधिकारी, राँची के पास दिनांक 20.7.2005 से दिनांक 15.1.2007 की अवधि के लिए पथ कर के छूट/समायोजन के लिए आवेदन दिया था, किंतु उसके आवेदन पर विचार नहीं किया गया था जिस कारण याची के पास इस न्यायालय की रिट अधिकारिता का अवलंब लेने के अलावा कोई विकल्प नहीं था।

4. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता उपस्थित हुए हैं और निवेदन किया है कि व्यक्ति, जो पथ कर से छूट इप्सित कर रहा है, को मोटर यान कराधान अधिनियम, 1994 (अब झारखंड राज्य द्वारा अपनाया गया) के प्रावधान का अनुपालन करने की आवश्यकता है। वह निवेदन करते हैं कि उक्त अधिनियम के नियम 17 के मुताबिक आवेदन विहित फार्मेट में फॉर्म-O में आवेदन दिया जाना हैं। याची ने विलंब से आवेदन दिया है। किंतु, अधिनियम की धारा 17 के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि वाहन का स्वामी, जिसका वाहन ऊपर उपदर्शित कारण से एक माह से अधिक अवधि के लिए उपयोग के लिए अक्षम हो जाता है, अवधि जिसके लिए कर का भुगतान किया गया है के अवसान की तिथि पर अथवा उससे पहले विहित फॉर्म में सम्यक रूप से हस्ताक्षरित और सत्यापित वचनबंध कर लगाने वाले अधिकारी को देगा और प्रत्येक छह माह पर वचनबंध का नवीकरण किया जाना है।

5. चाहे जो भी हो, यह प्रतीत होता है कि प्रश्नगत वाहन प्रश्नगत अवधि के लिए वन केस सं॰ G-325/2005 के संबंध में वन अधिकारी के अभिग्रहण के अधीन था और डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 365 वर्ष 2005 में अधिहरण कार्यवाही को अभिखंडित करते हुए पारित दिनांक 15.9.2006 के आदेश के अनुसरण में निर्मुक्त किया गया है। याची ने विरोध के अधीन दिनांक 14.8.2005 से दिनांक 13.2.2007 तक पथ कर जमा भी किया है। उसने कतिपय दस्तावेजों को संलग्न करते हुए दिनांक 31.1.2007 को आवेदन भी दिया है किंतु निश्चय ही विहित फॉर्म में नहीं। याची के विद्वान अधिवक्ता ने **कपिलदेव सिंह बनाम बिहार राज्य,** 1993 (1) PLJR के मामले में पटना उच्च न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय पर अपने प्रतिवाद के समर्थन में विश्वास किया है कि यदि किसी कारण से वाहन नहीं चल रहा है, वाहन का स्वामी छूट का दावा करने का हकदार है जिसे मोटर यान कराधान अधिनियम के अधीन वाहन स्वामी

द्वारा ऐसे दावा के समर्थन में प्रस्तुत साक्ष्य पर प्राधिकारी द्वारा समुचित विचार किए जाने पर विनिश्चित किया जा सकता है। इन परिस्थितियों में, पटना उच्च न्यायालय ने परिवहन प्राधिकारी को छूट के दावा पर विचार करने का निर्देश दिया था।

6. किंतु, इस मामले में, प्रत्यर्थीगण परिवहन प्राधिकारीगण ने याची के मामले पर कोई निर्णय नहीं लिया है। पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों में, मामले के गुणागुण पर कोई मत अभिव्यक्त किए बिना विधि के अनुरुप परिशिष्ट–6 में अंतर्विष्ट अपने आवेदन के माध्यम से किए गए याची के दावा पर विचार करने और इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि के बाद 12 सप्ताह की अवधि के भीतर इस संबंध में निर्णय लेने का निर्देश जिला परिवहन अधिकारी को देते हुए इस रिट याचिका को निपटाया जाता है।

7. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों और निर्देशों के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

डॉ० जे० जे० इरानी एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cri. Rev. No. 506 of 2005. Decided on 1st October, 2012.

विद्वान सत्र न्यायाधीश, जमशेदपुर, पूर्वी सिंहभूम दांडिक अपील सं० 182 वर्ष 1999 में पारित दिनांक 16.5.2005 के निर्णय के विरुद्ध।

कारखाना अधिनियम, 1948—धाराएँ 92 एवं 97—बिहार कारखाना नियमावली, 1950—नियम 55A (2) एवं (3)—कारखाना के अंदर असुरक्षित काम–दोषसिद्धि–कर्मकार की ओर से उपेक्षा–कर्मकार घातक दुर्घटना के लिए स्वयं दायी था–कारखाना के अधिभोगी और प्रबंधक का दायित्व नहीं है–अभियोजन याचीगण के विरुद्ध आरोप स्थापित करने में विफल रहा–दोषसिद्धि एवं दंडादेश अपास्त–पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 15 से 22)

अधिवक्तागण.–M/s T.R. Bajaj, H.K. Shikarwar, For the Petitioners; Mr. D.K. Chakra-vorty, For the State.

एच० सी० मिश्रा, न्यायमूर्ति.–याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह पुनरीक्षण दांडिक अपील सं० 182 वर्ष 1999 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, जमशेदपुर, पूर्वी सिंहभूम द्वारा पारित दिनांक 16 मई, 2005 के निर्णय के विरुद्ध निर्देशित है, जिसके द्वारा सी०/2 केस सं० 663 वर्ष 1991/टी० आर० केस सं० 553A वर्ष 1999 में कारखाना अधिनियम, 1948 (इसमें इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 92 के अधीन अपराध के लिए याचीगण को दोषसिद्ध और दंडादेशित करते हुए श्री बी० सी० झा, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर, पूर्वी सिंहभूम द्वारा पारित दिनांक 4.10.1999 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध दाखिल अपील दंडादेश में उपांतरण के साथ विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गयी है। कथन किया जा सकता है कि अवर विचारण न्यायालय ने याचीगण को अधिनियम की धारा 92 के अधीन अपराध के लिए

दोषसिद्ध किया था और दंडादेश के बिंदु पर सुनवाई पर उनमें से प्रत्येक को दो वर्ष का सामान्य कारावास भुगतने का और प्रत्येक को एक लाख रुपया के जुर्माना का भुगतान करने का दंडादेश दिया था और जुर्माना का भुगतान करने में व्यतिक्रम की स्थिति में याचीगण को छह माह का कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था। अवर अपीलीय न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय को संपुष्ट करते हुए दंडादेश को इस सीमा तक उपांतरित कर दिया कि दो वर्ष के कारावास का मुख्य दंडादेश अपास्त कर दिया गया था किंतु एक लाख रुपयों के जुर्माना को पोषित किया गया था और निर्देश दिया गया था कि जुर्माना यदि वसूल किया जाता है, का भुगतान मृतक मजदूर की विधवा को कर दिया जाएगा।

3. याची सं॰ 1 डॉ॰ जे॰ जे॰ इरानी कारखाना अर्थात् जमशेदपुर अवस्थित टिस्को लि॰ के अधिभोगी और याची सं॰ 2 श्री पी॰ एन॰ राय प्रबंधक। दिनांक 14.3.1991 को दोपहर लगभग 12 बजे टिस्को वर्क्स के अन्दर एस॰ एम॰ एस॰ 3 में घातक दुर्घटना हुई जब आमतौर पर 'गंडोला के रूप में ज्ञात रेलवे बोगी से पटरी पर चलने के क्रम में कुछ स्क्रैप सामग्री अचानक गिर गयी और कोई शंटिंग जमादार अर्थात् सागर सीकू, जो रेल की पटरी के बगल में खड़ा था और लोको चालक को संकेत दे रहा था, स्क्रैप सामग्री के वजन के नीचे दब गया। उक्त मजदूर की मृत्यु घटनास्थल पर हो गयी। टिस्को प्रबंधन ने कारखाना निरीक्षक को सूचित किया जो दोपहर लगभग दो बजे दुर्घटनास्थल पर पहुँचा और जाँच किया। अधिनियम के प्रावधान के अधीन सम्यक जाँच करने के बाद मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, जमशेदपुर के न्यायालय में परिवाद याचिका दाखिल की गयी थी जिसे सी॰/2 सं॰ 663 वर्ष 1991 के रूप में दर्ज किया गया था।

4. परिवाद याचिका दर्शाती है कि कारखाना निरीक्षक ने जाँच पर पाया कि कारखाना में अत्यन्त असुरक्षित तरीके से कार्य और प्रक्रिया चल रही थी जिसका परिणाम शंटिंग जमादार सागर सीकू की मृत्यु में हुआ और कारखाना के अधिभोगी और प्रबंधक ने कारखाना नियमावली, 1950 के नियम 55A (2) और (3) के प्रावधानों का उल्लंघन किया और स्वयं को कारखाना अधिनियम, 1948 की धारा 92 के अधीन अपराध के लिए अभियोजन के लिए दायी बनाया।

5. परिवाद याचिका का अंश निर्मित करने वाला विस्तृत बयान दर्शाता है कि कारखाना में प्रचलित निम्नलिखित असुरक्षित कृत्यों एवं दशाओं को याचीगण के विरुद्ध परिवाद दाखिल करने का आधार पाया गया था:–

> *"4. fd tkp d fu"d"kZ l] t lk tkp fjikV d i"B l0 4 vkj 5 ij lkeu vkrk g] çrhr gksxk fd n?kVuk blfy, gb D;kfd ykdk }kjk fofHkUu lkefx;k dk lHkkyu dk dke fuEufyf[kr lcèk e vR;Ur v ljf{kr rjhd l fd;k tk jgk FkkA&*
>
> *(a) xMkyk uke [kyh ckxh ij LØi lkefx;k d lkFk lekfo"V buxkV j[ku d igy buxkV l LØi ugh gVk;k x;k Fkk] ifj.kkerh lkexh vR;Ur vfLFkj rjhd l [kyh ckxh e iMh Fkh vkj bl vR;Ur v ljf{kr n'kk e y tku dh vuefr nh x;h FkhA*
>
> *(b) xMkyk d lkFk tM ykdk dk pyku dh vuefr nu d igy ;g lfuf'pr dju d fy, dkb lefpr 0;oLFkk ugh dh x;h Fkh fd jy iVjh leLr çdkj d #dkoVk l eDr Fkh ft ld ifj.kkeLo#i xMkyk dk ifg;k fo'kky LØi lkexh d Åij p< x;k tk jy iVjh ij iMk Fkk ft lu [kyh ckxh ij j[kh x;h leLr lkefx;k dk tkjnkj >Vdk fn;k tk ifj.kkeLo#i Jh lhd d 'kjhj ij fxj x;hA*

(c) [kyh ckxh ij lkexh dk y tku dh vuefr nu d igy ;g lfuf'pr dju d fy, [ky xMkyk d ry ij j[k x, bu <hy&<ky lkexh dk ykdk btu }kjk viu vkokxeu d Øe e lefpr : i l ljf{kr fd;k x;k Fkk] u rk dkbi ik'o lgkjk çnku fd;k x;k Fkk vkj u gh fd lh lkèku }kjk bl lefpr : i l dlk x;k FkkA

(d) ykdk dk xM chO 'kfVx teknkj }kjk vkj u fd fu;fer ykdk pkyd }kjk pyk, tku dh vuefr nh x;h FkhA

*5. fd ,lO ,e0 ,lO 3 d fiV lkbM e lkefx;k dk lHkkyu d Øe e çpfyr iokDr v ljf{kr ÑR;k vkj n'kkvk d dkj.k yxHkx 8 ,e0 Vh0 dk MM oV [ky ckxh l fQly x;k vkj 'kfVx teknkj Jh lkxj lhd ij fxj x;k tk xfreku jyo ckxh d cxy e [kMk Fkk vkj ykdk lO 73 d ykdk pkyd dk ldr n jgk Fkk vkj mldh eR; rjUr ?kVukLFky ij gk x;hA***

6. अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि विचारण के क्रम में अभियोजन द्वारा कारखाना निरीक्षक अर्थात् शशि भूषण झा, परिवादी जिसका परीक्षण अ॰ सा॰ 1 के रूप में किया गया था, सहित छह गवाहों का परीक्षण किया गया था। अन्य अ॰ सा॰ टिस्को लि॰ के कर्मचारी हैं जो प्रासंगिक समय पर घटनास्थल पर कार्यरत थे। अवर न्यायालय इस निष्कर्ष पर आया कि खुले बोगी अर्थात् गंडोला में स्क्रैप सामग्री को ले जाने की अनुमति देने के पहले न तो कोई पार्श्व सहारा प्रदान किया गया था और न ही इसे समुचित रूप से कसा गया था ताकि सुनिश्चित किया जा सके कि खुले गंडोला पर ढीले-ढाले रूप से रखी गयी सामग्री को लोको इंजन द्वारा अपने आवागमन के क्रम में समुचित रूप से सुरक्षित किया गया था। कारखाना निरीक्षक अ॰ सा॰ 1 के साक्ष्य से यह भी पाया गया था कि निरीक्षण के दौरान उसने पाया कि सामग्री अर्थात् स्क्रैप खुले गंडोला पर रखा गया था और किसी पार्श्व सहारे अथवा सुरक्षा बेल्ट का प्रावधान नहीं था ताकि सुनिश्चित किया जा सके कि ढीले-ढाले रूप से रखी सामग्री लोको इंजन द्वारा अपने आवागमन के क्रम में गिर न जाए। गवाह ने यह कथन भी किया है, जैसा अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा गौर किया गया है, कि सामग्रियाँ गंडोला पर समुचित तरीके से नहीं रखी गयी थी और रेल पटरी, जिस पर स्क्रैप से लदा गंडोला ले जाया जाना था, पर अनेक सामग्रियाँ पड़ी हुई थी और वे सामग्रियाँ लोको इंजन की मुक्त आवाजाही में बाधा डाल रहे थे। टिस्को के एस॰ एम॰ एस॰ 3 में फोर मैन एस॰ के॰ मरीक अ॰ सा॰ 2 के साक्ष्य से भी यह तथ्य समर्थित किया गया था जिसने कथन किया था कि रेल पटरी पर कुछ स्क्रेप अथवा कबाड़ पड़ा था और इस गवाह ने लोको चालक और शंटिंग जमादार अर्थात् मृतक को गंडोला की आवाजाही रोकने के लिए कहा भी था किंतु उस समय तक गंडोला स्क्रैप पर उछल गया और सागर सीकू पर विशाल लौह सामग्री गिर गयी जिससे घटनास्थल पर उसकी मृत्यु हो गयी। अ॰ सा॰ 5 सोमा बरुआ, जो लोको चला रहा था, ने कथन किया था कि गंडोला के आवागमन के क्रम में बोगी रेल पटरी पर पड़ी बाधा के ऊपर उछल गयी और गंडोला पर लदी भारी लौह सामग्री सागर सींकू पर गिर गयी और उसकी तुरन्त मृत्यु को कारित किया।

7. अभिलेख पर साक्ष्य, जैसा आक्षेपित निर्णयों में चर्चा किया गया है, दर्शाता है कि मृतक कर्मकार सागर सींकू लोको चालक को संकेत देने के लिए वहाँ था जिसके संकेत पर लोको चालक को गंडोला से जुड़े लोको को चलाना था। इस प्रकार, प्रकट है कि सागर सीकू से लोको चलाने का संकेत देने की उम्मीद नहीं की जाती थी जब रेल पटरी पर कोई स्क्रैप सामग्री पड़ी थी। किंतु, अवर न्यायालयों ने पाया कि कारखाना के अधिभोगी और प्रबंधक द्वारा नियम 55A (2) और (3) का उल्लंघन किया गया था और वे मजदूरों की सुरक्षा सुनिश्चित करने में विफल रहे जब वे कारखाना में काम पर थे और तद्द्वारा, उन्होंने

अधिनियम की धारा 7A के प्रावधानों का उल्लंघन किया था। इन निष्कर्षों पर, याचीगण को अधिनियम की धारा 92 के अधीन अपराध का दोषी पाया गया था और तद्नुसार दोषसिद्ध एवं दंडादेशित किया गया था।

8. याचीगण के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालयों द्वारा पारित निर्णय बिल्कुल अवैध और विधि की दृष्टि में दोषपूर्ण है क्योंकि अवर न्यायालय इसे विचार में लेने में विफल रहे कि दुर्घटना केवल संबंधित कर्मकार की ओर से उपेक्षा के कारण हुई थी जिसकी मृत्यु दुर्भाग्यवश उक्त दुर्घटना में हो गयी। यह देखना उसकी जिम्मेदारी थी कि यदि रेल पटरी पर कोई बाधा थी, उसे लोको चलाने का संकेत नहीं देना चाहिए था, किंतु इसके बावजूद उसने लोको चलाने का संकेत दिया जिस कारण गंडोला का चक्का रेल पटरी पर पड़े विशाल स्क्रैप सामग्री के ऊपर उछल गया जिसने जबरदस्त झटका दिया और गंडोला में रखी सामग्री सागर सीकू के ऊपर गिर गयी जिसकी मृत्यु घटनास्थल पर हो गयी। विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि कारखाना निरीक्षक द्वारा गंडोला के आवागमन के संबंध में अनुदेश अथवा विनिर्दिष्ट निर्देश कभी नहीं दिया गया था बल्कि केवल सामान्य नियमों के उल्लंघन का अभिकथन है। विद्वान वरीय अधिवक्ता द्वारा इंगित किया गया है कि कारखाना–निरीक्षक अ॰ सा॰ 1 शशि भूषण झा द्वारा अपने प्रति परीक्षण में इस तथ्य को स्वीकार किया गया था जिसने स्वीकार किया कि गंडोला के संबंध में विनिर्दिष्ट अनुदेश नहीं दिया गया था। विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया कि यह अभिकथन कि लोको शंटिंग जमादार, ग्रेड बी॰ द्वारा और न कि नियमित लोको चालक द्वारा चलाया जा रहा था, सिद्ध नहीं किया जा सका था क्योंकि लोको चालक जिसका परीक्षण अ॰ सा॰ 5 के रूप में किया गया था, ने कथन किया है कि वह विगत दो वर्षों से लोको चला रहा था। इस न्यायालय का ध्यान प्रदर्श 11 की ओर भी खींचा गया है जो दर्शाता है कि मजदूर जो लोको चला रहा था, इसे चलाने के लिए सम्यक रूप से प्रशिक्षित किया गया था और उसने चालन परीक्षा उत्तीर्ण किया था और विगत 3-4 वर्षों से लोको चला रहा था। इंगित किया जा सकता है कि प्रदर्श 11 किसी एस॰ एन॰ सिंह का बयान है जिसे कारखाना निरीक्षक द्वारा अपने द्वारा किए गए जाँच के क्रम में दर्ज किया गया था और उक्त एस॰ एन॰ सिंह का परीक्षण भी अ॰ सा॰ 4 के रूप में किया गया था जो टिस्को में फोरमैन था।

9. तद्नुसार, याचीगण के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याचीगण के विरुद्ध कारखाना अधिनियम की धारा 92 के अधीन अपराध बनता हुआ नहीं कहा जा सकता है और तद्नुसार, अवर न्यायालयों द्वारा पारित निर्णय विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकते हैं।

10. दूसरी ओर, राज्य/विरोधी पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप करने लायक अवर न्यायालयों द्वारा पारित आक्षेपित निर्णयों में अवैधता नहीं है, क्योंकि अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य के आधार पर यह पाया गया था कि कारखाना के अधिभोगी और प्रबंधक की ओर से उपेक्षा थी और उन्होंने बिहार कारखाना नियमावली के नियम 55A (2) और (3) का उल्लंघन किया था और तद्नुसार, याचीगण के विरुद्ध अपराध स्पष्टत: बनता है। विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह भी निवेदन किया गया है कि यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं लाया गया था, सिवाए प्रदर्श 11 में अंतर्विष्ट बयान के, कि मजदूर जो लोको चला रहा था, लोको चलाने के लिए सम्यक रूप से प्राधिकृत था। इन निवेदनों के साथ, विरोधी पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप योग्य आक्षेपित निर्णयों में अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं है।

11. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि दोनों अवर न्यायालयों ने इस तथ्य पर भारी जोर दिया है कि गंडोला पर पार्श्व सहारा नहीं

था और न ही सुनिश्चित किया गया था कि खुले गंडोला पर ढीले–ढाले रूप से रखी गयी सामग्री लोको इंजिन द्वारा आवागमन के क्रम में समुचित रूप से सुरक्षित की गयी थी। विचारार्थ उद्भूत प्रश्न यह है कि क्या यह उपेक्षा संबंधित मजदूर की ओर से थी ताकि अधिनियम की धारा 97 के अधीन अपराध बन सके अथवा यह कारखाना के अधिभोगी और प्रबंधक द्वारा शुद्धत: बिहार कारखाना नियमावली, 1950 के नियम 55A (2) और (3) के उल्लंघन का मामला था जिसने उनको अधिनियम की धारा 92 के अधीन अपराध का दायी बनाया।

12. बिहार कारखाना नियमावली, 1950 के नियम 55A (2) और (3) का पठन निम्नलिखित है:–

"55A. ***Hkouk] lajpukvk] la;=k] e'khujh vkfn dh lkekU; lqj{kk-*** *&(1)...........*

(2) fdlh 0;fDr dks fdlh çfØ;k vFkok fdlh e'khujh] la;= vFkok ;= ij vFkok dkj[kkuk ds fdlh Hkkx esa vFkok ,slh rjhds esa fdlh vU; dke dks djus dh vuqefr ugha nh tk,xh tks dkbZ n?kZVuk vFkok dkbZ 'kkjhfjd migfr dkfjr dj ldrh gS vFkok blls dkfjr gksus dh laHkkouk gSA

(3) fdlh lkexzh] oLrq vFkok midj.k dks ,sls rjhds ls j[kk vFkok HkMkfjr ugha fd;k tk,xk tks dkbZ n?kZVuk vFkok dkbZ 'kkjhfjd migfr dkfjr dj ldrk gS vFkok blls dkfjr djus dh laHkkouk gSA"

इस प्रकार, यह नियम स्पष्टत: दर्शाता है कि भवनों, संरचनाओं, संयंत्रों, मशीनरी आदि के सामान्य सुरक्षा के लिए प्रावधान है जिनका अनुसरण प्रत्येक कारखाना में किया जाना है।

13. बिहार कारखाना नियमावली, 1950 के नियम 107 से 122 विनिर्दिष्टत: कारखाना के परिसर क्षेत्र में रेलवे पर विचार करती है जो भारतीय रेलवे अधिनियम, 1890 के अध्यधीन नहीं है। याचीगण के विरुद्ध इन नियमों में से किसी के उल्लंघन का आरोप नहीं है जो ऐसे मामलों में कारखाना के परिसर क्षेत्र में रेलवे पर विनिर्दिष्टत: विचार करते हैं। नियम 118 शंटिंग जमादार के लिए प्रावधान बनाता है और इसका पठन निम्नलिखित है:–

"118. ***'kfVax teknkj-*** *&(1) dkj[kkuk esa xfreku çR;sd Vsu lefpr :i ls çf'kf{kr fd, x, teknkj ds çHkkj esa gksxkA*

(2) ykdks dks vxlj gksus ds fy, çkfèkÑr djus ds igys 'kfVax teknkj Lo;a dks larq"V djsxk fd okgu ds uhps vFkok chp esa vFkok Vsu ds lkeus iVjh ij dksbZ 0;fDr ugha gS vkSj pkyd dks ugha cyk,xk tc dksbZ 0;fDr iVjh ls xqtj jgk gks cfYd doy rc cyk,xh tc lkjs 0;fDr blls nwj gks x, gksaA"

यद्यपि विनिर्दिष्ट शब्दों में नहीं किंतु यह नियम शंटिंग जमादार पर चालक को लोको चलाने का संकेत नहीं देने का सामान्य कर्तव्य डालता है जबतक रेल पटरी खाली नहीं है। गंडोला के संबंध में कोई विनिर्दिष्ट प्रावधान प्रतीत नहीं होता है यद्यपि नियम 112 ''वैगन'' पर विचार करता है। किंतु, स्वीकार्य रूप से, याचीगण पर इन नियमों के किसी उल्लंघन का आरोप नहीं है और कारखाना निरीक्षक जिसका परीक्षण अ॰ सा॰ 1 के रूप में किया गया है द्वारा यह स्वीकृत अवस्था है कि कारखाना में गंडोला के आवागमन के संबंध में विनिर्दिष्ट निर्देश कभी नहीं जारी किया गया था।

14. कारखाना अधिनियम, 1948 की धाराओं 92 और 97 का पठन निम्नलिखित है:–

*"92. **vijkèkk d fy, lkekU; nM-**&tlk bl vfèkfu;e e vU;Fkk vfHkO;Dr :i l çkoèkkfur fd;k x;k g d flok, vkj èkkjk 93 d çkoèkkuk d vè;èkhu] ;fn fdlh dkj[kkuk e] vFkok mld lcèk e] bl vfèkfu;e d çkoèkkuk e l fdlh dk vFkok bld vèkhu cuk, x, fdlh fu;e dk vFkok bld vèkhu fyf[kr e fn, x, fdlh vkn'k dk mYy?ku fd;k tkrk g] dkj[kkuk d vfèkHkkxh vkj çcèkd e l çR;d vijkèk dk nk"kh gkxh vkj ml vofèk d fy, dkjkokl l nf.Mr gkxk ftl nk o"kk rd c<k;k tk ldrk g vFkok tekuk ftl ,d yk[k #i;k rd c<k;k tk ldrk g vFkok nkuk l nMuh; gkxk vkj ;fn nk"kflf) d ckn mYy?ku tkjh jgrk g] vfrfjDr tekuk l nMuh; gkxk tk çR;d fnu d fy, ,d gtkj #i;k rd c<k;k tk ldrk g ftl ij mYy?ku tkjh gA*

xxx xxx xxx xxx

*97. **etnjk }kjk vijkèk-**&(1) èkkjk 111 d çkoèkkuk d vè;èkhu ;fn dkj[kkuk e fu;kftr dkb etnj etnjk ij fdlh drO; vFkok nkf;Ro dk vfèkjkfir dju oky bl vfèkfu;e d fdlh çkoèkku vFkok bld vèkhu cuk, x, fdlh fu;e vFkok vkn'k dk mYy?ku djrk g] og tekuk d lkFk nMuh; gkxk ftl ikp lk #i;k rd c<k;k tk ldrk gA*

*(2) tgk mièkkjk (1) d vèkhu nMuh; vijkèk d fy, etnj dk nk"kfl) fd;k tkrk g] dkj[kkuk dk vfèkHkkxh vFkok çcèkd ml mYy?ku d lcèk e vijkèk dk nk"kh ugh le>k tk,xk tc rd ;g fl) ugh fd;k tkrk g fd og bl jkdu d fy, leLr ;fDr;Dr mik;k dk dju e foQy jgkA***

15. इस प्रकार, अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमावली के पूर्वोल्लिखित प्रावधान की दृष्टि में यह परीक्षण करना होगा कि क्या कारखाना का अधिभोगी और प्रबंधक कारखाना में किए गए समस्त ढिलाई और उपेक्षा का दायी होगा, अथवा यदि ढिलाई और उपेक्षा शुद्धतः संबंधित मजदूर की ओर से था और इसका कारखाना के अधिभोगी और प्रबंधक, जिनसे सारे समय पर दुर्घटनास्थल पर उपस्थित होने की उम्मीद नहीं की जाती है, के साथ कुछ भी लेना–देना नहीं है, क्या वे अधिनियम के अधीन किसी सुरक्षा के हकदार हैं। ऊपर उद्धृत अधिनियम की धारा 97 का सादा पठन कोई संदेह नहीं छोड़ता है कि जब अधिनियम के अधीन अपराध के लिए मजदूर को दोषसिद्धि किया जा सकता था, कारखाना के अधिभोगी अथवा प्रबंधक को उक्त उल्लंघन के संबंध में अपराध का दोषी नहीं समझा जाएगा, जब तक यह सिद्ध नहीं किया जाता है कि वह इसको रोकने के लिए समस्त युक्तियुक्त उपायों को करने में विफल रहा।

16. वर्तमान मामले में, यदि गंडोला की संरचना, आकार, प्रकार ऐसी है कि यह अपने भीतर स्क्रैप को अंतर्विष्ट कर सकता है और यदि स्क्रैप के छलक आने का मौका अथवा गुंजाइश नहीं है, यदि गंडोला के पटरी पर मुक्त रूप से चलने की अनुमति दी जाती है, उस स्थिति में, मेरे सुविचारित मत में, कारखाना के अधिभोगी और प्रबंधक को इस तथ्य के कारण जिम्मेदार अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है कि मजदूरों द्वारा गंडोला पर समुचित रूप से स्क्रैप लादा नहीं गया था अथवा यह ज्यादा लदा हुआ था अथवा कि मजदूर, जिसे केवल यह सुनिश्चित करने के बाद कि रेल पटरी समस्त बाधाओं से मुक्त थी आगे बढ़ने के लिए लोको चालक को संकेत देना था, ने उपेक्षापूर्वक संकेत दिया यद्यपि रेल पटरी पर बाधा और रूकावट थी जिस कारण गंडोला का पहिया रेल पटरी पर पड़ी बाधाओं के ऊपर उछल गया और जोरदार झटका दिया और गंडोला पर रखी सामग्री मजदूर के शरीर पर गिर गयी जिसकी घटनास्थल पर मृत्यु हो गयी। दुर्भाग्यवश, इस मामले में, मजदूर, जो लोको को चलने का संकेत देने में उपेक्षावान था यद्यपि रेल पटरी पर बाधा थी, की मृत्यु दुर्घटना में हो गयी। दिए गए मामले में, स्वयं मजदूर अधिनियम

की धारा 97 के अधीन दायी था और तद्नुसार, कारखाना के अधिभोगी और प्रबंधक के किसी दायित्व का प्रश्न नहीं है, जब तक यह सिद्ध नहीं किया जाता है कि वे दुर्घटना रोकने के लिए समस्त युक्तियुक्त उपाय करने में विफल रहे जिसे वर्तमान मामले में सिद्ध नहीं किया गया है।

17. वर्तमान मामले में, दोनों अवर न्यायालयों ने अधिनियम की धारा 97 के प्रावधानों और बिहार कारखाना नियमावली, 1950 के नियम 118 को नजरअंदाज किया है और अपने निर्णयों में इसके बारे में कोई चर्चा नहीं किया है। अभिलेख स्पष्टत: दर्शाता है कि गंडोला अधिक लदा हुआ था अथवा समुचित रूप से लदा हुआ नहीं था और स्क्रैप रेल पटरी पर गिर गए थे। अभिलेख यह भी दर्शाता है कि केवल रेल पटरी को समस्त बाधाओं से मुक्त होने पर ही आगे बढ़ने के लिए लोको चालक को संकेत देना मजदूर सागर सीकू का कर्तव्य था, किंतु उसने लोको चालक को आगे बढ़ने का संकेत दिया यद्यपि रेल पटरी बाधा मुक्त नहीं थी और उसकी उपेक्षा के कारण गंडोला का पहिया रेल पटरी पर पड़ी बाधा के ऊपर उछल गया और जबरदस्त झटका दिया और गंडोला में रखी सामग्री उसके शरीर पर गिर गयी और उसकी मृत्यु को कारित किया। मेरे सुविचारित मत में, यह दर्शाने के लिए कि गंडोला, भले ही इसे समुचित रूप से लादा गया था और मुक्त पटरी पर चलाने की अनुमति समुचित रूप से दी गयी थी, असुरक्षित थी और समुचित रूप से लदी सामग्री पटरी पर गंडोला के मुक्त आवागमन के दौरान भी उछल जाया करती थी और कि वे समुचित रूप से लदी सामग्री के ऐसे सामान्य रूप से छलक आने को रोकने के लिए उपाय करने में विफल रहे थे, किसी चीज की अनुपस्थिति में अधिभोगी और प्रबंधक को कारखाना अधिनियम की धारा 92 के अधीन अपराध का दोषी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता था।

18. इस आरोप के संबंध में कि लोको को शंटिंग जमादार ग्रेड बी॰ द्वारा और न कि नियमित लोको चालक द्वारा लोको को चलाने की अनुमति दी गयी थी, मैं याचीगण के विद्वान वरीय अधिवक्ता के निवेदन में बल पाता हूँ कि इस आरोप को सिद्ध नहीं किया जा सका था क्योंकि लोको चालक, जिसका परीक्षण अ॰ सा॰ 5 के रूप में किया गया था, ने कथन किया था कि वह विगत दो वर्षों से लोको चला रहा था और प्रदर्श 11 दर्शाता है कि उक्त मजदूर लोको चलाने के लिए सम्यक रूप से प्रशिक्षित किया गया था, उसने चालन परीक्षा उत्तीर्ण किया था और विगत 3-4 वर्षों से लोको चला रहा था। इसके अतिरिक्त, मैं अभिलेख से पाता हूँ कि अभियोजन ने लोको चालक का अ॰ सा॰ 5 सोमा बरूआ के रूप में परीक्षण किया था जो दुर्घटना के समय पर लोको चला रहा था। इस गवाह ने स्वयं को टिस्को में लोको चालक के रूप में वर्णित किया है और न कि शंटिंग जमादार ग्रेड बी॰ के रूप में। इसे उसके साक्ष्य में नहीं लिया गया है, यद्यपि स्वयं अभियोजन द्वारा उसका परीक्षण किया गया है, कि वह दुर्घटना की तिथि पर वस्तुत: शंटिंग जमादार ग्रेड बी॰ था। इस प्रकार, अभियोजन इस आरोप को स्थापित करने में बुरी तरह विफल रहा है कि लोको को शंटिंग जमादार ग्रेड बी॰ द्वारा चलाए जाने की अनुमति दी गयी थी और न कि नियमित लोको चालक द्वारा। बल्कि यह एक ऐसा मामला है जहाँ अभियोजन ने लोको चालक का परीक्षण करके स्वयं अपने मामले के विरुद्ध अभिलेख पर साक्ष्य लाया है।

19. पूर्वोक्त कारणों से, मेरा सुविचारित मत है कि अभियोजन याचीगण के विरुद्ध आरोप स्थापित करने में विफल रहा है और इस प्रकार, दोनों अवर न्यायालयों द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किए जा सकते हैं बल्कि यह सुयोग्य मामला है जिसमें याचीगण को आरोप से दोषमुक्त कर दिया जाना चाहिए था।

20. तद्नुसार, सी॰/2 केस सं॰ 663 वर्ष 1991/टी॰ आर॰ सं॰ 553A वर्ष 1999 में श्री बी॰ सी॰ झा, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर, पूर्वी सिंहभूम द्वारा पारित दिनांक 4.10.1999 का

दोषसिद्धि का निर्णय और दंडादेश तथा दांडिक अपील सं॰ 182 वर्ष 1999 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, जमशेदपुर, पूर्वी सिंहभूम द्वारा पारित दिनांक 16.5.2005 का निर्णय एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। परिणामस्वरुप, याचीगण को आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है।

21. इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 29.6.2005 के आदेश से प्रतीत होता है कि याचीगण पर अधिरोपित जुर्माना की राशि उनके द्वारा अवर न्यायालय के समक्ष जमा की गयी थी जिसे इसे पृथक खाता में सिविल न्यायालयों के रजिस्ट्रार की देख-रेख के अधीन रखे जाने का निर्देश दिया गया था। यह कहना अनावश्यक है कि उक्त खाता में जमा की गयी राशि तुरन्त याचीगण को वापस की जाएगी।

22. तद्नुसार, यह पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात किया गया है। अवर न्यायालय अभिलेखों को तुरन्त वापस भेजा जाए।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy] U;k;efr

तौसीफ रजा

cuke

भारत संघ, मानव संसाधन विकास विभाग मंत्रालय के माध्यम से एवं अन्य

W.P. (C) No. 4572 of 2012. Decided on 6th October, 2012.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 343—हिंदी भाषा में और न कि अंग्रेजी भाषा में जाति प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने के लिए आई॰ आई॰ टी॰ में प्रवेश देने से इनकार–याची मेधावी छात्र है और यदि प्रत्यर्थीगण द्वारा आपत्ति नहीं उठायी गयी होती, उसने आसानी से आई॰ आई॰ टी॰ में प्रवेश पाया होता–छात्र का झारखंड राज्य जैसे संप्रभु निकाय पर नियंत्रण नहीं है और झारखंड राज्य अपनी पसंद की भाषा में जाति प्रमाण पत्र जारी करता है–याची के किसी दोष के बिना उसे प्रवेश देने से इनकार किया गया है–अन्य संस्थान, जो भी अनुच्छेद 12 के अर्थ के अधीन ''राज्य'' है, किसी राज्य द्वारा हिंदी में जारी किसी प्रमाण पत्र को अनदेखा अथवा ठुकरा नहीं सकता है–प्रवेश प्रदान करने के लिए प्रत्यर्थीगण को याची के मामले पर विचार करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 11 से 16)

अधिवक्तागण.–Mr. Jay Prakash Pandey, For the Petitioner; Mr. Prabhash Kumar, For the Union of India; Mr. Fazur Rahman, Respondent Nos. 2 & 3.

आदेश

याची के अधिवक्ता रिट याचिका के मेमो के पैराग्राफ 7 और उसके परिशिष्ट-3 के विलोपन की अनुमति इप्सित करते है।

2. जैसा इप्सित किया गया है, अनुमति प्रदान की जाती है।

3. रिट याचिका के मेमो के पैराग्राफ 7 के साथ परिशिष्ट 3 विलोपित किया जाएगा और दिन के क्रम में यह संशोधन किया जाएगा।

4. वर्तमान याचिका याची छात्र द्वारा भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, नयी दिल्ली में उसको प्रवेश देने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 2 और 3 को निर्देश इप्सित करते हुए दाखिल की गयी है क्योंकि प्रत्यर्थी सं॰ 2 और 3 द्वारा उसका मामला केवल इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया है कि प्रत्यर्थी प्राधिकारी के समक्ष याची द्वारा प्रस्तुत जाति प्रमाण पत्र (याचिका के मेमो का परिशिष्ट-2) हिंदी में है और अंग्रेजी में नहीं

है और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान द्वारा विहित फॉर्मेट (प्रतिशपथ पत्र के परिशिष्ट R-1 में परिशिष्ट 4) में भी नहीं है जैसा प्रति शपथ पत्र के परिशिष्ट R1 और R2 सह-पठित प्रति शपथ पत्र के पैरा 3 और 7 में कथन किया गया है।

5. याची के अधिवक्ता द्वारा जोरदार निवेदन किया गया है कि जहाँ तक जाति प्रमाण पत्र जारी किए जाने का संबंध है याची का झारखंड सरकार पर नियंत्रण नहीं है किंतु याची को जारी दिनांक 2 दिसंबर, 2011 का जाति प्रमाण पत्र, यद्यपि यह हिंदी भाषा में है, समस्त आवश्यक विवरणों को अंतर्विष्ट करता है जैसे याची की जाति अर्थात् मोमिन जो ओ॰ बी॰ सी॰ कोटि, नन-क्रीमी लेयर में आता है और यह प्रमाण पत्र पहले ही याची छात्र द्वारा भारतीय प्रौद्योगिकी सांस्थान, नयी दिल्ली को प्रस्तुत किया जा चुका है जैसा याचिका के मेमो के पैरा 6 में कथन किया गया है। इस तथ्य को अध्यक्ष, आई॰ आई॰ टी॰, जे॰ ई॰ ई॰ एडवांस्ड 2013, नयी दिल्ली द्वारा दाखिल प्रति शपथ पत्र में खंडित नहीं किया गया है। याची के अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि याची मेधावी छात्र है और उसने ऑल इंडिया रैंक लिस्ट में 5355, ओ॰ बी॰ सी॰ रैंक लिस्ट में ऑल इंडिया रैंक में ओ॰ बी॰ 806 और ओ॰ बी॰ सी॰ माइनॉरिटी रैंक लिस्ट में ऑल इंडिया रैंक में ओ॰ एफ॰ 52 स्थान प्राप्त किया है। इस प्रकार, जहाँ तक ओ॰ बी॰ सी॰ अल्पसंख्यक कोटि का संबंध है, उसने उच्चतर स्थान प्राप्त किया है और ऐसे मेधावी छात्र को केवल इस आधार पर प्रवेश देने से इनकार किया गया है कि जाति प्रमाण पत्र, जो यह प्रमाण है कि वह ओ॰ बी॰ सी॰ कोटि से आता है, हिंदी भाषा में जारी किया गया है जो आई॰ आई॰ टी॰ प्राधिकारी को स्वीकार्य नहीं है। याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि प्रमाण पत्र प्रत्यर्थी राज्य द्वारा अपने पसंद की भाषा में जारी किया गया है जबकि आई॰ आई॰ टी॰ जोर दे रहा है कि जाति प्रमाण पत्र केवल अंग्रेजी भाषा में जारी किया जाना चाहिए जैसा प्रति शपथ पत्र के पैरा 3 में कहा गया है। छात्र होने के नाते याची का झारखंड राज्य पर नियंत्रण नहीं है जहाँ तक भाषा का संबंध है जिसमें राज्य जाति प्रमाण पत्र जारी करना चुनता है। किंतु, उक्त प्रमाण पत्र में निम्नलिखित विवरण अंतर्विष्ट हैं:-

(a) ;kph dk uke]

(b) ;kph d firk dk uke]

(c) LFkku tgk l ;kph vkrk g vFkkr x<ok ftyk]

(d) èke&ekgEeMu]

(e) mi tkfr&ekfeu]

*(f) rF; fd ;kph vk0 ch0 lh0 dkfV d ^^Øheh y;j** d vrxr ugh vkrk g tlk dn ljdkj }kjk tkjh lcfèkr ifji= e of.kr fd;k x;k gA*

इस प्रकार, याची के अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि हिंदी भाषा में जारी प्रमाण पत्र, जो याचिका के मेमो के परिशिष्ट-2 पर है, प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा अपेक्षित प्रत्येक विवरण को अंतर्विष्ट करता है किंतु अनावश्यकत: वे अंग्रेजी भाषा में जाति प्रमाण पत्र के लिए जोर दे रहे हैं और वह भी उनके अपने फॉर्मेट में जिसके लिए झारखंड सरकार सहमत नहीं हो सकती है।

6. याची के अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि याची ने अंग्रेजी भाषा में जाति प्रमाण पत्र के लिए आवेदन भी दिया है जिसे दिनांक 5 जुलाई, 2012 को जारी किया गया है और इसे प्रत्यर्थी प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया गया है किंतु अब वे जोर दे रहे है कि प्रमाण पत्र जनवरी, 2012 के पहले जारी किया जाना चाहिए था और जून, 2012 के पहले प्रस्तुत किया जाना चाहिए। अंग्रेजी भाषा

में जारी जाति प्रमाण पत्र को याचिका के मेमो के परिशिष्ट–2/2 पर रखा गया है। जहाँ तक जाति प्रमाण पत्र जारी करने के लिए फॉर्मेट और भाषा का संबंध है, याची छात्र का झारखंड राज्य पर नियंत्रण नहीं है। अत: तथ्य बना रहता है कि झारखंड सरकार द्वारा जो भी प्रमाण पत्र जारी किया गया था, उसकी आपूर्ति पहले ही प्रत्यर्थी प्राधिकारी को की जा चुकी है। इस प्रकार, आई॰ आई॰ टी॰, दिल्ली का जोर कि जाति प्रमाण पत्र अंग्रेजी भाषा में और प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा विहित फॉर्मेट में होना चाहिए, इस न्यायालय को स्वीकार्य नहीं हो सकता है और यह प्रकट है कि याची के किसी दोष के बिना उसे भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान जैसे सुविख्यात संस्थान में प्रवेश देने से इनकार किया गया था यद्यपि उसने आई॰ आई॰ टी॰–जे॰ ई॰ ई॰ 2012 परीक्षा में उच्च रैंक प्राप्त किया है। याची के अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया है कि हिंदी भाषा में जारी प्रमाण पत्र (परिशिष्ट–2) पहले ही जून, 2012 के पहले प्रस्तुत किया गया है और अंग्रेजी भाषा में जारी प्रमाण पत्र (परिशिष्ट 2/2) भी झारखंड राज्य से इसे प्राप्त करने के बाद प्रत्यर्थी प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया गया है और इसलिए, प्रत्यर्थीगण को याची को भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, दिल्ली में प्रवेश देने का उपयुक्त निर्देश दिया जा सकता है जो बदले में याची के मेधानुसार संस्थान आवंटित करेंगे।

7. मैंने प्रत्यर्थी सं॰ 2 और 3 के अधिवक्ता को सुना है जिन्होंने निवेदन किया है कि याची को प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा विहित भाषा और फॉर्मेट में जाति प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने की आवश्यकता थी जैसा प्रति शपथ पत्र के पैराग्राफ 3 और 7 सह–पठित प्रति शपथ पत्र का परिशिष्ट–R1 और R2 में कथन किया गया है और चूँकि याची इसकी आपूर्ति करने में विफल रहा, याची की उम्मीदवारी अस्वीकार कर दी गयी है।

8. प्रत्यर्थी सं॰ 1 के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उन्होंने प्रत्यर्थी सं॰ 2 और 3 द्वारा दिए गए तर्क को अपनाया है। किंतु, प्रत्यर्थी सं॰ 1 के अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 343 के मुताबिक हिंदी भाषा भारत संघ की आधिकारिक भाषा है और इसलिए हिंदी भाषा में भी दस्तावेजों को स्वीकार किया जाना चाहिए किंतु यदि संस्थान का अपना फॉर्मेट है, याची को विहित फॉर्मेट में जाति प्रमाण पत्र प्रस्तुत करना चाहिए था।

9. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए प्रतीत होता है कि झारखंड राज्य के गढ़वा जिले का निवासी याची छात्र है जिसने आई॰ आई॰ टी॰ जे॰ ई॰ ई॰ 2012 परीक्षा दिया। उसने भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, दिल्ली द्वारा जारी रैंक विवरण के मुताबिक रैंक और पोजीशन पाया।

vky bfM;k jd	*5355*
vk0 ch0 lh0 jd fyLV e vky bfM;k jd	*vk0 ch0 806*
vk0 ch0 lh0 vYil[;d jd fyLV e vky bfM;k jd	*vk0 ,e0 52*

10. इस प्रकार, प्रश्नगत संस्थान द्वारा निर्गत, याची द्वारा पाए गए रैंक के संबंध में पूर्वोक्त विवरण इस तथ्य का समर्थन करते हैं कि याची मेधावी छात्र है और यदि प्रत्यर्थीगण द्वारा आपत्ति नहीं की गयी होती, उसने आसानी से भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान में प्रवेश पाया होता। अब विवाद को नजदीक से देखते हुए, यह प्रतीत होता है कि याची अन्य पिछड़ी जाति (नन–क्रीमीलेयर), उपजाति मोमीन से आता है और

याची ने उक्त तथ्यों के समर्थन में जाति प्रमाण पत्र जारी किए जाने के लिए झारखंड सरकार के समक्ष आवेदन दिया था। झारखंड राज्य में जाति प्रमाण पत्र हिंदी भाषा में जारी किया जाता है और उपायुक्त, जिला गढ़वा द्वारा याची को इसे जारी किया गया है (जो याचिका के मेमो के परिशिष्ट-2 पर है)। परिशिष्ट-2 के परिशीलन से प्रतीत होता है कि वर्तमान याची के संबंध में प्रश्नगत दस्तावेज पर्याप्त विवरण अंतर्विष्ट करता है जैसे-

(a) ;kph dk uke]

(b) ;kph d firk dk uke]

(c) LFkku tgk l ;kph vkrk g vFkkr ftyk x<ok]

(d) èke&ekgEeMu]

(e) mi tkfr&ekfeu]

*(f) rF; fd ;kph ^^Øheh y;j** d vrxr ugh vkrk g tlk dn l jdkj }kjk tkjh lcfèkr ifji= e of.kr fd;k x;k gA*

11. इस प्रकार, यह प्रकट है कि याची को झारखंड सरकार द्वारा जारी जाति प्रमाण पत्र समस्त आवश्यक विवरणों को सम्मिलित करता है, जिसे भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान में प्रवेश देने के लिए प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण द्वारा मांगा गया था। यदि वे अन्यथा मेधावी हैं। आगे निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण अंग्रेजी भाषा में प्रमाण पत्र के लिए जोर दे रहे हैं और वह भी आई॰ आई॰ टी॰ द्वारा विहित फॉर्मेट में। इस संदर्भ में यह ध्यान में रखना होगा कि झारखंड राज्य जैसे संप्रभु निकाय पर छात्र का नियंत्रण नहीं है। और झारखंड राज्य स्वयं अपने पसंद की भाषा में जाति प्रमाण पत्र जारी करता है जैसा यहाँ ऊपर कथन किया गया है और इसलिए, यह अत्यन्त स्पष्ट है कि याची के किसी दोष के बिना उसे प्रवेश देने से इनकार किया गया है।

12. मामले के तथ्यों से आगे यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थीगण ने दृष्टिकोण अपनाया है कि प्रमाण पत्र प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण द्वारा विहित फॉर्मेट में और वह भी अंग्रेजी भाषा में झारखंड सरकार द्वारा जारी किया जाना चाहिए था और केवल तब याची को प्रवेश दिया जाएगा। यह विधि की दृष्टि में अनुज्ञेय नहीं है और प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण द्वारा अपेक्षित समस्त विवरणों को अंतर्विष्ट करने वाला प्रमाण पत्र, भले ही इसे हिंदी भाषा में जारी किया गया है, को सम्यक अधिमान दिया जाना चाहिए था। यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 और 3 को अंग्रेजी भाषा से कुछ ज्यादा ही लगाव है। इस देश में, संस्थान जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 के अर्थ के अंतर्गत ''राज्य'' है, को अन्य भाषाओं के अतिरिक्त हिंदी में अपने प्रारूप को विहित करना चाहिए था। अन्य संस्थान, जो भी भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 के अर्थ के अंतर्गत ''राज्य'' है, किसी राज्य द्वारा हिंदी में जारी किसी प्रमाण पत्र को अनदेखा नहीं कर सकता है अथवा ठुकरा नहीं सकता है।

13. भारत के संविधान के अनुच्छेद 343 को देखते हुए भारत की आधिकारिक भाषा देवनागरी लिपि में हिंदी है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 343 का पठन निम्नलिखित है:-

*^^343. **l?k dh jktHkk"kk-**&(1) l?k dh jktHkk"kk fgUnh rFkk fyfi noukxjh gkxhA*

l?k d 'kkldh; i;ktuk d fy, i;kx gku oky vdk dk :i Hkkjrh; vdk dk vrjk"Vh; :i gkxkA

(2) [kM (1) e fdlh ckr d gkr g, Hkh] bl lfoèkku d ikjEHk l ing o"k dh vofèk rd l?k d mu lHkh 'kkldh; i;ktuk d fy, vxth Hkk"kk dk i;kx fd;k tkrk jgxk ft ld fy, mldk , l ikjEHk l Bhd igy i;kx fd;k tk jgk Fkk%

ijr jk"Vifr mDr vofèk d nkjku vkn'k }kjk l?k d 'kkldh; i;ktuk e l fdlh d fy, vxth Hkk"kk d vfrfjDr fgUnh Hkk"kk dk vkj Hkkjrh; vdk d vrjk"Vh; :i d vfrfjDr noukxjh :i dk i;kx ikfèkÑr dj ldxkA

(3) bl vuPNn e fdlh ckr d gkr g, Hkh] l ln mDr ing o"k dh vofèk d i'pkr] fofèk }kjk

(a) vxth Hkk"kk dk] ;k

(b) vdk d noukxjh :i dk]

*, l i;ktuk d fy, i;kx micfèkr dj ldxh tk fofèk e fofufn"V fd, tk,A***

इस प्रकार, हिंदी को भारत संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में अपनाया गया है और, इसलिए, याची द्वारा प्रस्तुत परिशिष्ट 2 पर हिंदी भाषा में प्रमाण पत्र, जो भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, दिल्ली द्वारा अपेक्षित पर्याप्त विवरण अंतर्विष्ट करता है, को प्रत्यर्थी सं॰ 2 और 3 द्वारा स्वीकार किया जाना चाहिए था। प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण ने अनावश्यक रूप से अंग्रेजी भाषा में जाति प्रमाण पत्र, और वह भी उनके द्वारा विहित फॉर्मेट में, पर जोर दिया। अत: अधिकारीगण, जो आई॰ आई॰ टी॰; दिल्ली में उच्च पदों पर विराजमान है, को जानना चाहिए कि अनेक राज्य हिंदी भाषा में ऐसे प्रमाण पत्रों को जारी करते हैं क्योंकि हिन्दी भारत संघ के अनेक राज्यों की आधिकारिक भाषा है। आई॰ आई॰ टी॰ प्राधिकारीगण को ध्यान में रखना चाहिए कि अंग्रेजी भाषा में विहित फॉर्मेट इन राज्यों द्वारा स्वीकार नहीं किया जा सकता है जो भी संप्रभु निकाय हैं। आई॰ आई॰ टी॰ संप्रभु निकाय झारखंड राज्य के ऊपर नियंत्रण रखने वाला सुपर संप्रभु निकाय नहीं है और भाषा विशेष में जाति प्रमाण पत्र जारी किए जाने की मांग अनावश्यक है और भारत के संविधान में प्रतिष्ठापित सिद्धांतों के विपरीत है।

14. वर्तमान मामले के तथ्यों को देखते हुए, प्रतीत होता है कि याची मेधावी छात्र है और उसने प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण द्वारा जारी प्रमाण पत्र के मुताबिक उच्च अंक प्राप्त किया है और उसने अपनी याचिका के पैरा 6 में पहले ही कथन किया है कि उसने न केवल आई॰ आई॰ टी॰ प्राधिकारी को हिंदी में जारी दिनांक 2 दिसंबर, 2011 का जाति प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया है बल्कि अंग्रेजी भाषा में जारी जाति प्रमाण पत्र भी दिया है जो दिनांक 31.5.2012 का है।

रिट याचिका के पैरा 6 का पठन निम्नलिखित है:–

^^fd ;kph u fgnh Hkk"kk e fnukd 2.12.2011 dk tkfr çek.k i= vkj vxth Hkk"kk e fnukd 31.5.2012 tkfr çek.ki= çLrr fd;k Fkk vkj vxth Hkk"kk e fnukd 5.7.2012 d tkfr çek.k i= ij çkfèkdkjh }kjk fopkj ugh fd;k x;k FkkA

*fnukd 2.12.2011, fnukd 31.5.2012 vkj fnukd 5.7.2012 d tkfr çek.k i= dh Nk;k çfrfyfi bl vkonu d ifjf'k"V&2, 2/1 vkj 2/2 d :i e lyXu dh x;h gA***

प्रत्यर्थीगण प्राधिकारीगण द्वारा दाखिल प्रति शपथ पत्र में मामले के इस पहलू से इनकार नहीं किया गया है।

15. इस प्रकार, अंग्रेजी भाषा में और वह भी विहित फॉर्मेट में जाति प्रमाण पत्र पर प्रत्यर्थी सं॰ 2 की ओर से जोर अवैध कार्रवाई है। याची छात्र का झारखंड राज्य पर नियंत्रण नहीं है जैसा यहाँ ऊपर कथन किया गया है। फिर भी, याची के माता-पिता ने अंग्रेजी भाषा में प्रमाण पत्र पाने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगाया जो परिशिष्ट-2/1 और 2/2 के रूप में संलग्न है और इनकी आपूर्ति प्रत्यर्थी सं॰ 2 और 3 को की भी गयी है। प्रत्यर्थी सं॰ 2 और 3 को मामले में व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए था कि इस प्रकार के कारण के लिए मेधावी छात्र को प्रवेश देने से इनकार कभी नहीं करना चाहिए क्योंकि भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान भारत का प्रीमियर संस्थान है। आई॰ आई॰ टी॰ में प्रवेश पाना प्रत्येक छात्र का स्वप्न है। याची आई॰ आई॰ टी॰ में प्रवेश पाने के लिए मेधा सूची के अंतर्गत आता है। इस प्रकार की आपत्ति से उसका सपना छीना नहीं जा सकता है, जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 343 के विपरीत है।

16. इन तथ्यों और कारणों की दृष्टि में, मैं एतद् द्वारा वर्तमान याची को उन समस्त संस्थानों में जहाँ याची अपने अंक और रैंक के आधार पर, जिसके संबंध में विवरण याचिका के मेमो के परिशिष्ट-1 पर है, प्रवेश पाने का हकदार है, प्रवेश प्रदान करने के लिए याची के मामले पर विचार करने का निर्देश देता हूँ।

17. उसने अंकों को देखते हुए याची को उसके द्वारा भरे गए विकल्पों के मुताबिक समुचित फैकल्टी दी जाएगी। प्रवेश प्रक्रिया 10 दिनों की अवधि के भीतर प्रत्यर्थीगण द्वारा पूरी की जाएगी।

18. यह याचिका अनुज्ञात की जाती है और निपटायी जाती है।

19. मैं आगे रजिस्ट्री को इस आदेश को आरंभ में फैक्स द्वारा और तत्पश्चात् रजिस्टर्ड डाक द्वारा प्रत्यर्थीगण को तुरन्त कार्रवाई के लिए भेजने का निर्देश देता हूँ जैसा यहाँ ऊपर कहा गया है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

डॉ॰ टी॰ मुखर्जी एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cri. Misc. Pet. No. 449 of 2006. Decided on 20th September, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

कारखाना अधिनियम, 1948—धारा 92—बिहार कारखाना नियमावली, 1950—नियम 55A—कारखाना के अंदर असुरक्षित कार्य—दुर्घटना में मजदूर की मृत्यु—संज्ञान—कोई नहीं जानता था कि उस स्थान पर एल॰ डी॰ गैस जमा किया जा रहा है जहाँ दुर्घटना हुई—ऐसी स्थिति में, यदि व्यक्तियों को उस स्थान पर काम करने की अनुमति दी गयी थी, किसी को प्रावधान का उल्लंघन करता हुआ नहीं कहा जा सकता है—किसी जानकारी की अनुपस्थिति में कि स्थान पर गैस जमा हो गया है, कोई यह आशंका नहीं कर सकता है कि यह दुर्घटना अथवा शारीरिक उपहति कारित कर सकता है—वाटर सील वाल्ब को भी समुचित रूप से काम करता हुआ रिपोर्ट किया गया था—याचीगण का अभियोजन बिल्कुल दोषपूर्ण होगा—संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किया गया। (पैराएँ 17 से 22)

अधिवक्तागण.—M/s. T.R. Bajaj, H.K. Shikarwar, For the Petitioners; Mr. D.K. Chakra-vorty, For the State.

न्यायालय द्वारा.—याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन सी॰/2 केस सं॰ 5538 वर्ष 2004 में तत्कालीन मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी—प्रभारी, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 6.12.2004 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन याचीगण के विरूद्ध कारखाना अधिनियम की धारा 92 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया है।

3. परिवादी का मामला है कि दो मजदूर अर्थात रामू कुमार एवं शिवा गिरी दिनांक 8.9.2004 को गैस रिकवरी सिस्टम के थ्री-वे वाल्व बुश पिन बदलने के काम में लगे हुए थे। उस प्रयोजन से जब वे दो मजदूर स्टील तार की मदद से चिमनी के भीतर पाड़/मचान लगा रहे थे, तब अचानक विस्फोट हुआ जिसके परिणामस्वरूप दोनों मजदूरों को अत्यंत जलन उपहतियाँ हुई। दुर्घटनास्थल पर रामू कुमार की मृत्यु हो गयी जबकि एक अन्य मजदूर शिवा गिरी ने, जिसे अस्पताल ले जाया गया था, दिनांक 10.9.2004 को उपहतियों के कारण दाम तोड़ दिया। मामला कारखाना निरीक्षक, जमशेदपुर, सर्किल 1 को रिपोर्ट किया गया था।

4. कारखाना निरीक्षक ने विस्फोट का कारण जानने के लिए जाँच किया। जाँच के दौरान, संदेह किया गया था कि उलटे प्रवाह के कारण घटना स्थल पर एल॰डी॰ गैस जमा हो गयी थी जिसने विस्फोटक मिश्रण बनाया जो जब ज्वलन स्रोत के संपर्क में आया, विस्फोट हो गया। जाँच रिपोर्ट में गैस रिकवरी सिस्टम के काम करने का तरीका विस्तारपूर्वक दिया गया है। साथ ही इसके मुख्य घटकों का वर्णन भी किया गया है। जाँच रिपोर्ट के अनुसार, स्टील निर्माण प्रक्रिया के दौरान, एल॰ डी॰ कन्वर्टर में एल॰ डी॰ गैस बनता है, जिसके साथ पृथक सपोर्ट रिकवरी सिस्टम दिया गया है ताकि एल॰ डी॰ गैस, गैस होल्डर (गैस रिकवरी सिस्टम का पुरजा) से पुनः पाया जा सके। एल॰ डी॰ कनवर्टर फ्लेयर स्टेक पर गैस रिकवरी सिस्टम के साथ जुड़ा रहता है। जहाँ फ्लेयर स्टेक से गैस होल्डर तक गैस प्रवाह को विस्थापित करने के लिए थ्री वे वाल्व होता है। वातावरण में छोड़ने से पहले फ्लेयर स्टेक पर गैस आधिक्य जला दिया जाता है। गैस होल्डर से फ्लेयर स्टेक तक गैस के उलटे प्रवाह को नियंत्रित करने के लिए गैस रिकवरी सिस्टम में निम्नलिखित पुर्जे होते हैं:—

(a) okVj lhy pd okYo&;g lkekU; vkij'ku vkj 'kV Mkmu d vèkhu fjdojh fLVe d ljf{kr iFkDdj.k dk l{ke cuku d fy, gA

(b) fDod Mi ;0 lhy&xl gkYMj vkj fjdojh fLVe l vyxko d fy, okVj lhy pd okYo d cdvi d :i e fDod Mi okVj ;0 lhy fn;k tkrk gA

(c) fLyi lyV okYo&bl xl gkYMj lfgr ç.kkyh l fdlh xl dh okilh dk jkdu d fy, okVj lhy pdokYo vkj Fkh o okYo d chp fn;k tkrk gA ;g fcYdy ;=or cyfdx g vkj 'kVMkmu d le; ij fdlh xl d myV çokg dk jkdu d fy, vfrfjDr lrdrk d :i e mi;kx d fy, fMtkbu fd;k x;k gA

(d) Fkh o okYo&bl okYo dk dke xl dh fn'kk dk p;u djuk g fd D;k xl iuh ik;k tk,xk vFkok bl çTtofyr fd;k tk,xkA

(e) ckbikl okYo&Fkh o okYo d Bhd l dke ugh dju d nkjku bl okYo dk [kkyk tk,xk vkj xl çTtofyr dh tk,xhA

5. जाँच के दौरान, पाया गया था कि केवल क्विक डंप वाटर यू॰ सील और वाटर सील चेक वाल्व का उपयोग किया जा रहा था जबकि तीसरा स्लिप प्लेट वाल्व ऑपरेशन में नहीं था जिसे गैसों के उल्टे प्रवाह की किसी संभावना को रोकने के लिए अतिरिक्त सतर्कता के लिए फिक्स करने की आवश्यकता है। संदेह किया गया था कि क्विक डंप वाटर यू॰ सील और वाटर सील चेक वाल्व में कुछ दोष उत्पन्न हो जाने के कारण और तीसरे स्लिप प्लेट का उपयोग नहीं किए जाने के कारण एल॰ डी॰ गैस का उल्टा प्रवाह था जो रगड़ की चिंगारी से जल गयी थी और विस्फोट हुआ।

6. जाँच रिपोर्ट के आधार पर, सी॰/2 केस सं॰ 5538 वर्ष 2004 के रूप में परिवाद दर्ज किया गया था जिसमें अभिकथित किया गया था कि प्रबंधन और मेसर्स आर॰ के॰ जी॰ उद्योग के स्वत्वधारी, जिन्हें वाल्व को बदलने का काम न्यस्त किया गया था, ने बिहार कारखाना नियमावली, 1950 के नियम 55A(2) में अंतर्विष्ट प्रावधान का उल्लंघन किया और इसी समय पर वाटर सील चेक वाल्व और यू॰ वाटर सील सिस्टम के प्रभावकारी रूप से काम करने को सुनिश्चित करने के लिए सक्षम व्यक्तियों द्वारा वाल्व की सावधि परीक्षा नहीं कराकर झारखंड कारखाना नियमावली की अनुसूची XIII के उपनियम (12) के प्रावधान का उल्लंघन किया।

7. ऐसे परिवाद को दाखिल करने पर, याचीगण के विरूद्ध कारखाना अधिनियम की धारा 92 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान दिनांक 6.12.2004 के आदेश के तहत लिया गया था जो चुनौती के अधीन है।

8. याचीगण के विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री टी॰ आर॰ बजाज ने निवेदन किया कि जाँच करने के बाद कारखाना निरीक्षक निश्चित नहीं था कि किस प्रकार उस समय पर विस्फोट हुआ जब दो व्यक्ति गैस रिकवरी सिस्टम में वाल्व फिक्स करने के काम में लगे हुए थे, बल्कि इस निष्कर्ष पर आना कारखाना निरीक्षक की कल्पना है कि वाटर सील और वाटर सील चेक वाल्व में दोष के कारण गैसों के उलटे प्रवाह के कारण दुर्घटनास्थल पर एल॰ डी॰ गैस जमा हो सकती है। अत:, निष्कर्ष, जो यद्यपि अटकल पर आधारित है, को स्वीकार करते हुए कहा जा सकता है कि यह शुद्धत: दुर्घटना का मामला था।

9. इस संबंध में निवेदन किया गया था कि स्टील बनाने की प्रक्रिया में एल॰ डी॰ गैस निर्मुक्त होता है जिसे गैस रिकवरी सिस्टम के गैस होल्डर में पुनर्स्थापित किया जाता है। जब गैस आधिक्य का उत्पादन होता है, तब इसे श्री वे वाल्व के माध्यम से चिमनी के माध्यम से प्रणाली से उत्सर्जित करने की अनुमति दी जाती है।

10. विद्वान अधिवक्ता ने इस आवेदन के साथ संलग्न गैस रिकवरी सिस्टम के डायग्राम को निर्दिष्ट करते हुए इंगित किया कि गैस होल्डर से गैस रिकवरी सिस्टम तक गैस के उलटे प्रवाह को रोकने के लिए दो फूलप्रूफ सीलों का उपयोग किया जाता है। एक क्विक डंप वाटर सील चेक वाल्व है जो गैस होल्डर से रिकवरी सिस्टम तक गैस का उल्टा प्रवाह नहीं होने देगा।

11. आगे इंगित किया गया था कि जाँच रिपोर्ट के अनुसार स्लिप प्लेट वाल्व का इस्तेमाल नहीं किया गया था किंतु कारखाना निरीक्षक की रिपोर्ट से प्रतीत होगा कि अतिरिक्त सतर्कता के लिए स्लिप प्लेट वाल्व का उपयोग किया जा रहा है।

12. अभियोजन का मामला कभी नहीं है कि पूर्वोक्त दो वाटर सील वाल्व और वाटर सील चेक वाल्व काम नहीं कर रहे थे बल्कि केवल कारखाना निरीक्षक की ओर से संदेह है कि गैस के उलटे प्रवाह के कारण दुर्घटना स्थल पर एल॰ डी॰ गैस जमा हो गयी थी किंतु यदि ऐसा होता तो विस्फोट हुए बिना भी कार्यरत व्यक्तियों की तुरन्त मृत्यु हो गयी होती क्योंकि एल॰ डी॰ गैस जहरीला है क्योंकि इसमें कार्बन मोनोक्साइड और कार्बन डाईआक्साइड है।

13. इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि इस अटकलबाजी पर कि वाटर सील में गड़बड़ी हो जाने के कारण एल॰ डी॰ गैस जमा हो गयी थी और विस्फोट हो गया था, कारखाना अधिनियम के अधीन, विशेषत: नियम 55A(2) में अंतर्विष्ट प्रावधान के उल्लंघन के लिए किसी को अभियोजित नहीं किया जा सकता है क्योंकि पूर्वोक्त परिस्थितियों में कोई आशंका नहीं कर सकता था कि वाल्व बदलने के समय पर कोई दुर्घटना हो जाएगी।

14. आगे निवेदन किया गया था कि कारखाना निरीक्षक ने अपने रिपोर्ट में बताया है कि स्लिप प्लेट बाल्व का उपयोग नहीं किया गया था किंतु स्वयं रिपोर्ट के अनुसार गैसों के उल्टे प्रवाह को रोकने के लिए अतिरिक्त सावधानी बरतने के लिए इसका उपयोग किया जा रहा था और ऐसी स्थिति में झारखंड कारखाना नियमावली की अनुसूची XIII के उपनियम (12) में अंतर्विष्ट प्रावधान का कोई उल्लंघन नहीं हो सकता है।

15. यह निवेदन किया गया था कि इन परिस्थितियों के अधीन संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

16. इसके विरूद्ध, विरोधी पक्षकार के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यह सत्य है कि संदेह किया गया है कि दुर्घटना स्थल जहाँ दुर्घटना हुई पर एल॰ डी॰ गैस जमा हो जाने के कारण दुर्घटना हुई जिसमें रगड़ से हुए प्रज्जवलन के कारण विस्फोट हो गया किंतु इसी समय यह कथन किया गया है कि चूँकि एक वाल्व का उपयोग नहीं किया गया था, एल॰ डी॰ गैस का उलटा प्रवाह था और ऐसी स्थिति में अपराध का संज्ञान लेने वाले आदेश का अभिखंडन अपेक्षणीय नहीं है।

17. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और अभिलेख के परिशीलन पर प्रतीत होता है कि स्टील बनाने की प्रक्रिया के दौरान एक अत्यन्त जहरीली एल॰ डी॰ गैस निर्मुक्त होती है जिसे गैस रिकवरी सिस्टम के गैस होल्डर में एकत्रित किया जाता है। यदि गैस आधिक्य का उत्पादन होता है, तब इसे थ्री वे वाल्व सिस्टम के माध्यम से चिमनी के माध्यम से प्रणाली से उत्सर्जित करने की अनुमति दी जाती है।

18. आगे यह प्रतीत होता है कि गैस होल्डर से गैस रिकवरी सिस्टम तक एल॰ डी॰ गैस का उलटा प्रवाह रोकने के लिए पहले बिंदु पर क्विक डंप वाटर सील का उपयोग किया जाता है जबकि एक अन्य बिंदु पर प्रणाली में वाटर सील चेक वाल्व का उपयोग किया जाता है। याचीगण के अनुसार, वे सीलें गैस होल्डर से रिकवरी सिस्टम तक एल॰ डी॰ गैस का उलटा प्रवाह रोकने के लिए पर्याप्त हैं। प्रणाली में उलटे प्रवाह को चेक करने के लिए स्लिप प्लेट वाल्व का भी उपयोग किया जा रहा है किंतु कारखाना निरीक्षक के अनुसार भी, उसका उपयोग अतिरिक्त सतर्कता के लिए किया जा रहा है। किंतु, अभियोजन का मामला यह है कि पूर्वोक्त दो सीलों में गड़बड़ी हो जाने के कारण और स्लिप प्लेट वाल्व का उपयोग नहीं किए जाने के कारण भी एल॰ डी॰ गैस जमा हुई थी जिसमें विस्फोट हो गया किंतु यह केवल अटकलबाजी है कि वाटर सील काम नहीं कर रहे थे। ऐसी अटकलबाजी पर नियम 55A(2) में अंतर्विष्ट प्रावधान के उल्लंघन के लिए अभियोजन बिल्कुल दोषपूर्ण होगा।

19. इस चरण पर नियम 55A के उपनियम (2) में अंतर्विष्ट प्रावधान को ध्यान में लिया जा सकता है जो निम्नलिखित है:–

> *^^fdlh dkj[kkuk e dkb dke ugh fd;k tk,xk vkj fdlh 0;fDr dk fdlh çfØ;k vFkok fdlh e'khujh] l;=] ;= ij vFkok dkj[kkuk d fdlh Hkkx vFkok fdlh vU; dke dk dju dh vuefr ugh nh tk,xh tk dkbZ n?kVuk vFkok fdlh 'kkjhfjd migfr dk dkfjr dj ldrk g vFkok bldh lHkkouk gA***

20. अभियोजन के मामले से यह स्पष्ट है कि कोई नहीं जानता था कि स्थान जहाँ दुर्घटना हुई पर एल॰ डी॰ गैस जमा हो गया था। ऐसी स्थिति में, यदि व्यक्तियों को उस स्थान पर काम करने की अनुमति दी गयी थी, किसी को पूर्वोक्त प्रावधान का उल्लंघन करता हुआ नहीं कहा जा सकता है क्योंकि ऐसी किसी जानकारी की अनुपस्थिति में कि स्थल पर गैस जमा हो गया था, किसी को आशंका नहीं हो सकती है कि यह दुर्घटना अथवा शारीरिक उपहति कारित कर सकती है।

21. जहाँ तक वाटर सील वाल्व और यू॰ वाटर सील प्रणाली की प्रभावशीलता सुनिश्चित करने के लिए सक्षम व्यक्तियों द्वारा वाल्व की सावधि परीक्षा नहीं किए जाने के अभिकथन का संबंध है, कथन किया जाए कि जाँच के दौरान लिखित प्रश्न के माध्यम से जब पूछा गया था कि क्या वाटर सील की परीक्षा दुर्घटना होने के पहले की गयी थी, तुरन्त उत्तर दिया गया था कि इसकी परीक्षा पहले ही की जा चुकी थी और यह समुचित रूप से काम कर रहा था। ऐसी स्थिति में, याचीगण का अभियोजन बिल्कुल दोषपूर्ण होगा।

22. तद्नुसार, न्यायालय कारखाना अधिनियम की धारा 92 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लेने में अवैधता करता प्रतीत होता है और इसलिए, दिनांक 6.12.2004 का आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

23. परिणामस्वरूप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

शिव नारायण सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C). No. 1382 of 2007. Decided on 5th October, 2012

बिहार उत्पाद शुल्क अधिनियम, 1915—धारा 27—बिहार उत्पाद शुल्क नियमावली, 1919—नियम 147—उत्पाद शुल्क की वापसी–भारत में बनी विदेशी शराब एवं बीयर पर अधिरोपित शुल्क की दरों का घटाया जाना–सरकार के निर्णय के अनुसरण में उत्पाद शुल्क घटाए जाने की दृष्टि में याची द्वारा भुगतान किए गए उत्पाद शुल्क की वापसी याची ने इप्सित किया है–याची के स्टॉक, जैसा वे सम्यक् तिथि पर उपलब्ध थे, पर उत्पाद शुल्क की राशि के अंतर को वापस करने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को दिया गया। (पैरा 8)

अधिवक्तागण.–M/s P.K. Prasad, Prabir Chatterjee, For the Petitioner; J.C. to S.C.-III, For the Respondent.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गये।

2. याची ने दिनांक 1.7.2004 के प्रभाव से भारत में बनी विदेशी शराब एवं बीयर पर अधिरोपित शुल्क के दरों को घटाए जाने से परिणत उत्पाद शुल्क का राशि-अंतर 7,52,061.90/- रुपयों की राशि याची को वापस करने के लिए प्रत्यर्थीगण को परमादेश निर्गत करने की प्रार्थना किया है।

3. याची के अनुसार वह लिब्रा मार्केटिंग का स्वत्वधारी है और अन्य लाइसेंसशुदा डीलरों को भारत में बने विदेशी शराब एवं बीयर के विक्रय के लिए धनबाद जिला में झरिया में फॉर्म 1 में उत्पाद शुल्क

लाइसेंस धारक है। याची राज्य में फॉर्म 19C में लाइसेंस धारण करके विभिन्न वितरकों से अपने उत्पाद शुल्क योग्य वस्तुओं को खरीदता है और लाइसेंस के निबंधनों और शर्तों के अधीन खुदरा विक्रेताओं को इसे बेचता है। यह निवेदन किया गया है कि बिहार उत्पाद शुल्क अधिनियम, 1915 के अधीन नशीली शराब का निर्माण, आयात, निर्यात, परिवहन विक्रय एवं कब्जा विनियमित किया गया है और अधिनियम की धारा 10 नशीले पदार्थों के निर्यात अथवा परिवहन पर निर्बंधन अधिरोपित करती है जब तक अध्याय V के अधीन शुल्क का भुगतान नहीं किया जाता है अथवा उसका बंध निष्पादित नहीं किया गया है। अधिनियम की धारा 28 के अधीन राज्य उत्पाद शुल्क योग्य वस्तुओं पर शुल्क उद्ग्रहण प्रावधानित करता है। याची के विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि उक्त अधिनियम की धारा 90 खंड (12) के अधीन राज्य सरकार द्वारा विरचित नियम 147 शुल्क के भुगतान का समय, स्थान और तरीका विहित करता है जिसे नीचे उद्धृत किया गया है:–

*^^ijUr vkx ;g fd mRikn 'kYd ;kX; oLr ij 'kYd d nj e fdlh iujh{k.k dh fLFkfr e 'kYd dk vrj ykbllh l oly fd;k tk,xk vFkok mldk okil fd;k tk,xk ftldk ,l iujh{k.k d igy 'kYd d Hkxrku ij ,lh oLrvk dk tkjh fd;k x;k g ;fn 'kYd dh iujhf{kr nj ijku nj dh ryuk e mPprj vFkok fuEurj g vkj 'kYd d vrj dh lx.kuk ,l oLr dh ek=k ij dh tk,xh tk ,l ykbllh d dCtk e cuk jgrk g tc iujhf{kr 'kYd nj çHkko e vkrk gA***

4. याची द्वारा यह निवेदन किया गया है कि उसने विहित दर पर अधिनियम की धारा 27 के अधीन उसपर अधिरोपित शुल्क और विक्रय कर और मदिरा के कीमत का भुगतान करने के बाद उत्पाद शुल्क सहायक आयुक्त, धनबाद द्वारा प्रदान किए गए परिवहन पास के अधीन और नियम 18-A(2) के अधीन राज्य के अंतर्गत अवस्थित फॉर्म 19C में वितरक लाइसेंस धारकों के परिसर से भारत में बनी शराब एवं बीयर का परिवहन किया। यह निवेदन भी किया गया है कि याची ने वितरकों के लाइसेंसशुदा परिसर से निम्नलिखित दर पर शराब के खरीद मूल्य और शुल्क के भुगतान पर भारत में बनी विदेशी शराब एवं बीयर का जून, 2004 तक परिवहन किया:–

Hkkjr e cuh fon'kh 'kjkc&100/- #i;k çfr ,y0 ih0 yhVj

ch;j	***nj***
lkèkkj.k	*8/- #i;k çfr ch0 ,y0*
icy	*12/- #i;k çfr ch0 ,y0*
vfricy	*15/- #i;k çfr ch0 ,y0*

5. यह निवेदन किया गया है कि परिशिष्ट–2 और 2/1 में अंतर्विष्ट आदेश सं॰ 968 और 969 के तहत दिनांक 30.6.2004 की अधिसूचना द्वारा झारखंड सरकार द्वारा नयी उत्पाद शुल्क नीति अपनायी गयी थी जिसमें खुदरा विदेशी शराब दुकान समूह के लिए नियत भारत में बनी विदेशी शराब एवं बीयर की न्यूनतम गारंटीशुदा मात्राओं पर भुगतान योग्य उत्पाद शुल्क लाइसेंस में विलीन कर दिया गया था। याची के मुताबिक, भारत में बनी विदेशी शराब पर शुल्क उक्त अधिसूचना की दृष्टि में 100/- रुपया प्रति एल॰ पी॰ लीटर के फ्लैट रेट से सामान्य कोटि के लिए 10/- रुपया प्रति एल॰ पी॰ लीटर, प्रीमियम कोटि के लिए 20/- रुपया प्रति एल॰ पी॰ लीटर और सुपर प्रीमियम कोटि के लिए 30/- रुपया प्रति एल॰ पी॰ लिटर घटा दिया गया था। इसी प्रकार से, दिनांक 1.7.2004 के प्रभाव से विभिन्न कोटियों के बीयर पर शुल्क क्रमश: 8/-, 12/- और 15/- प्रति बल्क लीटर से 1.50/-, 2/- और 3/- रुपया तक घटा दिया गया था। आगे निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2, आयुक्त–सह–सचिव, उत्पाद शुल्क एवं मद्य निषेध विभाग, झारखंड सरकार द्वारा दिनांक 29.6.2004 को समस्त जिला प्राधिकारियों को विक्रय समय के बाद दिनांक

30.6.2004 को विदेशी शराब के समस्त वितरकों और थोक व्यापारियों के कब्जा वाली भारत में बनी विदेशी शराब एवं बीयर के स्टॉक के शेष को सत्यापित करने का निर्देश दिया गया था। याचिका के परिशिष्ट–5 के मुताबिक विक्रय समय के बाद दिनांक 30.6.2004 को उत्पाद शुल्क प्राधिकारियों द्वारा इसे सत्यापित किया गया था। अत:, निवेदन किया गया है कि याची परिशिष्ट 2 और 2/1 में अंतर्विष्ट झारखंड के राज्य सरकार के निर्णय के अनुसरण में पूर्वोक्त वस्तुओं के उत्पाद शुल्क की दरों को घटाए जाने के बाद दिनांक 30.6.2004 को विक्रय समय के बाद याची के कब्जा वाली भारत में बनी विदेशी शराब के शेष स्टॉक पर भुगतान किए जा चुके उत्पाद शुल्क के आधिक्य को वापस पाने का हकदार है। इस प्रकार, दिनांक 30.6.2004 को विक्रय समय के बाद स्टॉक की शेष मात्राओं पर उत्पाद शुल्क को घटाए जाने से परिणत उत्पाद शुल्क की राशि के अंतर के रूप में 7,52,061.90/- रुपयों की राशि याची को वापस दे दिया जाना चाहिए। याची ने शुल्क के अंतर की ऐसी वापसी की अपनी हकदारी के लिए राजस्व बोर्ड द्वारा बनाए गए धारा 25 और नियम 147 पर विश्वास किया है। अपने प्रतिवाद के समर्थन में याची के विद्वान अधिवक्ता ने दिनांक 13.11.2006 के डब्ल्यू॰ पी॰ सी॰ सं॰ 2812 वर्ष 2006 और दिनांक 12.9.2012 के डब्ल्यू॰ पी॰ सी॰ सं॰ 7514 वर्ष 2006 में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर विश्वास किया है जिनमें समरुप परिस्थितियों में समस्थित व्यक्तियों के संबंध में इस न्यायालय ने उक्त याची के स्टॉक, जैसा यह दिनांक 30.6.2004 को उपलब्ध था, पर शुल्क घटाए जाने के कारण अधिक उत्पाद शुल्क को वापस करने अथवा पूर्वोक्त उत्पाद शुल्क योग्य वस्तुओं के थोक विक्रेता के लिए उत्पाद शुल्क अधिनियम के अधीन आयात फीस पर उत्पाद शुल्क की ओर याची के भावी भुगतान के विरुद्ध इसको समायोजित करने का निर्देश प्रत्यर्थी उत्पाद शुल्क अधिकारी को दिया।

6. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता उपस्थित हुए हैं और अपना प्रति शपथ पत्र दाखिल किया है। प्रतिशपथ पत्र में किए गए प्रकथनों के आधार पर निवेदन किया गया है कि दिनांक 3.5.2007 को याची के प्राधिकृत हस्ताक्षरकर्ताओं की उपस्थिति में प्रत्यर्थी सं॰ 4 की प्रेरणा पर किए गए सत्यापन पर पता चला कि याची ने इनको ठिकाने लगाने के लिए उत्पाद शुल्क अधिकारियों से अनुमति प्राप्त किए बिना अपनी अभिरक्षा में पड़े अधिकतर स्टॉक को निस्तारित कर दिया है।

7. दूसरी ओर, याची ने अपने प्रत्युत्तर के माध्यम से इन प्रकथनों से स्पष्टत: इनकार किया है और कथन किया है कि दिनांक 30.6.2004 को विक्रय समय के बाद याची के पास शेष भारत में बनी विदेशी शराब एवं बीयर का स्टॉक केवल उत्पाद शुल्क अधिकारियों की अनुमति के बाद प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा जारी पासों के विरुद्ध केवल लाइसेंसशुदा खुदरा विक्रेताओं को बेचा गया था। अत:, निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थीगण का प्रतिवाद कि स्टॉक प्राधिकारियों की अनुमति के बिना बेचे गए थे, गलत है। स्टॉक के ऐसे सारे विक्रय का ब्योरा दैनिक संव्यवहार में सम्यक रूप से दिया गया है जिसे फॉर्म सं॰ 88 में विहित रजिस्टर में दर्ज किया गया था जो प्रत्यर्थी प्राधिकारियों के निरीक्षण के लिए खुला है। आगे निवेदन किया गया है कि याची को प्रदान किए गए लाइसेंस के शर्त VIII की दृष्टि में प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा प्रदान किए गए पास के सिवाए याची द्वारा भारत में बनी विदेशी शराब अथवा बीयर बेची नहीं जा सकती है। याची पर उक्त शर्त के उल्लंघन का आरोप नहीं लगाया गया है। तद्नुसार, याची निवेदन करता है कि याची दिनांक 30.6.2004 को विक्रय समय के बाद याची के पास बने हुए आई॰ एम॰ एफ॰ एल॰ और बीयर के शेष स्टॉक पर संगणित अधिक उत्पाद शुल्क की राशि की वापसी इप्सित कर रहा है और न कि किसी पश्चातवर्ती तिथि पर किसी स्टॉक पर। याची के अधिवक्ता ने परिशिष्ट–11 में अंतर्विष्ट इस न्यायालय की खंड पीठ द्वारा पारित डब्ल्यू॰ पी॰ सी॰ सं॰ 5702 वर्ष 2006 में दिनांक 15.6.2006 के आदेश और अन्य निर्णयों, जिन्हें यहाँ ऊपर उद्धृत किया गया है, पर विश्वास किया है।

8. मैंने पक्षों के अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर मौजूद प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। प्रतीत होता है कि दिनांक 1.7.2004 के प्रभाव से आई॰ एम॰ एफ॰ एल॰ और बीयर पर उत्पाद शुल्क घटाया गया था। याची ने दिनांक 30.6.2004 को विक्रय समय के बाद याची के कब्जा में बने हुए पूर्वोक्त उत्पाद शुल्क योग्य वस्तुओं के शेष स्टॉक का सत्यापन और निरीक्षण दर्शाते हुए परिशिष्ट 5 में अंतर्विष्ट दस्तावेजों को संलग्न किया है। याची ने, इन तथ्यों और परिस्थितियों में, सरकारी निर्णय के अनुसरण में उत्पाद शुल्क घटाए जाने की दृष्टि में पूर्वोक्त वस्तुओं पर याची द्वारा भुगतान किए गए अधिक उत्पाद शुल्क की वापसी इप्सित किया है जैसा दिनांक 30.6.2004 के परिशिष्ट 2 एवं 2/1 में अंतर्विष्ट है। प्रत्यर्थीगण के प्रतिवाद को याची द्वारा यह निवेदन करते हुए खंडित किया गया है कि वह दिनांक 30.6.2004 को उसके पास उपलब्ध शेष स्टॉक पर दिनांक 1.7.2004 से प्रभावकारी बनाए गए ऐसे रिडक्शन पर केवल उत्पाद शुल्क के अंतर की वापसी और न कि किसी स्टॉक जो किसी पश्चातवर्ती तिथि पर याची के पास उपलब्ध थे, पर वापसी इप्सित कर रहा है। याची के अनुसार, वह प्रश्नगत अवधि से लगातार उक्त वस्तुओं का थोक लाइसेंस धारण कर रहा है। याची के निवेदन के अनुसार, दिनांक 1.7.2004 के बाद ऐसी वस्तुओं का विक्रय केवल उत्पाद शुल्क सहायक आयुक्त, धनबाद-प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा जारी पासों के विरुद्ध उत्पाद शुल्क अधिकारियों की अनुमति से लाइसेंसशुदा खुदरा विक्रेताओं को किया गया है। ऐसे समस्त विक्रय को फॉर्म 88 में विहित रजिस्टर में सम्यक रूप से प्रविष्ट किया गया है। इन परिस्थितियों में, डब्ल्यू॰ पी॰ सी॰ सं॰ 2812 वर्ष 2006 और अन्य मामलों में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों को ध्यान में रखते हुए प्रत्यर्थीगण को सम्यक सत्यापन के बाद और दिनांक 30.6.2004 के प्रभाव से ऐसी वस्तुओं पर उत्पाद शुल्क घटाए जाने के अनुसरण में ऐसे निरीक्षण के दस्तावेजों, जिन पर याची द्वारा विश्वास किया गया है, को ध्यान में रखते हुए याची के स्टॉक, जैसा यह दिनांक 30.6.2004 को उपलब्ध था, पर उत्पाद शुल्क के अंतर राशि को वापस करने अथवा उत्पाद शुल्क अधिनियम और उसके नियमावली के अधीन आयात फीस पर उत्पाद शुल्क हेतु याची द्वारा किए जाने वाले भावी भुगतान के विरुद्ध इसे समायोजित करने का निर्देश दिया जाता है। इस आदेश की प्राप्ति की तिथि से तीन माह के भीतर पूर्वोक्त किया जाए।

9. पूर्वोक्त निबंधनों में रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

राजेन्द्र पांडे

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 6249 of 2011. Decided on 5th September, 2012.

जन वितरण प्रणाली (पी॰ डी॰ एस॰)–अनुज्ञप्ति प्रदान करने वाले प्राधिकारी-सह-एस॰ डी॰ ओ॰ द्वारा पी॰ डी॰ एस॰ लाइसेंस का रद्दकरण–याची की दुकान बंद थी और उस पर कालाबाजारी करने का संदेह था–उपायुक्त द्वारा दिए गए निर्देश पर और स्वतंत्र विवेक का इस्तेमाल किए बिना अनुज्ञप्ति प्रदान करने वाले प्राधिकारी द्वारा पारित आक्षेपित आदेश विधि में दूषित है–रद्दकरण आदेश अभिखंडत–रिट याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 7 से 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Nilesh Kumar, For the Petitioner; Mr. J.C. to A.A.G., For the State.

आदेश

याची ने विद्वान लाइसेंसिंग प्राधिकारी–सह–सब डिविजनल अधिकारी, चतरा द्वारा पारित दिनांक 11.8.2011 के आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा याची का पी॰ डी॰ एस॰ लाइसेंस रद्द कर दिया गया है।

2. मुख्यत: इस आधार पर आदेश का विरोध किया गया है कि विद्वान लाइसेंसिंग प्राधिकारी–सह–सब डिविजनल अधिकारी, चतरा का आक्षेपित आदेश दूषित है, क्योंकि इसे अन्य बातों के साथ उपायुक्त, चतरा जो अपीलीय प्राधिकारी है के निर्देश पर पारित किया गया है। उपायुक्त, चतरा ने दिनांक 17.7.2011 के ज्ञापन सं॰ 629 द्वारा सब डिविजनल अधिकारी–सह–लाइसेंसिंग प्राधिकारी, चतरा को इस अभिकथन पर अन्य के साथ याची के पी॰ डी॰ एस॰ लाइसेंस रद्द करने और कार्यवाही आरंभ करने का निर्देश दिया था कि दुकानों में कतिपय अनियमितताएँ पायी गयी थी। जहाँ तक याची का संबंध है, अभिकथन किया गया था कि याची की दुकान बंद थी और उसकी अनुपस्थिति उपदर्शित करती है कि वह कालाबाजारी में अंतर्ग्रस्त था।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उपायुक्त का अभिकथन अस्पष्ट है और अनुमानों तथा अटकलों पर आधारित है। याची ने बाध्यकारी परिस्थिति के अधीन गाँव के मुखिया को पूर्व सूचना देते हुए अपनी दुकान को बंद किया था। याची ने लाइसेंसिंग प्राधिकारी के समक्ष कारण भी स्पष्ट किया था। किंतु, चूँकि उपायुक्त द्वारा लाइसेंसिंग प्राधिकारी के निर्देश दिया गया था, उसने अपने विवेक का इस्तेमाल किए बिना याची के लाइसेंस को रद्द करते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया। उन्होंने आगे निवेदन किया कि बिहार/झारखंड व्यापारिक वस्तु (अनुज्ञप्ति एकीकरण) आदेश, 1984 के खंड 11 के प्रावधानों और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का घोर उल्लंघन किया गया है और यह आदेश इस न्यायालय द्वारा अभिखंडित किए जाने का दायी है।

4. रिट आवेदन का प्रतिवाद करते हुए प्रत्यर्थीगण द्वारा प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है और अन्य बातों के साथ कथन किया गया है कि याची की दुकान उस दिन बंद पायी गयी थी जिस दिन इसे खुला रहना चाहिए था। यह याची के अनाजों की कालाबाजारी का आशय दर्शाता है। उपायुक्त ने औचक निरीक्षण पर याची की दुकान को बंद पाया था और मामले की सूचना लाइसेंसिंग प्राधिकारी को दी गयी थी। उक्त रिपोर्ट के आधार पर लाइसेंसिंग प्राधिकारी द्वारा कार्यवाही आरंभ की गयी थी। याची को नोटिस जारी किया गया था और उसे कारण बताओ का स्पष्टीकरण/उत्तर देने का अवसर दिया गया था। याची के उत्तर पर विचार करते हुए आदेश पारित किया गया है। विधि के किसी प्रावधान अथवा नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन नहीं किया गया है जैसा याची ने अभिकथित किया है।

5. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और तथ्यों तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों पर विचार किया है।

6. यह विवादित नहीं है कि उपायुक्त ने दिनांक 17.7.2011 के अपने ज्ञापन सं॰ 629 द्वारा लाइसेंसिंग प्राधिकारी–सह–सब डिविजनल अधिकारी, चतरा को नोटिस जारी करने और याची एवं अन्य नामित डीलरों के लाइसेंस को रद्द करने का निर्देश दिया था।

7. यह सत्य है कि उपायुक्त से उक्त निर्देश पाने के बाद लाइसेंसिंग प्राधिकारी ने याची को नोटिस जारी किया था और याची द्वारा उत्तर दिए जाने के बाद आदेश पारित किया गया था। चूँकि उपायुक्त ने

पहले ही नोटिस देने के बाद याची का लाइसेंस रद्द करने का निर्देश दिया था, याची द्वारा दाखिल कारण पृच्छा के स्पष्टीकरण/उत्तर पर अपने स्वतंत्र विवेक का इस्तेमाल करने के अलावा लाइसेंसिंग प्राधिकारी के पास कोई और विकल्प नहीं था। आक्षेपित आदेश में उपायुक्त के उक्त आदेश की छाया प्रकट है। आदेश उपायुक्त के पत्र के प्रति निर्देश के साथ आरंभ होता है और विनिर्दिष्टत: यह उल्लिखित करते हुए समाप्त होता है कि याची की अनुज्ञप्ति को रद्द करने का निर्देश उपायुक्त ने दिया था।

8. मैं याची के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन में काफी सार पाता हूँ कि लाइसेंसिंग प्राधिकारी द्वारा अपने स्वतंत्र विवेक का इस्तेमाल किए बिना उपायुक्त के निर्देश पर पारित आक्षेपित आदेश विधि में दूषित है।

9. उक्त पर विचार करते हुए यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है। परिशिष्ट 6 में अंतर्विष्ट याची का लाइसेंस सं॰ 6/1989 रद्द करते हुए विद्वान सब डिविजनल अधिकारी-सह-लाइसेंसिंग प्राधिकारी द्वारा पारित दिनांक 11.8.2011 का आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

दिलीप कुमार वर्मा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 1920 of 2007. Decided on 17th September, 2012.

विधिक सेवा प्राधिकार अधिनियम, 1987—धाराएँ 22A एवं 22C—दुर्घटनावश मृत्यु—पी॰ एल॰ ए॰ द्वारा 2,25,000/- रुपयों का भुगतान करने का निर्देश—याची उर्जा आपूर्ति के काम में नहीं लगा हुआ था—वह छोटा ठेकेदार है—याची कोई स्थापन भी नहीं है जो धारा 22A(b)(iii) के अधीन लोक उपयोगी सेवा की परिभाषा में आता है—पी॰एल॰ए॰ ने सीधे तौर पर गुणागुण पर विवाद के न्यायनिर्णयन की कार्यवाही की जो धारा 22(c)(4) से (7) तक के प्रावधानों के विपरीत है—जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ को पक्ष के रूप में पक्षकार नहीं बनाया गया था—तथ्यों के और विधि के भी जटिल विवाद्यक पर दावा का न्यायनिर्णयन करने की आवश्यकता है—अधिनिर्णय अभिखंडित। (पैराएँ 8 से 11)

निर्णयज विधि.—W.P. (C) No. 1449 of 2008; W.P. (C) No. 1975 of 2007—Relied on.

अधिवक्तागण.—M/s Saurav Arun, Deepak Kr. Dubey, For the Petitioner; M/s Shankar Lal Agrawal, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची प्रत्यर्थी सं॰ 5 द्वारा दाखिल पी॰ एल॰ ए॰ केस सं॰ 35 वर्ष 2006 में स्थायी लोक अदालत, जमशेदपुर, पूर्वी सिंहभूम द्वारा पारित दिनांक 28.2.2007 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा उसे दो माह के भीतर 2,25,000/- रुपयों के अधिनिर्णय की राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था जिसमें विफल रहने पर इसे 14% प्रति वर्ष ब्याज के साथ विधि के अनुरूप वसूला जाएगा।

3. याची की ओर से आक्षेपित आदेश को निम्नलिखित आधारों पर चुनौती दी गयी है:–

(i) कि याची जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ अथवा जे॰ यू॰ एस॰ सी॰ ओ॰ द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 3 के साथ निष्पादित उपसंविदा के अधीन कार्यरत है और इस प्रकार याची विधिक सेवा प्राधिकार अधिनियम, 1987 की धारा 22(A)(b) के अधीन लोकोपयोगी सेवा के अधीन नहीं आता है, और इसलिए स्थायी लोक अदालत को विवाद ग्रहण करने की अधिकारिता नहीं है।

(ii) स्थायी लोक अदालत को अधिनियम की धारा 22(c)(4) से 7 के अधीन विहित प्रक्रिया का अनुसरण करना है और केवल पक्षों द्वारा सुलह करने और/अथवा स्थायी लोक अदालत विरोधी पक्षों को प्रस्तावित समझौते के निबंधनों पर सहमत होने की विफलता पर स्थायी लोक अदालत गुणागुण पर विवाद का न्यायनिर्णयन करने की कार्यवाही कर सकती है जो वर्तमान मामले में नहीं किया गया है।

(iii) याची द्वारा उठाए गए आधारों में से एक यह है कि वर्तमान वाद हेतुक घातक दुर्घटना अधिनियम, 1855 के प्रावधानों के अधीन आता है जबकि धारा 1A प्रावधानित करती है कि व्यक्ति का परिवार वाद के उपचार का अवलंब लेकर इसको मृत्यु द्वारा अथवा, दोष अनुयोज्य द्वारा पहुँचायी गयी हानि के लिए दावा कर सकता है, अत:, वर्तमान कार्यवाही अधिकारिताहीन है।

(iv) कि दुर्घटना, जिस कारण दावेदारगण ने स्थायी लोक अदालत के समक्ष दावा किया है, ने दांडिक मामले को उद्भूत किया जिसमें याची को अभियुक्त बनाया गया है और उसके विरूद्ध आरोप-पत्र भी दाखिल किया गया है; अत: विधिक सेवा प्राधिकार अधिनियम की धारा 22(c)(8) के प्रावधान के अधीन स्थायी लोक अदालत विवाद विनिश्चित नहीं कर सकता है क्योंकि यह अपराध के संबंध में है।

4. याची के अनुसार वह झारखण्ड राज्य विद्युत बोर्ड और जे॰ यू॰ एस॰ सी॰ ओ॰ द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 3 को आवंटित काम के संबंध में कतिपय विद्युत कंडक्टर की मरम्मत करने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 3 मेसर्स सुभाष प्रोजेक्ट्स एण्ड मार्केटिंग लि॰ के साथ करार के अधीन था। याची की ओर से निवेदन किया गया है कि याची की ओर से दाखिल लिखित कथन (परिशिष्ट 6) में स्थायी लोक अदालत के ध्यान में लाए जाने के बावजूद निजी प्रत्यर्थीगण ने अपनी दावा याचिका में झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड और जे॰ यू॰ एस॰ सी॰ ओ॰ को पक्ष के रूप में पक्षकार नहीं बनाया था।

5. याची का प्रतिवाद यह है कि मृतक न तो याची का कर्मचारी था और न ही याची को कोई जानकारी थी कि वह किस प्रकार बिजली के तार के संपर्क में आया जिसने दुर्घटना कारित किया। शव परीक्षण रिपोर्ट (परिशिष्ट-7) के आधार पर निवेदन किया गया है कि मृत्यु का कारण मस्तक की उपहति पाया गया है। इन पूर्वोक्त तथ्यों के आधार पर निवेदन किया गया है कि दावेदारगण के दावा में तथ्य और विधि के जटिल विवाद्यक अंतर्ग्रस्त थे और स्थायी लोक अदालत से विधि के नियमित न्यायालय जहाँ केवल ऐसे दावा का न्यायनिर्णयन किया जा सकता है, की प्रकृति का विवाद विनिश्चित करने की उम्मीद नहीं की जाती है।

6. प्रत्यर्थीगण-दावेदारगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची लोकोपयोगी सेवा अधिनियम की धारा 22A, विशेषत: धारा 22A(iii) की परिभाषा के अधीन आता है जो किसी स्थापन द्वारा लोगों को उर्जा, बिजली अथवा जल की आपूर्ति से संबंधित है। किंतु, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता भी यह विवादित करने में सक्षम नहीं हुए हैं कि गुणागुण पर दावा का न्यायनिर्णयन करने के पहले स्थायी

लोक अदालत ने समझौते के किसी निबंधन को विरचित करने अथवा सुलह करवाने का प्रयास नहीं किया और न ही विरोधी पक्षों को सहमत हुए समझौते के निबंधनों पर सुलह करने का प्रस्ताव दिया और/अथवा केवल इसी की विफलता पर गुणागुण पर विवाद का न्यायनिर्णयण करने के लिए अग्रसर हुआ। इससे इनकार नहीं किया गया है कि इसी दुर्घटना से संबंधित प्राथमिकी संस्थापित की गयी है और याची के विरूद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया है।

7. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को विस्तारपूर्वक सुनने पर और अभिलेख पर प्रासंगिक सामग्रियों का विश्लेषण करने के बाद प्रथमत: प्रतीत होता है कि दावेदारगण का दावा दावेदारगण द्वारा विश्वास किए गए विधिक सेवा प्राधिकार अधिनियम, 1987 की धारा 22A, विशेषत: धारा 22A की उपधारा (b) के खंड (iii) की परिभाषा के अंतर्गत नहीं आता है। विधिक सेवा प्राधिकार अधिनियम, 1987 की धारा 22(b) यहाँ नीचे उद्धृत की जाती है:–

"22A(b) ^^ykdki;kxh lok l vfHkçr g&

(i) ok;] lMd vFkok ty }kjk ;kf=;k vFkok lkekuk dk <ku d fy, ifjogu lok(vFkok

(ii) Mkd] VyhxkQ vFkok VyhQku lok(vFkok

(iii) fdlh LFkkiu }kjk ykxk dk mtk] çdk'k vFkok ty dh vkifr(vFkok

(iv) ykd lj{k.k vFkok LoPNrk ç.kkyh vFkok

(v) vLirky vFkok fMLilijh e lok(vFkok

*(vi) chek lok vkj fdlh lok dk lfEefyr djrh g ftl dæ ljdkj vFkok jkT; ljdkj u] ;Fkk fLFkfr] ykdfgr e vfèkIpuk }kjk bl vè;k; d ç;ktu l ykdki;kxh lok ?kkf"kr fd;k gA***

8. खंड (iii) पर पूर्वोक्त लोकोपयोगी सेवा के कोरे परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि यह किसी स्थापन द्वारा लोगों को उर्जा, प्रकाश अथवा जल की आपूर्ति से संबंधित है। याची उर्जा आपूर्ति के काम में नहीं लगा हुआ है बल्कि वह संविदा के अधीन कतिपय सिविल/मेकेनिकल कार्य में लगा झारखण्ड राज्य विद्युत बोर्ड के ठेकेदार प्रत्यर्थी सं॰ 3 के साथ उप संविदा के अधीन छोटा ठेकेदार है। याची स्थापन भी नहीं है जो अधिनियम, 1987 की धारा 22A (b) (iii) के अधीन लोकोपयोगी सेवा की परिभाषा के अंतर्गत आता है। पक्षों के निवेदनों और अभिलेख पर प्रकथनों से प्रतीत होता है कि स्थायी लोक अदालत सीधे तौर पर गुणागुण पर विवाद का न्यायनिर्णयन करने के लिए अग्रसर हुआ जो विधिक सेवा प्राधिकार अधिनियम की धारा 22(C)(4) से (7) के प्रावधान के विपरीत है और **स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, धनबाद बनाम झारखण्ड राज्य एवं एक अन्य, डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1449 वर्ष 2008** में इस न्यायालय की एकल पीठ द्वारा पारित दिनांक 9.4.2009 के आदेश और **ओरियेंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड, कचहरी रोड, राँची बनाम बोद्या ओराँव एवं एक अन्य, डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1975 वर्ष 2007** में इस न्यायालय की खंड पीठ द्वारा पारित दिनांक 30.4.2012 के आदेश में अधिकथित विधि स्पष्टत: अनुबंधित करती है कि स्थायी लोक अदालत को पक्षों को सुलह अथवा सहमत समझौते पर आने के लिए सुलह और/अथवा समझौते के निबंधनों को प्रस्तावित करने का प्रयास करके अधिनियम की धारा 22 (4) से (7) तक के अधीन विहित प्रक्रिया का अनुसरण करने की आवश्यकता है और ऐसा करने में विफल होने पर ही गुणागुण पर विवाद के न्यायनिर्णयन के लिए आगे बढ़े।

9. किंतु, यह भी प्रतीत होता है कि दावेदारगण द्वारा उठाया गया विवाद दुर्घटना से संबंधित था और उसी दुर्घटना के लिए याची को आरोप-पत्रित किया गया है। अधिनियम की धारा 22(c)(8) स्पष्टत: प्रावधानित करती है कि यदि पक्षगण उपधारा (7) के अधीन करार करने में विफल होते हैं, स्थायी लोक अदालत, यदि विवाद किसी अपराध से संबंधित नहीं है, विवाद विनिश्चित करेगा। स्पष्टत: उठाया गया विवाद अपराध के संबंध में भी है।

10. इसके अतिरिक्त, झारखण्ड राज्य विद्युत बोर्ड अथवा जे॰ यू॰ एस॰ सी॰ ओ॰ को पक्ष के रूप में पक्षकार नहीं बनाया गया है। स्वयं दावेदारगण द्वारा किए गए दावा से यह प्रतीत होता है कि तथ्यों और विधि के जटिल विवाद्यक पर न्यायनिर्णयन की आवश्यकता है जिसे सामान्यत: घातक दुर्घटना अधिनियम के प्रावधान के अधीन सक्षम न्यायालय के समक्ष समुचित वाद में विनिश्चित किए जाने की आवश्यकता है। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में प्रतीत होता है कि स्थायी लोक अदालत मामले में अपनी अधिकारिता के परे गया है और धारा 22(C)(4) से (7) के संबंध में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि की प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना गुणागुण पर विवाद का न्यायनिर्णय करने के लिए अग्रसर हुआ और याची के विरूद्ध 2,25,000/- रुपयों का अधिनिर्णय अधिरोपित किया।

11. इन तथ्यों और परिस्थितियों के कारण, अधिनिर्णय संपोषित नहीं किया जा सकता है और तद्नुसार अभिखंडित किया जाता है।

12. दावेदारगण को विधि के अनुरूप, यदि विधि में अनुज्ञेय है, सक्षम न्यायालय/प्राधिकारी के समक्ष दावा करने की छूट होगी जो विधि के अनुरूप इस पर विचार कर सकते हैं।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

शिव वचन सिंह (146 में)

मनोज कुमार (146 में)

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य (दोनों में)

W.P. (Cr.) Nos. 186 of 2010 with Cr. M.P. No. 146 of 2010. Decided on 5th December, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 323—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 197—घोर उपहति—संज्ञान—परिवाद कहीं पर भी उपदर्शित नहीं करता है कि याची द्वारा किया गया कृत्य अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में किया गया था—अभिकथन, जिसकी जाँच की गयी थी, अवैध परितोषण की मांग के बारे में कहती है—जब ऐसी मांग पर आपत्ति की गयी थी, परिवादी के साथ हाथापाई की गयी थी और उसे गाली दी गयी थी और उस पर प्रहार किया गया था—अभिखंडन आवेदन खारिज। (पैराएँ 5 एवं 6)

निर्णयज विधि.—(2008)5 SCC 248; 2012 (1) JLJR 206 (SC)—Distinguished.

अधिवक्तागण.—M/s R.S. Mazumdar, Kaushik Sarkhel, P.A.S. Pati, For the Petitioners; S.C.-III, For the State; Mr. P.K. Mukhopadhyay, For the Resp. No. 2.

डी॰ एन॰ उपाध्याय, न्यायमूर्ति.—वर्तमान डब्ल्यू॰ पी॰ (दांडिक) सं॰ 186 वर्ष 2010 और दांडिक विविध याचिका सं॰ 146 वर्ष 2010 परिवाद केस सं॰ 287 वर्ष 2008 से उद्भूत संपूर्ण दांडिक कार्यवाही और विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद श्री आर॰ के॰ मिश्रा द्वारा पारित दिनांक 9.7.2009 के आदेश, जिसके द्वारा भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन अपराध के लिए याचीगण को विचारण का सामना करने का निर्देश दिया गया है, के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है।

2. परिवाद से प्रतीत होता संक्षिप्त तथ्य यह है कि दिनांक 31.1.2008 को परिवादी चंदा देवी मालती देवी के साथ बी॰ डी॰ ओ॰, गोविन्दपुर के कार्यालय मालती देवी की रोजगार की व्यवस्था करने का अनुरोध करने के लिए गयी क्योंकि उसकी भूमि पर चेक डैम का निर्माण हो रहा था। तत्पश्चात् बी॰ डी॰ ओ॰ मनोज कुमार (दांडिक विविध याचिका सं॰ 146 वर्ष 2010 में याची) ने परिवादी और उसके साथी को शिववचन सिंह (डब्ल्यू॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 186 सं॰ 2010 में याची) से मुलाकात करने को कहा जो तब प्रखंड कृषि अधिकारी था। परिवादी और मालती देवी शिववचन सिंह के पास गए जिसने उनको रोजगार पाने के लिए 55000/- रुपयों की व्यवस्था करने को कहा। पुनः परिवादी बी॰ डी॰ ओ॰ के पास गयी तथा प्रकट किया कि वे 55000/- रु॰ की व्यवस्था करने में सक्षम नहीं हैं और वे चेक डैम के निर्माण के लिए अर्जित भूमि के विरुद्ध रोजगार पाने के हकदार हैं। तत्पश्चात् उन्हें गालियाँ दी गयी थी और लात-मुक्कों से उन पर प्रहार किया गया था और इसलिए मामला लिखित में गोविन्दपुर पी॰ एस॰ को रिपोर्ट किया गया था किंतु अभियुक्तगण के विरुद्ध कार्रवाई नहीं की गयी थी और तत्पश्चात् परिवाद केस सं॰ 287 वर्ष 2008 वाला यह परिवाद मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद के न्यायालय में दाखिल किया गया था जिसमें जाँच करने के बाद धारा 323 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन याचीगण के विरुद्ध संज्ञान लिया गया था और उन्हें दिनांक 9.7.2009 के आक्षेपित आदेश के तहत भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए विचारण का सामना करने का निर्देश दिया गया था।

3. यह प्रतिवाद किया गया है कि परिवादी ने अपनी साथिन के साथ कार्यालय में हंगामा किया और वे अपने पक्ष में ठेका पर काम पाना चाहते थे। चूँकि उन्होंने याची को उनके आधिकारिक कर्तव्य का निर्वहन करने में रूकावट डाला था, मामला उपायुक्त, धनबाद के ध्यान में लाया गया था और उसके बाद विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विरुद्ध प्राथमिकी गोविन्दपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 29 वर्ष 2008 भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 353, 504 और 34 के अधीन दर्ज किया गया था। उस मामले में, आरोप-पत्र दाखिल करने के बाद विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विरुद्ध संज्ञान लिया गया था। आगे निवेदन किया गया है कि परिवाद केस सं॰ 287 वर्ष 2008 सरकारी पदधारियों को अपमानित और परेशान करने और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विरुद्ध संस्थापित मामला को वापस लेने के लिए दबाव सृजित करने के आशय से गोविन्दपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 29 वर्ष 2008 के विरुद्ध दाखिल किया गया था। इंगित किया गया है कि दिनांक 9.7.2009 का आदेश, जिसके द्वारा विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी ने भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन विचारण का सामना करने का निर्देश याचीगण को दिया है, विधि की दृष्टि में संपोषणीय नहीं है और यह विशुद्धतः द्वेषपूर्ण अभियोजन है और सरकारी पदधारियों के विरुद्ध ऐसे अभियोजन को जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

याचीगण के अधिवक्ता ने **देव लखन पासवान बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, 2012 (1) JLJR 206 (SC)** और **अंजनी कुमार बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य, (2008)5 SCC 248,** मामले में दिए गये निर्णय पर विश्वास किया है। उक्त निर्णयों पर विश्वास करते हुए निवेदन किया गया था कि घटना की तिथि पर अर्थात् दिनांक 31.1.2008 को गोविंदपुर पी॰ एस॰ में कोई सूचना दर्ज नहीं की गयी थी। उसी दिन, वि॰ प॰ सं॰ 2 द्वारा दर्ज किसी सूचना के आधार पर याचीगण के विरुद्ध न तो सनहा और न ही प्राथमिकी दर्ज की गयी थी। परिवाद घटना के दस दिन बाद अर्थात् दिनांक 13.2.2008 को न्यायालय में दाखिल किया गया था और इस बीच किसी उच्चतर पुलिस अधिकारी को मामले की सूचना नहीं दी गयी थी। आगे निवेदन किया गया था कि परिवाद उनकी आधिकारिक हैसियत में उनके द्वारा की गयी कार्रवाई के विरुद्ध सरकारी पदधारियों के विरुद्ध दाखिल किया गया था और ऐसा परिवाद बाद में सोचा गया था और इसलिए ऐसे परिवाद पर दांडिक अभियोजन को अभिखंडित करने की आवश्यकता है जैसा **देव लखन पासवान (ऊपर)** और **अंजनी कुमार (ऊपर)** के निर्णयों में माननीय न्यायाधीशों द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है।

4. दूसरी ओर, वि॰ प॰ सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क का विरोध किया है और निवेदन किया है कि परिवाद दाखिल करने में विलंब नहीं हुआ था। डब्ल्यू॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 186 वर्ष 2010 में दाखिल काउंटर के साथ संलग्न परिशिष्ट A से प्रकट होगा कि वि॰ प॰ सं॰ 2 ने स्वयं घटना की तिथि पर अर्थात् दिनांक 31.1.2008 को गोविन्दपुर पी॰ एस॰ में लिखित रिपोर्ट दर्ज किया था किंतु उस दिन याचीगण के विरुद्ध कार्रवाई नहीं की गयी थी। जब उसने मामले का अनुसरण किया, दिनांक 2.2.2008 को लिखित रिपोर्ट की प्राप्ति रसीद दी गयी थी। वि॰ प॰ सं॰ 2 ने लोक जनशक्ति पार्टी के राजनीतिक फोरम में मामला उठाया था और पत्र सं॰ एल॰ जे॰ पी॰ 08/5 दिनांक 1.2.2008 (परिशिष्ट B) के तहत उपायुक्त को मामले की सूचना दी गयी थी। उन्होंने परिशिष्ट C अखबार की कतरन को भी निर्दिष्ट किया है जिसमें वि॰ प॰ सं॰ 2 द्वारा उठाया गया विवाद्यक आया था। पुनः झारखंड प्रदेश लोक जनशक्ति पार्टी के लेटर हेड पर दिनांक 7.2.2008 के तहत माननीय मुख्यमंत्री, झारखंड राज्य को परिवाद किया गया था। अतः **देव लखन पासवान (ऊपर)** और **अंजनी कुमार (ऊपर)** में निर्णय वर्तमान मामले पर प्रयोज्य नहीं है। लिखित रिपोर्ट दाखिल करने में विलंब नहीं था। चूँकि नामित अभियुक्तगण सरकारी अधिकारी थे, पुलिस ने कोई कार्रवाई नहीं की थी और उनको बचाने का प्रयास किया था और इसलिए दिनांक 31.1.2008 को वि॰ प॰ सं॰ 2 को लिखित रिपोर्ट की प्राप्ति की रसीद नहीं दी गयी थी। जब मुद्दा लोक जन शक्ति पार्टी द्वारा उठाया गया था, पुलिस ने 2.2.2008 को लिखित रिपोर्ट की पावती दी थी। बाद में उनको लिखे गए पत्रों द्वारा मामले को उपायुक्त और माननीय मुख्यमंत्री के ध्यान में लाया गया था। जब याचीगण के विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं की गयी थी, वि॰ प॰ सं॰ 2 के पास परिवाद दाखिल करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था जैसा उसने किया और दिनांक 13.2.2008 को विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद के न्यायालय में परिवाद दाखिल किया और इसलिए, विलंब का प्रश्न उद्‌भूत नहीं होता है बल्कि संबंधित पी॰ एस॰ से माननीय मुख्यमंत्री के स्तर तक मामला ले जाया गया था। विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने जाँच करने और दिए गए साक्ष्य पर विचार करने के बाद सही प्रकार से याचीगण के विरुद्ध संज्ञान लिया है। रिट याचिका और दांडिक विविध याचिका में गुण नहीं है।

5. पारस्पर विरोधी निवेदनों को सुनने और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं सहमत हूँ कि लोक सेवक को उनके द्वारा अभिकथित रूप से किए गए अपराधों, जब वे लोक सेवक के रूप में कार्य रह रहे हैं अथवा कार्य करने का तात्पर्य रखते हैं, के लिए तंग करने वाले संभावित दांडिक कार्यवाही के संस्थापन के विरुद्ध सुरक्षा दी जाती है। विधानमंडल की नीति लोक सेवकों को पर्याप्त सुरक्षा देना है ताकि सुनिश्चित किया जा सके कि उन्हें युक्ति-युक्त कारण के बिना अपने आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में उनके द्वारा किए गए किसी चीज के लिए अभियोजित नहीं किया जाए किंतु तब कतिपय सीमाओं के अंतर्गत ऐसी सुरक्षा पर विचार करना होगा। इसे केवल तब उपलब्ध होना चाहिए जब लोक सेवक द्वारा किया गया अभिकथित कृत्य उसके आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन के साथ युक्तियुक्त रूप से संबंधित है और आपत्तिजनक कृत्य करने के लिए आवरण मात्र नहीं है। यदि अपना आधिकारिक कर्तव्य करते हुए उसने अपने कर्तव्य के आधिक्य में कृत्य किया जो अपराध गठित करता है, दांडिक अभियोजन से उसे सुरक्षित करने के लिए आधिक्य को विचार में नहीं लेना होगा। हमे ध्यान में रखना होगा कि आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन के ओर में लोक सेवक को अपराध करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

मामले के तथ्यों पर आते हुए, परिवाद में किया गया प्रतिवाद कहीं पर भी उपदर्शित नहीं करता है कि याचीगण द्वारा किया गया कृत्य उनके आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में था। अभिकथन जिसकी जाँच की गयी थी, अवैध परितोषण की मांग के बारे में कहता हैं जब ऐसी मांग पर आपत्ति की गयी

थी, परिवादी के साथ हाथापाई की गयी थी, उसको गाली दी गयी थी और उस पर प्रहार किया गया था। गवाह के बयान पर विचार करते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया गया था।

अगला बिंदु कि परिवाद में किए गए प्रकथन बाद में सोचे गए थे और परिवाद दर्ज करने में विलंब हुआ था, को प्रति शपथपत्र के साथ संलग्न दस्तावेज की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है। लिखित परिवाद स्वयं घटना की तिथि पर अर्थात् दिनांक 31.1.2008 को दर्ज किया गया था। जब पुलिस ने मामला दर्ज नहीं किया था, विभिन्न स्तर पर बाद की तिथियों पर मामला उठाया गया था।

6. अभिलेख पर उपलब्ध तथ्य और ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं इन आवेदनों में गुणागुण नहीं पाता हूँ और इन्हें खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

चांद कुमारी प्रसाद एवं अन्य

cuke

भारत संघ एवं अन्य

W.P. (C) No. 2136 of 2011. Decided on 4th September, 2012.

राष्ट्रीय उच्च पथ अधिनियम, 1956—धारा 3D (1)—भूमि का अर्जन–पथ के संरेखण के संबंध में आपत्ति–प्रत्यर्थीगण ने यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री लाया है कि वर्तमान संरेखण के विरुद्ध याची की आपत्ति और संरेखण के पुनर्विलोकन के लिए याची के अनुरोध पर पूरी तरह विचार किया गया था और इसे स्वीकार्य नहीं पाया गया था–विशेषज्ञों और प्राधिकारियों के मुताबिक वर्तमान संरेखण न्यूनतम ध्वंस और पर्यावरण तथा साइट की अन्य बाध्यताओं की दृष्टि में सर्वोत्तम है–याचिका खारिज। (पैराएँ 5 से 7)

अधिवक्तागण.–M/s P.K. Prasad, Aayush Aditya, For the Petitioners; M/s Prabhash Kumar, R.P. Singh, For the Resp. No.1; Ms. Sweety Topno, For the Resp. No. 2 & 6.

आदेश

इस रिट याचिका में याचीगण ने दिनांक 19.2.2011 के स्थानीय समाचार पत्र में प्रकाशित राष्ट्रीय उच्च पथ अधिनियम, 1956 (इसमें इसके बाद उक्त अधिनियम के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 3D (1) के अधीन जारी दिनांक 14.1.2011 की अधिसूचना (परिशिष्ट-3) के अभिखंडन की प्रार्थना की है।

2. यह कथन किया गया है कि उक्त अधिनियम की धारा 3C (1) के अधीन याचीगण द्वारा दाखिल आपत्ति को विनिश्चित किए बिना सक्षम प्राधिकारी (प्रत्यर्थी सं॰ 5) ने अर्जन की कार्यवाही की है। प्रक्रिया अवैध है और अभिखंडन की दायी है।

3. प्रत्यर्थीगण की ओर से अन्य बातों के साथ साथ यह कथन करते हुए प्रति शपथ पत्र दाखिल किया गया है कि याचीगण और अन्य हितबद्ध व्यक्तियों द्वारा दाखिल आपत्ति के आधार पर अनेक स्तरों पर जाँच की गयी थी। याचीगण की मुख्य आपत्ति ओरिया सिंघनी गाँव में स्तंभ सं॰ 36A से स्तंभ सं॰ 18 के बीच पथ के संरेखण के संबंध में है, जो याचीगण के अनुसार कम से कम 60 कंक्रीट के बने

घरों को प्रभावित करता है। ग्रामों सिंघनी और ओरिया के दोनों ओर पथ निर्माण कार्य प्रगति पर है। हजारीबाग बाईपास गली द्वारा प्रभावित उक्त गाँवों को जोड़ने वाली भूमि के अर्जन के लिए मुआवजा का वितरण भी प्रगति पर है। भारतीय राष्ट्रीय उच्च पथ प्राधिकरण द्वारा इस काम पर लगाए गए परामर्शदाता द्वारा पूरा सर्वेक्षण संचालित करने के बाद उक्तक्षेत्र से होकर गुजरने वाले संरेखण को अंतिम रूप दिया गया है और इसे सर्वोत्तम संभव संरेखण पाया गया है। समस्त प्रक्रियाएँ पूरी कर ली गयी हैं और उक्त अधिनियम की धारा 3D के अधीन अधिसूचना प्रकाशित की गयी है। उक्त अधिनियम की धारा 3D के अधीन अधिसूचना के प्रकाशन और उपधारा (1) के अधीन घोषणा के बाद केंद्र सरकार में निहित भूमि पर किसी अन्य प्राधिकारी पर प्रश्न चिन्ह नहीं लगाया जा सकता है। याचीगण की रिट याचिका पोषणीय नहीं है और यह खारिज किए जाने की दायी है।

4. मैंने पक्षों के अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर मौजूद तथ्यों एवं सामग्रियों का परिशीलन किया है।

5. भारतीय राष्ट्रीय उच्च पथ प्राधिकरण के परियोजना क्रियान्वयन इकाई के परियोजना निदेशक ने न्यायालय में व्यक्तिगत रूप से स्थिति को स्पष्ट किया है। दिनांक 3.9.2012 के पूरक शपथ पत्र में विनिर्दिष्टत: कथन किया गया है कि जब मुख्य महाप्रबंधक (तकनीक) भारतीय राष्ट्रीय उच्च पथ प्राधिकरण, क्षेत्रीय कार्यालय (बिहार एवं झारखंड) ने स्वयं परियोजना निदेशक, प्रबंधक (तकनीक), डी॰ पी॰ आर॰ कंसल्टेंट के प्रतिनिधि और अन्य संबंधित के साथ स्थल का निरीक्षण किया, ज्यामितीय विवशताओं के अंतर्गत पुनर्संरेखण की संभावना को खोजने का अनुदेश डी॰ पी॰ आर॰ कंसल्टेंट को दिया। तत्पश्चात डी॰ पी॰ आर॰ कंसल्टेंट ने स्थल का सर्वेक्षण किया और मुख्य महाप्रबंधक (तकनीक) को अपना रिपोर्ट प्रस्तुत किया। संरेखण के स्थल पुनर्विलोकन के बाद सर्वे टीम ने संप्रेक्षित किया कि पहले से प्रस्तावित संरेखण न्यूनतम ध्वंस के साथ और पर्यावरण तथा अन्य साइट विवशताओं की दृष्टि में सर्वोत्तम है।

6. उक्त की दृष्टि में, प्रत्यर्थीगण ने यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री लाया है कि वर्तमान संरेखण के विरुद्ध याचीगण की आपत्ति और संरेखण के पुनर्विलोकन के लिए उनके अनुरोध पर पूरी तरह विचार किया गया है और इन्हें स्वीकार्य नहीं पाया गया है। मामले के विशेषज्ञों और प्राधिकारियों ने अनेक स्तरों पर याचीगण की शिकायत का परीक्षण किया है और स्पष्टत: संप्रेक्षित किया है कि वर्तमान संरेखण न्यूनतम ध्वंस के साथ और पर्यावरण तथा अन्य साइट विवशताओं की दृष्टि में सर्वोत्तम है। एन॰ एच॰ 33 को चौड़ा करके 4/6 लेन पथ का निर्माण व्यापक लोकहित में है और यदि यह कुछ व्यक्तियों को कोई असुविधा कारित करता है, व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के छोटे समूह के हित के ऊपर लोक प्रयोजन को अधिमान देना होगा।

7. उक्त चर्चा की दृष्टि में, आक्षेपित आदेश में रिट अधिकारिता में इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

8. परियोजना निदेशक, भारतीय राष्ट्रीय उच्च पथ प्राधिकरण, की उपस्थिति को अभिमुक्त किया जाता है।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

बिनोद गोप उर्फ बिनोद यादव

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 3926 of 2007. Decided on 12th September, 2012.

बिहार लोक भूमि अतिक्रमण अधिनियम, 1956—धारा 3—अतिक्रमण हटाया जाना–नोटिस–बल प्रयोग की धमकी–प्रश्नगत भूमि के संबंध में याची ने हक वाद दाखिल किया था जिसमें विचारण न्यायालय ने पाया था कि याची लंबी अवधि के लिए लगातार काबिज था–आक्षेपित नोटिस द्वारा अतिक्रमण हटाने के लिए याची को निर्देश देने के पहले बी॰ पी॰ एल॰ ई॰ कार्यवाही में अंतिम आदेश पारित नहीं किया गया है–आक्षेपित नोटिस को संपोषित नहीं किया जा सकता है और तद्नुसार अभिखंडित किया जाता है–रिट याचिका अनुज्ञात।

(पैराएँ 8 से 12)

निर्णयज विधि.–1991 BBCJ 708—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. P.K. Prasad, For the Petitioner; J.C. to S.C. (L&C), For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. वर्तमान रिट याचिका याची को दिनांक 18.7.2007 तक ग्राम सरली के खाता सं॰ 19 के अधीन भूखंड सं॰ 418 के अधीन 7.5 डिसमिल भूमि के ऊपर अभिकथित अतिक्रमण हटाने के लिए निर्देश देते हुए प्रत्यर्थी सं॰ 5 अंचलाधिकारी, सदर हजारीबाग द्वारा जारी दिनांक 11.7.2007 के नोटिस (परिशिष्ट 4) के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है जिसमें विफल होने पर इसे जबरन हटा दिया जाएगा।

3. याची का प्रतिवाद यह है कि पहले बिहार लोक भूमि अतिक्रमण अधिनियम (बी॰ पी॰ एल॰ ई॰ एक्ट) अधिनियम, 1956 के अधीन केस सं॰ 3 वर्ष 1999 की कार्यवाही अभिकथित अतिक्रमण के संबंध में भू सुधार उपायुक्त, हजारीबाग के न्यायालय में आरंभ की गयी थी जिसमें याची उपस्थित हुआ और यह कथन करते हुए अपना कारण बताओ दाखिल किया कि वह विगत 60 वर्षों से लगातार उक्त भूमि पर काबिज था जिसके बाद प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा दिनांक 9.11.1999 के आदेश (परिशिष्ट 1) के तहत उक्त कार्यवाही छोड़ दी गयी थी। तत्पश्चात्, याची को बी॰ पी॰ एल॰ ई॰ अधिनियम के अधीन अतिक्रमण हटाने के लिए एक और नोटिस जारी किया गया था जिसके विरुद्ध याची डब्ल्यू॰ पी॰ सी॰ सं॰ 5648 वर्ष 2001 में इस न्यायालय के पास आया जिसमें दिनांक 26.11.2001 के आदेश के तहत यह संप्रेक्षण करते हुए कि अंतिम निर्णय (परिशिष्ट 2) तक याची के विरुद्ध कोई प्रपीड़क कदम नहीं उठाया जाएगा, याची को कारण बताओ दाखिल करने के लिए कहा गया था। निवेदन किया गया है कि याची ने अपना कारण बताओ दाखिल किया किंतु अंतिम आदेश पारित नहीं किया गया था किंतु याची पर दिनांक 11.7.2007 का नोटिस तामील किया गया है जो इसमें आक्षेपित है। याची की ओर से आगे प्रतिवाद किया गया है कि याची ने उक्त भूमि के ऊपर, जैसा वादपत्र के अनुसूची A में उल्लिखित, अन्य पारिणामिक अनुतोष के साथ हक की घोषणा के लिए और इसके ऊपर वादी के कब्जा की संपुष्टि के लिए भी हक वाद टी॰ एस॰ सं॰ 1 वर्ष 2004 दाखिल किया था। निवेदन किया गया है कि यद्यपि उक्त वाद खारिज कर दिया गया था किंतु विद्वान विचारण न्यायालय ने निम्नलिखित निबंधनों में पृष्ठ 11 पर निष्कर्ष दर्ज किया:–

*^^vr% e l i.k ekf[kd vkj nLrkoth lk{; d ifj'khyu l ikrk g fd ;|fi ;kph u fl) fd;k g fd og yc le; l okn Hkfe ij dkfct g fdr yck dCtk ek= çfrdy dCtk dk ekeyk cuku d fy, i;kIr ugh gA***

4. किंतु, याची की ओर से निवेदन किया गया है कि तत्पश्चात् विचारण न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध प्रथम अपील एफ॰ ए॰ सं॰ 38 वर्ष 2007 दाखिल की गयी है जो अभी भी इस न्यायालय के समक्ष लंबित है।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने **रामेश्वर प्रसाद एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 1991 BBCJ 108,** में पटना उच्च न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें संप्रेक्षित किया गया था कि अतिक्रमण हटाने की कार्यवाही को तब तक स्थगित रखना चाहिए जब तक भूमि के ऊपर हक के संबंध में प्रतिकूल कब्जा के आधार पर याची का दावा हक वाद में अंतिम रूप से विनिश्चित नहीं कर दिया जाता है।

6. यह निवेदन किया गया है कि अपील वाद का जारी रहना है और मामला अभी भी लंबित है, अत: आक्षेपित नोटिस विधि की दृष्टि में दोषपूर्ण है चूँकि किसी कार्यवाही को आरंभ किए बिना अतिक्रमण हटाने के लिए सीधे तौर पर नोटिस जारी किया गया था।

7. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिशपथ पत्र में किए गए प्रकथनों को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया है कि प्रश्नगत भूमि किसी मो॰ रुस्तम खान और याची द्वारा अतिक्रमित 'गैर मजरुआ खाता भूमि' है जिसके लिए वर्ष 1956 के अधिनियम के अधीन कार्यवाही आरंभ की गयी है चूँकि उक्त अतिक्रमण एन॰ एच॰ 33 पर है। आगे निवेदन किया गया है कि याची का टी॰ एस॰ सं॰ 1 वर्ष 2004 दिनांक 26.2.2007 के निर्णय द्वारा खारिज कर दिया गया था और इस प्रकार उक्त भूमि पर याची का अधिकार, हक और कब्जा नहीं है। अत:, अतिक्रमण हटाने का निर्देश देने वाला आक्षेपित नोटिस पूर्णत: न्यायोचित है।

8. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर प्रासंगिक सामग्रियों और आक्षेपित नोटिस का परिशीलन किया है। प्रतीत होता है कि प्रश्नगत भूमि के संबंध में याची ने हक वाद दाखिल किया था जिसमें विचारण न्यायालय ने पाया था कि याची लंबी अवधि से लगातार काबिज है यद्यपि वाद खारिज कर दिया गया था। तब विचारण न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध प्रथम अपील एफ॰ ए॰ सं॰ 38 वर्ष 2007 दाखिल की गयी है जो अभी भी इस न्यायालय के समक्ष लंबित है।

9. याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विश्वास किए गए पटना उच्च न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय से प्रतीत होता है कि उक्त मामले में संपत्ति के संबंध में जिसके ऊपर प्रतिकूल कब्जा के आधार पर हक का दावा प्रश्नगत था और हक वाद न्याय निर्णयन के लिए लंबित था, उस मामले में अभिनिर्धारित किया गया था कि बी॰ पी॰ एल॰ ई॰ मामले में कार्यवाही वाद के निपटारे तक स्थगित रखी जानी चाहिए। संप्रेक्षित किया गया था कि तत्पश्चात विधि के अनुरुप कार्रवाई करने की छूट है। किंतु, इस बीच याची का हक वाद पहले ही खारिज कर दिया गया है।

10. किंतु, दिनांक 11.7.2007 के आक्षेपित नोटिस से और प्रतिशपथ पत्र में किए गए प्रकथन से यह प्रतीत नहीं होता है कि आक्षेपित नोटिस द्वारा अतिक्रमण हटाने के लिए याची को निर्देश देने के पहले बी॰ पी॰ एल॰ ई॰ कार्यवाही में कोई अंतिम आदेश पारित नहीं किया गया है जैसा डब्ल्यू॰ पी॰ सी॰ सं॰ 5648 वर्ष 2001 में पारित दिनांक 26.11.2001 के पहले के आदेश में निर्देश दिया गया था। पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों में दिनांक 11.7.2007 का नोटिस संपोषित नहीं किया जा सकता है और तद्नुसार, इसे अभिखंडित किया जाता है।

11. किंतु, याची को सुनवाई का समुचित अवसर देने के बाद बी॰ पी॰ एल॰ ई॰ अधिनियम, 1956 के अधीन विधि के अनुरुप कार्यवाही में अग्रसर होने की छूट प्रत्यर्थीगण को होगी।

12. पूर्वोक्त निबंधनों में यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

असीम घोष (455 में)

श्रीमती सीमा घोष (3390 में)

cuke

श्रीमती सीमा घोष (455 में)

असीम घोष (3390 में)

W.P. (C) Nos. 455 with 3390 of 2012. Decided on 1st November, 2012.

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955—धारा 24—भरण-पोषण—धारा 24 के अधीन आवेदन विनिश्चित करते हुए न्यायालय को तर्कपूर्ण न्यायिक सिद्धांतों के अनुरूप कृत्य करना होगा और यह पक्षों पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हुए मनमाने तरीके से कृत्य नहीं कर सकता है—पक्षों की अवस्था और हैसियत, दावेदार की युक्तियुक्त मांग (भोजन, वस्त्र, आश्रय, चिकित्सा, शिक्षा और इसी प्रकार के मदों हेतु); दावेदार की आमदनी विरोधी पक्षकार की आमदनी, व्यक्तियों की संख्या जिनके भरण-पोषण के लिए विरोधी पक्षकार बाध्य है, प्रासंगिक सिद्धांत हैं—न्यायालय मुकदमा लंबित रहते हुए भरण-पोषण के लिए दीर्घकालिक विचारण की जटिलताओं और कार्यवाही के खर्च के अड़चन के कारण रूक नहीं सकता है—याची पति की हैसियत के अनुसार, जो कार भी रखे हुए है और प्रत्यर्थी-पत्नी, जिस पर अवयस्क पुत्र के भरण-पोषण की जिम्मेदारी भी है, के मुकाबले सुस्थापित व्यवसाय में है, अवर न्यायालय द्वारा नियत 7000/- रुपयों के अंतरिम भरण पोषण की राशि न्यायोचित और युक्तियुक्त है—रिट याचिकाएँ खारिज।

(पैराएँ 10 से 13)

निर्णयज विधि.—(1997)7 SCC 7—Relied; AIR 1958 Raj 322; AIR 1965 HP 12; AIR 1987 Cal 153; AIR 1988 Cal 83; AIR 1989 Del 10; AIR 1964 SC 1317; AIR 1975 Punjab & Haryana 241; AIR 1970 M.P. 14; AIR 1983 Raj 229; AIR 1975 H.P. 18; AIR 1980 Punjab and Haryana 120; AIR 1976 Kant 215; AIR 1972 Pat. 81—Referred.

अधिवक्तागण.—Mrs. Vandana Singh (in 455); Dr. M.K. Laik, Ms. Smita Mitra (in 3390), For the Petitioner; Dr. M.K. Laik, Ms. Smita Mitra (in 455); Mr. T. Mistry (in 3390), For the Respondent.

आदेश

इस रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 455/2012 में याची पति ने एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 19/2011 में प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, राँची द्वारा पारित दिनांक 3.1.2012 के आदेश को अपास्त करने के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन विद्वान परिवार न्यायालय ने हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 24 के अधीन प्रत्यर्थी पत्नी को 7000/- रुपयों का अनंतरिम भरण-पोषण प्रदान किया है। अन्य रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 3390 वर्ष 2012 में याची पत्नी ने एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 19/2011 में दिनांक 3.1.2012 के आदेश द्वारा प्रदान किए गए तदंतरिम भरण-पोषण को बढ़ाए जाने के लिए प्रार्थना किया है।

2. चूँकि दोनों याचिकाओं में याचीगण ने एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 19/2011 में प्रमुख न्यायाधीश, परिवार न्यायालय, राँची द्वारा पारित दिनांक 3 जनवरी, 2012 के आदेश को चुनौती दिया है, एक ही निर्णय द्वारा इन दोनों रिट याचिकाओं को निपटाना इस न्यायालय के लिए न्यायोचित और समुचित होगा। याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 455 वर्ष 2012 में याची पति ने उक्त आदेश को मुख्यत: इस आधार पर चुनौती दिया है कि अवर न्यायालय द्वारा नियत अंतरिम भरण-पोषण की राशि अत्याधिक है और इसे याची पति की स्वतंत्र आय को विचार में लिए बिना प्रदान किया गया है जबकि याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 3390 वर्ष 2012 में याची-पत्नी ने उक्त आदेश को मुख्यत: इस आधार पर चुनौती दिया है कि अवर न्यायालय द्वारा नियत अंतरिम भरण-पोषण की राशि स्वयं के और अपने अवयस्क पुत्र के भरण-पोषण की जिम्मेदारी को देखते हुए पर्याप्त नहीं है और, इसलिए, उसने न्यायालय द्वारा इस प्रकार नियत अंतरिम भरण-पोषण को बढ़ाए जाने के लिए प्रार्थना किया है।

3. याची पति के विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश को मुख्यत: इस आधार पर चुनौती दिया है कि विद्वान अवर न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करते हुए हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 24 के प्रावधान पर समुचित रूप से विचार नहीं किया है और तद्द्वारा प्रत्यर्थी पत्नी को 7000/- रुपयों का अंतरिम भरण-पोषण नियत करने में गलती किया है। अपने प्रतिवाद के समर्थन में याची पति के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अंतरिम भरण-पोषण राशि पति की स्वतंत्र आय के आधार पर प्रदान की जा सकती है किंतु अवर न्यायालय ने इस तथ्य को ध्यान में लिया है कि याची पति जमशेदपुर स्थित 'सेफ्टी फर्स्ट' नामक फर्म का स्वत्वधारी है। समुचित औचित्य और दस्तावेजी साक्ष्यों के प्रमाण के बिना अवर न्यायालय ने अंतरिम भरण-पोषण का आदेश पारित किया है जो हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 24 के विपरीत है और, इसलिए उक्त आदेश को अभिखंडित और अपास्त करने की आवश्यकता है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने अपने तर्क के समर्थन में निम्नलिखित निर्णयों पर विश्वास किया है:-

(i) AIR 1958 Raj 322;

(ii) AIR 1965 HP 12;

(iii) AIR 1987 Cal. 153;

(iv) AIR 1988 CAl 83;

(v)AIR 1989 Dec 10 vkj

(vi) AIR 1964 SC 1317

याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि पूर्वोक्त निर्णयों में अधिकथित निर्णयाधार की दृष्टि में अवर न्यायालय को उक्त निर्णयों में वर्णित तथ्यों को विचार में लेना चाहिए था, विशेषकर याची की आय पर अवर न्यायालय द्वारा विचार किए जाने की आवश्यकता थी किंतु अवर न्यायालय ने तर्कपूर्ण राशि को विचार में नहीं लिया है और, इसलिए, अवर न्यायालय ने अंतरिम भरण-पोषण नियत करने में गलती किया है।

5. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी पत्नी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि पति याची 'सेफ्टी फर्स्ट' के रूप में ज्ञात अग्निशामक का व्यवसाय कर रहा है और उसके पास JH 9527 संख्या वाली कार भी है और अवर न्यायालय के समक्ष याची पति द्वारा इस तथ्य का खंडन भी नहीं किया है। उन्होंने आगे

निवेदन किया कि याची आर० आई० टी० परिसर, जमशेदपुर में 'स्वीट मीट शॉप' नामक पारिवारिक व्यवसाय भी कर रहा है। आगे निवेदन किया गया है कि अवर न्यायालय द्वारा नियत अंतरिम भरण–पोषण प्रत्यर्थी पत्नी और उसकी संतान के भरण–पोषण के लिए पर्याप्त नहीं है क्योंकि उसकी संतान ने कान्वेन्ट विद्यालय में प्रवेश लिया है जिसके लिए पर्याप्त धन की आवश्यकता है। इस संदर्भ में, प्रत्यर्थी पत्नी के विद्वान अधिवक्ता ने आदेश के पैराग्राफ 15 को निर्दिष्ट किया है जिसमें भरण–पोषण के निर्धारण के संबंध में प्रासंगिक चर्चा की गयी है।

6. प्रत्यर्थी पत्नी के विद्वान अधिवक्ता ने भी अपने तर्क के समर्थन में निम्नलिखित निर्णयों को उद्धृत किया है:–

(i) AIR 1975 itkc ,o gfj;k.kk 241;

(ii) AIR 1970 M.P. 14;

(iii) AIR 1983 Raj 229;

(iv) AIR 1975 H.P.18;

(v) AIR 1980 itkc ,o gfj;k.kk 120;

(vi)AIR 1976 Kant 25; vkj

(vii) AIR 1972 Pat 81

7. पूर्वोक्त परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करते हुए और आक्षेपित आदेश तथा अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्रियों के परिशीलन से प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय ने अंतरिम भरण–पोषण पाने के लिए प्रत्यर्थी पत्नी द्वारा दाखिल याचिका पर हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 24 के अधीन आदेश पारित किया है। आक्षेपित आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय ने अंतरिम भरण–पोषण का आदेश पारित करते हुए विस्तारपूर्वक अनेक पहलूओं और याची पति की सामाजिक–वित्तीय हैसियत को विचार में लिया है। आदेश के पैराग्राफ 15 में, अवर न्यायालय ने विचार में लिया है कि याची 'सेफ्टी फर्स्ट' नामक फर्म का स्वत्वधारी है और आर० आई० टी० परिसर, जमशेदपुर अवस्थित मिठाई की दुकान भी चला रहा है जो उसके पिता की है। यह भी प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय ने इस तथ्य को भी ध्यान में लिया है कि याची के पास JH 9527 वाहन भी है जिसका वह उपयोग कर रहा है। इन सामग्रियों के आधार पर अवर न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि प्रत्यर्थी पत्नी को भुगतान की जाने वाली अंतरिम भरण–पोषण के लिए 7000/- रुपयों की राशि देने का आदेश पारित करना न्यायोचित और समुचित है।

8. मैंने याची पति के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णयों और प्रत्यर्थी पत्नी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णयों का भी परिशीलन किया है। उक्त निर्णयों के परिशीलन से प्रतीत होता है कि हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 24 के अधीन आदेश पारित करते हुए न्यायालय को प्रत्येक मामला विशेष की परिस्थितियों पर निर्भर होते हुए स्वविवेक का प्रयोग करना है और अंतरिम भरण–पोषण के लिए पति की आय को सम्यक अधिमान देने की आवश्यकता है।

9. मैंने **जसबीर कौर सहगल बनाम जिला न्यायाधीश, देहरादून, (1997)7 SCC 7,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का परिशीलन भी किया है। उक्त निर्णय के पैरा 8 में अभिनिर्धारित किया गया है कि:–

> *^^8..... Hkj.k&ik"k.k dh jkf'k fu;r dju d fy, dkb iDdk Qkeyk vfèkdfFkr ugh fd;k tk ldrk gA bl phtk dh viuh çÑfr e çR;d ekey d rF;k vkj ifjfLFkfr;k ij fuHkj gkuk gkxkA fdr] ykHk dh dN xtkb'k lno gk ldrh gA*

*U;k;ky; dk i{kk dh gfl;r] mudh ijLij t:jrk] Lo; mld viu Hkj.k&ik"k.k d fy, vkj mud fy, ftud Hkj.k&ik"k.k d fy, og fofèk vkj lfofèk d vèkhu ckè; g] mld ;fDr;Dr [kp dk è;ku e j[kr g, ifr d Hkxrku dju dh {kerk ij fopkj djuk gkxkA iRuh d fy, fu;r Hkj.k&ik"k.k dh jkf'k bruh gkuh pkfg, rkfd og mldh gfl;r vkj mld thou dk <x ftldh og vknh Fkh tc og viu ifr d lkFk jgrh Fkh vkj ;g Hkh fd ml viu ekey d vfHk;ktu e fu%lgk; egll ugh djuk pkfg,] ij fopkj djr g, ;fDr;Dr vkjke e jg ldA lkFk gh] bl çdkj fu;r jkf'k vR;fèkd vkj míkfir ugh gk ldrh gA***

10. न्यायालय वाद लंबित रहते हुए भरण पोषण नियत करने के लिए दीर्घकालिक विचारण की जटिलताओं और कार्यवाही के खर्च के अड़चन के कारण रूक नहीं सकता है। अन्यथा, धारा का उद्देश्य ही विफल हो जाएगा जो यह है कि अपना मामला अभियोजित करने में पक्ष असहाय महसूस नहीं करे। किंतु, तब अधिनियम की धारा 24 के अधीन आवेदन विनिश्चित करते हुए न्यायालय को तर्कपूर्ण न्यायिक सिद्धांतों के अनुरूप कृत्य करना होगा और यह पक्षों पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हुए मनमाने तरीके से कृत्य नहीं कर सकता है। निम्नलिखित सिद्धांत इस प्रयोजन से प्रासंगिक प्रतीत होंगे:–

(1) i{kk dh voLFkk vkj gfl;r(

(2) nkonkj dh ;fDr;Dr ekx (Hkktu] oL=] vkokl] fpfdRlk] f'k{kk vkj blh idkj d enk gr)

(3) nkonkj dh vk;(

(4) fojkèkh i{kdkj dh vk;(

(5) 0;fDr;k dh l[;k ftud ik"k.k d fy, i{k ckè; gA

11. इस पृष्ठभूमि में, यह प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय ने सही प्रकार से और समुचित रूप से पैरा 15 पर साक्ष्य पर विचार किया है और इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि याची व्यवसायी है और उसके पास JH 9527 कार भी है जो याची पति की वित्तीय हैसियत और क्षमता को स्पष्टत: स्थापित करता है। अत: अवर न्यायालय ने प्रत्यर्थी पत्नी और उसके पुत्र को 7000/- रुपयों की राशि का भरण–पोषण देने का आदेश दिया।

12. मेरा सुविचारित मत है कि याची पति, जो कार भी रखे हुए है, और जिसका प्रत्यर्थी पत्नी, जिस पर अब एक पुत्र के भरण–पोषण की जिम्मेदारी भी है, की हैसियत के मुकाबले में सुस्थापित व्यवसाय है, अवर न्यायालय द्वारा नियत 7000/- रुपयों की अंतरिम भरण–पोषण की राशि न्यायोचित और युक्ति युक्त है। उक्त अवस्था की दृष्टि में, किसी भी याचिका में इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

13. उक्त चर्चा की दृष्टि में, दोनों रिट याचिकाएँ–डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 455/2012 और डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 3390/2012 व्यय के किसी आदेश के बिना खारिज की जाती हैं।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

उपेन्द्र पासी एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Crl. M.P. No. 26 of 2010. Decided on 30th October, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 468—संज्ञान–परिसीमा की वर्जना–परिसीमा की अवधि की संगणना के प्रयोजन से परिवाद दाखिल करने अथवा दांडिक कार्यवाही आरंभ करने की तिथि के रूप में प्रासंगिक तिथि पर विचार करना होगा और न कि दंडाधिकारी द्वारा संज्ञान लिए जाने की तिथि-संज्ञान लेने वाला आदेश अभिपुष्ट। (पैरा 13)

निर्णयज विधि.–(2007)7 SCC 394—Followed; (1981)3 SCC 34; (2003)8 SCC 559; (1989)2 SCC 95; (2012)6 SCC 228—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s. Jai Prakash, S.K. Laik, For the Petitioners; Mr. Shekhar Sinha, For the State.

आदेश

यह मामला बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के मूनीडीह क्षेत्र में केबुल की चोरी का अपराध करने के लिए दिनांक 20.10.1991 को दर्ज किया गया था। अन्वेषण के बाद, दिनांक 2.1.1992 को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 379/411 के अधीन आरोप-पत्र दाखिल किया गया था किंतु दिनांक 27.11.1996 को अपराध का संज्ञान लिया गया था। चूँकि चोरी का अपराध किए जाने के पाँच वर्षों बाद अपराध का संज्ञान लिया गया था जो तीन वर्षों की अवधि के लिए दंडनीय था, यह अभिवचन करते हुए कि संज्ञान लेने वाला आदेश स्वयं परिसीमा द्वारा वर्जित है, मामले से याची को उन्मोचित करने के लिए आवेदन दाखिल किया गया था। उस आवेदन को अस्वीकार कर दिया गया था। उसके विरुद्ध, सत्र न्यायाधीश, धनबाद के समक्ष दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 31 वर्ष 2003 दाखिल किया गया था जिन्होंने उन्मोचन के लिए दाखिल याचिका पर नया आदेश पारित करने के लिए मामला विचारण न्यायालय के पास वापस भेज दिया था। किंतु, विद्वान दंडाधिकारी ने पुनः दिनांक 25.8.2006 को उन्मोचन याचिका अस्वीकार कर दिया था।

2. उस आदेश से व्यथित होकर, सत्र न्यायाधीश, धनबाद के समक्ष दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 352 वर्ष 2006 दाखिल किया गया था जिसे उनका स्थानांतरण हो जाने पर अपर सत्र न्यायाधीश-सह-एफ॰ टी॰ सी॰ सं॰ 5, धनबाद द्वारा सुना गया था।

3. विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश ने पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और **भारत दामोदर काले बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, (2003)8 SCC 559,** में दिए गए निर्णय और **जापानी साहू बनाम चंद्रशेखर मोहन्ती, (2007)7 SCC 394,** में दिए गए निर्णय पर विश्वास करते हुए अभिनिर्धारित किया कि परिसीमा की अवधि संगणित करने के प्रयोजन से प्रासंगिक तिथि परिवाद दाखिल करने अथवा दांडिक कार्यवाही आरंभ करने की तिथि मानी जाए और न कि दंडाधिकारी द्वारा संज्ञान लेने की तिथि और तद्द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश अभिपुष्ट किया जिसके द्वारा उन्मोचन की प्रार्थना विद्वान दंडाधिकारी द्वारा अस्वीकार कर दी गयी थी।

4. उन आदेशों से व्यथित होकर, यह आवेदन दाखिल किया गया है।

5. याचीगण के विद्वान वरीय अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 में अंतर्विष्ट प्रावधान के कोरे परिशीलन से कोई संदेह नहीं रहता है कि परिसीमा की अवधि की संगणना के प्रयोजन से प्रासंगिक तिथि वह होगी जब अपराध का संज्ञान लिया गया है और न कि वह तिथि जिस पर परिवाद अथवा दांडिक कार्यवाही आरंभ की गयी है और कि उक्त प्रावधान के शब्द इतने असंदिग्ध हैं कि न्यायालय विधि का अक्षरशः पालन करने के लिए प्रलोभित होगा और इसलिए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **पंजाब राज्य बनाम सरवन सिंह, (1981)3 SCC 34,** मामले में यह अभिनिर्धारित करते हुए इसी दृष्टिकोण को अपनाया है कि चाहे राज्य हो या निजी परिवाद, इसे विधि का अक्षरशः पालन करना होगा अथवा परिसीमा के आधार पर अभियोजन विफल होने का जोखिम उठाना होगा। इसी पंक्ति

पर अनेक अन्य निर्णय हैं। किंतु कालक्रम में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **भारत दामोदर काले बनाम ए॰ पी॰ राज्य (ऊपर**) और **जापानी साहू बनाम चंद्रशेखर मोहन्ती (ऊपर)** में विभिन्न दृष्टिकोण अपनाया है जिसमें अभिनिर्धारित किया गया है कि परिसीमा की अवधि संगणित करने के लिए प्रासंगिक तिथि परिवाद दाखिल करने अथवा दांडिक कार्यवाही आरंभ करने की तिथि मानी जानी होगी। **भारत दामोदर काले बनाम ए॰ पी॰ राज्य (ऊपर)** में उक्त दृष्टिकोण इस आधार पर अपनाया गया है कि संज्ञान लेना न्यायालय का कृत्य है जिस पर अभियोजन एजेंसी अथवा परिवादी का नियंत्रण नहीं है और न्यायालय की ओर से गलती किए जाने के कारण, यदि न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 के अधीन विहित समय के भीतर संज्ञान नहीं लेता है, पक्षगण को उस गणना पर पीड़ित होने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए किंतु विहित अवधि के दौरान न्यायालय द्वारा आदेश पारित नहीं किए जाने पर कोई न्यायालय पर दोष नहीं डाल सकता है। विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन में **मिथिलेश कुमारी एवं एक अन्य बनाम प्रेम बिहारी खरे, (1989)2 SCC 95,** में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है जो बेनामी संव्यवहार (निवारण) अधिनियम, 1988 से संबंधित मामला था जिसमें अभिनिर्धारित किया गया है कि अपील निपटाने में विलंब को न्यायालय की कार्रवाई नहीं कहा जा सकता है।

6. इस प्रकार, किया गया निवेदन यह है कि परिसीमा की विहित अवधि के अंतर्गत अपराध का संज्ञान लेने में न्यायालय द्वारा किए गए विलंब के कारण भी इसे न्यायालय की कार्रवाई के रूप में नहीं कहा जा सकता है और तद्द्वारा अभियोजन को परिणाम भुगतना होगा जैसा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 के अधीन विहित किया गया है।

7. आगे निवेदन किया गया है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **जापानी साहू बनाम चंद्रशेखर मोहन्ती (ऊपर)** में यद्यपि अभिनिर्धारित किया है कि परिसीमा की अवधि संगणित करने के प्रयोजन से प्रासंगिक तिथि परिवाद दाखिल करने अथवा दांडिक कार्यवाही आरंभ करने की तिथि मानती होगी और न कि दंडाधिकारी द्वारा संज्ञान लेने की तिथि किंतु दांडिक कार्यवाही केवल तब आरंभ की जाती है जब अपराध का संज्ञान लिया जाता है, विधि की जिस प्रतिपादना को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **अपर महानिदेशक, सेना मुख्यालय बनाम केंद्रीय जाँच ब्यूरो, (2012)6 SCC 228,** में हाल में दोहराया गया है। अत:, स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि यदि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 के अधीन विहित परिसीमा की अवधि का अवसान संज्ञान लेने की तिथि पर हो जाता है, संज्ञान लेने वाले आदेश को परिसीमा द्वारा वर्जित अभिनिर्धारित करना ही होगा जैसा वर्तमान मामले में हुआ है।

8. नि:संदेह यह सत्य है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 में अंतर्विष्ट प्रावधान परिसीमा की अवधि बीतने के बाद संज्ञान लेने में वर्जना के बारे में विहित करता है जिसका सादा पठन सुझाता है कि न्यायालय को जुर्माना, अवधि जो एक वर्ष से अधिक और तीन वर्ष से कम है, के कारावास से दंडनीय अपराधों का संज्ञान विहित समय के भीतर लेना ही होगा।

9. जब ऐसा मामला, जिसमें परिसीमा की विहित अवधि के बाद आरोप-पत्र दाखिल किया गया था, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष **पंजाब राज्य बनाम सरवन सिंह (ऊपर)** मामले में विचार के लिए आया, माननीय न्यायाधीशों ने उद्देश्य, जिसके लिए विधानमंडल ने दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन उस प्रावधान को रखा, को विचार में लेने के बाद निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

*^^mí'; ftldh ikfIr lfofèk bfllr djrh g fopkj.k dh fu"i{krk dh voèkkj.kk d vudy g tlk Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 21 e çfr"Bkfir fd;k x;k gA vr% ;g v;Ur egRoi.k g fd vfHk;ktu] pkg jkT; }kjk fd;k tk, ;k futh ifjokrh }kjk] dk fofèk dk v{kj'k% ikyu djuk gh gkxk vFkok ifjlhek d vkèkkj ij vfHk;ktu foQy gku dk tkf[ke mBkuk gkxkA***

10. ऐसा अभिनिर्धारित करने पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने मामला धारा 468 (2)(C) में अंतर्विष्ट प्रावधान के प्रतिकूल पाया क्योंकि आरोप-पत्र परिसीमा की विहित अवधि के परे दाखिल किया गया था।

11. यह प्रतीत होता है कि तत्पश्चात् अनेक निर्णयों में इसी सिद्धांत का अनुसरण किया गया था। किंतु, **भारत दामोदर काले बनाम ए॰ पी॰ राज्य (ऊपर)** में जब ऐसा ही मामला पुनः विचारार्थ आया, माननीय न्यायाधीशों ने न केवल धारा 468 के अधीन बल्कि धाराओं 469 और 470 में अंतर्विष्ट प्रावधान पर भी विचार करने के बाद अभिनिर्धारित किया कि परिसीमा की अवधि की संगणना के प्रयोजन से प्रासंगिक तिथि परिवाद दाखिल करने की तिथि माननी होगी। ऐसे निष्कर्ष पर आते हुए निम्नलिखित संप्रेक्षित किया गया था:–

*"10. bl ekey d rF;k ij vkj gekj le{k fn, x, rdk d vkèkkj ij ge bl ç'u dk fofuf'pr djuk lefpr le>r g fd D;k lfgrk d vè;k;&XXXVI d çkoèkku vfHk;ktu lLFkkfir dju e foyc ij vFkok lKku yu e foyc ij ykx gkr gA tlk Åij xkj fd;k x;k g] vihykFkh d fo}ku vfèkoDrk d vulkj] mDr vè;k; d vèkhu fofgr ifjlhek lcfèkr U;k;ky; d lKku yu ij ykx gkrh g] vr% Hky gh lfgrk d mDr vè;k; e mfYyf[kr ifjlhek dh vofèk d Hkhrj ifjokn nkf[ky fd;k tkrk g] ;fn ifjlhek dh vofèk d Hkhrj lKku ugh fy;k tkrk g] ;g ifjlhek }kjk oftr gk tkrk gA ;g rd lfgrk d vè;k; XXXVI d vè;k; 'kh"kZd }kjk çfjr çrhr gkrk g ftldk iBu bl rjg g ^dfri; vijkèkk dk lKku yu dh ifjlhek*A ;g e[;r% vè;k; d 'kh"kZd dh mDr Hkk"kk ij vkèkkfjr gA vihykFkhx.k dh vkj l ;g rd lckfèkr fd;k x;k g fd mDr vè;k; }kjk fofgr ifjlhek lKku yu ij vkj u fd ifjokn nkf[ky fd, tku vFkok vfHk;ktu vkjHk fd, tku ij ykx gkrh gA ge ,lk rd Lohdkj ugh dj ldr g D;kfd mDr vè;k; d vud çkoèkkuk dk lefdr iBu Li"Vr% minf'kr djrk g fd mle fofgr ifjlhek doy ifjokn nkf[ky dju vFkok vfHk;ktu vkjHk dju d fy, vkj u fd lKku yu d fy, gA ;g fu'p; gh U;k;ky; dk vijkèk dk lKku yu l çfrf"k) djrk g tgk mDr vè;k; e mfYyf[kr vofèk d volku d ckn ifjokn nkf[ky fd;k x;k gA ;g mDr vè;k; e ik;h x;h lfgrk dh èkkjk 469 l Li"V g tk fofufn"Vr% dgrh g fd vijkèk d lcèk e ifjlhek dh vofèk vijkèk dh frfFk l vFkok vijkèk dk irk pyu dh frfFk l vkjHk gkxhA èkkjk 470 minf'kr djrh g fd ifjlhek dh vofèk dh lx.kuk djr g, fy;k x;k le;] ftld nkjku ekeyk fdlh vU; U;k;ky; e vFkok vihy e vFkok iujh{k.k e vijkèkdrk d fo#) rRijrkiod vfHk;kftr fd;k tk jgk Fkk] vioftr fd;k tkuk pkfg,A mDr èkkjk Li"Vhdj.k e ;g Hkh çkoèkkfur djrh g fd ljdkj vFkok fdlh vU; çkfèkdkjh dh etjh vFkok lgefr çkIr dju d fy, lx.kuk dju e fy;k x;k vko';d le; Hkh vioftr fd;k tkuk pkfg,A blh çdkj] vofèk] ftld nkjku U;k;ky; cn Fkk dk*

Hkh vioftr djuk gkxkA ; leLr çkoèkku minf'kr djr g fd lKku yu okyk U;k;ky; ifjlhek dh fofgr vofèk d Hkhrj vijkèk dk lKku y ldrk g ftld fy, ifjokn bld le{k nkf[ky fd;k x;k g vkj ;fn vko';d gk olk le; vioftr dju d ckn tk fofèkr% vioftr fd, tku ;kX; gA gekj er e] ;g Li"Vr% minf'kr djrk g fd fofgr ifjlhek ifjlhek dh vofèk d Hkhrj lKku yu d fy, ugh g cfYd vijkèk dk lKku yu d fy, g ftld lcèk e lfgrk d vèkhu fofgr ifjlhek dh vofèk d ij ifjokn nkf[ky fd;k x;k g vFkok vfHk;ktu vkjHk fd;k x;k gA gekj bl nf"Vdk.k d lkfofèkd min'ku d vfrfjDr] ge bl rF; l bl nf"Vdk.k dk leFku ikr g fd lKku yuk U;k;ky; dk ÑR; g ftld Åij vfHk;ktu ,tlh vFkok ifjoknh dk fu;=.k ugh gA vr%] lfgrk d vèkhu ifjlhek dh vofèk d Hkhrj nkf[ky ifjokn U;k;ky; d ÑR; }kjk fu"Qy ugh cuk;k tk ldrk gA fofèkd okD;k'k@egkojk ^^U;k;ky; d dk; l fdlh dh gkfu ugh gkrh ftldk vFk g fd U;k;ky; dk ÑR; fdlh 0;fDr ij çfrdy çHkko ugh Mkyxk vFkok U;k;ky; dh vkj l foyc }kjk dkb i{k ihfMr ugh gkuk pkfg,] Hkh bl nf"Vdk.k dk leFku djrk g fd foèkku eMy fdlh vijkèk dk lKku yu oky U;k;ky; d ÑR; ij ifjlhek dh vofèk fu;r dju dk vk'k; ugh j[k ldrk Fkk rkfd ifjoknh dk ekeyk ijkftr fd;k tk ldA***

12. बाद में, पुनः यही विवाद्यक, जैसा उक्त निर्दिष्ट मामले में विनिश्चित किया गया था, **जापानी साहू बनाम चंद्रशेखर मोहन्ती (ऊपर)** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विचारार्थ आया जिसमें दिया गया तर्क यह था कि धारा 468 में अंतर्विष्ट प्रावधान, जो विहित अवधि के बाद न्यायालय द्वारा अपराध का संज्ञान लेने में वर्जना लगाता है, इतना विनिर्दिष्ट है कि **भारत दामोदर काले बनाम ए॰ पी॰ राज्य (ऊपर)** में दिए गए निर्णय को अनवधानता के कारण दिया गया अभिनिर्धारित किया जाए। माननीय न्यायाधीशों ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित करने के बाद प्रतिवाद खारिज कर दिया:–

^^ge çfrokn ekU; Bgjku e v{ke gA ge leku :i l vfHk;Dr d fo}ku vfèkoDrk d rd l çHkkfor ugh g fd Hkkjr nkeknj e fu.k; vuoèkkurk d dkj.k gA geu mDr fu.k; dk ifj'khyu fd;k gA geu ;gk Åij ijk 10 Hkh bl m)r fd;k g ftle bl U;k;ky; }kjk vfHk;Dr d çfrokn ij fopkj fd;k x;k Fkk vkj bl udkjk x;k FkkA ;g lR; g fd ml ekey e U;k;ky; u lçf{kr fd;k fd vè;k; d 'kh"kd (vè;k; XXXVI: dfri; vijkèkk dk lKku yu d fy, ifjlhek) l ldr yr g, rd fn;k x;k Fkk fd ;fn lfgrk dh èkkjk 468 (2) d }kjk fofgr vofèk d Hkhrj U;k;ky; }kjk lKku ugh fy;k x;k g] ifjokn dk ifjlhek }kjk oftr vfHkfuèkkfjr djuk gh gkxkA fdr] ;g lR; ugh g fd bl U;k;ky; u bl rd dk ml vkèkkj ij vLohdkj dj fn;kA U;k;ky; u lfgrk d çklfxd çkoèkkuk ij fopkj fd;k vkj ^vud çkoèkkuk d lefdr iBu ij çfrokn dk udkj fn;kA U;k;ky; u xkj fd;k fd tgk rd vijkèk d lKku dk lcèk g] ;g U;k;ky; dk ÑR; g ftld Åij u rk vfHk;ktu ,tlh dk vkj u gh ifjoknh dk fu;=.k ugh gA U;k;ky; u lKkr lfDr ^U;k;ky; d dk; l fdlh dh gkfu ugh gkrh* (U;k;ky; dk ÑR; fdlh ij çfrdy çHkko ugh Mkyxk) dk Hkh fufn"V fd;kA ;g leLr vufpruk dk lefdr çHkko g ftl ij U;k;ky; u fu"df"kr fd;k fd ;g fofuf'pr dju d fy, fd D;k ifjokn ifjlhek }kjk oftr g] çklfxd frfFk ifjokn nkf[ky fd, tku dh frfFk gkxh vkj u fd U;k;ky; }kjk vknf'kdk tkjh dju vFkok lKku yu dh frfFkA*

ge Hkkjr nkeknj e vfèkdfFkr fofèk d lkFk lger gA gekj fu.k; e] ckEc mPp U;k;ky; dfri; ifjfLFkfr;k dk fopkj e yu e lgh Fkk tl ifjlhek dh

vfre frfFk ij ifjoknh }kjk ifjokn nkf[ky fd;k tkuk] nMkfèkdkjh dh vuiyCèkrk vFkok vU; dkek e ml dh 0;Lrrk] ifjokn e fd, x, vfHkdFku ij food dk bLreky dju e nMkfèkdkjh@U;k;ky; dh vkj l le; dh deh] lfgrk dh èkkjk 156 dh mièkkjk (3) vFkok èkkjk 202 d vèkhu vUo"k.k dk vkn'k ndj vknf'kdk dk tkjh fd, tkus dk LFkxu] lKku yu vFkok vknf'kdk tkjh dju ij vfHk;ktu , tl h vFkok ifjoknh dk fu;=.k ugh gkuk] vkfnA gekj vul kj] nk pht vFkkr (1) ifjokn nkf[ky fd;k tkuk vFkok nkfMd dk;okgh vkjHk fd;k tkuk] vkj (2) lKku yuk vFkok vknf'kdk tkjh fd;k tkuk fcYdy fHkUu] lfHkUu vkj Lor= gA

tgk rd ifjoknh dk lcèk g] T;kgh og fofèk d l{ke U;k;ky; e ifjokn nkf[ky djrk g] mlu og lc dN fd;k g ft l ml ml pj.k ij dju dh vko';drk gA vr%] ekey ij fopkj djuk] viu food dk bLreky djuk vkj lKku yu] vknf'kdk tkjh dju vFkok fdl h vU; dkjokb] tk fofèk vuè;kr djrh g] djuk nMkfèkdkjh dk dke gA bu dk;okfg;k ij ifjoknh dk fu;=.k ugh gA

vud dkj.kk l ftue l dN dk iokDr fu.k;k e fufn"V fd;k x;k g tk ek= mnkgj.kkRed ekey g vkj lokxh.k çÑfr d ugh g) vknf'kdk tkjh djuk vFkok lKku yuk U;k;ky; vFkok nMkfèkdkjh d fy, lHko ugh gk ldrk gA fdr U;k;ky; dh vkj l ,l foyc d fy, ifjoknh dk nfMr ugh fd;k tk ldrk g vkj u gh lfgrk d vèkhu lefpr dkjokb dju e nMkfèkdkjh dh foQyrk vFkok yki d dkj.k ml okn l vyx ugh fd;k tk ldrk gA fdl h nkfMd dk;okgh dk vpkud l lekIr ugh fd;k tk ldrk g tc ifjoknh fofèk }kjk fofgr le; d fcYdy Hkhrj U;k;ky; d ikl vkrk gA , l ekeyk e] fl)kr fd ^U;k;ky; d ÑR; d dkj.k fdl h dh gkfu ugh gkrh* (U;k;ky; dk ÑR; fdl h ij çfrdy çHkko ugh Mkyxk) fu'p; gh ykx gkxkA (n[k vyDlMj jktj cuke diRok; MhO , ldkliV) leLr U;k;ky;k dk çFke vkj mPpre dr0; lkoèkkuh cjruk g fd U;k;ky; dk ÑR; okfn;k dk gkfu ugh igpkrk gA

lfgrk fofèk }kjk çkoèkkfur vofèk d Hkhrj lefpr Qkje dk lgkjk yu d fy, 0;fFkr i{k ij ckè;rk vfèkjkfir djrh g vkj tc og ,d ckj , l h dkjokb djrk g] ;g fcYdy v;fDr;Dr vkj vlkE;ki.k gkxk ;fn ml l dgk tkrk g fd ml dh f'kdk;r nj ugh dh tk,xh D;kfd U;k;ky; u ifjlhek dh vofèk d Hkhrj dkjokb ugh fd;k FkkA fofèk dh , l h 0;k[;k U;k; dju d ctk, vU;k; dk LFkk;h cuku vkj çfØ;kRed fofèk d e[; mí'; foQy dju dh vkj y tk,xhA

ekeyk fofHkUu dk.kk l Hkh n[kk tk ldrk gA tc ,d ckj Lohdkj fd;k tkrk g (vkj bld ckj e fookn ugh g) fd vijkèk dk lKku yuk vFkok vknf'kdk tkjh djuk ifjoknh vFkok vfHk;ktu , tl h d dk;{k= d vrxr ugh g vkj ifjoknh vFkok vfHk;ktu , tl h doy ifjokn nkf[ky dj ldrh g vFkok fofèk d vu#i dk;okgh vkjHk dj ldrh g] ;fn ifjlhek dh vofèk d Hkhrj dk;okgh vkjHk dju dh dkjokb dh x;h g] ifjoknh vknf'kdk tkjh dju vFkok vijkèk dk lKku yu e U;k;ky; vFkok nMkfèkdkjh dh vkj l foyc d fy, ftEenkj ugh gA vc tc ml U;k;ky; vFkok nMkfèkdkjh dh vkj l yki] 0;frØe vFkok fuf"Ø;rk d dkj.k nfMr fd;k tkuk bfll r fd;k tk jgk g] lfoèkku d vuPNn 14 dh dlkVh ij fofèk d çkoèkku dh ijh{kk djuh gkxhA

> *lHkor% vkxg fd;k tk ldrk g fd ,lk çkoèkku fcYdy euekuk] vrkfdd vkj v;fDr;Dr gA ;g lfuf'pr fofèk g fd fofèk dk U;k;ky; çkoèkku dh 0;k[;k djxk tk ;fDr;Dr vFkkUo;u dk fl)kr ykx djd fofèk dh oèkrk dk likf"kr dju e enn djxk vkj u fd Litera legis d fu;e dk v iuk dj bl lHk| vkj v loèkkfud cuk,xkA lfgrk dh èkkjk 468 e ifj lhek d çkoèkku dk U;k;ky; }kjk vknf'kdk tkjh dju vFkok lKku yu d lkFk tkMuk bl lfoèkku d vuPNn 14 d vfèkdkjkrhr vkj v lik"k.kh; cuk ldrk gA***

13. ऐसा अभिनिर्धारित करने के बाद माननीय न्यायाधीशों ने अभिनिर्धारित किया कि परिसीमा की अवधि की संगणना करने के प्रयोजन से <u>प्रासंगिक तिथि परिवाद दाखिल करने अथवा दांडिक कार्यवाही आरंभ करने की तिथि माननी होगी और न कि दंडाधिकारी द्वारा संज्ञान लेने की तिथि और तद्द्वारा समस्त निर्णयों जिनके द्वारा विपरीत दृष्टिकोण अपनाया गया था, को उलट दिया गया था।</u>

14. मामले के उस दृष्टिकोण में विपरीत दृष्टिकोण अपनाने का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है।

15. किंतु, तर्क दिया गया था कि यद्यपि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि पुलिस रिपोर्ट पर संस्थापित मामले में परिसीमा की अवधि संगणित करने की प्रासंगिक तिथि वह तिथि होगी जब दांडिक कार्यवाही आरंभ की जाती है किंतु दांडिक कार्यवाही केवल तब आरंभ की जाती है जब न्यायालय द्वारा अपराध का संज्ञान लिया जाता है और अपने निवेदन के समर्थन में **अपर महानिदेशक, सेना मुख्यालय बनाम केंद्रीय जाँच ब्यूरो (ऊपर)** के मामले में दिया गया निर्णय निर्दिष्ट किया गया है।

16. किया गया निवेदन भ्रामक प्रतीत होता है।

17. यह पहले ही गौर किया गया है कि **जापानी साहू बनाम चंद्रशेखर मोहंती (ऊपर)** के मामले में निर्णयाधार अधिकथित किया गया है कि परिसीमा की अवधि की संगणना के प्रयोजन से प्रासंगिक तिथि परिवाद दाखिल करने अथवा दांडिक कार्यवाही आरंभ करने की तिथि और न कि दंडाधिकारी द्वारा अपराध का संज्ञान लेने की तिथि माननी होगी। किंतु, माननीय न्यायाधीशों ने **अपर महानिदेशक, सेना मुख्यालय बनाम केंद्रीय जाँच ब्यूरो (ऊपर)** के मामले में बिल्कुल भिन्न संदर्भ में 'मामले का संस्थापन' खंड के ऊपर अपना दृष्टिकोण अभिव्यक्त किया है जो उक्त निर्णय के पैरा 41 से प्रकट होगा जिसके द्वारा माननीय न्यायाधीश मामले के निष्कर्ष पर आए जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *^^bl çdkj] mDr dh nf"V e ;g Li"V g fd vfHk0;fDr ^lLFkkiu* dk ekeyk fo'k"k e ç;kT; vfèkfu;e dh ;ktuk d lnHk e le>uk gkxkA tgk rd nkfMd dk;okgh dk lcèk g ^^lLFkkiu** dk vFk nkf[ky fd;k tkuk] çLrr djuk vFkok dk;okgh vkjHk djuk ugh g cfYd bldk vFk nM çfØ;k lfgrk e vrfo"V çkoèkku d erkfcd lKku yuk gA***

18. अत:, भले ही माननीय न्यायाधीशों द्वारा ऐसी अभिव्यक्ति का उपयोग किया गया है, यह शायद ही कोई भिन्नता उत्पन्न करता है जहाँ तक **जापानी साहू बनाम चंद्रशेखर मोहंती (ऊपर)** के मामले में विधि अधिकथित की गयी है।

19. अत:, मैं विचारण न्यायालय अथवा पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा पारित आदेश में कोई अवैधता नहीं पाता हूँ।

20. तद्नुसार, यह आवेदन गुणागुण रहित होने के कारण खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

दिनेश्वर प्रसाद

cuke

सी॰ एम॰ डी॰, सी॰ सी॰ एल॰, राँची एवं अन्य

W.P. (C) No. 6055 of 2002. Decided on 27th September, 2012.

कोयला धारक क्षेत्र (अर्जन एवं विकास) अधिनियम, 1957—धारा 9—भूमि का अर्जन—मुआवजा एवं रोजगार के लिए दावा—याची द्वारा विश्वास की गयी सामग्री विश्वास उत्पन्न नहीं करती है कि याची का संपत्ति पर अधिकार, हक और स्वामित्व था—विवाद्यक तथ्य का विवादित प्रश्न होने के नाते न्यायालय परमादेश रिट जारी नहीं कर सकता है—रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 6 से 8)

अधिवक्तागण.—Counsel.—M/s Manjul Prasad, Birat Kumar, Binod Kumar, For the Petitioner; M/s Anoop Kumar Mehta, R. Mukhopadhyay, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने सी॰ सी॰ एल॰ वाशरी के निर्माण के लिए अर्जित भूमि के लिए मुआवजा का भुगतान करने के लिए और याची के आश्रित को रोजगार देने के लिए प्रत्यर्थीगण पर परमादेश रिट जारी करना इप्सित किया है।

3. याची के अनुसार, सी॰ सी॰ एल॰ वाशरी के निर्माण के लिए कोयला धारक क्षेत्र (अर्जन एवं विकास) अधिनियम, 1957 की धारा 9 के अधीन दनिया गाँव में 174 एकड़ भूमि अर्जित की गयी थी। याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि उक्त दनिया गाँव के खाता सं॰ 37 के अधीन भूखंड सं॰ 505 में 5 एकड़ भूमि के संबंध में प्रत्यर्थीगण ने मुआवजा का भुगतान नहीं किया था और इसके बजाए आश्रितों के रोजगार और मुआवजा के भुगतान के व्यवस्थापन के लिए याची के रैयती अधिकारों के संपुष्टिकरण के लिए दिनांक 5.1.1996 और दिनांक 21.1.1996 (परिशिष्ट 6 और 6/1) के तहत उपायुक्त, बोकारो को कहा था। याची के अधिवक्ता आगे जमीन्दारी निहित करने की तिथि से लगान रसीद स्वीकार करते हुए गोमिया के अंचलाधिकारी द्वारा जारी दिनांक 28.11.1984 की प्रमाणित प्रति पर विश्वास करते हैं। निवेदन किया गया है कि अंचलाधिकारी ने उप कलक्टर, भूमि अधिकतम सीमा को अपना रिपोर्ट प्रस्तुत किया और आगे अपर कलक्टर, बोकारो ने याची की माता के रैयती अधिकारों को संपुष्ट करते हुए दिनांक 1.4.2003 के पत्र (परिशिष्ट 12 और 13) के तहत महाप्रबंधक, भूराजस्व, सी॰ सी॰ एल॰ को सूचित किया। याची द्वारा प्रतिवाद किया गया है कि इसके बावजूद मुआवजा का भुगतान नहीं किया जा रहा है और याची की 5 एकड़ भूमि के अर्जन के बावजूद प्रत्यर्थीगण द्वारा आश्रित को रोजगार देने से भी इनकार किया गया है।

4. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सी॰ सी॰ एल॰ के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि दनिया गाँव में वर्ष 1957 के अधिनियम के प्रावधान के अधीन अधिसूचना एस॰ ओ॰ सं॰ 981 (E) दिनांक 22.12.1980 के तहत कोयला खान के प्रयोजन से 174 एकड़ भूमि अर्जित की गयी थी। प्रत्यर्थी के अनुसार, उक्त अधिनियम के अधीन, यद्यपि आश्रित को रोजगार प्रदान करने का प्रावधान नहीं है, किंतु प्रत्यर्थीगण ने भूमि खोने वालों, जो पुनर्वास के प्रयोजन से उक्त योजना में अधिकथित मापदंड को परिपूर्ण करते हैं, को रोजगार देने के संबंध में योजना निरूपित किया है। याची की माता द्वारा दिए गए आवेदन में उसे अपने

पक्ष में भूमि के व्यवस्थापन के उसके दावा से संबंधित प्रासंगिक दस्तावेजों की प्रमाणित प्रति को प्रस्तुत करने के लिए कहा गया था किंतु प्रमाणित प्रति दाखिल करने के बजाए उसने दस्तावेजों की छाया प्रतिलिपि को प्रस्तुत किया जो अनेक असंगति को प्रकट करते हैं जैसे दावा व्यवस्थापन के गैर रजिस्टर्ड विलेख पर आधारित था अर्थात पूर्व भूस्वामी द्वारा प्रदान किया या सादा हुकुमनामा जो बिहार भूसुधार अधिनियम, 1950 के अधीन निहित किए जाते समय पूर्व भूस्वामी द्वारा दाखिल रिटर्न जैसे किसी दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं था। केवल वर्ष 1953 में जारी किए गए लगान रसीद की छाया प्रतिलिपि प्रस्तुत की गयी थी किंतु वर्ष 1953 से वर्ष 1981 तक के अंत:क्षेपी अवधि के लिए कोई सरकारी लगान रसीद प्रस्तुत नहीं किया गया था जब दावेदार ने गोमिया के अंचलाधिकारी के समक्ष मामला दाखिल किया दावेदार ने अधिनियम की धारा 9 (1) के अधीन अधिसूचना और दिनांक 22.12.1980 के अधिसूचना द्वारा पश्चातवर्ती निहितकरण के काफी बाद अपना दावा किया था। अधिनियम के प्रावधान और अधिसूचना के मुताबिक समस्त विल्लंगमों से मुक्त भूमि सी॰ सी॰ एल॰ में निहित की गयी है और ऐसा दावा ग्रहण नहीं किया जा सकता है। संलग्न किया गया लगान रसीद वर्ष 1981 से वर्ष 1990 तक के लिए एक बार में ही जारी किया गया था और उस तिथि के पहले भुगतान का प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

5. प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया और प्रासंगिक भूखंड सं॰ 505 और खाता सं॰ 37 के खतियान की प्रति, परिशिष्ट A को निर्दिष्ट करते हुए आगे निवेदन किया कि यह 'झारी' भूमि है। उन्होंने स्वयं रिट याचिका के पैरा 5 में किए गए प्रकथन को निर्दिष्ट करके यह निवेदन भी किया कि स्वयं याची ने कथन किया था कि उक्त 5 एकड़ भूमि याची की माता के पक्ष में व्यवस्थापित 'गैर मजरूआ भूमि' थी। आगे निवेदन किया गया है कि रिट याचिका के उक्त पैरा 5 से आगे प्रतीत होगा कि याची के पिता की 7.61 एकड़ रैयती भूमि के संबंध में मामला वर्ष 1957 के अधिनियम की धारा 14(2) के अधीन गठित अधिकरण में ले जाया गया था जिसके बाद प्रथम अपील एफ॰ ए॰ सं॰ 12 वर्ष 1989(R) भी दाखिल की गयी थी जिसमें अर्जित भूमि का बाजार मूल्य कतिपय उपांतरण ब्याज के साथ प्रदान किया गया था। आगे प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल अपील एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 463 वर्ष 1998 (R) खारिज कर दी गयी थी। किंतु, प्रत्यर्थी के अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि आश्चर्यजनक रूप से 5 एकड़ गैर मजरूआ भूमि के संबंध में याची अथवा उसकी माता द्वारा अधिनियम के अधीन सम्यक रूप से गठित अधिकरण के समक्ष विवाद कभी नहीं किया गया था जिसके पास ऐसे विवाद को ग्रहण और विनिश्चित करने की अधिकारिता है। प्रत्यर्थी के अधिवक्ता ने प्रति शपथ पत्र के उत्तर में परिशिष्ट 12 पर अंतर्विष्ट अंचलाधिकारी की रिपोर्ट को भी निर्दिष्ट किया और निवेदन किया कि उक्त रिपोर्ट के परिशीलन से प्रतीत होगा कि उक्त भूमि का लगान नियत करने का प्रथम प्रयास स्वयं वर्ष 1981 में किया गया था और जमीन्दारी निहित किए जाने से वर्ष 1981 तक की संपूर्ण अवधि के लिए याची का दावा सिद्ध करने के लिए तर्कपूर्ण दस्तावेज अथवा प्रमाण नहीं है।

6. पक्षों के अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर प्रासंगिक दस्तावेजों का परिशीलन किया गया। अभिलेख पर लाए गए दस्तावेजों के परिशीलन से प्रतीत होता है कि याची के पिता के नाम में 7.61 एकड़ रैयती भूमि के संबंध में मामले को अधिकरण में ले जाकर और आगे दावेदार/याची की ओर से प्रथम अपील और एल॰ पी॰ ए॰ में मुआवजा का दावा निपटा दिया गया है। किंतु, अन्य पाँच एकड़ भूमि, जिसके लिए वर्तमान मामला आरंभ किया गया है, सादा हुकुमनामा द्वारा तत्कालीन जमींदार द्वारा याची के नाम में व्यवस्थापित किये गए गैरमजरूआ भूमि से संबंधित है। लगान रसीद और बंदोबस्ती जारी करने का प्रथम प्रयास सी॰ सी॰ एल॰ में भूमि निहित करने के बाद वर्ष 1981 में आरंभ किया गया था। याची द्वारा विश्वास किए गए दस्तावेज अर्थात अपर कलक्टर का रिपोर्ट केवल इस तथ्य को दोहराता है कि

उक्त भूमि की लगान रसीद जारी करने का आदेश पहली बार वर्ष 1984 में जारी किया गया है जिसमें वर्ष 1981 के प्रभाव से लगान रसीद जारी की गयी है, पूर्वोक्त दस्तावेज और यह तथ्य कि भूमि खतियान में 'झाड़ी' के रूप में दर्शायी गयी गैरमजरूआ भूमि थी और बिहार भूसुधार अधिनियम के अधीन निहित किए जाने के समय पर जमींदार द्वारा दाखिल रिटर्न को दर्शाता दस्तावेज नहीं है, केवल यह छवि छोड़ता है कि याची द्वारा विश्वास किए गए सामग्री विश्वास उत्पन्न नहीं करते हैं कि याची के पास प्रश्नगत संपत्ति पर अधिकार, हक एवं स्वामित्व का वैध दावा है। विवाद्यक का तथ्य का प्रश्न होने के नाते यह न्यायालय सी॰ सी॰ एल॰ द्वारा अर्जित कही गयी उक्त भूमि के मुआवजा के लिए याची द्वारा इप्सित परमादेश रिट जारी करने को विवश है।

7. यहाँ उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं इस रिट आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ।

8. किंतु, याची के अधिवक्ता अपनी शिकायत दूर करवाने के लिए विधि में उपलब्ध समुचित फोरम के पास जाने की स्वतंत्रता इप्सित करते हैं।

9. स्वतंत्रता प्रदान की जाती है। तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; Mh॰ ,u॰ iVy ,o ç'kkUr dekj] U;k;efrx.k

लखीराम महतो

cuke

झारखंड राज्य

I.A. (Cr.) No. 77 of 2012 in Cr. Appeal (DB) No. 809 of 2004. Decided on 4th December, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—हत्या–दोषसिद्धि–दंडादेश के निलंबन के लिए आवेदन–दांडिक अपील लंबित–अपीलार्थी-अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है–पूर्व में, अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए दो बार की गयी प्रार्थना उच्च न्यायालय द्वारा अनुज्ञात नहीं की गयी थी–यह तीसरा प्रयास है और दंडादेश के निलंबन के लिए पूर्विक प्रार्थना अस्वीकार किए जाने के बाद समय बीतने के सिवाए परिस्थिति में कोई भी परिवर्तन नहीं हुआ है–अभिलेख पर साक्ष्य, अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसमें अपीलार्थी-अभियुक्त अपराध में अंतर्ग्रस्त है जैसा अभियोजन द्वारा अभिकथित किया गया है को देखते हुए न्यायालय दंडादेश को निलंबित करने का इच्छुक नहीं है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 2 एवं 3)

अधिवक्तागण.–Mr. A. K. Sahani, For the Appellant; A.P.P., For the State.

आदेश

वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन सत्र विचारण सं॰ 394 वर्ष 1986 में अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ III, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 27 मार्च, 2004 के आदेश जिसके द्वारा अपीलार्थी को मुख्यत: भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दंडित किया गया है के तहत अपीलार्थी जो मूल अभियुक्त सं॰ 2 है को अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए दाखिल किया गया है।

2. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख पर साक्ष्य को देखते हुए प्रतीत होता है कि अपीलार्थी–अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर साक्ष्य का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि:–

(i) çkFkfedh rjUr nt dh x;h g vkj vihykFkh dk çkFkfedh e ukfer fd;k x;k gA ?kVuk fnukd 18 vfçy] 1986 dk ikr% yxHkx 6 ct gb Fkh vkj mlh fnu çkFkfedh nt dh x;h gA

(ii) vfHk;ktu dk ekeyk ,d l vfèkd p'enhn xokgk ij vkèkkfjr g tk v0 lk0 1, v0 lk0 2 vkj v0 lk0 3 g vkj viu vfHklk{; e mUgku vihykFkh&vfHk;Dr }kjk fuHkk;h x;h Hkfedk dk Li"V fooj.k fn;k gA

(iii) bld vfrfjDr] v0 lk0 3 tk ?kk;y p'enhn xokg g vkj ftldh migfr iek.ki= MkDVj }kjk fn, x, fpfdRlh; lk{; }kjk igy gh fl) dh x;h g] bl pj.k ij bl ?kk;y p'enhn xokg ij vfo'okl dju dk dkj.k ugh gA

(iv) p'enhn xokg }kjk fn;k x;k vfHklk{; MkO foukn dekj (v0 lk0 7) ftUgku erd dk 'ko ijh{k.k fd;k g }kjk fn, x, vfHklk{; l i;kIr lif"V ikrk gA

3. अभिलेख पर पूर्वोक्त साक्ष्य के समेकित प्रभाव के कारण, अपीलार्थी–अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है। इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के पहले दो बार की गयी प्रार्थना इस न्यायालय द्वारा अनुज्ञात नहीं की गयी है। यह तीसरा प्रयास है और दंडादेश के निलंबन के लिए पूर्विक प्रार्थना को अस्वीकार किए जाने के बाद समय बीतने के सिवाए परिस्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। अभिलेख पर साक्ष्य, अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसमें अपीलार्थी अभियुक्त अपराध में अंतर्ग्रस्त रहा है जैसा अभियोजन द्वारा अधिकथित किया गया है को देखते हुए हम विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं। अत: यह आई॰ ए॰ एतद् द्वारा खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t;k jk;] U;k;efr

टाटा स्टील लिमिटेड (सभी में)

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य (सभी में)

W.P.T. Nos. 645, 656, 658 of 2007. Decided on 8th November, 2012.

बिहार विद्युत शुल्क अधिनियम, 1948—धारा 9(A)—बिहार विद्युत शुल्क नियमावली, 1949—नियम 14 (4)—पूरा किए गए निर्धारण का पुनः खोला जाना–ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जहाँ शुल्क से बचने के आधार पर प्राधिकारी पुनर्विलोकन अधिकारिता का प्रयोग अथवा निर्धारण का पुनरीक्षण कर सकता था–सहायक आयुक्त का आदेश आयुक्त द्वारा पुनरीक्षित किया जा सकता था और उपायुक्त द्वारा पारित आदेश संयुक्त आयुक्त द्वारा पुनरीक्षित किया जा सकता था और संयुक्त उपायुक्त का आदेश आयुक्त द्वारा पुनरीक्षित किया जा सकता था

और आयुक्त द्वारा पारित आदेश अधिकरण द्वारा पुनरीक्षित किया जा सकता था–निम्नतर प्राधिकारी (वाणिज्यिक कर अधिकारी) द्वारा पुनरीक्षण आदेश पारित नहीं किया जा सकता था–इसके अतिरिक्त, मूल आदेश की तिथि से 12 माह की अवधि के परे आदेशों को पारित किया गया है और राजस्व द्वारा अभिलेख पर कोई सामग्री नहीं रखी गयी है कि पुनरीक्षित निर्धारण पारित करने के पहले आयुक्त की कोई पूर्विक मंजूरी प्राप्त की गयी है–परिसीमा की अवधि के परे पारित पुनर्निर्धारण आदेश अथवा पुनरीक्षित निर्धारण आदेश अपास्त किए जाने योग्य है–पुनरीक्षित निर्धारण आदेश अभिखंडित। (पैराएँ 12 से 15)

निर्णयज विधि.–2012 (3) JLJR 399—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s M. S. Mittal, A.R. Choudhary, For the Petitioner; Dr. S.K.Verma, For the Respondents Nos. 1 to 8; M/s S. B. Gadodia, Rakesh Kumar Sahi, For the Respondent No. 9.

आदेश

इन तीन रिट याचिकाओं को वाणिज्य कर अधिकारी, रामगढ़ अंचल, रामगढ़ द्वारा पारित दिनांक 24.11.2006 के तीन विभिन्न आदेशों को चुनौती देने के लिए दाखिल किया गया है जिनके द्वारा वाणिज्य कर अधिकारी ने तीन निर्धारण आदेशों, जो 1998-99, 1999-2000 और 2000-2001 के निर्धारण आदेश हैं, के संबंध में दिनांक 16.2.2004 के मूल निर्धारण आदेशों को पुनरीक्षित किया।

2. तथ्य सदृश हैं और विवादित नहीं हैं। उक्त निर्धारण वर्षों के मूल निर्धारण आदेशों को सहायक आयुक्त, वाणिज्य कर, हजारीबाग अंचल द्वारा दिनांक 16.2.2004 को बिहार विद्युत शुल्क अधिनियम, 1948 और बिहार विद्युत शुल्क नियमावली, 1949 जैसा झारखंड राज्य द्वारा अपनाया गया है, के अधीन पारित किया गया था जिनकी प्रतियों को रिट याची द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत किया गया है।

3. याची ने अनेक आधारों को उठाया और अनेक आधारों पर याची से विद्युत शुल्क की मांग और वसूली के लिए राज्य सरकार के प्राधिकार को चुनौती भी दिया। उन विवाद्यकों को इस न्यायालय की खंड पीठ द्वारा रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (टी॰) सं॰ 6163 वर्ष 2007 में दिनांक 11.1.2007 के निर्णय एवं W.P. (T) No.-6163 वर्ष 2007 में पारित दिनांक 11.11.2007 के उक्त खंडपीठ के निर्णय में दिए गए फैसले के अनुसरण में, याची की रिट याचिकाएँ डब्ल्यू॰ पी॰ (टी॰) सं॰ 645 वर्ष 2007, 656 वर्ष 2007 और 658 वर्ष 2007 को दिनांक 11.1.2007 के पूर्वोक्त निर्णय के निबंधनानुसार दिनांक 14.2.2007 के आदेश द्वारा अनुज्ञात किया गया था।

4. डब्ल्यू॰ पी॰ (टी॰) सं॰ 6163 वर्ष 2007 में पारित दिनांक 11.1.2007 के उक्त निर्णय को **सिविल अपील सं॰ 3450 वर्ष 2008 (झारखंड राज्य एवं अन्य बनाम अतिवीर हाइटेक प्रा॰ लि॰, गिरिडीह एवं एक अन्य)** और संबंधित सिविल अपीलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गयी थी। उन अपीलों को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 30.4.2008 के आदेश के तहत अनुज्ञात किया गया था और अनेक विवाद्यकों को विनिश्चित करने के लिए मामला इस न्यायालय के पास वापस भेज दिया गया था। प्रतीत होता है कि याची प्रदान किए गए अनुतोष से पूर्णतः संतुष्ट नहीं होने के कारण माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष सिविल अपील सं॰ 3457 वर्ष 2008 दाखिल किया जिसे सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 10 अप्रिल, 2008 को पृथक रूप से विनिश्चित किया गया था और दो विवाद्यकों जिनको हम प्रासंगिक स्थान पर उद्धृत करेंगे, को विनिश्चित करने के लिए मामले को इस न्यायालय के पास वापस भेज दिया गया था।

5. मामले के अनेक पहलूओं पर विचार करने के बाद इस न्यायालय की खंडपीठ (हमने) **मेसर्स अनजाने फेरो एल्वाय लि॰ एवं अन्य बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य,** 2012 (3) JLJR 399, में उन रिट याचिकाओं को विनिश्चित किया। उक्त निर्णय में अभिनिर्धारित किया गया है कि:–

(I) nkeknj oyh fuxe fcgkj fo|r 'kYd vfèkfu;e] 1948 vkj fu;ekoyh] 1949 d vèkhu ykbl lh ugh Fkh(

(II) nkeknj oyh fuxe fuèkkfjfr Fkk vkj fu;ekoyh] 1949 d fu;e 2(b) e nh x;h fuèkkfjfr dh ifjHkk"kk d vèkhu vkPNkfnr Fkk(

(III) ;kph difu;k u rk ykbl lh g vkj u gh fuèkkfjrh cfYd mUgku fcgkj fo|r 'kYd fu;ekoyh] 1949 d vè;k; II d vèkhu jftLV'ku çkIr fd;kA mudk jftLV'ku fdlh dke dk ugh gA mUgku fofèk d Hke vFkok xyr lykg d vèkhu jftLV'ku çkIr fd;k Fkk fdr og mudk fu;ekoyh] 1949 d vèkhu jftLVM fuèkkfjrh ugh cuk,xk(

(IV) jkT; ljdkj dk fjV ;kfp;k l fo|r 'kYd oly dju dk vfèkdkj ugh g tk nkeknj oyh fuxe d miHkkDrk g vkj tk Lo; viu mi;kx d fy, MhO ohO lhO l fo|r çkIr dj jg g(

(V) ;kphx.k dk fo|r 'kYd d fy, fuèkkj.k vkj iufuèkkj.k d vè;èkhu ugh fd;k tk ldrk gA vr% fuèkkj.k vkn'k] iufuèkkj.k vFkok fuèkkj.k dk [kkyu dh dkb dk;okgh] tk yfcr g] vfHk[kfMr dh tkrh gA fo|r 'kYd d fy, bu ;kphx.k d fo#) jkT; ljdkj }kjk dh x;h ekx vFkok fcy Hkh vfHk[kfMr fd, tkr gA

(VI) fo|r vfèkfu;e] 2003 d çHkko e vku d ckn MhO ohO lhO MhEM ykbl lh g vkj o"k 2003 d vfèkfu;e d dkj.k ;kphx.k dh gfl;r fuèkkfjrh l xj&fuèkkfjrh e ifjofrr ugh gb gA

(VII) o"k 1948 dh èkkjk 4 dk l'kkèku dju oky >kj[kM fo|r 'kYd (l'kkèku) vfèkfu;e] 2011 dh èkkjk 5 eueuh ?kkf"kr dh tkrh g D;kfd ;g fo|r 'kYd d Hkxrku d fy, fo|r d foØrk vFkok miHkkDrk dk viuh bPNkul kj puu dh 'kfDr jkT; ljdkj dk nrh g vkj o"k 1948 dh èkkjk 4 dk l'kkèku dju okyh o"k 2011 d vfèkfu;e dh èkkjk 5 vdj.kh; g] vjktd fLFkfr lftr dj ldrh g] ykd fgr d fo#) cuk;h x;h g] vr%] bl vfèkdkjkrhr vkj voèk ?kkf"kr fd;k tk,A

6. दिनांक 21.9.2012 के आदेश के तहत उक्त निर्णय पुनर्विलोकित किया गया था और अभिनिर्धारित किया गया था कि दिनांक 3 अप्रिल, 2012 का निर्णय उस सीमा तक पुनर्विलोकित किया जाता है और दिनांक 3 अप्रिल, 2012 के निर्णय के पैराग्राफ 64 के खंड V में दिया गया निर्णय भविष्यलक्षी प्रभाव से प्रवर्तित घोषित किया जाता है, तद्द्वारा जिसका अर्थ है कि निर्धारण, पुनर्निर्धारण अथवा निर्धारण खोलने की कोई कार्यवाही (यदि हो), जिसे याचीगण के लिए दिनांक 3 अप्रिल, 2012 के बाद आरंभ किया गया है, अभिखंडित रहेगी और दिनांक 3 अप्रिल, 2012 के बाद विद्युत शुल्क की ओर याचीगण के विरुद्ध राज्य सरकार द्वारा दिया गया बिल अथवा की गयी मांग भी अभिखंडित की जाती है। दिनांक 3 अप्रिल, 2012 के निर्णय का प्रभाव दिनांक 3 अप्रिल, 2012 से भविष्यलक्षी प्रभाव का होगा।

7. उक्त निर्दिष्ट दो निर्णयों की दृष्टि में इन रिट याचिकाओं में अन्य विवाद्यक शेष नहीं बने रहते हैं। किंतु याची की स्वयं सिविल अपील सं॰ 3457 वर्ष 2008 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने याची को निम्नलिखित दो प्रश्नों को उठाने की अनुमति दी जिसे माननीय सर्वोच्च न्यायालय के दिनांक 30.4.2008 के आदेश में उल्लिखित किया गया है:–

(a) D;k fcgkj fo|r 'kYd vfèkfu;e] 1948 d çkoèkkuk d vèkhu ijk fd, tk pd fuèkkj.k dk iu% [kkyu d fy, foHkkx gdnkj Fkk(vkj

(b) D;k VkVk LVhy fy0 (oreku vihykFkh) mDr 1948 vfèkfu;e d vèkhu fuèkkfjrh gA

8. जैसा हमने पहले ही गौर किया है, प्रश्न सं॰ 2 का उत्तर उक्त निर्णय और पुनर्विलोकन आदेश द्वारा दिया जा चुका है। अत:, हमारे समक्ष विनिश्चय के लिए विद्यमान एकमात्र प्रश्न यह है कि क्या बिहार विद्युत शुल्क अधिनियम, 1948 के प्रावधान के अधीन पूरा किए जा चुके निर्धारण को पुन: खोलने के लिए विभाग हकदार था।

9. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि स्वीकृत रूप से मूल निर्धारण दिनांक 16.2.2004 को किए गए थे और इस प्रकार, निर्धारण आदेशों, यदि उनका पुनरीक्षण किया जा सकता था, को एक वर्ष की अवधि के भीतर और उसके परे बिहार विद्युत शुल्क नियमावली, 1949 के नियम 14 (a) के उपनियम 10 के मुताबिक आदेश में लिखित में दर्ज आयुक्त की पूर्व मंजूरी प्राप्त करने के बाद पुनरीक्षित किया जा सकता था। यह निवेदन भी किया गया है कि पदोत्तरवर्ती भी, जिसने आदेश पारित किया है, नियमावली, 1949 के नियम 14 के उपनियम 11 के मुताबिक आयुक्त की पूर्व मंजूरी के बिना निर्धारण आदेश पुनरीक्षित करने के लिए सक्षम नहीं था जबकि इन मामलों में निम्नतर प्राधिकारी ने उच्चतर प्राधिकारी के निर्धारण आदेशों का पुनरीक्षण अथवा पुनर्विलोकन किया है। यह निवेदन भी किया गया है कि प्रत्यर्थीगण ने उत्तर में निवेदन किया है कि इन तीनों रिट याचिकाओं में चुनौती के अधीन दिनांक 24.11.2006 के आदेश पुनर्विलोकन के आदेश हैं। निवेदन किया गया है कि नियम 14 प्रावधानित करता है कि जो कोई भी प्राधिकारी हो सकता है, वह आदेश का पुनर्विलोकन अथवा पुनरीक्षण कर सकता है और नियम 14 के उपनियम 4 के अधीन अनेक खंडों की दृष्टि में निर्धारिती के मामलों में पारित निर्धारण आदेशों को उस प्राधिकारी जिसने मूल आदेशों को पारित किया है के नीचे की श्रेणी का प्राधिकारी द्वारा पुनरीक्षित अथवा पुनर्विलोकित नहीं किया जा सकता था। बिहार विद्युत शुल्क अधिनियम, 1948 की धारा 9 (A) की उपधारा (4) के मुताबिक, पुनर्विलोकन का कोई आदेश केवल प्राधिकारी अथवा उसके पदोत्तरवर्ती द्वारा, किंतु उस अधिकारी जिसने मूल आदेश पारित किया है के श्रेणी के नीचे के किसी प्राधिकारी द्वारा नहीं, पारित किया जा सकता है।

10. सारत: याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रथमत: अधिकारिताहीन प्राधिकारी द्वारा पुनर्विलोकन आदेश पारित किया गया है जो मूल निर्धारण आदेशों को पुनर्विलोकित करने के लिए सक्षम नहीं था और द्वितीयत:, पुनर्विलोकन आदेशों को 12 माह की अवधि के परे पारित किया गया है जिन्हें केवल उपायुक्त द्वारा लिखित में पूर्व मंजूरी प्राप्त करने के बाद सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित किया जा सकता था जिसे प्राप्त नहीं किया गया है। अत:, पुनर्विलोकन आदेश पूर्णत: अधिकारिताहीन है और अपास्त किए जाने योग्य हैं।

11. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यह विद्युत शुल्क से बच निकलने का मामला है, अत: आक्षेपित आदेशों को पारित किया गया हैं। यह निवेदन भी किया गया है कि लेखा परीक्षा आपत्ति थी और चूँकि कर उद्ग्रहण के घटक का पूर्णत: गलत आयोजन हुआ था, अत: आक्षेपित आदेशों द्वारा इसे सही किया गया है।

12. राज्य के विद्वान अधिवक्ता हमें कोई भी प्रावधान नहीं दिखा सके थे जिसके अधीन आदेश के पुनरीक्षण अथवा पुनर्विलोकन के सिवाए आदेशों को उपांतरित किया जा सकता था। ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जहाँ प्राधिकारी शुल्क से बच निकलने के आधार पर निर्धारण आदेश के पुनर्विलोकन अथवा पुनरीक्षण के लिए अधिकारिता का प्रयोग कर सकता था और आगे कि इसे अधिकारी जिसने मूल निर्धारण आदेश पारित किया है, के श्रेणी के नीचे के प्राधिकारी द्वारा किया जा सकता था।

13. ऑर्डर शीटों, जिनकी प्रतियों को रिट याचिका सं॰ 645 वर्ष 2007 के पृष्ठ 57 पर परिशिष्ट 8/1 के रूप में अभिलेख पर प्रस्तुत किया गया है, प्रकट करते हैं कि मूल निर्धारण कार्यवाही दिनांक 31.12.2003 के आदेश के तहत आरंभ की गयी थी और दिनांक 16.2.2004 के आदेश के तहत पूरी

की गयी थी। इन तीनो मामलों में इन निर्धारण आदेशों को सहायक आयुक्त, वाणिज्य कर द्वारा पारित किया गया था। ऑर्डरशीट के उसी पृष्ठ पर दिनांक 18.7.2006 को उल्लिखित किया गया है कि लेखा परीक्षा आपत्ति की गयी है और लेखा परीक्षा आपत्ति दूर करने के लिए निर्धारिती को नोटिस दिया जाए। इस ऑर्डरशीट के अधीन, उपायुक्त के प्राधिकार का उल्लेख है किंतु इसे काट दिया गया था और तब इस पर वाणिज्य कर अधिकारी द्वारा हस्ताक्षर किया गया था। उसने आगे कार्यवाही की तथा दिनांक 24.11.2006 का निर्धारण आदेश संशोधित किया। अतः, यह स्पष्ट है कि मूल निर्धारण आदेशों को सहायक आयुक्त, वाणिज्य कर द्वारा पारित किया गया था और उनको अधिक्रम में निम्नतर अधिकारी अर्थात् वाणिज्य कर अधिकारी द्वारा पुनरीक्षित किया गया है। यदि ये पुनर्विलोकन के आदेश थे, तब इन्हें केवल उस प्राधिकारी द्वारा पारित किया जा सकता था जिसने आदेशों को पारित किया है। वर्ष 1948 के अधिनियम की धारा 9(A) की उपधारा (4) के मुताबिक, यदि यह मूल आदेश के पुनरीक्षण का आदेश है, तब वर्ष 1948 के अधिनियम के अधीन विरचित नियमावली, 1949 के नियम 14 के उपनियम 4 के मुताबिक, सहायक आयुक्त के मूल आदेश को उपायुक्त द्वारा पुनरीक्षित किया जा सकता था। उपायुक्त द्वारा पारित आदेश के संयुक्त आयुक्त द्वारा पुनरीक्षित किया जा सकता था और संयुक्त आयुक्त के आदेश को आयुक्त द्वारा पुनरीक्षित किया जा सकता था और आयुक्त द्वारा पारित आदेश को अधिकरण द्वारा पुनरीक्षित किया जा सकता था। अतः, पुनरीक्षण आदेश निम्नतर प्राधिकारी द्वारा पारित नहीं किया जा सकता था जैसा इस मामले में किया गया है। दिनांक 24.11.2006 के आक्षेपित आदेशों में उल्लिखित किया गया है कि ये पुनरीक्षित निर्धारण आदेश हैं, अतः नियम 14 के उपनियम 4 की दृष्टि में आदेश उस प्राधिकारी द्वारा पारित किए गए हैं जिसको पुनरीक्षित आदेश पारित करने की अधिकारिता नहीं है। अतः, इस आधार पर, चुनौती के अधीन आदेश पूर्णतः अधिकारिताहीन हैं।

14. आदेशों को मूल आदेश की तिथि से 12 माह की अवधि के परे पारित किया गया है और राजस्व द्वारा अभिलेख पर कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की गयी है कि पुनरीक्षित निर्धारण आदेश को पारित करने के पहले लिखित में आयुक्त की किसी पूर्व मंजूरी को प्राप्त किया गया है। अतः, पुनर्निर्धारण आदेश अथवा पुनरीक्षित आदेश जो परिसीमा की अवधि के परे पारित किए गए हैं, अपास्त किए जाने योग्य हैं।

15. उक्त कारणों की दृष्टि में, 1998-99, 1999-2000 और 2000-2001 के लिए दिनांक 24.11.2006 के पुनरीक्षित निर्धारण आदेश को अपास्त और अभिखंडित किया जाता है। वर्तमान रिट याचिका में याची ने डी॰ वी॰ सी॰ से सरचार्ज राशि की वापसी का अनुतोष इप्सित किया और, इसलिए, डी॰ वी॰ सी॰ को उस रिट याचिका में पक्ष बनाया गया था। याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची अब वर्तमान में उस बिंदु पर जोर नहीं दे रहा है और, इसलिए, रिट याचिकाएं उस सीमा तक अनुज्ञात की जाती हैं और दिनांक 24.11.2006 के आदेश को अपास्त किया जाता है।

व्यय को लेकर कोई आदेश नहीं है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o ç'kkUr dekj] U;k;efrx.k

श्रीपत मरांडी उर्फ श्रीपति मरांडी एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal(DB) No. 883 of 2012. Decided on 10th December, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/149 एवं 148—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—हत्या—सामान्य उद्देश्य—दोषसिद्धि—दंडादेश के निलंबन के लिए आवेदन—अभिलेख पर साक्ष्यों और मृतक द्वारा प्राप्त उपहतियों और अनेक चश्मदीद गवाहों द्वारा दिये गये घटना का पूरा विवरण की दृष्टि में, आधा दर्जन चश्मदीद गवाहों द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्यों का चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा पर्याप्त संपुष्टिकरण मिलता है—अभिलेख पर प्रथम दृष्टया साक्ष्य मौजूद होने की दृष्टि में और अभिलेख पर अन्य साक्ष्यों द्वारा पर्याप्त संपुष्टिकरण तथा अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसमें अपीलार्थीगण अपराध में अंतर्ग्रस्त हैं, को देखते हुए न्यायालय अपीलार्थीगण को अधिनिर्णीत दंडादेशों को निलंबित करने का इच्छुक नहीं है—दंडादेश के निलंबन के लिए प्रार्थना अस्वीकृत। (पैराएँ 6 से 12)

निर्णयज विधि.—AIR 2008 S.C. 1882; (2002)9 SCC 366;(2004)6 SCC 175; (2008)11 SCC 180—Relied on.

अधिवक्तागण.—Mr. Mahesh Tewari, For the Appellants; Mr.Ravi Prakash, For the Respondent.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.—दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर यह दांडिक अपील ग्रहण की गयी है।

2. सत्र मामला सं॰ 172 वर्ष 2007 के अभिलेख और कार्यवाही को इस न्यायालय द्वारा एक अन्य दांडिक अपील सं॰ 653 वर्ष 2012 में पहले ही मंगाया गया है जिसे मूल अभियुक्त सं॰1 द्वारा दाखिल किया गया है जबकि वर्तमान अपील पूर्वोक्त सत्र मामला में शेष अभियुक्त द्वारा दाखिल की गयी है।

3. वर्तमान अपीलार्थीगण जो मूल अभियुक्त सं॰ 2 से 9 है को सत्र मामला सं॰ 172 वर्ष 2007 में मुख्यत: भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सह-पठित भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 149 और 148 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया है और आजीवन कारावास और 5000/- रुपयों के जुर्माना और जुर्माना के भुगतान के व्यतिक्रम में एक वर्ष के सामान्य कारावास का दंडादेश दिया गया है।

4. हमने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन अपीलार्थीगण के दंडादेश के निलंबन के लिए दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुना है। एस॰ सी॰ सं॰ 172 वर्ष 2007 के अभिलेख और कार्यवाही को पहले ही दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 653 वर्ष 2012 में मंगाया गया है। दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 653 वर्ष 2012 के कागजात भी आज इस दांडिक अपील के साथ अभिलेख पर हैं।

5. हमने सत्र केस सं॰ 172 वर्ष 2007 के अभिलेख और कार्यवाही का परिशीलन किया है और अभिलेख पर साक्ष्य को देखते हुए अपीलार्थीगण-अभियुक्तगण के विरूद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि अभियोजन का मामला अनेक चश्मदीद गवाहों पर आधारित है जो अ॰ सा॰ 1,अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 4, अ॰ सा॰ 5 और अ॰ सा॰ 7 है। इन चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्यों को देखते हुए, उन्होंने वर्तमान अपीलार्थीगण अभियुक्तगण द्वारा निभायी गयी भूमिका का स्पष्ट विवरण दिया है। इसके अतिरिक्त, इन चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 6, जिन्होंने चिकित्सीय साक्ष्य दिया है और मृतक का शव परीक्षण किया है, द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य से पर्याप्त संपुष्टि पाते हैं।

6. अपीलार्थीगण के अधिवक्ता ने विस्तारपूर्वक मामले पर तर्क किया है और इंगित किया है कि तथा कथित चश्मदीद गवाह अ॰ सा॰ 7 चश्मदीद गवाह नहीं है। मृतक के शरीर पर केवल चार उपहतियाँ

हैं, इस प्रकार, यह चश्मदीद गवाहों का अतिशयोक्तिपूर्ण मामला है क्योंकि एक से अधिक घटना स्थल है और चश्ममीद गवाह मृतक से संबंधित गवाह हैं। अपीलार्थीगण के अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अ॰ सा॰ 6 द्वारा दिया गया साक्ष्य समस्त चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य को झुठलाता है। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, अत: हम अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि चूँकि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 149 के अधीन आरोप है, यह आवश्यक नहीं है कि सबों को मृतक पर उपहति कारित करने में भागीदार होना ही होगा। जब एकबार वे विधि विरूद्ध जमाव का अभिन्न अंग बनते हैं और उनमें से कुछ ने पहले ही उपहतियों को कारित किया है जिसका परिणाम मृतक की मृत्यु में हुआ है, विधि विरूद्ध जमाव के समस्त व्यक्तियों के विरूद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 सहपठित धारा 149 के अधीन आरोप सिद्ध करने के लिए यह पर्याप्त है। अपीलार्थीगण के अधिवक्ता द्वारा किया गया प्रतिवाद यह है कि चाक्षुक और चिकित्सीय साक्ष्य के बीच अंतर है, किंतु हम इस तर्क को मुख्यत: इस कारण से स्वीकार नहीं कर रहे हैं कि अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को और मृतक द्वारा प्राप्त की गयी उपहतियों को देखते हुए और अनेक चश्मदीद गवाहों द्वारा दिए गए संपूर्ण घटना के विवरण को भी देखते हुए इसके विपरीत लगभग आधा दर्जन गवाहों द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्यों का चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा पर्याप्त संपुष्टिकरण मिलता है। अभिलेख पर इस प्रथम दृष्टया साक्ष्य को देखते हुए और अभिलेख पर अन्य साक्ष्यों द्वारा इसके पर्याप्त संपुष्टिकरण पर और अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसमें अपीलार्थीगण अपराध में अंतर्ग्रस्त हैं, को देखते हुए हम अपीलार्थीगण को अधिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं है। इसके अतिरिक्त, दांडिक अपील सं॰ 653 वर्ष 2012 में, अपील ग्रहण की गयी थी जिसे मूल अभियुक्त सं॰ 1 द्वारा दाखिल किया गया था और दंडादेश के निलंबन की उसकी प्रार्थना को भी इस न्यायालय द्वारा दिनांक 8.8.2012 के आदेश के तहत अस्वीकार किया गया था, हम सत्र केस सं॰ 172 वर्ष 2007 में विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थीगण को अधिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं।

7. खिलाड़ी बनाम उ॰ प्र॰ राज्य एवं एक अन्य, AIR 2008 SC 1882 में, विशेषत: पैराग्राफ 10 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *^^10. vuojh cxe cuke 'kj ekgEen ,o ,d vU;] 2005(7) SCC 326, e vU; ckrk d lkFk fuEufyf[kr lçf{kr fd;k x;k g%*
>
> *^^7. mPp U;k;ky; d vkn'k dk ljlj rkj ij ifj'khyu Hkh food dk bLreky ugh fd;k tkuk n'kkrk gA tekur vkonuk ij vkn'kk dk ikfjr djr g, bl U;k;ky; dk lk{; d foLrkjiod ijh{k.k vkj ekey d x.kkx.kk d foLrr nLrkoth dj.k l cpuk gkrk g] fQj Hkh tekur vkonu ij fopkj djr g, U;k;ky; dk lr"V gkuk pkfg, fd D;k çFke n"V;k ekeyk curk g fdr ekey d x.kkx.kk dk lokxh.k lo{k.k vko';d ugh gA tekur d vkonu ij fopkj djr g, U;k;ky; dk U;k;kfpr rjhd l vkj u fd lkekU;r% viu Lofood dk ç;kx dju dh vko';drk gA*
>
> *8. çFke n"V;k ,l fu"df"kr dju d dkj.kk dk vkn'k e minf'kr dju dh vko';drk g fd D;k tekur çnku fd;k tk jgk g tgk vfHk;Dr ij xHkhj vijkèk dk vkjki yxk;k x;k gA tekur vkonu ij fopkj dju oky U;k;ky;k dk tekur çnku dju d igy vU; ifjfLFkfr;k d lkFk fuEufyf[kr dkjdk ij fopkj dju dh vko';drk g] tk ; g%*

(1) nk"kfIf) dh fLFkfr e vkjki dh çÑfr vkj nM dh dBkjrk vkj leFkuh; lk{; dh çÑfr(

(2) xokg d lkFk NMNkM dju dh ;fDr;Dr vk'kdk vFkok ifjoknh dk èkedku dh vk'kdk(

(3) vkjki d leFku e U;k;ky; dh çFke æ"V;k lrf"V

*,l dkj.kk l vlc) dkb Hkh vkn'k food d xj&bLreky l ihfMr g tlk jkexkfon mikè;k; cuke In'ku flg] (2002)3 SCC 598; iju] vkfn cuke jke fcykl ,o ,d vU;] (2001)6 SCC 338; vkj dY;k.k pæ ljdkj cuke jkt'k jtu mQ ili ;kno ,o ,d vU;] JT 2004(3) SC 442 e bl U;k;ky; }kjk xkj fd;k x;k FkkA** (tkj fn;k x;k)*

8. रामजी प्रसाद बनाम रतन कुमार जायसवाल एवं एक अन्य, (2002)9 SCC 366, में पैराग्राफ सं॰ 3 पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

*^^3. ,l ekey e tgk vfHk;Dr dk Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 302 d vèkhu fopkj.k U;k;ky; }kjk nk"kh ik;k x;k Fkk] ,lk vkiokfnd jkLrk viuku d fy, fo}ku ,dy U;k;kèkh'k }kjk dkb dkj.k fcYdy ugh n'kk;k x;k gA ,l ekeyk e lkekU; ifjikVh nMkn'k dk fuyfcr ugh djuk g vkj doy vkiokfnd ekeyk e nMkn'k d fuycu dk ykHk çnku fd;k tk ldrk gA** (tkj fn;k x;k)*

9. हरियाणा राज्य बनाम हसमत, (2004) 6 SCC 175, में पैराग्राफ सं॰ 6 से 9 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

^^6. lfgrk dh èkkjk 389 vihy d yfcr jgr g, nMkn'k d fu"iknu d fuycu vkj vihykFkh dh tekur ij fuefDr ij fopkj djrh gA tekur vkj nMkn'k d fuycu d chp lfHkUurk gA èkkjk 389 d vko';d vo;ok e l ,d nMkn'k d fu"iknu vFkok vihy fd, x, vkn'k d fuycu dk vkn'k nu d fy, fyf[kr e dkj.kk dk nt djuk vihyh; U;k;ky; d fy, vko';d gA ;fn og ifjjkèk e g] mDr U;k;ky; fun'k n ldrk g fd ml tekur ij vFkok Lo; viu cèk i= ij fueDr fd;k tk,A fyf[kr e dkj.kk dk nt dju dh vko';drk Li"Vr% minf'kr djrh g fd çklfxd igyvk ij lkoèkkuhiod fopkj djuk gkxk vkj tekur d fuycu vkj tekur çnku dk fun'k nu okyk vkn'k :Vhu rjhd l ikfjr ugh fd;k tkuk pkfg,A

7. vihyh; U;k;ky; ekey dk oLrijd :i l fuèkkj.k dju vkj bl fu"d"k fd ekeyk nMkn'k d fu"iknu dk fuycu vkj tekur çnku dju dh vi{kk j[krk g] d fy, dkj.k nt dju d fy, drO;c) gA oreku ekey e] nMkn'k d fuycu vkj tekur çnku dju dk fun'k nu d fy, mPp U;k;ky; ij otu Mkyu okyk ,dek= dkjd vfHk;Dr çR;Fkh dk çnku fd, x, ijky dh vofèk d nkjku Lor=rk dk n:i;kx dju d vfHkdFku dh vuifLFkfr çrhr gkrk gA

8. fo}ku l= U;k;kèkh'k] xMxko u fnukd 24.10.2001 d fu.k; }kjk vfHk;Dr&çR;Fkh dk nk"kh ik;k FkkA çR;Fkh }kjk nkfMd vihy lO 100 DB o"k 2002 nkf[ky dh x;h FkhA ;g rF; fd vihy d yfcr jgu d nkjku vfHk;Dr&çR;Fkh

ijky ij Fkk] n'kkrk g fd vkjHk e vfHk;Dr&çR;Fkh dk nMkn'k d fuycu dk ykHk ugh fn;k x;k FkkA ;g rF; ek= fd ijky dh vofèk d nkjku vfHk;Dr u Lor=rk dk n:i;kx ugh fd;k g] vfuok;r% nMkn'k d fu"iknu dk fuycu vkj tekur çnku dju dh vi{kk ugh djrk gA mPp U;k;ky; }kjk fopkj fd, tku d fy, vko';d ;g Fkk fd D;k nMkn'k d fu"iknu d fuycu vkj rRi'pkr tekur çnku fd, tku d dkj.k fo|eku FkA mPp U;k;ky; lgh fl)kr dk è;ku e j[krk çrhr ugh gkrk gA

9. fot; dekj cuke ujUæ vkj jketh çlkn cuke jru dekj tk;loky e bl U;k;ky; }kjk vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd HkkO n0 l0 dh èkkjk 302 d vèkhu nk"kf lf) vrxLr dju oky ekeyk e doy vkiokfnd ekeyk e nMkn'k d fuycu dk ykHk fn;k tk ldrk gA mPp U;k;ky; dk vk{kfir vkn'k bl vko';drk dk ijk ugh djrk gA fot; dekj ekey e vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd HkkO n0 l0 dh èkkjk 302 d vèkhu nMuh; gR;k tl xHkhj vijkèk dk vrxLr dju oky ekey e tekur d fy, çkFkuk ij fopkj djr g, U;k;ky; dk vfHk;Dr d fo:) yxk, x, vfHk;kx dh çÑfr] rjhdk ftle vfHkdfFkr :i l vijkèk fd;k x;k g] vijkèk dh xHkhjrk vkj gR;k d xHkhj vijkèk dk dju d fy, mudk nk"kf l) fd, tku d ckn vfHk;Drx.k dk tekur ij fueDr dju dh okNuh;rk tl çkIfxd dkjdk ij fopkj djuk pkfg,A vk{kfir vkn'k ikfjr djr g, mPp U;k;ky; }kjk bu igyvk ij fopkj ugh fd;k x;k gA

(tkj fn;k x;k)

10. खिलाड़ी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं एक अन्य, (2008)11 SCC 180, में पैराग्राफ सं॰ 4, 6, 12 और 13 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

4. fy;k x;k ,dek= nf"Vdk.k ;g Fkk fd erd d 'kjhj ij eR; io dh migfr;k rhu dkV; tu] ,d ,cMM dkV; tu vkj 'kjhj d vud fgLlk ij fofHkUu vk;kek d pkj fonh.k t[ek dk lfEefyr djrk Fkk ftUg ykg dh NM }kjk dkfjr ugh fd;k tk ldrk FkkA mudk nf"Vdk.k Fkk fd dN vKkr geykojk u erd ij migfr;k dk dkfjr fd;k FkkA

6. ijLij fojkèkh nf"Vdk.kk ij xkj dju d ckn mPp U;k;ky; u vk{kfir vkn'k }kjk fuEufyf[kr fu"d"kk d lkFk tekur çnku fd;k%

12. m)r v'k vkj mPp U;k;ky; dk vkn'k n'kkrk g fd food dk bLreky fcYdy ugh fd;k x;k Fkk vkj çkIfxd igyvk ij fopkj ugh fd;k x;k FkkA

13. vr% vk{kfir vkn'k lik"k.kh; ugh g vkj [kkfjt fd;k tkrk gA çR;Fkh l0 2 dk çnku dh x;h tekur jnn dh tkrh gA fofèk d vu:i ekey ij u, flj l fopkj dju d fy, bl mPp U;k;ky; dk okil Hktk tkrk gA

11. अतः अपीलार्थीगण के अधिवक्ता द्वारा किया गया प्रतिवाद कि आँखों देखी साक्ष्य और चिकित्सीय साक्ष्य में अंतर है, इस चरण पर इस न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया जाता है विशेषतः जब अभियोजन का मामला अनेक चश्मदीद गवाहों पर आधारित है।

12. तद्नुसार, अपीलार्थीगण के दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना एतद्द्वारा अस्वीकार की जाती है।

ekuuh; vkjñ vkjñ ilkn] U;k;efr

स्वामी महिमानंद सरस्वती उर्फ स्वामी दयानंद सरस्वती

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 1848 of 2011. Decided on 2nd January, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 406— दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक उल्लंघन—संज्ञान—फ्लैट की खरीद का समझौता—समझौते के समय फ्लैटों के कब्जा सुपुर्द करने का याची द्वारा किया गया वादा पूरा नहीं किया गया था—अभिकथित उपहति सिविल दावे का आधार गठित कर सकती है तथा दांडिक विधि के अधीन उपलब्ध किसी अपराध का अवयव भी गठित कर सकती है—याची को कपटपूर्ण रूप से उस राशि का दुर्विनियोग करने वाला नहीं कहा जा सकता जिसे समझौते के समय याची को दिया गया था और न ही याची ने अभिकथित रूप से समझौते के उल्लंघन में उस सम्पत्ति का निस्तारन किया है—याची ने न्यास के दांडिक उल्लंघन का अपराध कारित नहीं किया है—संज्ञान का आदेश निरस्त—आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 9, 10, 13 एवं 14)

अधिवक्तागण.—Mr. Indrajit Sinha, For the Petitioner; A.P.P., For the State; M/s Sanjay Prasad, Kamdeo Pandey, For the O.P. No.2.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता तथा राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता एवं विपक्षी सं॰ 2 की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता को भी सुना।

2. बगोदर पुलिस थाना केस सं॰ 227 वर्ष 2010 में तत्कालीन मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, गिरिडिह द्वारा पारित दिनांक 12.10.2011 के आदेश को निरस्त करने के लिए आवेदन दाखिल किया गया है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन भारतीय दंड संहिता की धारा 406 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान याची के विरुद्ध लिया गया है।

3. यह परिवाद याचिका से प्रतीत होता है, परिवादी का मामला यह है कि याची ने आनंद भवन आश्रम, सरिया का महासचिव होने के नाते आनंद भवन आश्रम के निवासी सदस्यों को एक अपार्टमेंट बेचने के लिए इसका निर्माण करवाया था। परिवादी ने अपने लिए 2,50.000/- रुपये की एक प्रतिफल राशि के लिए इसी के ही फ्लैटों में से एक को खरीदने का एक समझौता किया था। इसी प्रकार एक अन्य गवाह, अर्थात्, माधव कृष्णा घोष मौलिक ने भी इतनी ही प्रतिफल राशि पर एक फ्लैट खरीदने का एक समझौता किया था जिनका परिवादी तथा पूर्वोक्त गवाह द्वारा भी भुगतान कर दिया गया था। समझौते के अधीन यह अनुबद्ध किया गया था जैसे ही निर्माण कार्य पूरा होगा, फ्लैट उनके हवाले कर दिये जाएंगे। परन्तु इसके समापन के उपरांत भी फ्लैटों का कब्जा नहीं दिया गया था इस बहाने पर कि कोई और अधिक ऊंची कीमत पर फ्लैट को खरीदने सामने आया है तथा तद् द्वारा यह अभिकथित किया गया है कि याची ने न्यास का दांडिक उल्लंघन कारित किया है। ऐसे अभिकथन पर, परिवाद केस सं॰ 1496 वर्ष 2010 के तौर पर एक मामला दर्ज किया गया था जिसमें याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 406 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया था जो चुनौती के अधीन है।

4. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री इंद्रजीत सिन्हा निवेदन करते हैं कि यह सही है कि परिवादी तथा गवाह ने याची के साथ एक समझौता किया था जिसके द्वारा इस पर सहमति बनी थी कि अपार्टमेंट के निर्माण के उपरांत, फ्लैटों का कब्जा परिवादी को तथा गवाह को 2,50,000 रुपये की एक प्रतिफल राशि पर दे दिया जाएगा, परन्तु चूंकि निर्माण सामग्री का मूल्य बढ़ गया था, अपार्टमेंट का मूल्य भी बढ़ गया था और अतएव, परिवादी तथा गवाहों को और भुगतान करने को कहा गया था परन्तु वे भुगतान करने में विफल रहे थे और इसके बाद इस अभिकथन पर मामला दर्ज कर दिया था कि याची फ्लैटों का कब्जा प्रदान करने में विफल रहा है और तद्द्वारा उसने न्यास के दांडिक उल्लंघन का एक अपराध कारित किया है यद्यपि यह केवल न्यास के उल्लंघन का एक मामला है जिसका उपचार कहीं और मौजूद है।

5. इस संबंध में, यह भी निवेदन किया गया है कि जब याची ने अग्रिम जमानत के लिए आवेदन दिया था, परिवादी को फ्लैटों में से किसी एक फ्लैट का कब्जा सौंप देने की शर्त अधिरोपित करते हुए याची को जमानत प्रदान कर दी गयी थी तथा न्यायालय द्वारा पारित आदेश के निबंधनों में फ्लैटों में से एक का कब्जा परिवादी को प्रदान कर दिया गया था।

6. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि समूचे अभिकथन को सत्य स्वीकार करने पर भी, भा॰दं॰सं॰ की धारा 406 के अधीन कोई अपराध नहीं बनता है क्योंकि याची ने अभिकथित रूप से कभी भी कपटपूर्ण तरीके से राशि का दुर्विनियोग नहीं किया है या राशि को अपने इस्तेमाल के लिए सम्परिवर्तित कर लिया है या याची ने समझौते के उल्लंघन में कपटपूर्ण रूप से सम्पत्ति का निस्तारण कर लिया है और तद्द्वारा संज्ञान लेने वाला आदेश निरस्त किये जाने योग्य है।

7. इसके विरुद्ध, विपक्षी सं॰ 2 की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि परिवादी तथा एक गवाह ने भी याची के साथ एक समझौता किया था जिसके द्वारा याची ने 2,50,000/– रुपये की प्रतिफल राशि पर उनमें से प्रत्येक को फ्लैटों का कब्जा सौंपने पर सहमति दिया था जिस राशि का उनमें से प्रत्येक द्वारा भुगतान किया गया था। इसके बावजूद, न तो परिवादी को और न ही गवाह को फ्लैटों का कब्जा दिया गया था और अतएव, परिवाद दर्ज किया गया था। चूंकि प्रतिफल राशि प्राप्त करने के बावजूद कब्जा प्रदान नहीं किया गया था, याची को निश्चित रूप से न्यास के दांडिक उल्लंघन का एक अपराध कारित करने वाला कहा जा सकता है।

8. विद्वान अधिवक्ता ने यह भी निवेदन किया कि यह सही है कि अग्रिम जमानत के आवेदन में पारित न्यायालय के आदेशाधीन, परिवादी को फ्लैट का कब्जा दिया गया है परन्तु गवाह को नहीं और अतएव, याची इस तथ्य का कोई लाभ नहीं उठा सकता कि फ्लैटों में से एक का कब्जा परिवादी को प्रदान कर दिया गया है और तद्द्वारा संज्ञान लेने वाले आदेश के साथ कभी भी हस्तक्षेप किया जाना उचित नहीं है।

9. पक्षकारों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ताओं को सुनकर, यह प्रतीत होता है कि समझौते के समय फ्लैटों का कब्जा सौंपने का याची द्वारा किया गया वादा पूरा नहीं किया गया था क्योंकि याची के अनुसार, परिवादी एवं गवाह फ्लैटों के वर्धित मूल्य का भुगतान करने में विफल रहे थे जो निर्माण कार्य सामग्रियों की कीमत बढ़ोत्तरी के कारण बढ़ गया था, यद्यपि बाद में परिवादी को फ्लैट का कब्जा प्रदान कर दिया गया है परन्तु गवाह को नहीं।

10. यह कथित किया जाता है कि जब किसी को भी उसकी सम्पत्ति या प्रतिष्ठा पर चोट पहुंचती है, उसके पास सिविल एवं दांडिक दोनों के अधीन उपचार हो सकते हैं। अभिकथित उपहति सिविल दावे के आधार का गठन कर सकती है तथा दांडिक विधि के अधीन उपलब्ध किसी अपराध के अवयव का भी गठन कर सकती है। जब पक्षकारों के बीच मूल्यवान सम्पत्तियों के अंतरण से संबंधित एक संव्यवहार से उद्भूत उनके बीच विवाद होता है, व्यथित व्यक्ति को नुकसानी या प्रतिकर के लिए मुकदमा करने का अधिकार हो सकता है और इसी समय, अगर विधि अनुमति देती है, पीड़ित न्यास के दांडिक उल्लंघन या छल करने का अपराध कारित करने के कारण दोषी के विरुद्ध कार्यवाही कर सकता है और अतएव, किसी के लिए इस संबंध में विचार करने की आवश्यकता है कि न्यास के दांडिक उल्लंघन का अपराध गठित करने के अवयव विद्यमान है या नहीं।

11. इस संबंध में, न्यास के दांडिक उल्लंघन से संबंधित भारतीय दंड संहिता की धारा 405 को ध्यान में लिया जा सकता है। जो निम्नवत् पठित है:–

> *"405. **vkijkf{kd U;kl Hkx-**&tk dkb lEifÙk ;k lEifÙk ij dkb Hkh v[kR;kj fdlh idkj viu dk U;Lr fd, tku ij ml lEifÙk dk cbekuh l nfofu;kx dj yrk g ;k ml viu mi;kx e lifjofrr dj yrk g ;k ftl idkj ,lk U;kl fuogu fd;k tkuk g] mldk fofgr dju okyh fofèk l fdlh fun'k dk] ;k ,l U;kl d fuogu d ckj e mld }kjk dh xb fdlh vfHkO;Dr ;k foof{kr oèk lfonk dk vfrØe.k djd cbekuh l ml lEifÙk dk mi;kx ;k 0;;u djrk g] ;k tkuc>dj fdlh vU; 0;fDr dk ,lk djuk lgu djrk g] og ^vkijkf{kd U;klHkx** djrk gA**"*

12. प्रावधान का अवलोकन करने पर, यह प्रतीत होता है कि अगर किसी व्यक्ति को कोई सम्पत्ति या सम्पत्ति पर कोई अधिकार सौंपा जाता है और वह कपटपूर्ण रूप से उस सम्पत्ति का दुर्विनियोग करता है या उसका अपने ही इस्तेमाल में सम्परिवर्तन कर लेता है या विधि के किसी निर्देश या किसी वैधानिक संविदा के किसी निर्देश के उल्लंघन में उस सम्पत्ति का कपटपूर्ण रूप से इस्तेमाल करता है या उसका निस्तारण करता है, उसे न्यास का दांडिक उल्लंघन कारित करनेवाला कहा जा सकता है।

13. यहां प्रस्तुत मामले में, जैसा कि ऊपर कहा गया है तथ्य के अधीन याची को उस राशि का कपटपूर्ण रूप से दुर्विनियोग करनेवाला नहीं कहा जा सकता है जिसे समझौते के समय याची को दिया गया था और न ही याची ने अभिकथित रूप से परिवादी, गवाह एवं याची के विरुद्ध हुए समझौते के उल्लंघन में उस सम्पत्ति का निस्तारण किया है और तद्द्वारा याची को न्यास के दांडिक उल्लंघन का अपराध कारित करने वाला नहीं कहा जा सकता।

14. तदनुसार, अपराध का संज्ञान लेने वाला दिनांक 12.10.2011 का आदेश एतद द्वारा निरस्त किया जाता है जहां तक यह याची से संबंधित है।

15. परिणामतः, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh;k t;k jk;] U;k;efr

प्रदीप कुमार दत्ता

cuke

CBI के माध्यम से झारखंड राज्य

Criminal Appeal (S.J.) No. 649 of 2006. Decided on 20th December, 2012.

R.C. सं॰ 6/85 (P) में अपर सत्र न्यायाधीश VIII सह–विशेष न्यायाधीश, CBI द्वारा पारित दिनांक 8.5.2006 के दोषसिद्धि के निर्णय तथा दंडादेश के विरुद्ध।

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947—धाराएँ 5(1) एवं 5(2)—भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 161—अवैधानिक परितोषण—दोषसिद्धि—स्वीकृत धन की शेष राशि विमुक्त करने के लिए रिश्वत की मांग एवं स्वीकरण—स्वीकृति प्राधिकार ने सभी सम्बद्ध दस्तावेजों का अवलोकन करने के उपरांत एवं समाधान होने पर अभियोजन के लिए स्वीकृति दिया था—अभियोजन के लिए स्वीकृति वैध थी—अपीलार्थी को CBI दल द्वारा पकड़ा गया था—अभिकथन उन गवाहों के साक्ष्य द्वारा पूर्णतः समर्थित जो गिरफ्तारी के समय मौजूद थे—अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध सामग्रियां अभियुक्त-अपीलार्थी के समक्ष रखी गयी थी तथा उसे अपना बचाव स्पष्टीकृत करने का पूर्ण अवसर दिया गया था—दं०प्र०सं० की धारा 313 के अनुपालन में कोई कमी नहीं—गवाहों के बयानों में छोटी मोटी विरोधात्मकता विचारण को दूषित या अभियोजन मामले को प्रभावित नहीं करेगी क्योंकि तात्विक गवाहों ने अति प्रबल रूप से अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा अवैधानिक परितोषण की मांग एवं इसके स्वीकरण तथा उसकी कमीज की जेब से इसकी बरामदगी को भी सिद्ध किया था—दोषसिद्धि एवं दंडादेश सम्पुष्ट। (पैराएँ 18 से 24)

निर्णयज विधि.—(2009)6 SCC 595—Referred.

अधिवक्तागण.—M/s Jai Prakash, Chaitali C. Sinha, Yogesh Modi, Shyam Narsaria, For the Appellant; Mr. Md. Mokhtar Khan, For the Respondent.

जया रॉय, न्यायमूर्ति.—अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता तथा CBI के विद्वान अधिवक्ता को सुना। दोनों पक्षकारों ने इस अपील में अपने लिखित तर्कों को दाखिल किया है।

2. अपीलार्थी ने R.C. सं० 6/85(P) में अपर सत्र न्यायाधीश VIII सह विशेष न्यायाधीश, CBI, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 8.5.2006 के दोषसिद्धि के निर्णय तथा दंडादेश को अपास्त करने के लिए इस अपील को दाखिल किया है, जिसके द्वारा अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 161 एवं भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 की धारा 5(1)(d) सह पठित धारा (5)(2) के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि की गयी है। उसे प्रत्येक आधार पर एक वर्ष का सश्रम कारावास भुगतने तथा 500 रुपये का जुर्माना अदा करने एवं व्यतिक्रम में एक महीने का सश्रम कारावास भुगतने का दंडादेश सुनाया गया है।

3. अभियोजन मामला संक्षेप में यह है कि अभियुक्त प्रदीप कुमार दत्ता (अपीलार्थी), जो उस समय बैंक ऑफ इण्डिया, राजधनवर शाखा, गिरिडिह का शाखा प्रबंधक था, ने 23.3.1985 को परिवादी से स्वनियोजन योजना के अधीन 25 हजार रुपये की स्वीकृत ऋण की राशि की शेष 10 हजार रुपये की राशि को विमुक्त करने के लिए परिवादी से अवैधानिक परितोषण के तौर पर 10 हजार रुपये की मांग किया था। बाद में परिवादी द्वारा बार-बार किये गये आग्रह पर, अर्जुन राय से अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा स्वीकृत धन का शेष राशि विमुक्त करने के लिए अवैधानिक परितोषण के तौर पर मार्च, 1985 के भीतर कम से कम 200 रुपये का भुगतान करने को कहा गया था। परिवादी ने 26.3.1985 को SPE, पटना के यहां एक लिखित रिपोर्ट दाखिल किया था। सत्यापन के उपरांत अभिकथन सही पाया गया था तथा एक जाल बिछाया गया था एवं परिवादी गवाहों तथा CBI पदाधिकारियों के साथ बैंक की दूसरी मंजिल पर स्थित अपीलार्थी के निवास गया था और अभिकथित रूप से अपीलार्थी को 200 रुपये का भुगतान किया था तथा तत्पश्चात् CBI के पदाधिकारियों को संकेत दिया था जिन्होंने अपीलार्थी को गिरफ्तार किया था तथा उससे 200 रुपये बरामद किये थे। अभियोजन के अनुसार अपीलार्थी ने मुद्रा प्राप्त करने के उपरांत इन्हें गिना था और फिर उसने राशि जेब में रख ली थी। अपीलार्थी के हाथ अभिकथित रूप से सोडियम कार्बोरेट के विलयन में धुले हुए थे। एक हाथ धोने वाला विलयन गुलाबी बन गया था एवं भा०दं०सं०

की धारा 161 के अधीन अपीलार्थी- अभियुक्त प्रदीप कुमार दत्ता के विरुद्ध 11 बजे पूर्वाह्न में एक नियमित मामला-R.C. सं० 6/85-पटना दिनांक 26.3.1985 दर्ज किया गया था। अन्वेषण के उपरांत, CBI ने अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध भा०दं०सं० की धारा 161 तथा P.C. अधिनियम की धारा 5(2) सह पठित 5(1)(d) के अधीन अपराध के लिए अभियोग पत्र प्रस्तुत किया था।

4. अभियोजन ने कुल मिलाकर 9 गवाहों को परीक्षित किया है, जो हैं, अ०सा० 1 गजेंद्र चंद्रसेन, गुरक्षाकर, अ०सा० 2 कृष्णन वेंकटाचरण, अ०सा० 3 आर० एस० एस० यादव, अ०सा० 4 राम रूप सिंह, अ०सा० 5 डी० एस० यादव, अ०सा० 6 अशोक बाबू, अ०सा० 7 मो० जावेन अजीत, अ०सा० 8 लक्ष्मण प्रसाद गुप्ता, अ०सा० 9 केदार नाथ गुप्ता। अभियोजन ने दो दस्तावेजों, अर्थात्, दो स्वीकृति आदेशों-प्रदर्श-1 एवं 1/1, प्रदर्श-2, जो कि ज्ञापन है एवं प्रदर्श-2 श्रृंखला, जो कि ज्ञापन पर हस्ताक्षर हैं, प्रदर्श-3, जो कि ज्ञापन पर अभियुक्त पी० के० दत्ता का हस्ताक्षर है, प्रदर्श-2/3 से 2/22 को प्रदर्शित कराया है जो कि अभिग्रहण ज्ञापन पर हस्ताक्षर हैं, प्रदर्श-4 प्राथमिकी है। इसके अतिरिक्त, अभियोजन ने सामग्री मूलक प्रदर्शों, अर्थात्, प्रदर्श-1 सील की गयी बोतल, प्रदर्श-II, कागज के उपचार किये गये टुकड़े से युक्त एक सील किया हुआ लिफाफा, प्रदर्श II/1- इस्तेमाल किये गये फिनोल्फ्थैलीन पाउडर के शेष भाग का सील किया हुआ लिफाफा, प्रदर्श-II/2- एक लिफाफा, प्रदर्श-III, III/6- GC नोट हैं, प्रदर्श-I/1, I/2, जो कि सील की गयी बोतलें हैं, प्रदर्श-IV, यह भी सील की गयी बोतल है एवं प्रदर्श-II/a से II/d, जो फिनोल्फ्थैलीन पाउडर के लिफाफे पर हस्ताक्षर हैं, को सिद्ध किया है। प्रदर्श-2/E से 2/F कागज के उपचार किये गये टुकड़े के लिफाफे पर हस्ताक्षर हैं और इसके अतिरिक्त प्रदर्श 1/2a से 1/2c जेब ध ोबन बोतल पर के हस्ताक्षर हैं, प्रदर्श-1/1a से 1/1d दायें हाथ की धोवन बोतल पर के हस्ताक्षर हैं तथा प्रदर्श-II/2a से II/2e GC नोटों के लिफाफे पर मौजूद हस्ताक्षर हैं।

5. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री जय प्रकाश ने निवेदन किया है कि इस मामले में परिवादी अर्जुन राय की परीक्षा नहीं की गयी है। अर्जुन राय द्वारा किया गया अभिकथित लिखित परिवाद अभिलेख पर नहीं लाया गया है। अभियोजन द्वारा जवाब दिये जाने के लिए केंद्रीभूत प्रश्न इस संबंध में है कि क्या अभिलेख पर यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य है कि अपीलार्थी द्वारा कोई अवैधानिक परितोषण लिया गया था और परिवादी अर्जुन राय ने अपीलार्थी को किसी अवैधानिक परितोषण का भुगतान किया था। इसका कोई साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी ने अर्जुन राय को अपने घर बुलाया था। स्वीकार्यत:, परिवादी अर्जुन राय की अभियोजन द्वारा परीक्षा नहीं की गयी है। इस संबंध में अभियोजन द्वारा कोई स्पष्टीकरण ही नहीं है कि परिवादी को एक गवाह के तौर पर परीक्षित क्यों नहीं किया गया था। इस प्रकार, परिवादी की ही अपरीक्षा यह बताती है कि अवैधानिक परितोषण की मांग को सिद्ध करने का कोई तात्विक साक्ष्य नहीं है क्योंकि यह परिवादी ही है जो इस संबंध में कह सकता है कि अभिकथित रूप से संदत्त राशि अवैधानिक परितोषण थी या नहीं। उन्होंने यह भी तर्क दिया है कि यह साक्ष्य में आया है कि ऋण के तौर पर 25 हजार रुपये की कुल राशि स्वीकृत की गयी है जिसमें से 15 हजार रुपये का परिवादी को पहले ही भुगतान कर दिया गया था तथा पहले 15 हजार रुपये की उक्त भुगतान के संबंध में किसी भी प्रकार का कोई अभिकथन था ही नहीं। परिवादी ने मौखिक रूप से भी इस संबंध में कोई शिकायत नहीं की थी जैसा कि पैरा 10 में अपने साक्ष्य में अ०सा०9 द्वारा कथन किया गया है।

6. श्री जय प्रकाश ने यह भी तर्क दिया है कि अ०सा० 9 के साक्ष्य में यह आया है कि जब अपीलार्थी का बायां हाथ सोडियम कार्बोनेट के विलयन से धोया गया था, विलयन का रंग परिवर्तित नहीं हुआ था। यह संभव नहीं है अगर अपीलार्थी ने मुद्राओं को गिना था तब इसका अर्थ यह हुआ कि उसने गणना करने में अपने दोनों हाथों का इस्तेमाल किया होगा, अतएव, वह विलयन भी गुलाबी हो जाना चाहिए था जिससे अपीलार्थी का बायां हाथ धोया गया था। अतएव, यह अभियोजन पक्ष के संबंध में कुछ संदेह उत्पन्न करता है।

7. श्री जय प्रकाश ने निवेदन किया है कि विचारण न्यायालय ने व्यवहारिक रूप में अ०सा० 4 रामरूप सिंह के साक्ष्य पर अपीलार्थी की दोषसिद्धि की है परन्तु उक्त गवाह बिल्कुल भी विश्वसनीय नहीं है क्योंकि उसने प्रत्येक चरण में अपने साक्ष्य को बढ़ाचढ़ा कर रखने का प्रयास किया है। अपने साक्ष्य के पैरा 10 में उसने कथन किया था कि अपीलार्थी ने रिश्वत की धन की मांग किया था जो एक तथ्य नहीं है जो कि पैरा 16 में उसके आगे के बयान से प्रकट है जिसमें उसने कथन किया है कि अभियुक्त–अपीलार्थी ने कभी भी अवैधानिक परितोषण की मांग नहीं किया था। धन की मांग करना अधिनियम के अधीन और स्वीकार करना भी अधिनियम के अधीन एक अपराध नहीं है। इस अधिनियम के अधीन मांग करना और फिर अवैधानिक परितोषण को स्वीकार करना अपराध है। यह भी निवेदन किया गया है कि माननीय न्यायालयों के ऐसे कई निर्णय हैं कि मात्र धन की बरामदगी अभियुक्त का दोष सिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं होती है। अतएव, अभियोजन अभियुक्त के विरुद्ध आरोप को सिद्ध करने में विफल रहा है और वह दोषमुक्त किये जाने का अधिकारी है।

8. उक्त गवाह (अ०सा० 4) ने उस स्थान एवं स्थिति के संबंध में भी अपने आप को ही खंडित किया है जहां वह खड़ा था। पैरा–9 में वह कथन करता है कि वह परिवादी के पीछे था। दूसरे स्थान पर, उसने कथन किया था कि वह दरवाजा के निकट था। परन्तु अपने साक्ष्य के पैरा 10 में उसने कथन किया है कि जब परिवादी ने इशारा किया था, वह परिवादी के पास दौड़ते हुए गया था जो कम से कम इतनी दूरी दर्शाता है कि अभिकथित घटना स्थल तक पहुंचने में उसे दौड़ना आवश्यक हो गया था।

9. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किये गये निवेदनानुसार कि अ०सा० 5, जो CBI इंस्पेक्टर है, ने अपने साक्ष्य के पैरा 17 में अपने आपको खंडित किया है, उन्होंने कथन किया है कि अभिग्रहण सूची ड्राइंग कक्ष में तैयार की गयी है जो घटना स्थल है तथा गवाहों ने उसकी मौजूदगी में उसी क्षण उक्त अभिग्रहण सूची पर हस्ताक्षर किये थे। परन्तु न्यायालय के प्रश्न पर उसी पैरा में, उसने जवाब दिया था कि अभिग्रहण सूची या अभिग्रहण ज्ञापन पुलिस थाने में तैयार किया गया था तथा अभियुक्त–अपीलार्थी के ड्राइंग कक्ष में नहीं। इस परिस्थिति में अ०सा० 5 को कोई विश्वसनीयता प्रदान नहीं की जा सकती।

10. श्री जय प्रकाश ने निवेदन किया है कि अ०सा० 3 ने अति विनिर्दिष्टत: कथन किया है कि उसने एवं उसके दल के सदस्यों ने अभियुक्त–अपीलार्थी को पुलिस थाना लाया था क्योंकि कई व्यक्ति घटना स्थल पहुंच गये थे जब अभियुक्त–अपीलार्थी गिरफ्तार किया गया था जो स्पष्टत: दर्शाता है कि घटना स्थल पर स्वतंत्र गवाह उपलब्ध थे परन्तु वहां इस प्रकार एकत्रित उक्त व्यक्तियों में से किसी को भी इस मामले में गवाह नहीं बनाया गया है।

11. श्री जय प्रकाश ने यह भी निर्दिष्ट किया है कि साक्ष्य में यह आया है कि भुगतान के अभिकथित समय, CBI पदाधिकारियों एवं गवाहों ने अपीलार्थी की दृष्टि से अपने आपको छुपाने का प्रयास नहीं किया था। ऐसा आचरण पूर्णत: अस्वाभाविक एवं अविश्वसनीय है क्योंकि कोई भी व्यक्ति कभी भी कई व्यक्ति की मौजूदगी में अवैधानिक परितोषण स्वीकार नहीं करेगा जो सामान्यत: छिपे तौर पर किया जाता है।

12. यह भी तर्क दिया गया है कि दं०प्र०सं० की धारा 313 का पूर्ण अननुपालन हुआ है। वर्तमान मामले में, दं०प्र०सं० की धारा 313 के अधीन अपीलार्थी के समक्ष रखे गये प्रश्नों का परिशीलन स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि अपीलार्थी के विरुद्ध सामने आये सभी तथ्यों एवं परिस्थितियों को उसके समक्ष नहीं रखा गया था। इस धारा के अधीन परीक्षा का उद्देश्य अभियुक्त को उसके विरुद्ध बनाये गये मामले का स्पष्टीकरण देने का एक अवसर प्रदान करना है। दं०प्र०सं० की धारा 313 के अधीन बयान का अभिलेखन एक कोरी औपचारिकता नहीं है तथा विभिन्न निर्णयों में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जहां संहिता की धारा 313 की अपेक्षा का अनुपालन नहीं किया जाता है, दोषसिद्धि अपास्त किये जाने योग्य होती

है। इस संबंध में उन्होंने **रणवीर यादव बनाम बिहार राज्य** के एक मामले में **(2009) 6 SCC- 595** में रिपोर्ट किये गये एक निर्णय को उद्धृत किया है जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने दं०प्र०सं० की धारा 313 के अधीन अपेक्षा को एक औपचारिकता मात्र अभिनिर्धारित नहीं किया है, किसी अभियुक्त की दोषसिद्धि वाली सामग्रियों को इंगित न करने को उक्त परिस्थितियों में अभियुक्त की दोषसिद्धि को अपास्त किये जाने वाला कारण अभिनिर्धारित किया गया है।

13. CBI की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री मुख्तार खान ने निवेदन किया है कि अ०सा० 2 ने स्वीकृति आदेश को सिद्ध किया है तथा स्वीकृति आदेश में कोई अवैधानिकता नहीं है।

14. श्री खान ने निवेदन किया है कि अभियोजन द्वारा परीक्षित अ०सा० 3, 4, 5, 6 एवं 7 ने पूर्णत: अभियोजन मामले का समर्थन किया है। रंजित धन की मांग, स्वीकरण एवं बरामदगी उक्त गवाहों के अभिसाक्ष्य द्वारा सिद्ध हुई है। पूर्वोक्त गवाहों के साक्ष्य में यह विनिर्दिष्ट कथन है कि जाल बिछाने के बाद वाली कार्यवाही में अवैधानिक परितोषण की मांग एवं स्वीकरण तथा रंजित धन की बरामदगी गवाहों द्वारा पूर्णत: सिद्ध की गयी है। अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है जो रंजित धन के संव्यवहार को तीसरी किश्त के तौर पर प्रकट करता हो जो अभियुक्त के आवासीय परिसर में उसे परिवादी द्वारा दिया गया था क्योंकि उक्त संव्यवहार के किसी प्राप्ति का कोई वर्णन नहीं था जो अभिलेख पर आया हो।

15. श्री खान ने यह भी निवेदन किया है कि अ०सा० 4, जो स्वतंत्र गवाह है, विश्वसनीय साक्षी है क्योंकि उसकी अभियुक्त-अपीलार्थी के साथ कोई शत्रुता नहीं थी। इस गवाह ने रंजित धन की मांग, स्वीकरण एवं बरामदगी का पूर्णत: सम्पोषण किया है।

16. श्री खान ने निवेदन किया है कि यह मामला पहले पटना (बिहार) में लंबित था। तत्पश्चात, रांची अंतरित कर दिया गया था और रांची से मामला धनबाद अंतरित कर दिया गया था। उन्होंने यह भी निवेदन किया है कि इस मामले की संचिका प्राप्त नहीं हुई है। उन्होंने निवेदन किया है कि वह इस संबंध में कुछ कहने की स्थिति में नहीं हैं कि परिवादी एवं अन्य गवाहों को परीक्षित क्यों नहीं किया जा सका था। चूंकि संचिका उपलब्ध नहीं है, अत: वह यह कहने की भी स्थिति में नहीं हैं कि मूल परिवाद याचिका कहां है, परन्तु उन्होंने निवेदन किया है कि अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य तथा सामग्रियां अभियोजन मामले का पूर्णत: समर्थन करती है।

17. श्री खान ने अंतत: निवेदन किया है कि यद्यपि अभियोजन द्वारा अन्वेषण पदाधिकारी को परीक्षित नहीं किया गया है परन्तु अभियुक्त को प्रतिकूलता कारित नहीं करेगा या अभियोजन मामले को खंडित नहीं करेगा। चूंकि अभियोजन ने अपीलार्थी के विरुद्ध सभी युक्तिसंगत संदेह से परे अपना मामला सिद्ध किया है, यह दांडिक अपील समूचे तौर पर खारिज किए जाने योग्य है।

18. अभिलेखों के परिशीलन से, मैं पाती हूँ कि अ०सा०1 के परीक्षा के उपरांत यह पाया गया था कि वह अभियुक्त-अपीलार्थी के अभियोजन के लिए स्वीकृति देने में सक्षम प्राधिकार नहीं था, तद्नुसार उपयुक्त प्राधिकार से वैध स्वीकृति प्राप्त की गयी थी तथा फिर से संज्ञान लिया गया था। इस संबंध में, स्वीकृति आदेश (प्रदर्श-1/1) को सिद्ध करने के लिए अ०सा० 2 कृष्णन वेंकटाचरण) को परीक्षित किया गया है। उन्होंने कथन किया है कि सुसंगत अवधि में सुरजो मोहनी पाठक बैंक ऑफ इण्डिया के महाप्रबंधक थे जो अभियुक्त-अपीलार्थी की नियुक्ति करने में सक्षम प्राधिकार थे, इस प्रकार वह अभियुक्त-अपीलार्थी के अभियोजन के लिए स्वीकृति देने में सक्षम थे। स्वीकृति आदेश ही दर्शाता है कि स्वीकृति प्राधिकार ने सभी सम्बद्ध कागजात का अवलोकन करने के उपरांत तथा समाधान होने पर

अभियोजन के लिए स्वीकृति प्रदान किया था। अतएव, यह नहीं कहा जा सकता कि अभियोजन के लिए कोई वैध स्वीकृति नहीं थी। इस प्रकार, स्वीकृति आदेश में कोई अवैधानिकता नहीं है।

19. स्वीकार्यत:, अभियोजन द्वारा इस मामले के परिवादी तथा अन्वेषण पदाधिकारी को परीक्षित नहीं किया गया है। अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों के परिशीलन पर, मैं तीन गवाहों, अर्थात्, अ० सा० 4 रामरूप सिंह (छाया गवाह) एवं अ०सा० 3 एवं 9, जो जाल में फंसाने वाली कार्यवाही के सदस्य थे एवं CBI के पदाधिकारीगण थे, का यह साक्ष्य पाती हूं कि जाल बिछाने के समय वे सारे मौजूद थे। अ०सा० 3, जो CBI का आरक्षी उपनिरीक्षक है, ने अपने साक्ष्य में कथन किया है कि वह, अ०सा० 4, 9 अभिकथित घटना के समय अभियुक्त-अपीलार्थी के निकट उपस्थित थे। उसने यह भी कथन किया है कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने परिवादी से अपना धन मांगा था और इस पर, परिवादी ने अभियुक्त-अपीलार्थी को 200 रुपये की एक राशि का भुगतान किया था। अभियुक्त-अपीलार्थी ने उक्त राशि स्वीकार किया था तथा इसे अपनी कमीज की जेब में रख लिया था। तत्पश्चात्, परिवादी द्वारा इशारा किये जाने पर, जांच दल के सभी सदस्य अभियुक्त-अपीलार्थी की ओर गये थे तथा उसे रिश्वत का धन प्राप्त करने की चुनौती दिया था। उसने यह भी कथन किया है कि अ०सा० 9, केदार नाथ गुप्ता, जो CBI निरीक्षक है, ने अभियुक्त-अपीलार्थी की कमीज की जेब से रिश्वत का धन बाहर निकाला था। मैं पाती हूँ कि अ०सा० 9 ने अपने साक्ष्य में यह भी कथन किया है कि परिवादी द्वारा इशारा किये जाने पर, वह अभियुक्त-अपीलार्थी के कमरे में प्रवेश कर गया था। अपने साक्ष्य में उसने यह भी कथन किया है कि छाया गवाह रामरूप सिंह (अ०सा० 4) द्वारा भी मांग तथा स्वीकरण को देखा गया था। उसने अभियुक्त-अपीलार्थी की जेब से राशि की बरामदगी के बारे में भी कथन किया है। वह प्रतिपरीक्षा में अपने पक्ष पर दृढ़ रहा है। अतएव, अ०सा० 3 एवं 9 दोनों ने ही मांग, स्वीकरण एवं बरामदगी के तथ्य को सिद्ध किया है तथा अभियोजन मामले का समर्थन किया है। एक अन्य महत्वपूर्ण गवाह अ०सा० 4, जो छाया गवाह (स्वतंत्र गवाह) है ने भी अपने बयान में अतिविनिर्दिष्टत: कथन किया है कि घटना स्थल, अर्थात्, अभियुक्त-अपीलार्थी के ड्राइंग कक्ष के अंदर परिवादी तथा अपीलार्थी मौजूद थे तथा (अ०सा० 4) उसके साथ अन्य गवाह दरवाजे के बाहर थे परन्तु उसने अभियुक्त-अपीलार्थी को 200 रुपये की रिश्वत की धन की मांग करते सुना था एवं परिवादी को यह राशि अभियुक्त-अपीलार्थी को देते हुए देखा था जिसने इसे स्वीकार करने के उपरांत धन अपनी जेब में रख लिया था। तत्पश्चात्, परिवादी ने ट्रैप दल को इशारा किया था जिस पर सभी वहां दौड़ते हुए पहुंच गये थे। CBI के अधिवक्ता ने स्पष्टीकरण दिया है कि दौड़ते हुए 'शब्द केवल यह दर्शाने के लिए उल्लिखित है कि ट्रैप दल के सदस्य मौके पर तत्परता के साथ पहुंचे थे। इसका यह कदापि अर्थ नहीं है कि अ०सा० 4 सुसंगत समय पर अपीलार्थी से काफी दूर मौजूद था। अतएव, अति निकट दूरी पर, अ०सा० 3, अ०सा० 4 एवं अ०सा० 9 मौजूद थे और उन सभी ने विनिर्दिष्टत: अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा रिश्वत के धन की मांग, इसके स्वीकरण तथा अभियुक्त-अपीलार्थी की जेब से उक्त राशि की बरामदगी को भी सिद्ध किया है। नि:संदेह अ०सा० 9 जो CBI का निरीक्षक है, ने अति स्पष्टत: कथन किया है कि वर्तमान अभियुक्त-अपीलार्थी ने पूर्व में बीडीओ राजधंसर के विरुद्ध अपने उच्चतर पदाधिकारी, अर्थात्, अपने क्षेत्रीय प्रबंधक के यहां कई परिवाद प्रस्तुत किये थे जिस बीडीओ का कर्त्तव्य स्वनियोजन की योजना के अधीन ऋण आवेदन प्रपत्र भेजना था परन्तु यह दर्शाने के लिए कुछ भी नहीं है कि उक्त बी० डी० ओ० ने परिवादी या ट्रैप दल के सदस्यों के साथ षडयंत्र करके वर्तमान अभियुक्त-अपीलार्थी को झूठमूठ फंसा दिया था।

20. अ०सा० 6, जो CBI का उपनिरीक्षक था, ने गुप्त सत्यापन किया था तथा उसके सत्यापन के आधार पर मांग सही पायी गयी थी एवं प्रस्तुत मामला संस्थित किया गया था परन्तु उसने स्वीकार किया है कि अभिलेख पर कोई सत्यापन रिपोर्ट नहीं है। मामले के अभिलेख से, मैं पाती हूँ कि पूर्व में मामला पटना में दर्ज किया गया था, तत्पश्चात्, इसे रांची अंतरित कर दिया गया था और फिर धनबाद अंतरित कर दिया गया था। अतएव, यह बिल्कुल संभव है कि अभिलेख को एक स्थान से दूसरे स्थान भेजने में सत्यापन रिपोर्ट अभिलेख से यत्र-तत्र हो गयी हो। अ०सा० 6, जो सत्यापन पदाधिकारी है, ने स्पष्ट रूप से सत्यापन के बारे में कथन किया है। अतएव, सत्यापन वाले हिस्से पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है। जैसा कि वरीय अधिवक्ता श्री जय प्रकाश द्वारा तर्क दिया गया है, परिवादी एवं अन्वेषण पदाधिकारी की अपरीक्षा ने गंभीर रूप से अभियुक्त-अपीलार्थी के बचाव को हानि कारित किया है और चूंकि अन्वेषण पदाधिकारी द्वारा जब्त किये गये कई दस्तावेजों को अभिलेख पर नहीं लाया गया है जिसके कारण अभियुक्त यह दर्शाने की स्थिति में नहीं है कि परिवादी द्वारा ऋण के पुनर्भुगतान के संबंध में भुगतान पर्ची भी पायी गयी है। परन्तु अभिलेख से मैं पाती हूँ कि परिवादी तथा ट्रैप दल के सदस्य लगभग 9 बजे पूर्वाह्न में अभियुक्त-अपीलार्थी के घर गये थे जो बैंक के कार्य घंटे नहीं थे तथा रंजित धन अभियुक्त-अपीलार्थी की जेब से ड्राइंग कक्ष में बरामद किया गया है। अतएव, यह नहीं कहा जा सकता कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने बैंक ऋण के पुनर्भुगतान के तौर पर धन लिया है। इसके अतिरिक्त, अभियुक्त-अपीलार्थी ने इसके बारे में दं०प्र०सं० की धारा 313 के अधीन अभिलिखित अपने बयानों में कथन नहीं किया है। उसने केवल यह कथन किया है कि वह केवल निर्दोष है और राजधनसार के बीडीओ के साथ शत्रुता के कारण उसे विवक्षित किया गया है। मैं अन्वेषण पदाधिकारी की अपरीक्षा से संबंधित पूर्वोक्त निवेदनों में कोई अधिक दम नहीं पाती हूँ। जैसा कि मैंने पूर्व में कथन किया है कि स्वतंत्र साक्षी अ०सा० 4 तथा दो अन्य CBI पदाधिकारियों ने गवाहों की मौजूदगी में अभियुक्त-अपीलार्थी की जेब से रंजित धन की मांग, स्वीकरण एवं बरामदगी के बारे में विनिर्दिष्टत: कथन किया है तथा सिद्ध किया है और वे प्रति परीक्षा में दृढ़ रहे हैं, मैं उनके साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं पाती हूँ।

21. ब०सा०1 के साक्ष्य का परिशीलन किया और मैं इसे अभियुक्त-अपीलार्थी के लिए बिल्कुल भी उपयोगी नहीं पाती हूँ। बचाव पक्ष का समर्थन करने के लिए कुछ भी नहीं है।

22. दं०प्र०सं० की धारा 313 के अधीन अभिलिखित अभियुक्त-अपीलार्थी के बयान तथा अभियुक्त-अपीलार्थी के समक्ष रखे गये प्रश्न स्पष्टत: दर्शाते हैं कि अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध सामने आयी सामग्रियां अभियुक्त-अपीलार्थी के समक्ष रखी गयी थीं तथा उसे अपना बचाव स्पष्टीकृत करने का पूर्ण अवसर प्रदान किया गया था। अतएव, इस मामले में दं०प्र०सं० की धारा 313 के अनुपालन में कोई चूक नहीं हुई है।

23. स्वीकार्यत:, अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य में छोटी-मोटी विरोधात्मकताएं हैं जो अति सामान्य बात है क्योंकि घटना 1985 में घटित हुई थी तथा साक्ष्य 1985 से 2000 के बीच लिया गया था। गवाहों के बयानों में छोटी-मोटी विरोधात्मकता विचारण को दूषित नहीं करेगी या अभियोजन मामले को प्रभावित नहीं करेगी क्योंकि तात्विक साक्षियों ने अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा अवैधानिक परितोषण की मांग तथा इसके स्वीकरण एवं उसकी कमीज की जेब से इसकी बरामदगी को भी दृढ़तापूर्वक सिद्ध किया था।

24. अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों तथा ऊपर यथा परिचर्चा किये पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर विचार करके, मैं पाती हूँ कि अभियोजन ने अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध विरचित आरोपों को सभी युक्तिसंगत संदेह से परे पूर्णत: सिद्ध किया है। अतएव, विचारण न्यायालय ने उचित रूप से अभियुक्त-अपीलार्थी

के विरुद्ध लगाये गये आरोपों के लिए उसकी दोषसिद्धि की है। तद्नुसार, मैं इस अपील में कोई गुण नहीं पाती हूं, तदनुसार, दोषसिद्धि तथा अपीलार्थी को अधिनिर्णित दंडादेश एतद् द्वारा सम्पुष्ट किया जाता है। चूंकि अपीलार्थी जमानत पर है उसका जमानत बंध-पत्र रद्द किया जाता है तथा दंडादेश भुगतने के लिए उसे अवर न्यायालय के समक्ष तत्काल आत्मसमर्पण करने का निर्देश दिया जाता है, जिसमें विफल होने पर अवर न्यायालय उसकी गिरफ्तारी के लिए सभी संभव उपाए करेगा।

---

ekuuh; i'kkr dekj] U;k;efr

भारतीय जीवन बीमा निगम, रांची शाखा 1

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.W.P. No. 343 of 2012. Decided on 4th January, 2013.

भारत का संविधान—अनुच्छेद 226—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 452—अधिहरण की गयी सम्पत्ति का छोड़ा जाना—उस धन के छोड़े जाने के लिए आग्रह जिसे लूटा गया था और बाद में पुलिस द्वारा बरामद किया गया था तथा पुलिस थाना में रखा गया था—धारा 42 मुख्य मामले के समापन के उपरांत सम्पत्ति के निस्तारण के प्रावधान से संबंधित है—याची के लिए जब्त वस्तु/सम्पत्ति के छोड़े जाने के लिए विचारण न्यायालय के समक्ष आवेदन दाखिल करने की आवश्यकता है—दं०प्र०सं० की धारा 452 के अधीन आवेदन दाखिल करने की याची को स्वतंत्रता के साथ रिट आवेदन खारिज। (पैराएँ 2 से 5)

अधिवक्तागण.—Sri K.L. Ojha, For the Petitioner; Sri Abhay Kumar Mishra, For the Respondents.

आदेश

यह आवेदन 4,12,420 रुपये के अवमुक्त किये जाने के लिए दाखिल किया गया है जो हिन्दपुरी पुलिस थाना में रखा गया है।

2. यह निवेदन किया गया है कि 10.9.2005 को भारतीय जीवन बीमा की एक भान से 12,09,159.95 रुपये लूट लिये गये थे जब उक्त धन बैंक ले जाया जा रहा था। यह भी निवेदन किया गया है कि अन्वेषण के दौरान पुलिस ने 4,12,420 रुपये बरामद किये थे तथा उक्त राशि हिन्दपुरी पुलिस थाना में रखी गयी थी। यह भी निवेदन किया गया है कि T.R. सं० 186 वर्ष 2006 के तत्सम हिन्द पूर्वोक्त लूट से संबंधित मामला-हिन्दपुरी पुलिस थाना केस सं० 583 वर्ष 2005- पहले ही निस्तारित किया जा चुका है। तद्नुसार, यह आग्रह किया गया है कि उक्त धन 4,12,420 रुपये भारतीय जीवन बीमा निगम के पक्ष में विमुक्त कर दिया जाए।

3. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 452 मुख्य मामले के समापन के उपरांत सम्पत्ति के निस्तारण के प्रावधान से संबंधित है। उक्त प्रक्रिया के अनुसार, याची के लिए जब्त वस्तु/सम्पत्ति विमुक्ति के लिए विचारण न्यायालय के समक्ष एक आवेदन दाखिल करने की आवश्यकता है।

4. पूर्वोक्त प्रावधानों की दृष्टि में, मैं इस रिट आवेदन को ग्रहण करने का इच्छुक नहीं हूँ। तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है।

5. तथापि, अगर ऐसी सलाह दी जाए, तो याची दं०प्र०सं० की धारा 452 के अधीन अंतर्विष्ट प्रावधानों के अनुसार पूर्वोक्त राशि की विमुक्ति के लिए विचारण न्यायालय के समक्ष एक आवेदन दाखिल कर सकता है।

---

ekuuh; Mhñ,uñ iVy ,o i'kkr dekj] U;k;efrx.k

दिलीप मुर्मू एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (DB) No. 904 of 2012. Decided on 19th December, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—दंडादेश का निलम्बन—हत्या के लिए दोषसिद्धि—अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला—दाण्डिक अपील लम्बित—अभियोजन साक्षियों ने स्पष्ट रूप से अपीलार्थीगण द्वारा निभायी गयी भूमिका का वर्णन किया है—अपराध की गंभीरता तथा दंड की मात्रा एवं अपीलार्थीगण की संलिप्तता के ढ़ंग की दृष्टि में, न्यायालय दंड निलंबित करने का इच्छुक नहीं—दंडादेश को निलंबित करने का आग्रह अस्वीकृत।

(पैराएँ 3 एवं 4)

निर्णयज विधि.—2010(2) Eastern Criminal Cases 6 (SC)—Distinguished; (2002)9 SCC 366; (2004)6 SCC 175; (2008)11 SCC 180; AIR 2008 SC 1882—Relied on.

अधिवक्तागण.—Mr. Mahesh Tewari, For the Appellants; A.P.P., For the Respondent.

न्यायमूर्ति डी०एन० पटेल के अनुसार.—इस न्यायालय द्वारा दिनांक 7 नवम्बर, 2012 के आदेश द्वारा पहले ही वर्तमान अपील स्वीकार कर दी गयी है। दंडादेश के निलम्बन के लिए जिरह का मूल्यांकन करने हेतु विचारण न्यायालय से सत्र केस सं॰ 03 वर्ष 2008 के अभिलेख एवं कार्यवाहियां मंगायी गयी थीं।

2. इस न्यायालय द्वारा सत्र केस सं॰ 03 वर्ष 2008 के अभिलेखों एवं कार्यवाहियों को प्राप्त किया गया है।

3. हमने दोनों पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है तथा सत्र केस सं॰ 03 वर्ष 2008 के अभिलेखों एवं कार्यवाहियों का परिशीलन किया है। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों को देखने पर, यह प्रतीत होता है कि प्रथम दृष्टया वर्तमान अपीलार्थीगण- अभियुक्तों के विरुद्ध मामला बनता है। चूंकि दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं, परन्तु इतना कहना पर्याप्त होगा कि:—

(i) ?kVuk 25 viy] 2007 dk ?kfVr gb FkhA v0lk0 7 }kjk rRdky ikFkfedh nt dh x;h Fkh tk ,d lpuknkrk g rFkk erd dk i= gA uk vfHk;Drk d uke Hkh ikFkfedh e fn; x; Fk rFkk vUo"k.k ikjHk fd;k x;k FkkA vUo"k.k d nkjku] db p'enhn xokgk d c;ku vfHkfyf[kr fd; x; g] ftUgku bu nkuk vihykFkhx.k d uke Hkh fn; gA

(ii) io e] uk vfHk;Dr 0;fDr;k d fo#) vfHk;kx i= nkf[ky fd;k x;k Fkk rFkk oreku nkuk vihykFkhx.k d fo#) lEijd vfHk;kx i= nkf[ky fd;k x;k Fkk vkj] vr,o] uk vfHk;Dr 0;fDr;k d ekey dk fopkj.k l= dl l0 172 o"k 2007 d rkj ij gvk Fkk] tcfd oreku nkuk vihykFkh d ekey dk fopkj.k l= dl l0 03 o"k 2008 d rkj ij gvk FkkA

(iii) vfHky[k ij ektn lk{;k dk n[ku ij] ;g irhr gkrk g fd ?kVuk d db p'enhn xokg gA vfHk;ktu lkf{k;k] vFkkr] v0lk0 1 l 9 d vfHklk{;k dk n[ku ij] ;g irhr gkrk g fd nkuk vihykFkhx.k& vfHk;Drk d fo#) iFke n"V;k ekeyk gA vfHk;ktu lkf{k;k u Li"V :i l bu nkuk vihykFkhx.k }kjk

fuHkk;h x;h Hkfedk dk of.kr fd;k gA bl Hkh c<dj] bu p'enhn xokgk d vfHkl{; v0lkO 10 (MkO fgj.e; ?kk"k) }kjk fn; x; fpfdRlh; lk{; ,o v0lkO 11] tk ekey dk vUo"k.k inkfèkdkjh g] l Hkh i;kIr lEik"k.k ikIr djr gA

(iv) 8 vfHk;Dr 0;fDr;k d nMkn'k d fuyEcu dk vkxg] tk lèku ejkMh uked erd dh gR;k dkfjr dju e lfEefyr Fk] nkfMd vihy (DB) l0 883 o"k 2012 e bl U;k;ky; }kjk fnukd 10 fnlEcj] 2012 d vkn'k l vLohdkj dj fn;k x;k gA

(v) vihykFkhx.k d fo}ku vfèkoDrk u dkQh foLrkj l ekey ij ftjg fd;k g vkj iR;d lHko rd j[kk gA ge vihykFkhx.k d fo}ku vfèkoDrk }kjk mBk; x; lHkh rdk d lkFk lger ugh gA pfd nkfMd vihy yfcr g] ge iR;d rd d lkFk ugh fuiV jg gA vihykFkhx.k d fo}ku vfèkoDrk }kjk ;g rd fn;k x;k g fd p'enhn xokg oLrr% p'enhn xokg ugh gA blh idkj] ;g fuonu fd;k x;k g fd p{kn'kh lk{; ,o fpfdRlh; lk{; d chp dN vlxrrk gA vkj ;nkuk vihykFkhx.k ikFkfedh e uketn ugh Fk vkj u gh bu xokgk u ifyl d le{k bu nkuk vihykFkhx.k dk uke fn;k g rFkk vihykFkhx.k d fo}ku vfèkoDrk u 2010(2) Eastern Criminal Cases 6 (SC) e fjikV fd; x; fu.k; ij Hkh Hkjkl k fd;k gA nMkn'k d fuyEcu d fy, bu rdk e l dkb Hkh vihykFkhx.k d fy, mi;kxh ugh g] D;kfd ,l db p'enhn xokg g ftUgku ifyl d le{k bu nkuk vihykFkhx.k dk uke fy;k gA bl Hkh c<dj] p{kn'kh lk{; ,o fpfdRlh; lk{; d chp vlxrrk dk rd Hkh Lohdkj.kh; ugh gA e[;r% bl dkj.k fd vfHky[k ij ekt n lk{;k dk voykdu dju ij ;g irhr gkrk g fd vfHk;ktu lkf{k;k u vU; lg vfHk;Drk d lkFk bu nkuk vihykFkhx.k }kjk fuHkk;h x;h Hkfedk dk LIk"V o.ku fn;k g rFkk nMkn'k d fuyEcu d pj.k e] ge bldk vfèkd fo'y"k.k ugh dj jg g fd fpfdRlh; lk{; fdl idkj p'enhn xokgk d vfHkl{;k dk lEik"kd gA vihykFkhx.k d fo}ku vfèkoDrk }kjk ftl fu.k; dk m) r fd;k x;k g] og Hkh vihykFkhx.k d fy, ennxkj ugh g D;kfd ;g vfre luokb d le; U;k;ky; }kjk fgrc) xokgk d vfHkl{;k d fo'y"k.k l lcfèkr fl)kr dh ifriknuk djrk gA bl nkfMd vihy rFkk nkfMd vihy (DB) l0 883 o"k 2012 dh Hkh vfre luokb bl U;k;ky; d le{k yfcr gA

(vi) AIR 2008 SC 1882 e fjikV fd; x; f[kykMh cuke mÙkj in'k jkT; ,o ,d vU; d ekey e] fo'k"kdj ijk 10 e ekuuh; mPpre U;k;ky; }kjk ;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k g tk fd fuEuor ifBr g %

^^10- vuojh cxe cuke 'kj ekgEen ,o ,d vU; [2005(7) SCC 326] e vU; d lkFk&lkFk fuEuor lEijhf{kr fd;k x;k Fkk%

^^7- mPPk U;k;ky; d vkn'k dk ,d lrgh ifj'khyu Hkh cf) dk fcYdy bLreky u fd;k tkuk n'kkrk gA ;fi tekur d vkonuk ij vkn'k ikfjr djr g, U;k;ky; }kjk lk{; d foLrr ijh{k.k rFkk ekey d x.kkox.kk d fo'kn nLrkoth dj.k l cpuk g] fQj Hkh tekur d vkonu l fucVu oky fdlh U;k;ky; dk bl lcèk e lekèkku gkuk pkfg, fd iFke n"V;k ekeyk g ;k ugh] ijUr ekey d x.kkox.kk dk fu%'k"k vUo"k.k vko';d ugh gA tekur d vkonu l fucVu oky U;k;ky; d fy, viu foodkfèkdkj dk bLreky ,d U;kf;d <x l dju dh vko';drk g vkj ,d lkekU; vuØe d ekey d rkj ij ughA

8- vkn'k e mu dkj.kk dk bfxr dju dh ,d vko';drk g fd iFke n"V;k ;g fu"d"k D;k vk;k fd tekur inku dh tk jgh g fo'k"kdj rc tc vfHk;Dr ij ,d xHkhj vijkèk dkfjr dju dk vkjki yxk gA tekur d vkonu l fucVu oky U;k;ky;k d fy, tekur inku dju l igy vU; ifjfLFkfr;k d lkFk fuEukfdr dkjdk ij Hkh fopkj djuk vko';d g] tk g %

1- nk"kflf) dh fLFkfr e vkjki dh iÑfr rFkk nM dh dBkjrk ,o leFkudkjh lk{; dh iÑfr(

2- xokg d lkFk NMNkM dju dh ;fDr;Dr vk'kdk ;k ifjoknh dk ydj [krj dh vk'kdk(

3- vkjki d leFku e U;k;ky; dk iFke n"V;k lek/kkuA

,l dkj.kk l jfgr dkb Hkh vkn'k cf) dk bLreky u fd; tku l xLr gkrk g tlk fd jke xkfoUn mikè;k; cuke ln'ku flg ,o vU; [2002(3) SCC 598] e(iju bR;kfn cuke jkefcyk l ,o ,d vU; bR;kfn [(2001) 6 SCC 338], rFkk dY;k.k pn ljdkj cuke jkt'k jtu mQ ili ;kno ,o ,d vU; [JT 2004 (3) SC 442] e bl U;k;ky; }kjk mfYyf[kr fd;k x;k FkkA (tkj fn;k x;k)

(vii) [(2002) 9 SCC 366 e fjikV fd; x; jke th ilkn cuke jru dekj tk; loky ,o ,d vU; d ekey e ijk l0 3 e ekuuh; mPpre U;k;ky; }kjk fuEuor vfHkfuèkkfjr fd;k x;k g(

^^3- ,d ,l ekey e bl bl vlkèkkj.k ekx dk viuku dk fo}ku ,dy U;k;kèkh'k }kjk dkb dkj.k gh ugh n'kk;k x;k g tgk ,d vfHk;Dr dk Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 302 d vèkhu fopkj.k U;k;ky; }kjk nk"kh ik;k x;k FkkA ,l ekey e lkekU; ifjikVh nMkn'k dk fuyfcr u dju dh g vkj doy vlkèkkj.k ekeyk e gh nMkn'k d fuyEcu dk ykHk inku fd;k tk ldrk gA** (tkj fn;k x;k)

(viii) (2004) 6 SCC 175 e ;Fkk fjikV fd; x; gfj;k.kk jkT; cuke g'ker d ekey e ijk, 6 l 9 e ekuuh; mPpre U;k;ky; }kjk fuEuor vfHkfuèkkfjr fd;k x;k g%&

^^6- lfgrk dh èkkjk 389 vihy d yfcr jgr nMkn'k d fu"iknu d fuycu rFkk tekur ij vihykFkh dh fuefDr l lcfèkr gA tekur rFkk nMkn'k d fuycu d chp ,d vrj gA èkkjk 389 d vfuok; vo;ok e l ,d vo;o nMkn'k d fu"iknu d fuyEcu ;k vihy fd; x; vkn'k d fuyEcu d fy, fyf[kr e dkj.kk dk vfHkfyf[kr dju dh vihyh; U;k;ky; d fy, vko';drk dk gkuk gA vxj og fu#) rk e g] mDr U;k;ky; fun'k dj ldrk g fd mI tekur ij NkM fn;k tk, ;k mld gh cèk&i= ij NkM fn;k tk,A dkj.kk dk fyf[kr e vfHkfyf[kr dju dh vi{kk Li"Vr% bfxr djrh g fd llxr igyvk ij lrdrk l fopkj djuk g rFkk nMkn'k dk fuyfcr dju rFkk tekur inku dju dk fun'k nu okyk vkn'k ,d lkekU; vkn'k d rkj ij ikfjr ugh dj fn;k tkuk pkfg,A

7- vihyh; U;k;ky; oLrijd :i l ekey dk vkdyu dju rFkk bl fu"d"k d dkj.k vfHkfyf[kr dju d fy, dÙk0;c) g fd ekey e nMkn'k d fu"iknu dk fuycu rFkk tekur dk inku fd;k tkuk mfpr gA iLrr ekey e] ,dek= dkjd tk nMkn'k d fuycu dk fun'k nu d fy, rFkk tekur inku fd; tku d fy, mPp U;k;ky; d fy, egRoi.k jgk g og mI vofèk d nkjku Lor=rk d n#i;kx d vfHkdFku dk u gkuk g tc vfHk;Dr&iR;Fkh dk ijky inku fd;k x;k FkkA

8- fo}ku l= U;k;kèkh'k] xMxko u fnukd 24-10-2001 d fu.k; l vfHk;Dr&iR;Fkh dk nk"kh ik;k FkkA iR;Fkh }kjk nkfMd vihy l0 100-DB o"k 2002 nkf[ky fd;k x;k FkkA ;g rF; fd vihy d yfcr jgu d nkjku vfHk;Dr&iR;Fkh ijky ij Fkk] n'kkrk g fd ikjHk e vfHk;Dr&iR;Fkh dk nMkn'k d fu"iknu d fuyEcu dk ykHk inku ugh fd;k x;k FkkA ek= ;g rF; fd ijky d vofèk d nkjku vfHk;Dr u Lor=rkvk dk n#i;kx ugh fd;k g] viu vki e nMkn'k d fu"iknu d fuyEcu rFkk tekur inku fd; tku dk mfpr ugh cuk nrkA mPp U;k;ky; }kjk okLro e ftl ij fopkj fd;k tkuk vko';d Fkk og ;g Fkk fd D;k nMkn'k d fu"iknu dk fuyfcr dju rFkk rRi'pkr tekur inku dju d dkj.k fo|eku FkA mPp U;k;ky; lgh fl)kr dk nf"Vxr j[krk gvk irhr ugh gkrk gA

9- fot; dekj cuke ujn ,o jketh ilkn cuke jru dekj tk;loky e bl U;k;ky; }kjk ;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd HkkOn0l0 dh èkkjk 302 d vèkhu nk"kflf) oky ekeyk e doy v lkèkkj.k ekeyk e gh nMkn'k d fuyEcu dk ykHk inku fd;k tk ldrk gA mPp U;k;ky; dk vk{kfir vkn'k bl vko';drk dk ijk ugh djrkA fot; dekj d ekey e ;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd HkkOn0l0 dh èkkjk 302 d vèkhu nMuh; gR;k tl xHkhj vijkèkk oky ekey e tekur d vkonu ij fopkj djr le;] U;k;ky; dk vfHk;Dr d fo#) yxk; x; vfHkdFku dh iÑfr] ml <x ftl <x l vfHkdfFkr :i l vijkèk dkfjr fd;k x;k g] vijkèk dh xHkhjrk rFkk gR;k dk xHkhj vijk/k dkfjr dju d dkj.k vfHk;Drk dh nk"kflf) fd; tku d mijkr mUg fueDr dju dh okNuh;rk tl llxr dkjdk ij fopkj djuk pkfg,A vk{kfir vkn'k ikfjr djr le; mPp U;k;ky; }kjk bu igyvk ij fopkj ugh fd;k x;k gA**

(tkj fn;k x;k)

(ix) (2008) 11 SCC 180 e fjikV fd; x; f[kykMh cuke mÙkj in'k jkT; ,o ,d vU; d ekey e ekuuh; mPpre U;k;ky; }kjk ijk, l0 4] 6] 12 ,o 13 e tk vfHkfuèkkfjr fd;k x;k g og fuEuor ifBr g%&

" .....

4- tk ,d ek= i{k fy;k x;k Fkk og ;g Fkk fd erd d 'kjhj ij eR; io migfr;k e 3 xeM] ,d vcjMM xeMk rFkk 'kjhj d fofHkUu fgLlk ij fofHkUu vk;kek d pkj fonh.k ?kko Fk tk ykg d NMk }kjk dkfjr ugh fd; tk ldr FkA mudk i{k Fkk fd dN vKkr geykojk u erd dk migfr;k dkfjr fd;k FkkA

.....

6- ifr}}h i{kk dk è;ku e yu d mijkr mPp U;k;ky; u vk{kfir vkn'k l fuEukfdr fu"d"kk d lkFk tekur inku dj fn;k Fkk

.....

12- fy;k x;k m)j.k rFkk mPp U;k;ky; dk vkn'k n'kkrk g fd cf) dk fcYdy bLreky ugh gvk Fkk rFkk llxr igyvk ij fopkj ugh fd;k x;k FkkA

.....

13- vr,o] vk{kfir vkn'k leFkuh; ugh g vkj [kkfjt fd;k tkrk gA iR;Fkh l0 2 dk inÙk tekur jí dh tkrh gA fofèk d vulkj iufopkj.k d fy, ;g ekeyk mPp U;k;ky; dk ifr if"kr fd;k tkrk gA**

4. पूर्वोक्त तथ्यों की दृष्टि में तथा अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों को देखने पर एवं अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा तथा जिस ढ़ंग से वर्तमान अपीलार्थीगण अभियोजन द्वारा किये गये अभिकथनानुसार अपराध में संलिप्त हैं, उसे भी देखते हुए हम विचारण न्यायालय द्वारा उन्हें अधिनिर्णित दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं और, अतएव, दंडादेश के निलम्बन का उनका आग्रह एतद् द्वारा अस्वीकार किया जाता है।

---

ekuuh; vkjî vkjî ilkn] U;k;efr

महेंद्र प्रसाद केसरी

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 04 of 2012. Decided on 3rd January, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 145 एवं 146—जमीन की कुर्की—धारा 146(1) के अधीन यथा अभिकल्पित पक्षकारों के अधिकारों का एक सक्षम न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारण आवश्यक रूप से अंतिम अभिनिर्धारण नहीं होता है—अंतरिम चरण में अभिनिर्धारण अस्थायी भी हो सकता है—जब दं०प्र०सं० की धारा 145 के अधीन एक कार्यवाही का प्रारंभ किया जाना या जारी रहना ही अवैधानिक है, तब दं०प्र०सं० की धारा 146 के अधीन पारित आदेश को अकृतता कहा जा सकता है—जिस क्षण सक्षम न्यायालय अंतरिम चरण में भी एक आदेश पारित कर देता है, एक दंडाधिकारी द्वारा पारित कुर्की का आदेश समाप्त हो जाता है—धारा 146(1) के अधीन पारित कुर्की का आदेश अपास्त किया जाता है—आवेदन अनुज्ञात।

(पैराएँ 8, 13 से 18)

निर्णयज विधि.—(1985)1 SCC 427; 2001(1) JLJR 106 (SC)—Relied; (1998)1 SCC 435; (2004)1 SCC 438—Referred.

अधिवक्तागण.—M/s Jugal Kishore Prasad, S.K. Sinha, For the Petitioner; A.P.P., For the State; Mr. Rajesh Kumar, For the O.P. No.2.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता तथा विपक्षी सं० 2 की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता को सुना।

2. यह प्रतीत होता है कि अनुमण्डल दंडाधिकारी, बरही, हजारीबाग के समक्ष विपक्षी सं० 2 द्वारा एक आवेदन के दाखिले के उपरांत, खाता सं० 57 एवं 17 से सम्बद्ध प्लॉट सं० 1070 पर अवस्थित 0.8 एकड़ क्षेत्रफल वाली जमीन को लेकर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के अधीन एक कार्यवाही प्रारंभ की गयी थी। बाद में, उस कार्रवाई को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन एक कार्यवाही में सम्परिवर्तित कर दिया गया था। तदुपरि, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 146 के अधीन सम्पत्ति की कुर्की करने के लिए विपक्षी सं० 2 द्वारा एक आवेदन दाखिल किया गया था जिस पर 2.2.2011 को एक आदेश पारित किया गया था जिसके द्वारा प्रश्नाधीन जमीन को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 146(1) के अधीन कुर्क कर दिया गया था। दांडिक पुनरीक्षण सं० 61 वर्ष 2011 में पुनरीक्षण न्यायालय के समक्ष कुर्की के उस आदेश को चुनौती दी गयी थी।

3. जब मामला लंबित था, याची द्वारा एक संशोधन याचिका दाखिल की गयी थी जिसके द्वारा उस आदेश को अपास्त करने का आग्रह किया गया था जिसके अधीन 144 की कार्यवाही को दंड प्रक्रिया

संहिता की धारा 145 के अधीन एक कार्यवाही में संपरिवर्तित कर दिया गया था। पुनरीक्षण न्यायालय ने दिनांक 10.6.2011 के अपने आदेश से पुनरीक्षण आवेदन खारिज कर दिया था जो चुनौती के अधीन है।

4. याची की ओर से उपस्थित होनेवाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि जब पुनरीक्षण न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन दाखिल किया गया था, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन पारित एक आदेश को भी इस आधार पर चुनौती दी गयी थी कि विपक्षी सं॰ 2 ने वाद सम्पत्ति पर अधिकार, अभिधान एवं हित की घोषणा के लिए अभिधान वाद सं॰ 155 वर्ष 2009 दाखिल किया है तथा उस अभिधान वाद में कब्जे की प्राप्ति के लिए भी आग्रह किया गया था और, अतएव, जबकि कब्जे से संबंधित मामला सिविल न्यायालय के समक्ष निर्णय के अधीन था, पुनरीक्षण न्यायालय को न केवल दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 146 के अधीन पारित आदेश को बल्कि **अमरेश तिवारी बनाम लालता प्रसाद दुबे एवं अन्य** [2001 (1) JLJR 106 (SC)] के मामले में दिये गये निर्णय की दृष्टि में उस आदेश को भी अपास्त कर देना चाहिए था जिसके अधीन कार्यवाही को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन एक कार्यवाही में सम्परिवर्तित कर दिया गया था, परन्तु विद्वान पुनरीक्षण न्यायालय ने उचित परिप्रेक्ष्य में मामले पर विचार नहीं किया था और अतएव, पुनरीक्षण न्यायालय तथा दंडाधिकारी द्वारा भी पारित आदेश अपास्त किये जाने योग्य है।

5. इसके विरुद्ध, विपक्षी सं॰ 2 की ओर से उपस्थित होनेवाले विद्वान अधिवक्ता श्री राजेश कुमार ने निवेदन किया कि बुनियादी रूप से यह आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 146(1) के अधीन पारित आदेश के विरुद्ध है जो पक्षकारों के कब्जे के अधिकार का सक्षम अधिकारिता के किसी न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किये जाने तक प्रभावी बना रहेगा।

6. इस संबंध में विद्वान अधिवक्ता ने **धरमपाल एवं अन्य बनाम रामश्री (श्रीमती) एवं अन्य [(1993) 1 SCC 435]** तथा **शांति कुमार पंडा बनाम शकुंतला देवी [(2004) 1 SCC 438]** के मामले में भी दिये गये निर्णय पर भरोसा किया है।

7. इस प्रकार, यह निवेदन किया गया कि आक्षेपित आदेशों के साथ किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

8. पक्षकारों के लिए उपस्थित होनेवाले विद्वान अधिवक्ताओं की सुनवाई करने पर, यह प्रतीत होता है कि विपक्षी सं॰ 2 द्वारा दाखिल एक आवेदन पर, प्रारंभ में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के अधीन एक कार्यवाही प्रारंभ की गयी थी जिसे बाद में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन कार्यवाही में संपरिवर्तित कर दिया गया था। तदुपरि, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 146(1) में यथा अंतर्विष्ट प्रावधानों के निबंधनों में कुर्की का एक आदेश पारित किया गया था। पुनरीक्षण न्यायालय के समक्ष धारा 146(1) के अधीन पारित आदेश को चुनौती दी गयी थी। बाद में, एक संशोधन याचिका दाखिल की गयी थी जिसके अधीन उस आदेश, जिसके अधीन कार्यवाही को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन कार्यवाही में संपरिवर्तित कर दिया गया था, को इस आधार पर चुनौती दिया गया था कि विपक्षी सं॰ 2 ने अधिकार, अभिधान एवं हित की घोषणा तथा कब्जे की पुनर्प्राप्ति के लिए भी अभिधान वाद सं॰ 155 वर्ष 2009 दाखिल किया है परन्तु विद्वान दंडाधिकारी ने मामले पर उचित परिप्रेक्ष्य में विचार किये बिना पुनरीक्षण आवेदन खारिज कर दिया था। उनके समक्ष यह तथ्य प्रस्तुत किये जाने के बावजूद कि दो समानांतर कार्यवाहियां चल रही है जो कि विधि के अधीन अनुज्ञेय नहीं हैं।

9. इस संबंध में, **राम सुमेर पुरी महंत बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य [(1985) 1 SCC 427]** के मामले मे दिये गये एक निर्णय को निर्दिष्ट किया जाए जिसमें न्यायाधीशों ने निम्नवत् अभिनिर्धारित किया है :–

^^tc lEifÙk d fy, dkb flfoy ednek yfcr g ftle dCt dk i'u vrxLr g rFkk mldk vfèkfu.k; dj fn;k x;k g] ge lfgrk dh èkkjk 145 d

*vèkhu ,d lekukrj nkfMd dk;okgh ikjHk dju d fy, dkb vkfpR; ugh n[kr gA bl fLFkfr dk fookfnr dju dh dkb xtkb'k ugh g fd gekj le{k iLrr ekey tl ekey e nkfMd U;k;ky; ij flfoy U;k;ky; dh fMØh ckè;dj gkrh gA iR;Fkhx.k d vfèkoDrk bl ifriknuk dk pukrh nu dh fLFkfr e ugh Fk fd lekukrj dk;okfg;k dk tkjh jgu dh vuefr ugh nh tkuh pkfg, rFkk ,d flfoy U;k;ky; dh fMØh gku dh fLFkfr e] nkfMd U;k;ky; dk viuh vfèkdkfjrk dk vkyEc yu dh vuefr ugh nh tkuh pkfg, fo'k"kdj rc tc dCt dh flfoy U;k;ky; }kjk tkp dh tk jgh g rFkk fookn d yfcr jgu d nkjku lEifÙk d i;kIr lj{k.k d fy, i{kdkj 0;kn'k tl vrfje vkn'kk ;k ikid dh fu;fDr d fy, flfoy U;k;ky; d ikl tku dh fLFkfr e gA db ednek dk gkuk i{kdkjk d fgr e ugh gkrk g vkj u gh fujFkd ednek ij lkotfud le; dk cjckn gku nuk pkfg,A vr,o] ge lekèkku g fd lekukrj dk;okfg;k tkjh ugh jguh pkfg,A***

10. अमरेश तिवारी बनाम लालता प्रसाद दुबे एवं अन्य (ऊपर) के मामले में विधि की इसी प्रतिपादना का बाद में अनुसरण किया गया है।

11. इस प्रकार, स्थापित प्रतिपादना की दृष्टि में, पुनरीक्षण न्यायालय को 145 की कार्यवाही हटाने के लिए एक आदेश पारित करना चाहिए था।

12. मामले में और आगे जाते हुए, यह कहा जाता है कि जो पक्ष विपक्षी सं॰ 2 की ओर से लिया गया है, यह है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 146(1) के अधीन एक आदेश एक बार पारित कर दिये जाने पर वह तब तक प्रभावी बना रहेगा जब तक कब्जे के संबंध में पक्षकारों के अधिकारों का सक्षम न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारण नहीं कर दिया जाता है।

13. नि:संदेह यह सत्य है कि विद्वान दंडाधिकारी धारा 145 की उपधारा (1) के अधीन एक आदेश करने के उपरांत वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 146(1) के अधीन सम्पत्ति की कुर्की कर सकता है अगर वह मामले को आपाती मामला समझता है और कुर्की का यह आदेश कब्जे के संबंध में पक्षकारों के अधिकारों का सक्षम न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारण किये जाने तक प्रभावी बना रहता है परन्तु जब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन एक कार्यवाही का प्रारंभ या जारी रहना ही अवैधानिक है, तब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 146(1) के अधीन पारित आदेश को अकृतता कहा जा सकता है।

14. इसके अतिरिक्त, यह कहा जा सकता है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 146(1) के अधीन यथा अभिकल्पित पक्षकारों के अधिकारों का एक सक्षम न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारण अंतिम अभिनिर्धारण नहीं होता। यह अभिनिर्धारण अंतिम चरण में अस्थायी भी हो सकता है जब सक्षम न्यायालय वाद में अंतिम निर्णय के लंबित रहते हुए विवाद के विषय-वस्तु के संबंध में अंतरिम व्यादेश का एक आदेश पारित करता है या प्रापक की नियुक्ति करता है। जिस क्षण सक्षम न्यायालय अंतरिम चरण में भी एक आदेश पारित कर देता है, किसी दंडाधिकारी पारित कुर्की का आदेश समाप्त हो जाता है। विपक्षी सं॰ 2 की ओर से उपरोक्त निर्दिष्ट दोनों मामलों में यह प्रतिपादना अधिकथित की गयी है।

15. पक्षकारों की ओर से उपस्थित होनेवाले विद्वान अधिवक्ता द्वारा इस न्यायालय के समक्ष यह रखा गया है कि जब विपक्षी सं॰ 2 ने अभिधान वाद दाखिल किया था, अस्थायी व्यादेश प्रदान किये जाने के लिए एक आवेदन दाखिल किया गया था, जिसे अस्वीकार किया गया था। विपक्षी सं॰ 2 की ओर से इस अभिवाक का खंडन नहीं किया गया है।

16. इन परिस्थितियों के अधीन धारा 146(1) के अधीन पारित आदेश न केवल इससे ठीक पहले उल्लिखित आधार पर दोषपूर्ण है बल्कि इस आधार पर भी कि कार्यवाही का प्रारंभ किया जाना/जारी रखा जाना बिल्कुल दोष पूर्ण था।

17. तदनुसार, दोनों आदेश दोषपूर्ण होने के कारण एतद् द्वारा अपास्त किये जाते हैं जिनके अधीन 144 की कार्यवाही को 145 की कार्यवाही में सम्परिवर्तित किया गया था तथा कुर्की का आदेश हुआ था।

18. परिणामत:, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkykd flg] U;k;efr

मोस्मात बतासो देवी एवं अन्य

cuke

श्रीमती सीतालो देवी एवं अन्य

Appeal from Appellate Decree No. 446 of 1991(P). Decided on 11th January, 2013.

अभिधान (विभाजन) वाद सं० 3/1961 में श्री हरिवंशी सहाय, अधीनस्थ न्यायाधीश, देवघर द्वारा पारित दिनांक 7.8.1963 के निर्णय तथा डिक्री से उद्भूत अभिधान अपील सं० 83/1963 एवं 91/1986 (राम शंकर चौधरी एवं अन्य बनाम श्रीमती शीतालो देवी एवं अन्य) में श्री गौरी शंकर चौबे, विद्वान न्यायाधीश, गोड्डा द्वारा पारित दिनांक 12.8.1991 के निर्णय तथा डिक्री के विरुद्ध।

हिन्दू विधि—विभाजन—पिछले बंटवारे के अभिवाक को नकारते हुए अवर न्यायालयों द्वारा वाद डिक्री किया गया—कर्त्ता ने वर्ष 1956 में सम्पत्ति बंधक विलेख निष्पादित किया था तथा वर्ष 1962 में बंधक का मोचन किया गया था—वर्ष 1962 तक, सम्पत्ति का बंटवारा नहीं किया गया था—वर्ष 1952 का विभाजन विलेख संदिग्ध बन जाता है—अभिकथित विभाजन विलेख/विभाजन का ज्ञापन अनिबंधित दस्तावेज है तथा उसका निष्पादन संदिग्ध है—कर्त्ता के अवसीयती रहते मृत्यु हो गयी थी—अवर न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्यों के निष्कर्ष में कोई दोष नहीं—अपील खारिज। (पैराएँ 11 से 15)

अधिवक्तागण.—Mr. J.P. Jha, For the Appellants; Mr. Manoj Kumar Sah, For the Respondents.

आलोक सिंह, न्यायमूर्ति.—अभिधान अपील सं० 83/1963 वर्ष (91/1986) राम शंकर चौधरी एवं अन्य बनाम श्रीमती शीतालो देवी एवं अन्य में विद्वान जिला न्यायाधीश, गोड्डा पारित दिनांक 12.8.1991 के निर्णय तथा डिक्री अभिधान (विभाजन) वाद सं० 3/1961 में अधीनस्थ न्यायाधीश, देवघर द्वारा पारित दिनांक 7.8.1963 के निर्णय तथा डिक्री की भी आलोचना करते हुए सि०प्र०सं० की धारा 100 के अधीन दाखिल है यह दूसरी अपील, जिसके द्वारा विद्वान विचारण न्यायालय ने वादी (इसमें प्रत्यर्थी सं०1) के विभाजन के वाद को डिक्री कर दिया है यह घोषित करते हुए कि प्रतिवादी सं०7 आधे हिस्सों का हकदार है जबकि वादी-प्रतिवादी सं० 1, 2 एवं 3 में से प्रत्येक 1/10 वें हिस्से के हकदार हैं और प्रतिवादी सं० 4 एवं 5 अनुसूची 'A' की सम्पत्ति में संयुक्त रूप से 1/10वें हिस्से के हकदार हैं। यह भी घोषित किया गया कि वादी-प्रतिवादी सं० 1, 2 एवं 3 में से प्रत्येक अनुसूची 'B' की सम्पत्ति में 1/5वें हिस्से के हकदार हैं तथा प्रतिवादी सं० 4 एवं 5 संयुक्त रूप से अनुसूची 'B' की सम्पत्ति में संयुक्त रूप से 1/5वें हिस्से के हकदार हैं। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित प्रारंभिक डिक्री को सम्पुष्ट करते हुए अपीलीय न्यायालय द्वारा प्रथम अपील भी उसी से खारिज कर दी गयी थी।

2. अन्य के साथ-साथ वर्तमान मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि वादी-प्रत्यर्थी सं० 1 ने अनुसूची 'A' की सम्पत्ति में 1/10 वें हिस्से तथा अनुसूची 'B' की सम्पत्ति में 1/5 वें हिस्से का दावा करते हुए विभाजन का वाद दाखिल किया था।

3. यह तर्क दिया गया है कि अनुसूची 'A' में वर्णित सम्पत्तियों का संयुक्त रूप से स्वर्गीय मोती लाल चौधरी एवं उसके पिता के भाई जगन्नाथ चौधरी का कब्जा था, जबकि अनुसूची 'B' में वर्णित

सम्पत्तियां स्वर्गीय मोती लाल चौधरी द्वारा अपनी नानी के एक वारिस के तौर पर कुछ मुकदमें के उपरांत अर्जित की गयी थी। अपने पीछे अपनी विधवा प्रतिवादी सं॰ 3, अपने दो पुत्रों- प्रतिवादी सं॰1 एवं 2 तथा अपनी एकमात्र पुत्री वादी तथा पहले से ही मृत अपनी मृतका पुत्री के दो अवयस्क पुत्रों प्रतिवादी सं॰ 7 एवं 8 को छोड़ते हुए मोती लाल चौधरी की दिसम्बर, 1960 में मृत्यु हो गयी थी। प्रतिवादी सं॰ 9 उसके भाई स्वर्गीय जगन्नाथ चौधरी का पुत्र है एवं प्रतिवादी सं॰ 4 एवं 5 प्रतिवादी सं॰ 1-रामशंकर चौधरी के अवयस्क पुत्र हैं तथा प्रतिवादी सं॰ 6, प्रतिवादी सं॰ 2-हरिहर चौधरी का अवयस्क पुत्र है।

4. प्रतिवादी सं॰ 1, 2 एवं 3, जो कि मोती लाल चौधरी के पुत्र एवं विधवा हैं ने संयुक्त लिखित कथन दाखिल किया था। यह बचाव लेते हुए कि स्वर्गीय मोती लाल चौधरी ने अपने जीवन काल में अपने दो पुत्रों-रामेश्वर चौधरी एवं हरिहर चौधरी के बीच अपनी सम्पत्तियों का बंटवारा कर दिया था तथा कृषि योग्य भूमि के केवल पांच बीघा तथा कुछ वास भूमि अपनी तथा अपनी पत्नी के लिए सुरक्षित रखे थे। यह भी तर्क दिया गया है कि वर्ष 1952 में स्वर्गीय मोती लाल चौधरी द्वारा विभाजन का एक ज्ञापन, प्रदर्श-E निष्पादित किया गया था और हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम के प्रवर्तन के पहले सम्पत्ति विभाजन हो गया था, अतएव, वर्तमान वाद के संस्थित किये जाने की तिथि पर तथा हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम के प्रवर्तन के तिथि को भी सम्पत्ति संयुक्त नहीं थी और परिणामत: वादी को पिता स्व॰ मोती लाल चौधरी द्वारा पहले ही अपने दोनों पुत्रों के बीच बांट दी गयी सम्पत्ति में कोई भी हिस्सा नहीं है।

5. विद्वान विचारण न्यायालय ने दिनांक 7.8.1963 के आक्षेपित निर्णय तथा डिक्री द्वारा अभिकथित बंटवारे तथा 1952 के बंटवारे के ज्ञापन पर विश्वास नहीं किया था एवं पाया था कि अनुसूची 'A' एवं 'B' दोनों की सम्पत्तियां स्वर्गीय मोती लाल चौधरी की स्वअर्जित सम्पत्तियां थी; मोती लाल चौधरी की मृत्यु अवसीयती रहते हुए हुई थी; अतएव, अनुसूची 'A' की सम्पत्ति में स्वर्गीय मोती लाल चौधरी के आधे हिस्से तथा अनुसूची 'B' की सम्पत्ति का समान हिस्सों में उसके दोनों पुत्रों, प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 विधवा-प्रतिवादी सं॰ 3, वादी-पुत्री एवं पहले ही मृत्यु को प्राप्त हो चुकी पुत्री के पुत्रों-प्रतिवादी सं॰ 4 एवं 5 के बीच न्यागमन होगा और अंतत: वादी का वाद डिक्री कर दिया था। 1952 का अभिकथित विलेख, जो वादी के अनुसार बंटवारा विलेख है और प्रतिवादीगण के अनुसार बंटवारे का ज्ञापन है, स्टॉम्प ड्यूटी की कमी के कारण परिबद्ध कर दिया गया था तथा उस पर भरोसा नहीं किया गया था।

6. व्यथित अनुभव करते हुए, विद्वान जिला न्यायाधीश के समक्ष प्रथम अपील दाखिल किया गया था। प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित निर्णय तथा डिक्री के विरुद्ध प्रथम अपील भी 22.9.1973 के निर्णय द्वारा प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गयी थी। पटना उच्च न्यायालय के समक्ष दूसरी अपील दाखिल की गयी थी जो कि अपील सं॰ 75 वर्ष 1974 थी। तथापि, दूसरी अपील में, प्रश्न इस संबंध में उठा था कि क्या अपीलार्थीगण एक ऐसे दस्तावेज का लाभ प्राप्त कर सकते हैं जिसे विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय स्टाम्प अधिनियम की धारा 35 के प्रावधानों के अधीन परिबद्ध करना इप्सित किया गया था। दिनांक 4.9.1985 के निर्णय द्वारा, अपील प्रथम अपीलीय न्यायालय को प्रतिप्रेषित कर दी गयी थी यह सम्परीक्षित करते हुए कि प्रतिवादीगण विलेख (प्रदर्श E) पर स्टाम्प ड्यूटी की कमी का भुगतान कर सकते हैं तथा प्रथम अपीलीय न्यायालय पहली अपील का पुन: निर्णय करेगा। प्रतिप्रेषण के उपरांत, प्रथम अपील पुन: दिनांक 12.8.1991 के आक्षेपित निर्णय तथा डिक्री द्वारा खारिज कर दी गयी थी। व्यथित अनुभव करते हुए, वर्तमान दूसरी अपील दाखिल की गयी है।

7. दिनांक 16.12.1992 के आदेश द्वारा इस न्यायालय ने विधि के निम्नांकित तात्विक प्रश्नों पर अपील को ग्रहण किया था:-

^^1- D;k voj vihyh; U;k;ky; ;g vfHkfuèkkfjr dju e lgh g fd cVokj d nLrkot (in'k E)] ;fi bl U;k;ky; d vkn'k }kjk ifjc) fd;k x;k g] cVokj d ,d lk{; d rkj ij bLreky ugh fd;k tk ldrk vkj doy lEik'fod mí';k d fy, bldk voykdu fd;k tk ldrk g\

2- D;k voj vihyh; U;k;ky; cVokjk foy[k@;k Kkiu (in'k E) vLohdkj dju e lgh g tcfd ikMt 'kYd dk Hkxrku dj fn;k x;k g\

3- D;k voj vihyh; U;k;ky; cVokj dk nLrkot (in'k E) vLohdkj dju e lgh g bl vkèkkj ij fd ifroknhx.k }kjk vfHkfuèkkfjr ;Fkk mfYyf[kr lEifÙk;k mud fyf[kr dFku e mfYyf[kr tehu d fooj.kk d lkFk ey ugh [kkrh**

4- D;k voj vihyh; U;k;ky; ;g vfHkfuèkkfjr dju e lgh g fd cVokjk foy[k (in'k E) tk ;fi ifjc) g] ifroknhx.k d fy, fdlh dke dk ugh gk ldrk\

8. मैंने विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री जे॰पी॰ झा तथा प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित होनेवाले विद्वान अधिवक्ता श्री मनोज कुमार साह को भी सुना है।

9. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं की विस्तार से सुनवाई करके तथा अभिलेख का परिशीलन करके, इस न्यायालय तथा पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं ने भी पाया कि 16.12.1992 के आदेश द्वारा इस न्यायालय द्वारा विरचित विधि के प्रश्न वस्तुतः इस अपील के निष्पक्ष निर्णय के लिए उद्भूत नहीं होते और, वस्तुतः, वर्तमान अपील का निर्णय करने के उद्देश्य के लिए विधि का निम्नांकित तात्विक प्रश्न उद्भूत होता है:–

^^D;k lEifÙk dk ikjLifjd :i l o"k 1952 e ifroknh l0 1 ,o 2 d chp cVokjk fd;k x;k Fkk vkj cVokj dk vfHkdfFkr Kkiu@cVokjk foy[k] in'k E oLrr% dHkh Hkh oknh d firk Lox%; ekrh yky pkèkjh }kjk fu"ikfnr fd;k x;k Fkk**

10. इसमें उपरोक्त यथा विरचित विधि के नये विरचित प्रश्न पर पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को विस्तार से सुना गया है।

11. जैसा कि प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा सम्परीक्षित किया गया है, निर्विवाद रूप से श्री मोती लाल चौधरी ने स्वयं संयुक्त परिवार के कर्ता के तौर पर स्वयं को दर्शाते हुए तथा प्रश्नाधीन सम्पत्ति को बंधक रखते हुए भुगतबंधा के तौर पर ज्ञात दस्तावेज (बंधक विलेख) 1956 में निष्पादित किया था। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने विनिर्दिष्टतः सम्परीक्षित किया था कि प्रतिवादी सं॰ 1 द्वारा प्रस्तुत इस प्रभाव का स्पष्टीकरण कि स्वर्गीय मोती लाल चौधरी ने पारिवारिक कर्ज, जो स्वर्गीय मोती लाल चौधरी द्वारा तब लिया गया था जब सम्पत्ति संयुक्त थी के पुनर्भुगतान के लिए वर्ष 1956 में स्वर्गीय मोती लाल चौधरी ने भुगतबंधा (बंधक विलेख) निष्पादित किया था, विश्वसनीय नहीं है। विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने यह भी सम्परीक्षित किया है कि अगर 1952 में कोई बंटवारा हुआ होता, जैसा कि प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 द्वारा अभिकथित किया गया है, स्वर्गीय मोती लाल चौधरी के लिए वर्ष 1956 में उस सम्पत्ति का बंधक विलेख निष्पादित करने का कोई अवसर या आवश्यकता नहीं थी जिसका अब वह संयुक्त स्वामी नहीं रह गया था और जिसे 1952 में पहले ही विभाजित कर दिया गया था।

12. इस स्वीकृत तथ्य की दृष्टि में कि स्वर्गीय मोती लाल चौधरी ने 1956 में प्रश्नाधीन सम्पत्ति का एक बंधक विलेख तथा वर्ष 1962 में बंधक का मोचन निष्पादित किया था, यह सिद्ध करता है कि वस्तुतः 1962 तक सम्पत्ति का बंटवारा नहीं किया गया था। और यह प्रदर्श E, अर्थात्, 1952 के बंटवारा विलेख की विशुद्धता के बारे में गंभीर संदेह उत्पन्न करता है। इससे भी बढ़कर, प्रदर्श E, अभिकथित बंटवारा विलेख/बंटवारे का ज्ञापन अनिर्बंधित दस्तावेज है तथा उसका निष्पादन अति संदिग्ध है।

13. इसकी दृष्टि में, मैं दोनों अवर न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्य के इन निष्कर्षों में कोई दोष नहीं पाता हूँ कि स्वर्गीय मोतीलाल चौधरी के पास मौजूद सम्पत्ति पैतृक नहीं थी। मोती लाल चौधरी की मृत्यु अवसीयती रहते हुए हुई थी और वस्तुतः सम्पत्ति का कभी भी 1952 में बंटवारा नहीं किया गया था, जैसा कि प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 द्वारा अभिकथित किया गया है यथा पुनः विरचित विधि के प्रश्न का वादी के पक्ष में तथा अपीलार्थीगण के विरुद्ध जवाब दिया जाता है।

14. निर्विवाद रूप से, प्रतिवादी सं॰3-स्वर्गीय मोती लाल चौधरी की विधवा एवं वादी की माता तथा प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 की अवसीयती रहते प्रथम अपील के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गयी है, अतएव, अनुसूची 'A' की सम्पत्ति में उसे दसवें हिस्से तथा उसकी अनुसूची 'B' की सम्पत्ति में 1/5 वें हिस्से का समान रूप से तथा संयुक्त रूप से वादी एवं प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 तथा प्रतिवादी सं॰ 4 एवं 5 के बीच न्यागमन होगा।

15. परिणामतः, उपरोक्त उपांतरण के साथ, वर्तमान दूसरी अपील विफल होती है और एतद् द्वारा खारिज की जाती है। तथापि, मामले के विचित्र तथ्यों एवं परिस्थितियों में पक्षकारों को अपने खर्चों का वहन स्वयं करने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr ;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t ;k jk;] U;k;efr

रामधनी प्रजापति एवं अन्य

cuke

मेसर्स फेकन कंस्ट्रक्शन एंड इंडस्ट्रीज प्रा॰ लि॰ एवं अन्य

L.P.A. No. 435 of 2011. Decided on 26th November, 2012

भारत का संविधान–अनुच्छेद 21 एवं 226—पुलिस संरक्षण–पक्षों के बीच अभिधान वाद लंबित है–सिविल विवाद के मामलों में कार्यपालकों और पुलिस प्राधिकारियों को अंतर्ग्रस्त करना निजी पक्षों की सुज्ञात युक्ति है ताकि न्यायालय के समक्ष यह प्रक्षेपित किया जा सके कि रिट याची राज्य के विरुद्ध अनुतोष इप्सित कर रहा है जबकि ऐसे विवाद में वस्तुतः राज्य अथवा इसके किसी अभिकरण के विरुद्ध अनुतोष नहीं है–सिविल न्यायालय न केवल व्यादेश का अंतरिम आदेश पारित करके बल्कि रिसीवर भी नियुक्त करके और यदि आवश्यक हो, पुलिस मदद प्रदान करके अत्यावश्यक स्थिति से निपट सकते हैं–पुलिस मदद प्राप्त करने के प्रयोजन से भी दो पक्षों के बीच समस्त निजी विवादों में सिविल न्यायालय के निर्णय के लिए ऐसे विवाद को छोड़ना सदैव बेहतर है, जहाँ सिविल न्यायालय समस्त पहलूओं और ताथ्यिक मैट्रिक्स का परिशीलन कर सकता है जिसका परीक्षण सामान्यतः उच्च न्यायालय अनुच्छेद 226 के अधीन रिट अधिकारिता में नहीं कर सकता है–रिट न्यायालय को छद्मावरण लेकर सिविल न्यायालय बनने नहीं देना चाहिए। (पैरा 12)

अधिवक्तागण.–Mr. V. Shivnath, For the Appellants; Mr. P.K. Prasad, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. वर्तमान अपीलार्थीगण डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 639 वर्ष 2010 में पारित दिनांक 21.10.2011 के आदेश के विरुद्ध व्यथित है जिसके द्वारा 17 व्यक्तियों–अपीलार्थीगण द्वारा दाखिल अंतर्वर्ती आवेदन आई॰ ए॰ सं॰ 3087 वर्ष 2011 को अस्वीकार करने के बाद विद्वान एकल न्यायाधीश ने रिट याचिका को

इस निर्देश के साथ निपटा दिया कि याची एक बार फिर यह सुनिश्चित करने के लिए कि रिट याचीगण के जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति को असामाजिक तत्वों से सुरक्षित किया जाए और छह सप्ताह की अवधि के भीतर आवश्यक खर्च और व्यय को याची द्वारा जमा किए जाने पर आवश्यक किया जाएगा, उपायुक्त, राँची और वरीय आरक्षी अधीक्षक, राँची के समक्ष आवेदन देगा।

3. वर्तमान मामले के तथ्य, जैसा रिट याची द्वारा अपनी रिट याचिका में कथन किया गया है, ये हैं कि वर्तमान विवाद राँची शहर में 62 सर्कुलर रोड, राँची पर मौजा कोन्का में अवस्थित लगभग 5.528 एकड़ क्षेत्रफल माप वाली एम॰ एस॰ भूखंड सं॰ 1608 और 1609, राँची नगर निगम, राँची के वार्ड सं॰ VII (पुराना), 17 (नया) में नगरपालिका होल्डिंग सं॰ 488 (पुराना), 1185 (नया) के तत्सम, से संबंधित भूमि, भवन और बागान से गठित अचल संपत्ति से संबंधित है। संपत्ति का अभिकथित अभिलिखित स्वामी श्री आर॰ एन॰ मुखर्जी था जिसकी मृत्यु अपने पीछे अपने पुत्र श्री बिरेन्द्र नाथ मुखर्जी को छोड़ते हुए दिनांक 15 मई, 1936 को हो गयी और यह अभिकथित किया गया है कि उसने संपूर्ण संपदा को विरासत में पाया था। श्री बिरेन्द्र नाथ मुखर्जी ने दिनांक 17.6.1937 को अपना अंतिम वसीयत निष्पादित किया जिसके अधीन श्री बिरेन्द्र नाथ मुखर्जी की पत्नी लेडी रानू प्रीति मुखर्जी को उक्त संपत्ति के ऊपर आजीवन हित दिया गया था और उसकी मृत्यु पर इसे उसके एकमात्र पुत्र रोमेन्द्र नाथ मुखर्जी पर निहित किया गया था। नवंबर, 1982 में श्री बिरेन्द्र नाथ मुखर्जी की मृत्यु अपने पीछे अपनी विधवा लेडी रानू प्रीति मुखर्जी, एकमात्र पुत्र अर्थात् रोमेन्द्र नाथ मुखर्जी और दो पुत्रियों अर्थात् नीता पिल्लई और गीता मुखर्जी को छोड़ते हुए हो गयी। उक्त वसीयत के संबंध में लेडी रानू प्रीति मुखर्जी के पक्ष में प्रोबेट केस सं॰ 12 वर्ष 1984 में कलकत्ता उच्च न्यायालय से प्रोबेट प्राप्त किया गया था। दिनांक 20.2.1993 को श्री रोमेन्द्र नाथ मुखर्जी की मृत्यु अपनी माता लेडी रानू प्रीति मुखर्जी, अपनी विधवा दीप्ति मुखर्जी और दो पुत्रों एवं दो पुत्रियों को अपने पीछे छोड़ते हुए निर्वसीयत हो गयी। श्रीमती रानू प्रीति मुखर्जी की मृत्यु दिनांक 15 मार्च, 2000 को हो गयी।

4. चाहे जो भी हो, विभिन्न तिथियों पर रजिस्टर्ड विभिन्न विक्रय विलेखों द्वारा संपत्ति अंतत: रिट याची मेसर्स फेकन कंस्ट्रक्शंस एण्ड इंडस्ट्रीज प्रा॰ लि॰ को बेच दी गयी थी और रिट याची के अनुसार उक्त कंपनी को कब्जा भी दे दिया गया था। तत्पश्चात्, याची ने फरवरी, 2006 और जनवरी, 2008 में अपना नाम नामांतरित करवाया।

5. किसी श्री जनाब सलीम साहेब ने दिनांक 14.6.1986 के किसी करार के आधार पर मुंसिफ, राँची के न्यायालय में लेडी रानू प्रीति मुखर्जी के विरुद्ध व्यादेश के लिए वाद-अभिधान वाद सं॰ 35 वर्ष 1990 दाखिल किया। उक्त वाद के लंबित रहने के दौरान उक्त रानू प्रीति मुखर्जी की मृत्यु हो गयी और उसके विधिक प्रतिनिधियों को प्रतिस्थापन द्वारा पक्ष के रूप में जोड़ा गया था। दिनांक 12.9.2008 को उक्त अभिधान वाद सं॰ 35 वर्ष 1990 अपर मुंसिफ, राँची द्वारा उसमें यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया गया था कि दिनांक 14.6.1986 के अभिकथित करार में कोई बल नहीं है और लेडी रानू प्रीति मुखर्जी के सीमित अधिकार के कारण यह प्रवर्तनीय नहीं है।

6. उक्त सिविल मुकदमा के अतिरिक्त, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन कार्यवाही की गयी थी जिसे दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 309 वर्ष 2008 में चुनौती दी गयी थी और अंतत: उक्त दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 309 वर्ष 2008 को वापस ले लिया गया था और कार्यपालक दंडाधिकारी ने दिनांक 18.4.2009 के आदेश के तहत दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144/145 के अधीन कार्यवाही छोड़ दिया था।

7. वाद संपत्ति के प्रति वादी के हक की घोषणा के लिए और अभिधान वाद सं॰ 241 वर्ष 2001 के प्रतिवादीगण के विरुद्ध स्थायी व्यादेश इप्सित करते हुए पाँच प्रतिवादीगण के विरुद्ध सब-जज I, राँची

के न्यायालय में रिट याची के विक्रेता श्रीमती दीप्ति मुखर्जी द्वारा अभिधान वाद सं॰ 241 वर्ष 2001 दाखिल किया गया था। प्रतिवादी सं॰ 1 वादी के हक दावा का प्रतिवाद कर रहा था और संपत्ति के ऊपर अपने हक का दावा कर रहा था और उसने अभिवचन किया कि कुछ संपत्ति के संबंध में पहले के वाद सं॰ 35 वर्ष 1990 के लंबित रहने की दृष्टि में वर्तमान वाद टिक नहीं सकता है। जनाब सलीम साहेब जिसका अभिधान वाद सं॰ 35 वर्ष 1990 पहले ही खारिज किया जा चुका था, वाद में पक्ष के रूप में पक्षकार बनना चाहता था किंतु रिट याची के वादी/विक्रेता द्वारा उक्त वाद सं॰ 241 वर्ष 2001 को वापस लेना इप्सित किया गया था जिस पर प्रतिवादी सं॰ 1 द्वारा आपत्ति की गयी थी और प्रतिवादी सं॰ 1 ने भी वाद में वादी के रूप में अपना पक्षांतरण इप्सित किया। विचारण न्यायालय ने दिनांक 11.10.2004 के विस्तृत आदेश के तहत वादीगण को वाद सं॰ 241 वर्ष 2001 वापस लेने की अनुमति दिया और इसी समय पर उसको वादी के रूप में पक्षांतरित करने के लिए प्रतिवादी की प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया। सिविल पुनरीक्षण याचिका सं॰ 4 वर्ष 2004 दाखिल करके दिनांक 11.10.2004 के आदेश को चुनौती दी गयी थी जिसे दिनांक 23.2.2005 के आदेश के तहत विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा खारिज कर दिया गया था।

8. रिट याची के निदेशक किसी श्री कुमुद कुमार झा के प्रतिवादी सं॰ 15 के रूप में पक्षकार बनाते हुए और प्रतिकूल कब्जा द्वारा हक और व्यादेश का दावा करते हुए वर्तमान अपीलार्थीगण द्वारा अभिधान वाद सं॰ 359 वर्ष 2007 दाखिल किया गया था और उक्त अभिधान वाद विचारण न्यायालय में लंबित है। किंतु, रिट याची/प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार उक्त अभिधान वाद में वादीगण द्वारा दाखिल व्यादेश आवेदन खारिज कर दिया गया था।

9. इन तथ्यों की पृष्ठभूमि में, यह प्रतीत होता है कि चारदीवारी का निर्माण करने के लिए पुलिस की मदद प्राप्त करने के लिए वादीगण प्रशासनिक प्राधिकारी के पास गए। जब प्रशासनिक प्राधिकारी ने रिट याची की बात नहीं मानी, रिट याची वर्तमान रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 639 वर्ष 2010 दाखिल करके इस न्यायालय के पास आया और अनुतोष इप्सित किया कि शहर उप आरक्षी अधीक्षक और अनुमंडलाधिकारी, राँची को संपत्ति जिसे याची ने खरीदा था के ऊपर चारदीवार बनाने के लिए याची को सक्षम बनाने में पुलिस मदद प्रदान करने का निर्देश दिया जाए। इस रिट याचिका में, अपीलार्थीगण ने इस अभिवचन के साथ कि हक की घोषणा के लिए उनका सिविल वाद विचारण न्यायालय में लंबित है जिसमें उनको मध्यक्षेप करने और विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष कतिपय तात्विक तथ्यों को अभिलेख पर प्रस्तुत करने की अनुमति देने के लिए अपीलार्थीगण की प्रार्थना को अस्वीकार करते हुए उक्त आक्षेपित आदेश पारित किया गया था और विद्वान एकल न्यायाधीश ने ''असामाजिक तत्वों'' के विरुद्ध अनुतोष के लिए ऐसे प्रशासनिक एवं पुलिस प्राधिकारी के समक्ष आवेदन दाखिल करने का निर्देश रिट याची को दिया गया था, पक्ष के रूप में पक्षकार बनाए जाने के लिए आवेदन दाखिल किया। अत: आवेदकों द्वारा इस एल॰ पी॰ ए॰ को दाखिल किया गया है, जिनका पक्ष के रूप में पक्षकार बनाए जाने के लिए आवेदन अस्वीकार कर दिया गया है।

10. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने इस तथ्यपरक स्थिति में उनको पक्ष के रूप में पक्षकार बनाने के लिए आवेदकों का आवेदन अस्वीकार करने में विधि की गंभीर गलती की जब आवेदकगण-अपीलार्थीगण ने रिट याचिका दाखिल किए जाने के काफी पहले सिविल न्यायालय के समक्ष पहले ही वाद दाखिल किया है और आवेदकगण-अपीलार्थीगण प्रतिकूल कब्जा द्वारा विवादग्रस्त संपत्ति के ऊपर अपने हक का दावा कर रहे हैं। याचीगण की कंपनी का निदेशक अभिधान वाद सं॰ 359 वर्ष 2007 में पहले ही पक्षकार प्रतिवादी था। विद्वान एकल न्यायाधीश ने आवेदकगण-अपीलार्थीगण द्वारा वाद दाखिल किए जाने के तथ्य को ध्यान में लिया है किंतु प्रासंगिक तात्विक तथ्यों को अभिलेख पर प्रस्तुत करने का अवसर दिए बिना जिन्हें पक्ष बनने के बाद विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता था और ऐसे मामले में आवेदकगण-अपीलार्थीगण का

आवेदन अस्वीकार कर दिया जहाँ सिविल वाद में पक्षों द्वारा हर प्रकार के अनुतोषों का दावा किया जा सकता था। यह निवेदन किया गया है कि रिट याची ने जानबूझकर अभिधान वाद सं॰ 359 वर्ष 2007 के लंबित होने के तथ्य का उल्लेख इस तथ्य के बावजूद नहीं किया था कि याची कंपनी के निदेशक ने पहले ही उस वाद में लिखित कथन दाखिल किया था जिसकी प्रति इस एल॰ पी॰ ए॰ के साथ अपीलार्थीगण द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत की गयी है। उक्त कारणों की दृष्टि में, विद्वान एकल न्यायाधीश को रिट याचिका ग्रहण नहीं करना चाहिए था ताकि कोई आदेश पारित किया जा सके जिसे पारित किया जा सकता है अथवा पक्षों में से किसी के द्वारा सिविल न्यायालय से प्राप्त किया जा सकता था, यदि पक्षों में से किसी का वैध दावा था। यह निवेदन किया गया है कि आवेदकगण–अपीलार्थीगण ने अभिधान वाद सं॰ 359 वर्ष 2007 की प्रति को अभिलेख पर प्रस्तुत किया था जिसे अनदेखा किया गया है।

11. निजी प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया कि वर्तमान अपीलार्थीगण का विवादित संपत्ति के ऊपर अधिकार, हक और हित नहीं है। यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान अपीलार्थीगण उक्त जवाब सलीम साहेब के माध्यम से अधिकार, अभिधान तथा हित का दावा कर रहे है जिसका दावा पहले ही सिविल न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है। यह भी निवेदन किया कि वर्तमान अपीलार्थीगण जनाब सलीम साहेब द्वारा स्थापित किए गए हैं, यह निवेदन भी किया गया है कि चूँकि रिट याची का हक स्पष्ट है और कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा जारी प्रोबेट के आदेश, जो सर्वबंधी आदेश है और न कि व्यक्तिबंधी आदेश, इसकी दृष्टि में किसी के द्वारा इस पर विवाद नहीं किया जा सकता है, अत: रिट याची प्रत्यर्थी को ऐसी स्थिति में जहाँ अपीलार्थीगण द्वारा दाखिल वाद में भी रिट याची के विरुद्ध व्यादेश का आदेश नहीं है और जहाँ व्यादेश आवेदन अस्वीकार कर दिया गया है, प्रशासनिक मदद अथवा पुलिस मदद इप्सित करने का अधिकार था और, इसलिए, उन प्राधिकारीगण जिन्होंने रिट याची को पूर्ण सहायता प्रदान नहीं किया था के विरुद्ध भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन निर्देश इप्सित करने का भी अधिकार था। यह निवेदन भी किया गया है कि पहले भी ''असामाजिक तत्वों'' ने विवाद सृजित करने का प्रयास किया था जिस पर दं॰ प्र॰ सं॰ की धाराओं 144/145 के अधीन मामला दर्ज किया गया था। उस तथ्यपरक स्थिति में वादी से दीर्घकालिक सिविल मुकदमें में उलझने की उम्मीद नहीं की जाती थी जिसमें केवल लंबी प्रक्रिया के कारण याची का समय बर्बाद होगा। यह निवेदन भी किया गया है कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश केवल उसकी संपत्ति की सुरक्षा के लिए रिट याची को आवश्यक मदद प्रदान करने के लिए है जिसके लिए अपीलार्थीगण को व्यथित नहीं किया जा सकता है।

12. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों पर विचार किया है और मामले के तथ्यों का परिशीलन किया है। आरंभ में ही, हम कथन कर सकते हैं कि यह निजी पक्षों के दो संवर्गों के बीच सिविल विवाद के कारण था; पहले संपत्ति के स्वामी के संततियों के बीच मुकदमा हो सकता था और किसी निजी व्यक्ति जनाब सलीम साहेब, जिनका वाद सिविल न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था, के पक्ष में अधिकार सृजित करने वाले किसी करार का दावा हो सकता है और संपत्ति को विरासत में पाने के अधिकार के संबंध में मुकदमा हो सकता है जो पक्षों के पक्ष में प्रोबेट के प्रदान द्वारा अंतिमता प्राप्त कर चुका था और उन व्यक्तियों द्वारा रिट याची के पक्ष में संपत्ति का अंतरण हो सकता है किंतु तब भी, ऐसी तथ्यपरक स्थिति में जहाँ वर्तमान रिट याचिका दाखिल किए जाने के लगभग तीन वर्ष पहले अपीलार्थीगण द्वारा प्रतिकूल कब्जा के आधार पर हक की घोषणा के लिए वाद दाखिल किया गया था, तब ऐसी तथ्यपरक स्थिति में, प्रशासनिक प्राधिकारीगण और पुलिस प्राधिकारीगण भी अभिधान वाद सं॰ 359 वर्ष 2007 में मुकदमा के पक्षों को कोई पुलिस मदद नहीं प्रदान करने में पूर्णत: न्यायोचित थे। उस तथ्यपरक स्थिति में, रिट याचिका में पक्ष के रूप में पक्षकार बनाए जाने के लिए अपीलार्थीगण के आवेदन को अस्वीकार

करने का कोई औचित्य नहीं था जो न केवल कागजी हक का दावा कर रहे हैं बल्कि स्वयं का संपत्ति पर काबिज होने का भी दावा कर रहे हैं और अभिधान वाद सं॰ 359 वर्ष 2007 में प्रतिकूल कब्जा द्वारा अपने हक की घोषणा इप्सित कर रहे हैं। वर्तमान विवाद में राजकीय कृत्य का कोई तत्व नहीं था जैसा रिट याचिका में रिट याची द्वारा स्थापित किया गया है। सिविल विवाद मामलों में कार्यपालकों और पुलिस प्राधिकारियों को अंतर्ग्रस्त करना निजी पक्षों की सुज्ञात युक्ति है ताकि न्यायालय के समक्ष प्रक्षेपित किया जा सके कि रिट याची राज्य के विरुद्ध अनुतोष इप्सित कर रहा है जबकि ऐसे विवाद में वस्तुत: राज्य अथवा इसके अभिकरण के विरुद्ध अनुतोष नहीं है। न्यायालय की प्रक्रिया को चालाकी से मात देने के लिए इस ढंग को अपनाया जाता है और हम यह संप्रेक्षित करने के लिए मजबूर हैं कि एक या दूसरे बहाने की मदद से और यह प्रक्षेपित करके कि यदि पुलिस मदद नहीं दी जाती है यह विधि व्यवस्था की समस्या सृजित करेगी और इसलिए ऐसे चतुर व्यक्तियों के हित की रक्षा करना राज्य का कर्तव्य है जो विधि के न्यायालय से पुलिस मदद का भी समुचित आदेश प्राप्त कर सकते थे, न्यायालय के प्राधिकार को विकृत करने के लिए ऐसी युक्ति अपनायी जाती है। कभी-कभी न्यायालयों को इस तर्क से प्रभावित किया जाता है कि सिविल मामला लंबा समय लेगा और उस अवधि के दौरान पक्ष जो न्यायालय के पास आया, उसके हित की सुरक्षा की जाए। ऐसा करते हुए न्यायालय अनदेखा कर सकते हैं कि सिविल न्यायालयों के पास किसी अन्य न्यायालय की तुलना में सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 9 के अधीन कहीं अधिक शक्ति है सिवाए उन शक्तियों के जिनको सांविधिक प्रावधान द्वारा सिविल न्यायालय की अधिकारिता से वापस लिया गया है। सिविल न्यायालय न केवल व्यादेश का अंतरिम आदेश पारित करके बल्कि रिसीवर भी नियुक्त करके और यदि आवश्यक हो, पुलिस मदद प्रदान करके अत्यावश्यक स्थिति को संभाल सकते हैं। उस स्थिति में, दो पक्षों के बीच समस्त निजी विवादों, पुलिस मदद लेने के प्रयोजन से भी, को सिविल न्यायालय के निर्णय के लिए छोड़ना सदैव बेहतर है जहाँ सिविल न्यायालय समस्त पहलूओं और ताथ्यिक मैट्रिक्स का परिशीलन कर सकता है जिनका परीक्षण सामान्यत: उच्च न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट अधिकारिता में नहीं कर सकता है। यहाँ, इस मामले में, निदेशकों में से एक पहले ही अभिधान वाद सं॰ 359 वर्ष 2007 में पक्ष था और कंपनी भी पक्ष के रूप में पक्षकार बनाए जाने के लिए आवेदन दे सकती थी और यदि यह महसूस करती है कि यह वाद का पक्ष नहीं है, यह समुचित अनुतोष के लिए सिविल न्यायालय में वाद दाखिल कर सकती थी और अपीलार्थीगण के विरुद्ध व्यादेश के समुचित अनुतोष के लिए प्रार्थना कर सकती थी और यदि आवश्यक था, पुलिस मदद की प्रार्थना भी कर सकती थी। हमारा सुविचारित मत है कि न्यायालय को नागरिक एवं राज्य के बीच विवाद और निजी पक्षों के बीच विवाद को सावधानीपूर्वक पृथक करना चाहिए और इसे ऐसा करना होगा। छद्मावरण पर सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के अधीन रिट न्यायालय को सिविल न्यायालय के रूप में बनाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

13. तथ्यों से यह प्रतीत होता है कि पहचान किए जा चुके पक्षों के बीच विवाद, जो वाद सं॰ 359 वर्ष 2007 के वाद पत्र की प्रति से प्रकट है, और इसलिए संपत्ति जिसे वे अपना होने का दावा कर रहे हैं के संबंध में किसी आदेश को पारित किए जा सकने के पहले वे परिलक्षित पक्षगण सुनवाई के हकदार थे। अभिलेख पर अभिधान वाद सं॰ 359 वर्ष 2007 के वादपत्र की प्रति दाखिल किए जाने के बावजूद अपीलार्थीगण को विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा ऐसा अवसर नहीं दिया गया था। विद्वान एकल न्यायाधीश का संप्रेक्षण कि आवेदकगण ने आवेदन दाखिल किया है और अभिधान वाद सं॰ 359 वर्ष 2007 के वाद पत्र की प्रति को अभिलेख पर प्रस्तुत किया है, किंतु किसी प्राख्यान के बिना कि कोई व्यादेश प्रदान किया गया है या नहीं, उपदर्शित करता है कि यह परीक्षण नहीं किया गया है कि क्या किसी व्यादेश की आवश्यकता थी और यदि अपीलार्थीगण द्वारा इसकी प्रार्थना नहीं भी की गयी थी, तब भी मामला सिविल न्यायालय के समक्ष विचाराधीन था जहाँ प्रतिवादीगण भी व्यादेश का अनुतोष और पुलिस मदद भी प्राप्त

कर सकते थे। अत:, इस आधार पर भी आवेदकगण–अपीलार्थीगण के आवेदन को अस्वीकार करने वाला विद्वान एकल न्यायाधीश का आदेश पूर्णत: अवैध था। याची को उपायुक्त, राँची और वरीय पुलिस अधीक्षक, राँची के समक्ष आवेदन देने की अनुमति देते हुए, ताकि ''असामाजिक तत्वों'' के विरुद्ध याची के जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति का संरक्षण प्राप्त किया जा सके विद्वान एकल न्यायाधीश के संप्रेक्षण ने इस तथ्य को भी ओझल कर दिया कि व्यक्ति, जो वर्तमान रिट याचिका दाखिल किए जाने के तीन वर्ष पहले विधि के न्यायालय के पास पहले ही आए है, को ''असामाजिक तत्व'' नहीं कहा जा सकता था। इस प्रकार के आदेश निर्देश की ओट में अन्याय करने के लिए प्रशासनिक प्राधिकारियों और पुलिस प्राधिकारियों के हाथों में औजार हो सकते हैं और प्रत्यर्थी/रिट याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार दिनांक 21.10.2011 के आदेश के फलस्वरुप, केवल रिट याची संपत्ति, जो अभिधान वाद सं॰ 359 वर्ष 2007 में मुकदमा का विषय वस्तु है, के ऊपर चारदीवारी निर्मित कर सकता था। अत:, दिनांक 21.10.2011 के इस आदेश द्वारा पक्षों में से एक को संपत्ति, जो वाद का विषय वस्तु है में हस्तक्षेप करने की अनुमति दी गयी है। इस मोड़ पर, यहाँ यह उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि रिट याची ने आरंभ में प्रशासनिक और पुलिस मदद लेने का प्रयास किया जिसे प्रशासनिक एवं पुलिस प्राधिकारियों द्वारा उसे नहीं दिया गया था और जब उसने चारदीवारी का निर्माण करने का प्रयास किया, वह प्रतिरोध के कारण ऐसा नहीं कर सका था और रिट याची ने स्वयं स्वीकार किया कि जब उसने स्वयं अपने गृह का चारदीवारी निर्माण करने का प्रयास किया, कतिपय असामाजिक तत्वों ने उपद्रव सृजित करने का प्रयास किया जबकि यह अविवादित तथ्य है कि ज्ञात व्यक्तियों ने वाद दाखिल करके विधि की मदद लेने का प्रयास किया। अत:, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 21.10.2011 का आदेश तथ्य की इस गलत उपधारणा पर अग्रसर हुआ कि कुछ ''असामाजिक तत्व'' रिट याची के गृह की चारीदवारी, के निर्माण का प्रतिरोध कर रहे हैं।

14. उक्त कारणों की दृष्टि में, हमारा सुविचारित मत है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने पक्ष के रूप में पक्षकार बनाए जाने के लिए अपीलार्थीगण के आवेदन को अस्वीकार करके विधि की गलती की। चूँकि दोनों पक्षों द्वारा गुणागुण पर मामले पर तर्क किया गया है, अत:, हमारा सुविचारित मत है कि रिट याचिका अनुतोष, जिसे निजी पक्ष द्वारा निजी पक्ष के विरुद्ध भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन प्राप्त नहीं किया जा सकता था और जिसमें हक के विवाद सहित सिविल मुकदमा में पहले से ही तथ्यों के अनेक विवादित प्रश्न अंतर्ग्रस्त हैं, प्राप्त करने के लिए न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है, अत: यह एल॰ पी॰ ए॰ अनुज्ञात किया जाता है। दिनांक 21.10.2011 का आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है। तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है। किंतु, यह स्पष्ट किया जाता है कि ऊपर किए गए किसी संप्रेक्षण का पठन संदर्भ के बाहर करने की आवश्यकता नहीं है और पक्षों में से किसी के दावा के गुणागुण पर किया गया संप्रेक्षण सिविल मुकदमा में किसी पक्ष के मामले पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेगा।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

अनुराग मुर्मू

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 1562 of 2006. Decided on 30th November, 2012

भूमि अर्जन अधिनियम, 1894—धारा 4—भूमि का अर्जन–पथ का निर्माण–प्रत्यर्थीगण ने लोकहित में पथ के निर्माण के कारणों को दिया है–प्रत्यर्थीगण ने याची को पथ के निर्माण के लिए उपयोग किए जा रहे भूखंड के बदले भूखंड के विनिमय का अथवा विकल्प में भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के प्रावधानों का अनुसरण करके भूमि का अर्जन करने का प्रस्ताव भी दिया है–प्रत्यर्थीगण को भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के प्रावधानों के अनुरुप कार्यवाही करने की आवश्यकता है। (पैराएँ 9 से 13)

अधिवक्तागण.–Mr. Ajit Kumar Sinha, For the Petitioner; JC to S.C. (L&C), For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ग्राम चिरौंदी, थाना सं॰ 186, जिला राँची के खाता सं॰ 9 और 10 के भूखंड सं॰ 380, 381, 384, 385 के 29 डिसमिल माप वाले याची की भूमि के उपर किसी प्रकार का पथ अथवा गली का निर्माण करने से और याची के भूमि के टुकड़े के ऊपर शांतिपूर्ण कब्जा में हस्तक्षेप नहीं करने के लिए प्रत्यर्थीगण को आदेश देने के लिए इस न्यायालय के पास आया था।

3. याची के अनुसार, खाता सं॰ 9 और 10 के भूखंड सं॰ 380, 381, 384 तथा 385 में पूर्वोक्त भूमि पुनरीक्षित सर्वेक्षण अधिकार अभिलेख में ''कायमी'' के रूप में चैता मुंडा पुत्र चमरा मुंडा के नाम में दर्ज है। याची ने उक्त भूखंडों की भूमि 14 और 1/2 डिसमिल को माधो मुंडा एवं अन्य से, जो चैता मुंडा से खतियानी रैयत के विधिक उत्तराधिकारी हैं, दिनांक 27.10.1993 के आदेश के तहत याची के पक्ष में सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम, 1908 की धारा 46 के अधीन भूमि के अंतरण की अनुमति लेने के बाद खरीदा है। दिनांक 12.8.1994 को खतियानी रैयत के विधिक उत्तराधिकारियों द्वारा याची के पक्ष में विक्रय विलेख भी निष्पादित किया गया था। याची ने अंचलाधिकारी, टाऊन अंचल राँची के कार्यालय में भूमि नामांतरित करवाया और दिनांक 16.10.1995 को संशोधन पर्ची जारी की गयी थी जिस पर याची द्वारा लगान का भुगतान किया जा रहा है। याची की ओर से कथन किया गया है कि उसने लगान वाद उप-कलक्टर, राँची से दिनांक 7.5.2004 के आदेश के तहत अनुमति लेने के बाद भूमि के शेष अंश के 14 और 1/2 डिसमिल को भी खरीदा और खतियानी रैयत के विधिक उत्तराधिकारियों द्वारा दिनांक 9.9.2005 को विक्रय निष्पादित भी किया गया था। किंतु, याची प्रत्यर्थीगण के कृत्यों से चकित है जिसके द्वारा याची की भूमि के ऊपर पथ या गली का निर्माण इप्सित किया जा रहा है।

4. पहले भी, इस न्यायालय ने संप्रेक्षित किया था कि यदि प्रत्यर्थीगण-राज्य याची की भूमि के ऊपर पथ या गली का निर्माण करना चाहता है, इसे भूमि अर्जित किए बिना नहीं किया जा सकता है और अगले आदेशों तक पथ का निर्माण स्थगित कर दिया गया था। बाद में, प्रत्यर्थीगण को पुनः स्पष्टतः कथन करने के लिए कहा गया था कि क्या लोक हित में पथ की आवश्यकता है और क्या वे याची की प्रश्नगत भूमि का वस्तुतः उपयोग किए बिना पथ का निर्माण कर सकते हैं। प्रत्यर्थीगण राज्य ने पहले भी प्रति शपथपत्रों को दाखिल किया था और दिनांक 4.7.2012 के आदेश के बाद पुनः दिनांक 8.10.2012 को शपथपत्र दाखिल किया है।

5. प्रत्यर्थीगण प्राधिकारियों ने दृष्टिकोण अपनाया है जिसे उक्त प्रतिशपथ पत्र में कथित किया गया है कि विगत कई दशकों से मोराबादी बोरिया मेनरोड से भिठा तक लिंक पथ अस्तित्व में रहा है। चूँकि

यह चिरौंदी नाला के निकट अनभरे गड्ढे के साथ ग्रामीण कच्चे पथ के रूप में विद्यमान था, ग्रामीण आबादी को मुख्य सड़क और गाँववालों के कृषि उत्पाद के लिए ग्रामीण बाजार के लिए लिंकेज प्रदान करने के लिए यह लिंक पथ महत्वपूर्ण था। संरेखण सही करने के लिए, उक्त गाँव के गाँववाले पक्की सड़क और चिरौंदीनाला के ऊपर आर॰ सी॰ सी॰ पुल के निर्माण के लिए सरकारी प्राधिकारियों के पास गए क्योंकि उक्त पथ वर्षा ऋतु में आवाजाही करने वाले लोगों की मुश्किल कारित करते हुए बुरी तरह प्रभावित करता था। उनके शपथपत्र में कथन किया गया है कि पी॰ सी॰ सी॰ पथ और आर॰ सी॰ सी॰ पथ के निर्माण का मुख्य उद्देश्य गाँव भिठा, चिरौंदी बोरिया और अरसंदे का सर्वांगीण विकास करना था। पथ का निर्माण करने के पहले वर्ष 2005-06 में चिरौंदी नाला पर दो स्पैन आर॰ सी॰ सी॰ पुल का निर्माण किया गया था किंतु गाँववालों द्वारा आपत्ति नहीं की गयी थी और वर्ष 2005-06 में राँची के जिला योजना के अधीन 1000 फीट के पी॰ सी॰ सी॰ पथ के निर्माण के लिए 5,54,400/- रुपयों की राशि मंजूर की गयी थी।

6. राज्य विद्युत बोर्ड ने पहले ही ग्रामीण विद्युतीकरण कार्य के लिए कच्चा रोड के बगल में खंभों को खड़ा किया है। भिठा, चिरौंदी और बोरिया के गाँववालों की सहमति और सहयोग से वर्तमान मामले में पथ निर्माण कार्य आरंभ किया गया। किंतु, आरंभिक निर्माण के बाद याची ने रैयती भूमि के अंश, जैसा याची द्वारा दावा किया गया था, के बारे में आपत्ति करना शुरू किया जिसे कच्चा छोड़ दिया गया था; इसने पी॰ सी॰ सी॰ पथ, जिसकी आकलित पथ लंबाई 1000 फीट है, में खाली स्थान बन गया है। यह कथन किया गया है कि याची की भूमि का लगभग 15 डिसमिल निर्माण किए जा रहे पथ से होकर गुजरता है जिस पर पहले भी गाँववाले आवागमन के अधिकार का आनन्द लिया करते थे। अंचलाधिकारी द्वारा जाँच की गयी थी और दिनांक 13.4.2006 के परिशिष्ट D द्वारा विकास उपायुक्त, राँची को विस्तृत रिपोर्ट दी गयी थी। इन और अन्य तथ्यों के आधार पर यह कथन किया गया है कि क्षेत्र के विकास के लिए पथ निर्माण महत्वपूर्ण है, अन्यथा चिरौंदी नाला के दूसरी ओर के गाँव मोराबादी–बोरिया मुख्य पथ से कटे रहेंगे और लोक असुविधा कारित करते हुए और गाँववालों के आवागमन के अधिकार में रूकावट डालते हुए विकास प्रभावित होगा। लोक याचिकाओं को परिशिष्ट–C के रूप में संलग्न किया गया है। तत्पश्चात, प्रत्यर्थीगण ने कथन किया है कि इस मामले में पहले पारित आदेश की दृष्टि में, उक्त पूरक प्रति शपथपत्र के पृष्ठ सं॰ 18 और 19 पर उपदर्शित अनुसूची के मुताबिक मौजा चिरौंदी, भूखंड सं॰ 383 क्षेत्रफल 0.23 एकड़ और भूखंड सं॰ 367, क्षेत्रफल 0.18 एकड़ में विनिमय आधार के निबंधनानुसार याची को 41 डिसमिल में से 29 डिसमिल का प्रस्ताव दिया गया है। किंतु, प्रत्यर्थीगण द्वारा स्पष्टत: कथन किया गया है कि यदि याची भूमि के वैकल्पिक टुकड़े पर भूमि के विनिमय के साथ सहमत नहीं है, तब प्रत्यर्थीगण याची को मुआवजा के भुगतान पर प्रश्नगत पथ के निर्माण में अंतर्ग्रस्त भूमि अर्जित करने का प्रस्ताव आरंभ कर सकते हैं।

7. याची ने पहले ही दिनांक 3.7.2006 को पूर्विक प्रति शपथपत्र का प्रत्युत्तर दाखिल किया था किंतु दिनांक 8.10.2012 को वर्तमान शपथपत्र दाखिल किए जाने के बाद स्थगनों को इप्सित करने के बाद भी इसका कोई प्रत्युत्तर दाखिल नहीं किया गया है, यद्यपि उस कारण दो बार समय लिया गया है। किंतु, याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रत्यर्थीगण यह दर्शाने में सक्षम नहीं हुए हैं कि लोक प्रयोजन से भूमि की आवश्यकता है।

8. आगे यह कथन किया गया है कि याची की रैयती भूमि है और कुछ व्यक्तियों के लाभ के लिए इसका उपयोग किया जा रहा है जिनको, यह प्रतीत होता है, रिट याचिका में पक्ष नहीं बनाया गया है।

किंतु, याची के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क के क्रम में यह कथन भी किया है कि याची सहमत हुआ होता यदि उसकी भूमि पाँच लाख रुपया प्रति डिसमिल के मूल्यांकन अर्थात् क्षेत्र जहाँ याची की भूमि अवस्थित है में प्रश्नगत भूमि के प्रचलित दर पर खरीदी जाती है।

9. मैंने विस्तारपूर्वक पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और प्रत्यर्थीगण की ओर से दाखिल अंतिम शपथ पत्र सहित अभिलेख पर प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। यह प्रतीत होता है कि पथ का निर्माण शुरू किया गया है जो उक्त पथ के बगल के गाँववालों को पहुँच देते हुए चिरौंदी नाला के ऊपर रास्ते में पुल को जोड़ता है और तत्पश्चात प्रत्यर्थीगण पी॰ सी॰ सी॰ पथ का निर्माण करने के लिए अग्रसर हुए हैं जो भी याची की भूमि के ऊपर से होकर गुजरता है। प्रत्यर्थीगण ने अपने शपथपत्र में लोकहित में पथ के निर्माण के लिए कारणों को दिया है। प्रत्यर्थीगण ने याची को पथ के निर्माण के लिए उपयोग किए जा रहे भूखंड के बदले भूखंड के विनिमय का प्रस्ताव भी दिया है अथवा विकल्प में भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के प्रावधानों का अनुसरण करके भूमि का अर्जन करने का प्रस्ताव भी दिया है।

10. वर्तमान परिस्थितियों में यह न्यायालय यह विनिश्चित करने की अवस्था में नहीं है कि क्या लोक प्रयोजन से भूमि की आवश्यकता है। भूमि अर्जन अधिनियम स्वयं में संपूर्ण संहिता है जिसके अधीन यदि किसी व्यक्ति की भूमि को राज्य द्वारा अर्जित किया जाना इप्सित किया जाता है, एक विस्तृत प्रक्रिया अधिकथित की गयी है, जिसके अधीन भूमि गँवाने वाले को अधिनियम की धारा 5(A) के अधीन आपत्ति करने के समस्त अवसर हैं।

11. ये विवाद्यक कि क्या प्रयोजन लोक प्रयोजन है या नहीं, क्या भूमि का मूल्यांकन 5,00,000/- रुपया प्रति डिसमिल अथवा कम या ज्यादा होना चाहिए या नहीं, ऐसे मामले हैं जिन्हें भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के प्रावधानों के अधीन सक्षम प्राधिकारी द्वारा विनिश्चित किए जाने की आवश्यकता है। व्यथित व्यक्ति के पास सदैव इसके प्रति आपत्ति करने और निर्देश न्यायालय के समक्ष प्रश्नगत अधिनिर्णय से व्यथित होने पर निर्देश इप्सित करने का भी उपचार है।

12. पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों में यह प्रतीत होता है कि यदि प्रत्यर्थीगण राज्य द्वारा पथ का निर्माण लोक प्रयोजन से आवश्यक है और यदि याची उसके बदले भूमि के किसी विनिमय के साथ सहमत नहीं है, उन्हें युक्तियुक्त समय के भीतर उसमें विहित प्रक्रिया का अनुसरण करके इसके अर्जन के लिए भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के प्रावधानों के अधीन विधि के अनुरुप अग्रसर होने की आवश्यकता है।

13. अत:, यह न्यायालय सिवाए प्रत्यर्थीगण को यह निर्देश देने की याची कि प्रश्नगत भूमि के अर्जन के लिए भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के प्रावधानों के अधीन विधि के अनुरुप अग्रसर हों यदि लोक प्रयोजन से इसकी आवश्यकता है, गुणागुण पर कुछ भी अभिव्यक्त करने से परहेज करता है। यह स्पष्ट किया जाता है कि याची की भूमि के ऊपर कोई निर्माण केवल भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के निबंधनानुसार प्रश्नगत भूमि को अर्जित करने के बाद ही शुरू किया जाना चाहिए।

14. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों और निर्देशों के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

ममता देवी एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

WP(C) No. 3448 of 2008. Decided on 10th October, 2012.

बिहार भूमि सुधार अधिनियम, 1950—धारा 4 (h)—जमाबंदी का रद्दकरण–काफी पहले दिनांक 24.6.1984 को एस॰ डी॰ ओ॰ के समक्ष भूमि की बंदोबस्ती के संबंध में आवश्यक दस्तावेज प्रस्तुत किए गए थे–एस॰ डी॰ ओ॰ ने विनिर्दिष्टतः अभिनिर्धारित किया कि संबंधित रैयत ने वर्ष 1946 के पहले भी सादा हुकुमनामा द्वारा भूमि की रैयती बंदोबस्ती पायी थी और वर्ष 1962 के दौरान राज्य ने भी अभिधृतियों को मान्यता दिया है–राज्य सरकार के अवर सचिव ने पहले ही जमाबंदी के रद्दकरण के लिए कार्यवाही रोक देने के लिए अपना संपुष्टिकरण दिया है–अपर कलक्टर द्वारा दिए गए कारण आधारहीन हैं–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया–प्रत्यर्थी प्राधिकारियों को याची के पक्ष में लगान रसीद जारी करने का निर्देश दिया गया–याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 9 से 14)

निर्णयज विधि.–1980 PLJR 564; 1986 PLJR 963; 1989 BLT Patna, 87—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Ramakant Tiwary, For the Petitioners; Mr. V.K. Prasad, For the Respondents.

आदेश

याचीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस याचिका को दाखिल करके अपर कलक्टर, राँची द्वारा पारित दिनांक 7.2.2007 के आदेश (परिशिष्ट-9) को अपास्त एवं अभिखंडित करने के लिए प्रार्थना किया है।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि विभिन्न भूखंडों वाली खाता सं॰ 129 से संबंधित ग्राम पिर्रा, अंचल काँके में अवस्थित भूमि गैर मजरुआ मालिक के रूप में दर्ज की गयी थी दिनांक 1.1.1946 के पहले हुकुमनामा द्वारा याची के पक्ष में बंदोबस्त किया गया था और उसने नियमित रूप से भूतपूर्व भूस्वामी को और बाद में बिहार राज्य को, जब वर्ष 1962 में जमाबंदी खोली गयी थी, लगान का भुगतान किया था। प्रत्यर्थी सं॰ 4 के निर्देश पर, एस॰ डी॰ ओ॰, राँची ने बिहार भूमि सुधार अधिनियम, 1950 की धारा 4 (h) के अधीन कार्यवाही आरंभ किया और दिनांक 24.6.1985 के आदेश के तहत एस॰ डी॰ ओ॰ राँची ने रैयतों के दावा को वास्तविक अभिनिर्धारित किया और इस संप्रेक्षण के साथ कि कोई अंतिम आदेश पारित करने के पहले सरकारी वकील का विधिक मत आवश्यक है, मामला ए॰ सी॰, राँची को निर्दिष्ट कर दिया। मामले के निर्देश पर सरकारी वकील ने मत दिया कि विद्वान एस॰ डी॰ ओ॰ का आदेश विधि के अनुसार है जिसमें उन्होंने जमाबंदी के रद्दकरण की कार्यवाही रोकने की अनुशंसा की है। ए॰ सी॰, राँची ने डी॰ सी॰, राँची के माध्यम से सहमति के लिए मामला राजस्व विभाग, बिहार सरकार को निर्दिष्ट किया और इसे दिनांक 24.10.1986 के पत्र के तहत संपुष्ट किया गया था।

बाद में, डी॰ सी॰ एल॰ आर॰, राँची ने डी॰ सी॰, राँची द्वारा पारित दिनांक 3.4.1987 के आदेश के आलोक में ए॰ सी॰ राँची द्वारा जारी दिनांक 28.4.1987 का पत्र सं॰ 74 प्राप्त किया जिसके द्वारा डी॰ सी॰, राँची ने राज्य सरकार के आदेश को अधिकारिताहीन घोषित किया और एस॰ डी॰ ओ॰ राँची द्वारा दर्ज निष्कर्षों के साथ असहमत हुए और डी॰ सी॰ एल॰ आर॰, राँची को धारा 4 (h) के अधीन जाँच हेतु

अग्रसर होने का निर्देश दिया। डी॰ सी॰ एल॰ आर, राँची ने अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों का और मौखिक गवाहों का परीक्षण करके सम्यक रूप से कार्यवाही संचालित किया और अंतत: दिनांक 1.7.1988 के आदेश के तहत अभिनिर्धारित किया कि भूतपूर्व भूस्वामी द्वारा बंदोबस्ती वास्तविक है और बिहार भूमि सुधार अधिनियम, 1950 की धारा 4 (h) के अधीन अनुध्यात रिष्टि से आच्छादित नहीं है और इस प्रकार कार्यवाही को छोड़ने लायक पाया और ए॰ सी॰ राँची को इसकी अनुशंसा की। किंतु ए॰ सी॰, राँची ने अनेक वर्षों तक मामला लंबित रखा और अंतत: डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 4991/2005 के तहत रिट दाखिल किया गया था और इसे इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से दो माह की अवधि के भीतर केस सं॰ 01/1982-83 को विनिश्चित करने का निर्देश ए॰ सी॰, राँची को देते हुए निपटाया गया था और यदि उक्त अवधि के भीतर प्रत्यर्थी द्वारा उक्त मामला निपटाया नहीं जाता है, यह उक्त अवधि बीतने के बाद समाप्त हो जाएगी। ए॰ सी॰, राँची ने दिनांक 7.2.2007 के आदेश के तहत याची की जमाबंदी के रद्दकरण का आदेश दिया और अनुमति प्रदान किए जाने के लिए अभिलेख डी॰ सी॰, राँची के पास भेजा गया था।

3. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रश्नगत भूमि वर्तमान याचीगण के पक्ष में काफी पहले वर्ष 1946 में अर्थात् नियत दिन के पहले बंदोबस्त की गयी थी और यह तथ्य विद्वान एस॰ डी॰ ओ॰ के आदेश से स्पष्टत: प्रकट होता है जिन्होंने अपने समक्ष प्रस्तुत सामग्रियों का परिशीलन करने के बाद अपने आदेश में संप्रेक्षित किया कि संबंधित रैयत ने वर्ष 1946 के पहले भी सादा हुकुमनामा के रूप में भूमि की रैयती बंदोबस्ती करवाया और राज्य ने भी वर्ष 1962 से वर्ष 1963 के दौरान अभिधृतियों को मान्यता दिया है और लगान रसीद प्रदान किया है।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि राज्य सरकार के अवर सचिव ने भी अपने दिनांक 24.10.1986 की संसूचना/पत्र के तहत संपुष्टिकरण दिया है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता याचिका के परिशिष्ट-4 को निर्दिष्ट करते हुए इंगित किया कि विद्वान भूमि सुधार उप-कलक्टर ने भी दिनांक 21.4.1987 के अपने आदेश के तहत वर्तमान याचीगण के पक्ष में मामला विनिश्चित किया और इंगित किया कि सरकार ने आदेश के अंतिम पैराग्राफ में मत दिया कि धारा 4(h) के अधीन जाँच आवश्यक नहीं है।

5. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने परिशिष्ट-5 अर्थात भूमि सुधार उप-कलक्टर, राँची द्वारा पारित दिनांक 1.7.1988 के आदेश को निर्दिष्ट करते हुए इंगित किया कि विद्वान एल॰ आर॰ डी॰ सी॰ ने भी विस्तारपूर्वक याची के मामला पर विचार किया है और इस निष्कर्ष पर आए हैं कि बिहार भूमि सुधार अधिनियम की धारा 4 (h) के अधीन मामला पुन: खोला नहीं जा सकता है और कार्यवाही रोकने के लिए मामला अपर कलक्टर, राँची को अनुर्शासित किया गया था। चूँकि अपर कलक्टर ने मामला लंबित रखा, तत्पश्चात याचीगण आयुक्त अपर कलक्टर, राँची को यथासंभव शीघ्र, प्राथमिकत: तीन माह की अवधि के भीतर अर्थात् इस आदेश की प्राप्ति की तिथि से कार्यवाही निपटाने का निर्देश दिया।

6. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 4991/2005 में इस न्यायालय द्वारा दिए गए विनिर्दिष्ट निर्देश के बावजूद विद्वान अपर कलक्टर ने दो माह की अवधि के परे दिनांक 7.2.2007 को आदेश पारित किया और इस प्रकार उन्होंने इस माननीय न्यायालय द्वारा दिए गए विनिर्दिष्ट निर्देश का उल्लंघन किया।

7. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि उक्त आदेश अधिकारिताहीन है और इसे अभिखंडित और अपास्त करने की आवश्यकता है और अपने निवेदनों के समर्थन में उन्होंने 1980

PLJR 564, 1986 PLJR 963 और **1989 BLT Patna 87** में प्रकाशित निर्णयों पर विश्वास किया और निवेदन किया कि इन निर्णयों की दृष्टि में कलक्टर न्याय निर्णयनकारी निकाय है और न कि अनुशंसाकारी प्राधिकारी। उन्होंने आगे निवेदन किया कि दिनांक 1.1.1946 के बाद किसी अंतरण/बंदोबस्ती को बातिल करने के पहले उन्हें अधिनियम की धारा 4 (h) के प्रावधानों के अनुरुप स्वयं अपने निष्कर्ष पर आना होगा। वर्ष 1936 के बंदोबस्ती को बातिल करना अधिकारिताहीन है और अधिनियम की धारा 4 (h) द्वारा प्रदत्त शक्तियों के परे है। आगे निवेदन किया गया है कि कार्यवाही केवल तब आरंभ की जा सकती है और जाँच की जा सकती है जब कलक्टर संतुष्ट है कि ऐसा अंतरण नियत दिन अर्थात् दिनांक 1 जनवरी, 1946 के बाद किसी समय पर किया गया था।

8. इसके विरुद्ध, प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रत्यर्थी राज्य द्वारा दाखिल प्रतिशपथ पत्र को निर्दिष्ट करते हुए और परिशिष्ट–A अर्थात् आक्षेपित आदेश को भी निर्दिष्ट करते हुए और विशेषत: विद्वान अपर कलक्टर, राँची द्वारा पारित आदेश को निर्दिष्ट करते हुए मुख्यत: तीन गणनाओं पर प्रत्यर्थी राज्य की कार्रवाई को न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया। प्रथमत:, यह कि याचीगण का मामला सादा हुकुमनामा पर आधारित है और इसलिए, विद्वान अपर कलक्टर ने सही प्रकार से याचीगण का मामला अस्वीकार किया है। द्वितीयत:, रिटर्न दाखिल नहीं किए जाने के संबंध में यह निवेदन किया गया है कि उपायुक्त ने अपने आदेश (परिशिष्ट–9)में स्पष्टत: मत दिया कि वर्तमान याचीगण ने कोई जमीन्दारी रसीद प्रस्तुत नहीं किया था जो हुकुमनामा द्वारा अभिकथित रूप से किए गए अंतरण पर संदेह सृजित करता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि प्राधिकारियों द्वारा लगान रसीद जारी किया जाना मात्र याचीगण के पक्ष में कोई अधिकार सृजित नहीं करता है। अंत में, यह निवेदन किया गया है कि विद्वान अपर कलक्टर के समक्ष हुकुमनामा की प्रति प्रस्तुत नहीं की गयी थी और राज्य का प्रतिनिधित्व कर रहे विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह भी इंगित किया गया है कि विद्वान अपर कलक्टर ने प्रत्यर्थी राज्य द्वारा दिए गए संपुष्टिकरण को भी ध्यान में लिया है जो प्राधिकारी के मन में प्रबल संदेह सृजित करता है और इसलिए, इन गणनाओं पर विद्वान अपर कलक्टर, राँची ने याचीगण का दावा अस्वीकार कर दिया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि चूँकि वर्तमान याचीगण ने अपने मामले में किसी समर्थनकारी दस्तावेज को प्रस्तुत नहीं किया है, विद्वान अपर कलक्टर ने याचीगण का दावा अस्वीकार किया है जो सादा हुकुमनामा पर आधारित था।

9. पक्षों के पूर्वोक्त परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करते हुए और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों के परिशीलन से और अधिक विशेषत: परिशिष्ट 1 अर्थात् केस सं॰ 1/1982-83 में एस॰ डी॰ ओ॰ द्वारा पारित आदेश की दृष्टि में, यह पर्याप्त रूप से स्पष्ट हुआ कि भूमि की बंदोबस्ती के संबंध में आवश्यक दस्तावेजों को काफी पहले दिनांक 24.6.1984 को एस॰ डी॰ ओ॰ के समक्ष प्रस्तुत किया गया था। उक्त आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि एस॰ डी॰ ओ॰ ने इसका कारण देते हुए औचित्यता बतायी है और विनिर्दिष्टत: अभिनिर्धारित किया है कि निर्दिष्ट किए गए दस्तावेजों के आधार पर संबंधित रैयत ने वर्ष 1946 के पहले भी सादा हुकुमनामा द्वारा भूमि की रैयती बंदोबस्ती को पाया है और राज्य ने वर्ष 1962 से वर्ष 1963 के दौरान अभिधृतियों को मान्यता दिया है और लगान रसीद प्रदान किया है। परिशिष्ट–2 से आगे यह प्रतीत होता है कि विद्वान सरकारी वकील के मत के लिए मामला निर्दिष्ट किया गया था और विद्वान सरकारी वकील ने भी यह कथन करते हुए कि विद्वान एस॰ डी॰ ओ॰ द्वारा पारित आदेश विधि के अनुसार है और जमाबंदी के रद्दकरण के लिए कार्यवाही रोकने के लिए विद्वान एस॰ डी॰ ओ॰ द्वारा की गयी अनुशंसा में छेड़छाड़ करने की आवश्यकता नहीं है, वर्तमान याचीगण के पक्ष में स्पष्ट मत अभिव्यक्त किया है। तत्पश्चात् यह प्रतीत होता है कि राज्य सरकार के अवर सचिव ने भी बिहार भूमि सुधार अधिनियम की धारा 4 (h) के अधीन दिनांक 24.10.1986 की अपनी संसूचना के तहत

अपना संपुष्टिकरण दिया है। परिशिष्ट–4 के तहत प्रस्तुत आदेश से यह भी प्रकट होता है कि उप–कलक्टर, राँची ने दिनांक 21.4.1987 के अपने आदेश के तहत दृष्टिकोण अपनाया है कि कार्यवाही पुनः आरंभ नहीं की जा सकती है और अधिनियम की धारा 4 (h) के अधीन इसको छोड़ने की आवश्यकता है। तत्पश्चात्, परिशिष्ट–5 के तहत, अपर कलक्टर दिनांक 1.7.1988 के आदेश के तहत इस निष्कर्ष पर आए कि यह सुयोग्य मामला नहीं है जिसमें अधिनियम की धारा 4 (h) के अधीन कार्यवाही पुनः आरंभ करने की आवश्यकता है। उक्त आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि विद्वान अपर कलक्टर, भूमि सुधार, राँची ने विस्तारपूर्वक समस्त दस्तावेजी साक्ष्य पर विचार किया है और अभिनिर्धारित किया है कि भूतपूर्व भूस्वामी द्वारा की गयी बंदोबस्ती वास्तविक है और अधिनियम की धारा 4 (h) द्वारा आच्छादित नहीं है और कार्यवाही रोकने का सुझाव दिया गया है और अपर कलक्टर, राँची को इसे अनुशंसित भी किया किंतु इस अनुशंसा पर आगे कुछ नहीं किया गया है और मामला लंबित रखा गया है और तत्पश्चात् कोई त्रिवेणी प्रसाद पांडे डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 4991 वर्ष 2005 दाखिल करके इस न्यायालय के पास आया और इस न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 को इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से दो माह के भीतर केस सं॰ 1/1982-83 विनिश्चित करने का विनिर्दिष्टतः निर्देश दिया किंतु विद्वान अपर कलक्टर दो माह की अवधि के भीतर उक्त मामला विनिश्चित नहीं कर सके थे किंतु दिनांक 7.2.2007 का आदेश पारित किया जो आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट–9) है और उक्त आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि विद्वान अपर कलक्टर ने याचीगण के पक्ष में आदेश पारित नहीं किया है और आगे की अनुशंसा के लिए मामला विद्वान कलक्टर, राँची को निर्दिष्ट कर दिया है। यह प्रतीत होता है कि विद्वान अपर कलक्टर ने बिहार भूमि सुधार अधिनियम की धारा 4 (h) के अधीन अंतर्विष्ट प्रावधान पर समुचित रूप से विचार नहीं किया है। विद्वान अपर कलक्टर द्वारा दिए गए कारण आधारहीन हैं क्योंकि पूर्विक कार्यवाही में भूमि की बंदोबस्ती के संबंध में दस्तावेज और रिटर्न की प्रति भी दाखिल किया गया था किंतु, दस्तावेजों की अप्रस्तुति के आधार पर विद्वान अपर कलक्टर द्वारा याचीगण का संपूर्ण मामला अस्वीकार कर दिया गया था। आगे यह प्रतीत होता है कि विद्वान अपर कलक्टर संपुष्टिकरण कार्यवाही में राज्य सरकार द्वारा दिए गए संपुष्टिकरण का अधिमूल्यन करने में विफल रहे हैं जिसे विद्वान अपर कलक्टर के समक्ष प्रस्तुत किया गया है और वर्तमान याचीगण का दावा खारिज कर दिया है।

10. मैंने याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट और विश्वास किए गए निर्णयों का भी परिशीलन किया है। 1986 PLJR 963 में प्रकशित निर्णय के पैराओं 4, 5 और 6 का पठन निम्नलिखित है:–

> *"4. bl ekey d rF;k ij] ;g vfookfnr g fd ,y0 vkj0 Mh0 lh0 u o"k 1936 e fd, x, Hkfe dh cnkcLrh dk ckfry dj fn;k vkj] blfy,] mUgku vfèkdkfjrk d fcuk vkj vfèkfu;e dh èkkjk 4(h) d vèkhu çnÙk 'kfDr;k d ij ÑR; fd;kA*
>
> *5. vkx] vfèkfu;e dh èkkjk 4(b) d vèkhu ikfjr ,y0 vkj0 Mh0 lh0 d vkn'k l ;g çrhr gkrk g fd vfèkfu;e dh èkkjk 4(h) d vèkhu dk;okgh dk ckfry dju e vfèkdkfjrk d ç;kx d fy, ijkHkk0; 'kr dk ifji.k ugh fd;k x;k FkkA vfèkfu;e dh èkkjk 4(h) d vèkhu vfèkdkfjrk dk ç;kx dju d igy ,y0 vkj0 Mh0 lh0 dk lr"V gkuk Fkk vkj Lo; viu fu"d"k ij vkuk Fkk fd vrj.k bl vfèkfu;e d fdlh çkoèkku dk ijkftr dju rFkk jkT; dk gkfu dkfjr dju vFkok mld vèkhu mPprj evkotk çkIr dju d mí'; d lkFk fd;k x;k FkkA ,lk dkb fu"d"k nt fd;k tkrk çrhr ugh gkrk gA og U;k; fu.k;dkjh fudk; g vkj] blfy,] og ,l ckfrydj.k d fy, vu'kIk ugh dj ldrk Fkk tIk*

vkn'k l çrhr gkrk gA og bl rF; ij Hkh fopkj dju e foQy jgk fd jkT; u ;kph l yxku Lohdkj fd;k FkkA vfHkèkku vihy l0 57/1976 e ikfjr vij fty k U;k;kèkh'k] èkuckn d fnukd 11.9.78 d fu.k; d çfr Hkh fun'k fd;k x;k gA mDr vihy ç'uxr Hkfe d lcèk e viu gd dh ?kk"k.kk d fy, vkj dCtk d lif"Vdj.k d fy, nkf[ky dh x;h FkhA vihy vuKkr dh x;h Fkh vkj okn fMØh fd;k x;k Fkk ft le jkT; Hkh ,d i{k FkkA

6. mik;Dr] èkuckn d vkn'k l ;g çrhr gkrk g fd mUgku ey ç'u ij fcYdy fopkj ugh fd;k g fd D;k ,y0 vkj0 MhO lhO o"k 1936 e fd, x, Hkfe dh cnkcLrh d lcèk e dk;okgh ckfry dj ldrk FkkA ;g çrhr gkrk g fd mik;Dr ,y0 vkj0 MhO lhO dh vu'klk d lkFk lger g, fd vfèkfu;e dh èkkjk 4(h) d vèkhu cnkcLrh ckfry dh tkuh pkfg,A tlk igy gh vfHkfuèkkfjr fd;k x;k g] ,y0 vkj0 MhO lhO vu'klk dju okyk çkfèkdkjh ugh gk ldrk FkkA og U;k; fu.k;dkjh fudk; g vkj ml vfèkfu;e dh èkkjk 4(h) d fucèkuk d vu#i Lo; viu fu"d"k ij vkuk FkkA**

11. 1989 BLT Patna 87 में प्रकाशित निर्णय के पैराओं 6, 7 और 8 का पठन निम्नलिखित है:–

"6. fdr] vij dyDVj u ;kphx.k d i{k e fd, x, cnkcLrh d ckfrydj.k d fy, vfèkfu;e dh èkkjk 4(h) d vèkhu u, flj l dk;okgh vkjHk fd;k vkj ;kphx.k dk dkj.k crku dk fun'k fn;kA ;kphx.k mifLFkr g, vkj çfrokn fd;k fd vfèkfu;e dh èkkjk 4(h) d vèkhu dk;okgh Hkked g pfd ;kphx.k d i{k e dh x;h cnkcLrh o"k 1945 dh FkhA ml dk uke jktLo vfHky[k e lE;d :i l ukekrfjr fd;k x;k Fkk vkj ml u ç'uxr Hkfe d Åij vfLrRo;Dr gd vftr fd;k FkkA ;kph l0 2 vkj 3 d i{k e çFke ;kph }kjk dh x;h i'pkrorh cnkcLrh Hkh Hkfe lèkkj mi&dyDVj }kjk li"V dh x;h Fkh vkj mud ukek dk Hkh lE;d :i l ukekrfjr fd;k x;k FkkA bl çdkj] ;g çfrokn fd;k x;k Fkk fd chl o"kk d ckn bl iu% ugh vkjHk fd;k tk ldrk g fo'k"kr% tc fcgkj jkT; u ukekrj.k dk;okgh e çkfèkdkfj;k }kjk ikfjr vkn'kk d fo#) dkb vihy nkf[ky ugh fd;k FkkA

7. ;g çrhr gkrk g fd vij dyDVj u bld lgh ifjç{; e ekey d bu vud igyvk ij fopkj fd, fcuk Hkfe dh cnkcLrh d ckfrydj.k dh vu'klk dhA vihy ij] mik;Dr u vij dyDVj d vkn'k dk li"V fd;k vkj vk;Dr d le{k nkf[ky iujh{k.k Hkh vlQy jgkA vkn'kk d ifj'kh;u ij çrhr gkrk g fd fdl lkexh ij fopkj fd, fcuk ek= mièkkj.kk ij ;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd pfd ;kph l0 2 l 4 rd d i{k e jftLVM vrj.k foy[k o"k 1952 e fu"ikfnr fd;k x;k Fkk] vr% ;kph l0 1 d i{k e o"k 1952 dh vfHkdfFkr cnkcLrh ckn e lkpk x;k fopkj FkkA u rk vij dyDVj vkj u gh mik;Dr vkj u gh vk;Dr d ikl o"k 1945 e ;kph d i{k e fd, x, cnkcLrh dk lekIr dju d fy, mud le{k dkb lkjoku lk{; FkkA fo}ku vk;Dr iu% ;g vfHkfuèkkfjr dju d fy, ek= mièkkj.kk ij vxlj g, fd >fj;k d jktk u jftLVM foy[k }kjk viu Hkkb d çfr cnkcLrh fd;k Fkk tk foof{kr djrk g fd ljdkj dk cgeY; Hkfe l ofpr dju d fy, cnkcLrh ifjokj d vrxr dh x;h FkhA ;g fu"d"k ek= mièkkj.kkRed gA rRdkyhu >fj;k d jktk d ifjokj e ipfyr vkfndkyhu fu;e d vulkj Hkfe ml d Hkj.k&ik"k.k d fy, T;"B Hkkrk

dk nh x;h Fkh vkj] blfy,] cnkcLrh djuk gh Fkk ftl fu'p; gh o"k 1945 e fufookn r% fd;k x;k Fkk vkj blfy,] vfèkfu;e dh èkkjk 4(h) d vèkhu dk;okgh dk vi.k vkj Hkked vfHkfuèkkfjr djuk gh gkxkA doy o"k 1946 d ckn cnkcLr dh x;h Hkfe d lcèk e vfèkfu;e dh èkkjk 4(h) d vèkhu dk;okgh vkjHk dh tk ldrh FkhA oreku cnkcLrh o"k 1945 dh FkhA bl ukekrj.k ekey e li"V fd;k x;k Fkk vkj fcgkj jkT; d jktLo vfHky[k e j;r d :i e çFke ;kph dk uke ukekrfjr fd;k x;k Fkk vkj Hkfe lèkkj mi dyDVj d fnukd 27.3.1976 d i= d rgr bl li"V fd;k x;k Fkk vkj rRdkyhu mik;Dr }kjk bl vuekfnr fd;k x;k FkkA tc fcgkj jkT; 0;fFkr Fkk] bl lkfofèkd vihy nkf[ky djuk pkfg, Fkk ftl ugh fd;k x;k FkkA ç'uxr Hkfe d blh Hk[kM e l vk;dj çkfèkdkjh d i{k e çFke ;kph }kjk o"k 1950 e dh x;h cnkcLrh d Hkkx d lcèk e mDr cnkcLrh d ckfrydju d fy, dkb Hkh dk;okgh vkjHk ugh dh x;h FkhA tc ,d ckj mDr cnkcLrh vkj Jh ,0 ch0 xgk d i{k e cnkcLrh Hkh Lohdkj dh x;h g] Hkfe d mDr Hk[kM u xj vkckn efyd dk viuk pfj= [kk fn;k vkj Hkfe d [kM u vfèkfu;e d çoru e vku d igy j;rh pfj= vftr fd;kA vr%] vfèkfu;e dh èkkjk 4(h) d vèkhu dk;okgh ekU; ugh FkhA*

*8. lh0 MCY;0 t0 lh0 l0 134/80(R) e ;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd vfèkfu;e dh èkkjk 4(h) d vèkhu vfèkdkfjrk dk ç;kx dju d igy ,y0 vkj0 MhO lh0 dk Lo; dk lr"V djuk Fkk vkj Lo; viu fu"d"k ij vkuk Fkk fd vrj.k vfèkfu;e d fdlh çkoèkku dk ijkftr dju vFkok jkT; dk gkfu dkfjr dju vFkok mld vèkhu mPprj evkotk çkIr dju d mí'; d lkFk fd;k x;k FkkA vfèkfu;e dh èkkjk 4(h) d vèkhu vrfo"V çkoèkkuk d lkn iBu ij ;g Li"V g fd fdlh vrj.k d lcèk e tkp dju dh viuh 'kfDr dk ç;kx djr g, dyDVj dk lr"V gkuk gh gkxk fd ,lk vrj.k fnukd 1 tuoh] 1946 d ckn fdlh le; ij fd;k x;k FkkA oreku ekey e ,lk dkb fu"d"k nt fd;k x;k çrhr ugh gkrk gA ,y0 vkj0 MhO lh0 U;k;fu.k;dkjh fudk; g vkj] blfy,] og ,l ckfrydj.k dh vu'klk ugh dj ldrk Fkk tk mld vkn'k l fcYdy Li"V gA U;k;ky; Hkh bl rF; ij fopkj dju e foQy jg fd jkT; u ;kphx.k l yxku Lohdkj fd;k Fkk vkj mld i{k e fd, x, ukekrj.k d vkn'k d fo#) dkb vihy nkf[ky ugh fd;k FkkA tlk igy gh vfHkfuèkkfjr fd;k x;k g ,y0 vkj0 MhO lh0 vu'klk dju okyk çkfèkdkjh ugh gk ldrk gA og U;k; fu.k;dkjh fudk; Fkk vkj ml vfèkfu;e dh èkkjk 4(h) d fucèkuku lkj Lo; viu fu"d"k ij vkuk FkkA oreku ekey e] ;g vfHkfuèkkfjr dju d fy, dkb l;kX; lk{; ugh g fd cnkcLrh fnukd 1.1.1946 d ckn dh x;h FkhA***

12. मैंने 1980 PLJR 564, में प्रकाशित निर्णय का भी परिशीलन किया है। उक्त निर्णय में अभिनिर्धारित किया गया है कि :–

*^^vfHkfuèkkfjr(fcgkj Hkfe lèkkj vfèkfu;e] 1950 èkkjk 4(h) vkj 8. ;g i.kr% Li"V g fd vfèkfu;e dh èkkjk 4(h) d vèkhu dk;okgh ;kph d i{k e lekIr dh x;h gA èkkjk 4(h) d vèkhu ikfjr vkn'k vfèkfu;e dh èkkjk 8 d vèkhu vihy ;kX; g fdr] jkT; }kjk dkb vihy nkf[ky ugh dh x;h Fkh] vr% vkn'k vfre cu x;kA tk leku :i l futh 0;fDr vkj jkT; ij ykx gkrk gA vc] jkT; ekey dk iu% 'k: dju d fy, l{ke ugh g tc vud çkfèkdkfj;k u ekey d rF;k d çfr viu food dk ijk bLreky dju d ckn vkj fdlh u;h lkexh d fcuk ç'u dk ,d l vfèkd ckj fofuf'pr fd;k gA***

13. यह प्रतीत होता है कि ऊपर निर्दिष्ट निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर पूरी तरह प्रयोज्य हैं और इसलिए, इस न्यायालय का दृष्टिकोण है कि अपर कलक्टर, राँची द्वारा पारित दिनांक 7.2.2007 का आदेश अपास्त करने योग्य है, तद्नुसार, दिनांक 7.2.2007 का आदेश (परिशिष्ट-9) और प्रत्यर्थी प्राधिकारियों द्वारा पारित पश्चातवर्ती आदेश अभिखंडित और अपास्त किए जाते हैं। प्रत्यर्थी प्राधिकारियों को इस आदेश की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से दो माह की अवधि के भीतर विधि के अनुरुप याचीगण के पक्ष में लगान रसीदों को जारी करने का निर्देश दिया जाता है।

14. पूर्वोक्त संप्रेक्षण और निर्देश के साथ यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

सेंट जेवियर उच्च विद्यालय (482 में)

लोयला उच्च विद्यालय (487 में)

प्रभात तारा विद्यालय (488 में)

जनता उच्च विद्यालय (505 में)

ज्योति कन्या उच्च विद्यालय (534 में)

प्रताप उच्च विद्यालय, बनारी (4017 में)

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य (सभी में)

W.P. (C) Nos. 482, 487, 488, 505, 534 with 4017 of 2008. Decided on 30th November, 2012.

बिहार गैर-सरकारी विद्यालय (नियंत्रण एवं प्रबंधन का अधिग्रहण) अधिनियम, 1981—धारा 18(3)—सहायता अनुदान—अल्पसंख्यक विद्यालय—सहायता अनुदान देने की प्रक्रिया संहिताबद्ध है और प्रत्येक विद्यालय को झारखंड राज्य वित्तरहित शिक्षण संस्थान सहायता अधिनियम, 2004 के सन्नियमों का अनुसरण करना होगा—रिट याचिका वर्ष 2008 से लंबित है—याचीगण को अपना दावा करने के लिए सचिव, एच॰ आर॰ डी॰ के पास जाने की स्वतंत्रता दी गयी—यदि याचीगण का दावा वास्तविक और विधितः ग्राह्य है और वे ऐसे सहायता अनुदान के हकदार हैं, इसके भुगतान के लिए पारिणामिक आदेश जारी किए जाएँगे। (पैराएँ 4 से 7)

अधिवक्तागण.—Mr. Amit Kumar Das, For the Petitioners; Jalisur Rahman, For the State.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. इन समस्त रिट याचिकाओं में, याचीगण उच्च विद्यालय हैं, जिनको वर्ष 2007 में झारखंड राज्य द्वारा अल्पसंख्यक दर्जा प्रदान किया गया है। याचीगण अल्पसंख्यक विद्यालयों के रूप में याचीगण-विद्यालयों को मान्यता दिए जाने की तिथि के प्रभाव से अन्य सरकारी सहायता प्राप्त अल्पसंख्यक विद्यालयों को दिए गए समान तरीके से उनको सहायता अनुदान प्रदान करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश देने के लिए इस न्यायालय के समक्ष आए हैं।

3. याचीगण का प्रतिवाद यह है कि बिहार गैर-सरकारी विद्यालय (नियंत्रण एवं प्रबंधन का अधिग्रहण) अधिनियम, 1981 की धारा 18 (3) के प्रावधान के अधीन प्रत्यर्थीगण उन विद्यालयों, जिन्हें अल्पसंख्यक दर्जा दिया गया है, के संबंध में सहायता अनुदान निर्मुक्त करने के लिए बाध्य हैं।

4. पहले ही, प्रत्यर्थी मानव संसाधन विकास विभाग, झारखंड सरकार द्वारा शपथ पत्रों को दाखिल किया गया था, किंतु इस मामले में पहले पारित आदेश द्वारा सचिव, एच॰ आर॰ डी॰ विभाग, झारखंड सरकार को विनिर्दिष्ट शपथ पत्र दाखिल करने का निर्देश दिया गया था। तत्पश्चात्, इन समस्त रिट याचिकाओं में एक ही दृष्टिकोण अपनाते हुए सचिव, एच॰ आर॰ डी॰ विभाग द्वारा उक्त शपथ पत्र दाखिल किया गया था। उसमें यह कथन किया गया है कि याचीगण विद्यालयों को अल्पसंख्यक दर्जा दिया गया है और सिद्धांत पर सहायता अनुदान प्रदान करने के लिए प्रावधान बनाया गया था। विभाग को उच्च विद्यालय के स्तर के मुताबिक शिक्षण और गैर शिक्षण स्टाफ के पद को मंजूर करना है। इसके अतिरिक्त, सहायता अनुदान देने के लिए विभाग को बजटीय प्रावधान बनाना होगा जिसके लिए समय की आवश्यकता है। प्रत्यर्थी सचिव, एच॰ आर॰ डी॰ विभाग ने यह कथन भी किया कि प्रत्येक विद्यालय, जिसे अल्पसंख्यक संस्थान घोषित किया गया है, किसी भेदभाव के बिना सहायता अनुदान प्राप्त करेगा। सहायता अनुदान प्रदान करने की प्रक्रिया संहिताबद्ध है और प्रत्येक विद्यालय के झारखंड राज्य वित्तरहित शिक्षण संस्थान सहायता अधिनियम, 2004 के सन्नियमों का अनुसरण करना होगा। उक्त शपथपत्र में यह भी स्पष्ट किया गया है कि यह सत्यापित करने के लिए कि प्रश्नगत उच्च विद्यालयों के संबंध में विभाग द्वारा कितने पदों को मंजूर किया गया है, जिला शिक्षा अधिकारी पर जिम्मेदारी नियत करते हुए पूर्वोक्त प्रयोजन से प्रक्रिया अधिकथित की गयी है। उन्हें शिक्षण और गैर शिक्षण स्टाफ के प्रमाण पत्रों का सत्यापन यह देखने के लिए करना होगा कि क्या वे विभाग के मानाकों के अनुसार उचित रूप से अर्हित हैं तथा क्या प्रमाण पत्र वास्तविक हैं। विज्ञान, कला एवं भाषा के विभिन्न विषयों में शिक्षकों के संबंध में ऐसा सत्यापन किए जाने की आवश्यकता है। अपने शपथ पत्र के माध्यम से प्रत्यर्थी का प्रतिवाद यह है कि याचीगण विद्यालयों को प्रक्रिया का लाभ लेना होगा जैसा अधिनियम के अधीन विहित किया गया है और ऐसे आवेदन पर राज्य सरकार की विधि और नीति के मुताबिक सहायता अनुदान के लिए विद्यालयों पर विचार किया जाएगा।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि इन याचीगण विद्यालयों में से किसी को सहायता अनुदान अभी तक प्रदान नहीं किया गया है। इसके अतिरिक्त, याचीगण को आशंका है कि अन्य विद्यालयों के मुकाबले में उनके साथ भिन्न रूप में व्यवहार किया जा सकता है जिन्हें अल्पसंख्यक विद्यालय होने के नाते पहले सहायता प्रदान की गयी थी।

6. चाहे जो भी हो, प्रश्नगत विद्यालयों के सहायता अनुदान से संबंधित मामले में वर्ष 2008 से रिट याचिकाएँ लंबित हैं। इन परिस्थितियों में, प्रत्यर्थी सं॰ 2, सचिव, मानव संसाधन विकास विभाग, झारखंड सरकार को प्रत्येक याची के मामले पर विचार करने और अनुबंधित अवधि के भीतर विधि के अनुरूप समुचित निर्णय लेने के लिए निर्देश देना समुचित प्रतीत होता है।

7. मामले के उस दृष्टिकोण में, याचीगण को अपने दावा के समर्थन में समस्त समर्थनकारी दस्तावेजों को संलग्न करते हुए तीन सप्ताह की अवधि के भीतर समुचित आवेदन देकर, जैसा अधिनियम और नियमावली के अधीन आवश्यक है, प्रत्यर्थी सं॰ 2 के पास जाने की स्वतंत्रता दी जाती है। तत्पश्चात, प्रत्यर्थी सं॰ 2 प्रत्येक प्रश्नगत विद्यालय के संबंध में जिला शिक्षा अधिकारी के माध्यम से आवश्यक सत्यापन करवा कर कार्रवाई करने के लिए अग्रसर होगा जैसा अधिनियम, नियमावली और राज्य सरकार

की नीति के अधीन अनुध्यात किया गया है। तत्पश्चात, प्रत्यर्थी सं॰ 2 ऐसी कार्रवाई के पूरा होने पर सहायता अनुदान के प्रति उनकी हकदारी के प्रति प्रत्येक विद्यालय के संबंध में तर्कपूर्ण और सकारण आदेश पारित करेगा। यह कार्य ऐसे आवेदन की प्राप्ति की तिथि से 16 सप्ताह की अवधि के भीतर प्रश्नगत व्यक्तिगत याची के आवेदन के संबंध में पूरा किया जाएगा। यदि प्रत्यर्थी सं॰ 2 पाते हैं कि याचीगण का दावा वास्तविक और विधित: ग्राह्य है और वे ऐसे सहायता अनुदान के हकदार हैं, तत्पश्चात 12 सप्ताह की अवधि के भीतर इनके भुगतान के लिए पारिणामिक आदेश जारी किया जाएगा।

8. पूर्वोक्त संप्रेक्षण और निर्देश के साथ समस्त रिट याचिकाओं को निपटाया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr ;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t ;k jk;] U;k;efr

प्रभु नियारन सैमुअल सुरीन एवं एक अन्य

cuke

भारत संघ एवं अन्य

W.P. (PIL) No. 2549 of 2010. Decided on 29th November, 2012.

अनुसूचित क्षेत्रों तक पंचायत विस्तारण अधिनियम, 1996—धारा 4(O)—आदिवासी सलाहकार परिषद् का गठन–आदिवासी क्षेत्रों को अधिक स्वायत्तता की मांग–परिषद् याची जिसने आदिवासी क्षेत्रों के लिए राज्य से अधिक स्वायत्तता की मांग की है, द्वारा उठाए गए विवाद्यकों पर विचार करने के लिए उच्च न्यायालय की सहायता करने में बेहतर अवस्था में होगा–आदिवासी सलाहकार परिषद् को पक्ष प्रत्यर्थी के रूप में पक्षकार बनाया गया और प्रतिशपथ पत्र दाखिल करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 5 से 8)

अधिवक्तागण.–M/s Shree Prakash Jha, Sanjay Kumar, For the Petitioners; Advocate General, For the State; Mr. Md. Mokhtar Khan, For the Union of India; Mr. Sumeet Gadodia, For the Election Commission.

आदेश

तर्क के क्रम में इस न्यायालय के ध्यान में आया है कि भारत के संविधान की पंचम अनुसूची में बनाए गए प्रावधान के मुताबिक ''आदिवासी सलाहकार परिषद्'' गठित किए जाने की आवश्यकता है। किन्तु, विद्वान महाधिवक्ता के मुताबिक ''आदिवासी सलाहकार परिषद'' का गठन किया जा चुका है।

2. इस रिट याचिका में, यह कथन किया गया है कि अनुच्छेद 243M की दृष्टि में भारत के संविधान का भाग IX अनुसूचित क्षेत्रों पर लागू नहीं होगा। किंतु, अनुच्छेद 243M नागालैंड, मेघालय और मिजोरम राज्यों पर प्रयोज्य है। याची के अनुसार, जब बिहार राज्य और आंध्र प्रदेश राज्य में पंचायती राज अधिनियम अधिनियमित किया गया था, उनकी प्रयोज्यता को चुनौती दी गयी थी और पटना उच्च न्यायालय तथा आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 243M के प्रावधान की दृष्टि में पंचायती राज अधिनियम अनुसूचित क्षेत्रों में प्रयोज्य नहीं बनाया जा सकता है। याची के अनुसार, इस स्थिति को पाते हुए संसद ने अनुच्छेद 243M के खंड (4)(b) में प्रावधानित प्रावधान का अवलंब लेकर अनुसूचित क्षेत्रों तक पंचायत विस्तारण अधिनियम, 1996 (पी॰ ई॰ एस॰ ए॰) अधिनियमित किया। वर्ष 1996 के उक्त अधिनियम की धारा 4(O) में राज्य विधानमंडल पर अनुसूचित क्षेत्रों में जिला स्तर पर पंचायतों की प्रशासनिक व्यवस्था को रूपरेखा देते हुए संविधान के VI अनुसूची के पैटर्न का अनुसरण करने का प्रयास

करने का कर्तव्य डाला गया था। याची की शिकायत यह है कि लगभग 16 वर्ष बीतने के बाद वर्ष 1996 के अधिनियम के अधिनियमन के बाद भी वर्ष 1996 के अधिनियम की धारा 4 (O) की आत्मा को प्रभाव देने के लिए राज्य विधानमंडल द्वारा कोई अधिनियमन नहीं किया गया है।

3. विद्वान महाधिवक्ता ने यह निवेदन करते हुए याची के प्रतिवाद पर गंभीर रूप से विवाद किया है कि राज्य ने वर्ष 1996 के अधिनियम की धारा 4 (O) का पूरा ख्याल किया है और विधियों को अधिनियमित किया है जो VIठी अनुसूची के प्रावधानों का पूरा ख्याल रखेंगी और राज्य के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विश्वास किए गए अधिनियमों में से एक झारखंड पंचायती राज अधिनियम है और उन्होंने आगे संशोधन अधिनियम अर्थात् झारखंड पंचायती राज अधिनियम, 2001 पर विश्वास किया है।

4. इस रिट याचिका में याची ने विनिर्दिष्टत: अभिवचनित किया कि दिनांक 11 अप्रिल, 2007 की असाधारण गजट अधिसूचना द्वारा निम्नलिखित क्षेत्रों को अनुसूचित क्षेत्र घोषित किया गया है:–

1. *jkph ftyk]*
2. *ykgjnXxk ftyk]*
3. *xeyk ftyk]*
4. *fleMxk ftyk]*
5. *ykrgkj ftyk]*
6. *io flgHke ftyk]*
7. *if'pe flgHke ftyk]*
8. *ljk;dyk [kjlkok ftyk]*
9. *lkgcxt ftyk]*
10. *nedk ftyk]*
11. *ikdM ftyk]*
12. *tkerkMk ftyk]*
13. *iyke ftyk vkj lkcck ç[kM dk ipk;r]*
14. *x<ok ftyk Hknjyk ç[kM]*
15. *xkMMk ftyk lUnj igkMh vkj ckjhtkj ç[kMA*

5. रिट याचिका में याची द्वारा विनिर्दिष्टत: अभिवचनित किया गया है कि ऊपर उल्लिखित अनुसूचित क्षेत्र आदिवासी जनसंख्या का 70% से अधिक गठित करते हैं। विद्वान महाधिवक्ता तथा भारत संघ के विद्वान अधिवक्ता द्वारा भी इस तथ्य को विवादित किया जा रहा है। किंतु, आगे अग्रसर होने के पहले इस महत्वपूर्ण तथ्यपरक स्थिति को इस कारण से स्पष्टत: समझने की आवश्यकता है कि झारखंड राज्य में मूलरूप से अनुसूचित क्षेत्रों, जो मूलत: बिहार राज्य के थे, को काफी पहले वर्ष 1950 में अनुसूचित क्षेत्र घोषित किया गया था। तत्पश्चात, बार–बार अनुसूचित क्षेत्र अधिसूचनाओं को जारी किया गया था। वर्ष 2009 में, झारखंड का नया राज्य सृजित किया गया था और राँची झारखंड राज्य की राजधानी है। हम इस तथ्य का न्यायिक ध्यान ले सकते हैं कि आदिवासी लोगों से गठित हाने वाली राँची की 70% जनसंख्या के संबंध में याची का दावा गंभीर रूप से संदेहास्पद है।

6. चाहे जो भी हो, चूँकि झारखंड राज्य में ''आदिवासी सलाहकार परिषद्'' का गठन किया गया है और झारखंड राज्य में आदिवासी लोगों के हित का ख्याल करने में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है और, इसलिए याची, जिसने अदिवासी क्षेत्रों के लिए राज्य से अधिक स्वायत्तता की मांग की है, द्वारा उठाए गए विवाद्यकों पर विचार करने के लिए इस न्यायालय की सहायता करने के लिए उक्त परिषद् बेहतर अवस्था में होगी। अत:, ''आदिवासी सलाहकार परिषद् झारखंड'' पक्षकार प्रत्यर्थी सं॰ 5 के तौर पर अभियोजित किया जाता है। याची द्वारा संशोधित कॉज टाइटल ''आदिवासी सलाहकार परिषद, झारखंड'' पर नोटिस तामील करने के लिए दो संवर्गों में, एक रजिस्टर्ड डाक द्वारा और दूसरा सामान्य प्रक्रिया द्वारा, अध्यपेक्षित नोटिस के साथ दो सप्ताह की अवधि के भीतर दाखिल किया जा सकता है।

7. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वह दो दिन के भीतर याची के विद्वान अधिवक्ता को ''आदिवासी सलाहकार परिषद्'' का पूरा पता प्रदान करेंगे।

8. ''अदिवासी सलाहकार परिषद्'' दिनांक 8 जनवरी, 2012 तक अपना प्रतिशपथ पत्र दाखिल कर सकती है। राज्य भी अपने पास उपलब्ध आँकड़ों के मुताबिक अनुसूचित क्षेत्रों के जनसंख्या विभाजन के विवरणों को दाखिल कर सकता है।

9. इस मामले को ''अंतिम निपटारे के लिए'' शीर्ष के अधीन दिनांक 8 जनवरी, 2013 को रखा जाए।

10. इस आदेश की प्रति राज्य के विद्वान अधिवक्ता, भारत संघ के विद्वान अधिवक्ता और याची के विद्वान अधिवक्ता को दी जाए।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

सरदार कुलदीप सिंह

cuke

न्यू इंडिया एश्योरेंस कं॰ लि॰ एवं अन्य

W.P. (C) No. 334 of 2008. Decided on 23rd November, 2012.

विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987—धारा 22(C)—दुर्घटना दावा–स्थायी लोक अदालत द्वारा 3,00,000/- रुपयों का मुआवजा अधिनिर्णीत किया गया–पक्षों के प्रतिवादों और याची की ओर से दिए गए साक्ष्यों पर विचार करने के बाद गुणागुण पर अधिनिर्णय दिया गया था–साक्ष्यों के अधिमूल्यन के बाद स्थायी लोक अदालत द्वारा निष्कर्ष पर पहुँचा गया था–स्थायी लोक अदालत द्वारा दिए गए अधिनिर्णय में गुणागुण पर दर्ज निष्कर्ष अंतिम बन जाते हैं–रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 3 एवं 4)

अधिवक्तागण.–M/s. Manish Mishra, Shresth Gautam, For the Petitioner; Mr. Manish Kumar, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची पी॰ एल॰ ए॰ केस सं॰ 84 वर्ष 2007 में क्रमश: दिनांक 31.8.2007 और दिनांक 11.9.2007 को पारित स्थायी लोक अदालत, जमशेदपुर के आदेश और अधिनिर्णय (परिशिष्ट-8) का लाभार्थी है। उक्त अधिनिर्णय द्वारा वाहन, जो दुर्घटनाग्रस्त हुआ था और प्रत्यर्थी-बीमा कंपनी के यहाँ बीमाकृत था, को हुए नुकसान के बदले 3,00,000/- रुपया अधिनिर्णीत किया गया था। दावा मामले में

नोटिसों के बाद पक्षगण उपस्थित हुए और स्थायी लोक अदालत द्वारा दिए गए निष्कर्ष के मुताबिक बीमा कंपनी सुलह से बचती रही। तत्पश्चात्, अपने दावा के समर्थन में साक्ष्य देने की अनुमति याची को देने के बाद गुणागुण पर मामला सुना गया था और विनिश्चित किया गया था। याची के विद्वान अधिवक्ता आक्षेपित अधिनिर्णय से व्यथित हैं क्योंकि याची द्वारा दावा किए गए 4,58,948/- रुपयों की राशि के बजाए नुकसानी के रूप में 3,00,000/- रुपयों की राशि स्थायी लोक अदालत द्वारा अधिनिर्णीत की गयी है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय को विद्वान स्थायी लोक अदालत के निर्णय के साथ यह निवेदन करने के लिए अवगत कराया है कि बीमा कंपनी ने जानबूझकर दावा का भुगतान करने में विलंब किया जिसे स्थायी लोक अदालत द्वारा ध्यान में लिया गया था, किंतु उसके बावजूद दावेदार/याची को संपूर्ण दावा राशि का भुगतान नहीं किया गया है।

3. प्रत्यर्थी–बीमा कंपनी उपस्थित हुई है और निवेदन किया है कि याची ने उपभोक्ता फोरम के बजाए मुकदमा पूर्व मामले में स्वयं को स्थायी लोक अदालत की अधिकारिता के अध्यधीन किया और नोटिस जारी किए जाने पर बीमा कंपनी ने कार्यवाही में भाग लिया और मामला गुणागुण पर विनिश्चित किया गया है जिसके विरुद्ध विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम के प्रावधानों के अधीन कोई अपील प्रावधानित नहीं की गयी है। आगे निवेदन किया गया है कि याची ने स्वयं नवंबर, 2007 में संबंधित न्यायालय के समक्ष निष्पादन याचिका दाखिल किया और अधिनिर्णीत राशि उसके द्वारा पहले ही प्राप्त कर ली गयी है। इस बीच, रिट याची ने वर्तमान रिट याचिका में अधिनिर्णय का विरोध भी किया है, जिसमें इस न्यायालय द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन पर्यवेक्षणीय अधिकारिता में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।

4. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और आक्षेपित अधिनिर्णय के परिशीलन से यह प्रकट है कि प्रश्नगत अधिनिर्णय पक्षों के प्रतिवादों और याची की ओर से दिए गए साक्ष्यों पर विचार करने के बाद गुणागुण पर दिया गया था। साक्ष्यों के अधिमूल्यन के बाद स्थायी लोक अदालत निष्कर्ष पर पहुँची है और याची उक्त अधिनिर्णय में केई विकृतता दर्शाने में सक्षम नहीं रहा है। पर्यवेक्षणीय अधिकारिता के प्रयोग में, इस न्यायालय को यह देखने की आवश्यकता है कि क्या अवर अधिकरण अपनी अधिकारिता के परे गया है अथवा अधिकारिता की गंभीर गलती अथवा अनुचितता किया है। इसके अतिरिक्त, स्वयं याची ने स्थायी लोक अदालत द्वारा अधिनिर्णीत नुकसानी का दावा करने के लिए निष्पादन याचिका दाखिल किया जो वह पहले ही प्राप्त कर चुका है। विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम के प्रावधानों के अधीन स्थायी लोक अदालत द्वारा दिए गए अधिनिर्णय में गुणागुण पर दर्ज निष्कर्ष अंतिम बन जाते हैं। यह न्यायालय संतुष्ट है कि आक्षेपित अधिनिर्णय में हस्तक्षेप करने के लिए कोई आधार नहीं बनाया गया है। तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लि॰

cuke

दिलीप राम उर्फ दिलीप कोइरी एवं एक अन्य

W.P. (C) No. 6046 of 2007. Decided on 29th November, 2012.

विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987—धारा 22 (C) 7— मोटर वाहन दुर्घटना–स्थायी लोक अदालत द्वारा 1,35,000/- रुपयों का मुआवजा अधिनिर्णीत किया गया–केवल पक्षों द्वारा सुलह अथवा समझौते के निबंधनों का पालन करने में विफलता पर स्थायी लोक अदालत गुणागुण पर विवाद विनिश्चित करने के लिए अग्रसर हो सकती है–आक्षेपित अधिनिर्णय पारित करते हुए स्थायी लोक अदालत ऐसा करने में विफल रही है और अधिनियम की प्रक्रिया का उल्लंघन करके अधिकारिता की गंभीर गलती की–स्थायी लोक अदालत संविधि की उत्पत्ति है और इसे अपनी अधिकारिता की सीमा के भीतर रहने की जरूरत है–आक्षेपित अधिनिर्णय अपास्त किया गया–रिट याचिका अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Manish Kumar, For the Petitioner; None, For the Respondents.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. प्रत्यर्थीगण को पहले नोटिस जारी किए गए थे और प्रत्यर्थी सं॰ 1 के संबंध में नोटिस के प्रतिस्थापित तामीला के लिए याची द्वारा कदम उठाए गए थे और तत्पश्चात, रिट याची ने समाचार पत्र प्रकाशन संलग्न करते हुए आई॰ ए॰ सं॰ 1755 वर्ष 2010 दाखिल करके प्रत्यर्थी सं॰ 1 पर नोटिस के प्रतिस्थापित तामीला का अनुपालन दाखिल किया।

3. किंतु, मामले का प्रतिवाद करने के लिए प्रत्यर्थीगण उपस्थित नहीं हुए हैं।

4. याची बीमा कंपनी दिनांक 4.7.2007 के अधिनिर्णय से व्यथित है जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा दावा आवेदन दाखिल किए जाने पर पी॰ एल॰ ए॰ केस सं॰ 61 वर्ष 2007 में स्थायी लोक अदालत, जमशेदपुर द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 1 को 1,35,000/- रुपयों की राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था।

5. प्रत्यर्थी सं॰ 1 मृतक पुत्र का पिता है जिसकी मृत्यु रजिस्ट्रेशन सं॰ JH05J-5082 वाले वाहन को अंतर्ग्रस्त करते हुए दिनांक 27.7.2007 को सड़क दुर्घटना में हो गयी। उसने मोटर यान अधिनियम की धारा 166 के अधीन 6,22,000/- रुपयों के मुआवजा का दावा करते हुए पूर्व मुकदमा केस पी॰ एल॰ ए॰ केस सं॰ 61 वर्ष 2007 दाखिल किया और बीमा कंपनी नोटिस पर उपस्थित हुई और मामले का प्रतिवाद किया। याची की ओर से आक्षेपित आदेश का विरोध करने का मुख्य आधार यह है कि किसी सुलह की अनुपस्थिति में अथवा किसी समझौते के निबंधनों को विरचित किए बिना, जिसके पक्षों के बीच अनुसरण की आवश्यकता विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 22 (C) (7) के अधीन थी, स्थायी लोक अदालत विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम की धारा 22 (C) (8) के अधीन शक्ति का अवलंब लेकर गुणागुण पर विवाद का न्याय निर्णयन नहीं कर सकती है। याची की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने **डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 7465 वर्ष 2006** में दिनांक 31.7.2012 के आदेश के तहत **न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लि॰ बनाम श्रीमती पूर्णिमा राय एवं अन्य** मामले में समरुप परिस्थितियों में दिए गए निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें **डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1449 वर्ष 2008** में पारित दिनांक 9.4.2009 के आदेश के तहत **स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, धनबाद बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य** मामले में और **डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1975 वर्ष 2007** में दिनांक 30.4.2012 के आदेश के तहत **ओरियेंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड, कचहरी रोड, राँची बनाम बोद्या ओराँव एवं एक अन्य** मामले में इस न्यायालय द्वारा दिए गए पूर्व निर्णय पर भी स्थायी लोक अदालत को अधिनिर्णय को अपास्त करते हुए विश्वास किया गया है। याची बीमा कंपनी के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि स्थायी लोक

अदालत ने सुलह करने के लिए परस्पर विरोधी पक्षों के प्रस्ताव देने के लिए सुलह अथवा समझौते के किसी निबंधन को विरचित करने का प्रयास नहीं किया था और मोटर यान दावा अधिकरण, जो मोटर यान अधिनियम, 1988 के प्रावधानों के अधीन विशेष रूप से अधिसूचित और गठित है, जैसे विशिष्टिकृत अधिकरण की प्रकृति में गुणागुण पर विवाद का न्याय निर्णयन करने के लिए अग्रसर हुआ। याची के विद्वान अधिवक्ता की ओर से यह निवेदन किया गया है कि अन्यथा भी गुणागुण पर विवाद्यक पर इन आधारों पर जोरदार प्रतिवाद किया गया था कि मृतक, नि:शुल्क यात्री स्वयं उपेक्षावान था जबकि पॉलिसी केवल स्वामियों के चालक और खलासी के लिए थी। आगे निवेदन किया गया है कि इन परिस्थिति में स्थायी लोक अदालत ने आक्षेपित अधिनिर्णय देकर गुणागुण पर विवाद विनिश्चित करते हुए अधिकारिता की गंभीर गलती की है।

6. मैंने याची के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्रियों और अधिनिर्णय का परिशीलन किया है। यह प्रतीत होता है कि मृतक लक्ष्मण कुमार के पिता प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा मुकदमा पूर्व मामला पी॰ एल॰ ए॰ केस सं॰ 61 वर्ष 2007 दाखिल किया गया था जिसने प्रत्यर्थी सं॰ 2 की रजिस्ट्रेशन सं॰ JH05J-5082 वाले डंपर को अंतर्ग्रस्त करते हुए दिनांक 27.7.2003 को हुई घटना के संबंध में मोटर यान अधिनियम के प्रावधानों के अधीन मुआवजा के लिए दावा किया। स्वयं आक्षेपित अधिनिर्णय के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि इस तथ्य कि मृतक अपराध करने वाले वाहन का नि:शुल्क यात्री था, अत: बीमा कंपनी प्रश्नगत पॉलिसी के अधीन मुआवजा का भुगतान करने की दायी नहीं थी, सहित विभिन्न गणनाओं पर वर्तमान याची न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लि॰ द्वारा दावेदारगण के दावा का प्रतिवाद किया गया था। विद्वान स्थायी लोक अदालत ने संप्रेक्षित किया है कि बीमा कंपनी ने सुलह करने से इनकार किया, अत:, स्थायी लोक अदालत विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 22 (C) (8) के अधीन गुणागुण पर विवाद विनिश्चित करने के लिए अग्रसर हुई। किंतु यहाँ ऊपर दिए गए इस न्यायालय के निर्णय द्वारा अधिकथित निर्णयाधार स्पष्टत: अधिकथित करता है कि गुणागुण पर विवाद के न्याय निर्णयन करने के मामले में, स्थायी लोक अदालत को वर्ष 1987 के अधिनियम की धारा 22 (C) (4) से (7) के प्रावधानों से संबंधित प्रक्रिया का अनुसरण करना होगा और केवल समझौते अथवा सुलह के निबंधनों का पालन करने में पक्षों की विफलता पर यह गुणागुण पर विवाद विनिश्चित करने के लिए अग्रसर हो सकती है। स्थायी लोक अदालत आक्षेपित अधिनिर्णय पारित करते हुए ऐसा करने में विफल रही और अधिनियम की प्रक्रिया का उल्लंघन करके अधिकारिता की गंभीर गलती की जैसा यहाँ ऊपर निर्दिष्ट निर्णय में इस न्यायालय द्वारा मान्य ठहराया गया है। स्थायी लोक अदालत संविधि की उत्पत्ति है और इसे अपनी अधिकारिता की सीमा के भीतर रहने की आवश्यकता होती है। ऐसी परिस्थितियों में, इस मामले में पारित अधिनिर्णय अधिकारिता का उल्लंघन करके दिया गया है, जिसमें इस न्यायालय के न्यायिक पुनर्विलोकन के प्रयोग में हस्तक्षेप करने की आवश्यकता है। तद्नुसार, आक्षेपित निर्णय अपास्त किया जाता है।

7. किंतु, यह संप्रेक्षित किया जाता है कि दावेदार ऐसी सलाह दिए जाने पर समुचित फोरम, जिसे मोटर यान अधिनियम के अधीन सृजित किया गया है, के समक्ष अपने दावा का उपचार प्राप्त कर सकता है।

8. आई॰ सं॰ 1755 वर्ष 2010 और आई॰ ए॰ सं॰ 1425 वर्ष 2010 निपटायी जाती है।

9. तद्नुसार, पूर्वोक्त निबंधनों में यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

भारत कोकिंग कोल लिमिटेड (सभी में)

cuke

शशि महतो एवं अन्य (सभी में)

F.A. Nos. 122, 124 to 143 of 1990. Decided on 1st November, 2012.

भूमि अर्जन अधिनियम की धारा 54 के अधीन अपील के मामले में।

भूमि अर्जन अधिनियम, 1894—धाराएँ 4 एवं 18—भूमि का अर्जन–मुआवजा–अवर न्यायालय ने अभिलेख पर प्रस्तुत इर्द-गिर्द की पार्श्व भूमि के अनेक विक्रय विलेखों को विचार में लिया है–वर्तमान मामलें 2009 (1) JLJR 129 में प्रकाशित निर्णय द्वारा पूरी तरह आच्छादित हैं और किसी विस्तृत चर्चा की आवश्यकता नहीं है–अपील खारिज। (पैराएँ 5 से 8)

निर्णयज विधि.–2009(1) JLJR 129—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s Ananda Sen, K. Panda, For the Appellants; M/s Ashutosh Anand, Binit Chandra, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. अपीलों का यह समूह भूमि अर्जन निर्देश केस सं॰ 10/1990 से 30/1990 तक में भूमि अर्जन न्यायाधीश, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 21.5.1990 के एक ही निर्णय से उद्‌भूत होता है।

3. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि विद्वान अवर न्यायालय प्रश्नगत भूमि के मूल्य के निर्धारण पर आने में अभिलेख पर प्रस्तुत दस्तावेजी साक्ष्य एवं मौखिक साक्ष्य का अधिमूल्यन करने में विफल रहा है। आगे यह निवेदन किया गया है कि भूमि अर्जन न्यायाधीश द्वारा अधिनिर्णीत राशि अत्यधिक है और अभिलेख पर दस्तावेजी एवं मौखिक साक्ष्य के विपरीत है। अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे यह निवेदन किया कि विद्वान अवर न्यायालय प्रदर्श A, राज्य की ओर से दाखिल दर रिपोर्ट, और प्रदर्श B, अपीलार्थीगण द्वारा दाखिल विक्रय विलेख को विचार में लेने में विफल रहा है। आगे यह निवेदन किया गया है कि विद्वान अवर न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर आने में गंभीर गलती की है कि दर रिपोर्ट विधि में ग्राह्य नहीं है। अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि विद्वान अवर न्यायालय इसे विचार में लेने में विफल रहा है कि मात्र इसलिए कि दर रिपोर्ट के समर्थन में विक्रय विलेख दाखिल नहीं किया गया था, दर रिपोर्ट विधि में ग्राह्य नहीं हो सकती है। यह निवेदन भी किया गया है कि विद्वान अवर न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर आने के बाद भी विधि की गंभीर गलती की कि दर रिपोर्ट ग्राह्य नहीं थी, फिर भी उक्त रिपोर्ट पर विश्वास किया है। यह निवेदन भी किया गया है कि विद्वान अवर न्यायालय ने गलत रूप से ब्याज अनुज्ञात किया और वर्ष 1984 के संशोधन अधिनियम की अपव्याख्या की और इसलिए विद्वान भूमि अर्जन न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय और अधिनिर्णय अपास्त किए जाने योग्य है।

4. इसके विरुद्ध, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने विद्वान भूमि अर्जन न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय और अधिनिर्णय का समर्थन किया और निवेदन किया कि विद्वान अवर न्यायालय ने अभिलेख पर प्रस्तुत दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्य को विचार में लेने के बाद विधि के अनुरुप निर्णय और अधिनिर्णय पारित किया। आगे यह निवेदन किया गया है कि मुआवजा का निर्धारण/अवधारण विद्वान अवर न्यायालय

द्वारा अनेक विक्रय विलेखों में वर्णित मूल्यांकन और दर रिपोर्ट के आधार पर किया गया है जिन्हें अभिलेख पर प्रस्तुत किया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि विद्वान अवर न्यायालय ने उक्त निर्णय के पैराओं 8 और 9 में मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्य के बारे में विस्तृत चर्चा किया है। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने आगे यह निवेदन किया कि एल॰ ए॰ केस सं॰ 35/1983-84 में मामलों का समूह था जिसमें से भूमि अर्जन निर्देश केस सं॰ 61/1990 से 94/1990 तक (कुल 33 मामले) में पारित निर्णय और अधिनिर्णय के विरुद्ध अपीलार्थीगण द्वारा प्रथम अपीलों को दाखिल किया गया है और प्रथम अपील सं॰ 105 से 137 वर्ष 2008 को इस न्यायालय द्वारा दिनांक 10.11.2008 के अपने निर्णय और आदेश द्वारा विनिश्चित किया गया है। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने मेरा ध्यान 2009 (1) JLJR 129 में प्रकाशित उक्त निर्णय की ओर भी आकृष्ट किया है।

5. अपीलार्थीगण और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता के परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करते हुए और भूमि निर्देश मामलों में पारित आक्षेपित निर्णय और अधिनिर्णय और कार्यवाही के अभिलेख के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि विद्वान अवर न्यायालय ने अभिलेख पर प्रस्तुत मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद निर्णय और अधिनिर्णय पारित किया है। आक्षेपित निर्णय और अधिनिर्णय के पैराओं 8, 9 और 10 के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि विद्वान अवर न्यायालय ने अभिलेख पर प्रस्तुत इर्द–गिर्द के पार्श्व भूमि के अनेक विक्रय विलेखों को विचार में लिया है। विद्वान अवर न्यायालय ने अपने निर्णय में माननीय न्यायालय द्वारा संगणित सिद्धांत को भी विचार में लिया है और तद्नुसार विद्वान अवर न्यायालय द्वारा मुआवजा का निर्धारण किया गया था। आगे यह प्रतीत होता है कि विद्वान अवर न्यायालय ने अपने द्वारा दर्ज निष्कर्षों में अभिलेख पर प्रस्तुत दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्य का सूक्ष्म विश्लेषण किया है और भूमि अर्जन निर्देश मामलों के समूह में आक्षेपित निर्णय और अधिनिर्णय पारित करने में केई गलती नहीं की है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिए गए तर्क अवर न्यायालय द्वारा दिए गए विस्तृत औचित्यता की दृष्टि में स्वीकार नहीं किए जा सकते हैं। मैंने प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत 2009 (1) JLJR 129 में प्रकाशित निर्णय का परिशीलन भी किया है और उक्त निर्णय के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि अपीलों का समूह भूमि अर्जन निर्देश केस सं॰ 61/1990 से 94/1990 तक (कुल 33 मामले) में विद्वान भूमि अर्जन न्यायाधीश, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 21.3.1998 के एक ही निर्णय से उद्‌भूत होता है। वर्तमान अपीलें भी भूमि अर्जन निर्देश केस सं॰ 10/90 से 30/90 तक में इसी एल॰ ए॰ केस सं॰ 35/1983-84 से उद्‌भूत हुई हैं और इसलिए, 2009 (1) JLJR 129, में प्रकाशित निर्णय के पैरा 9 और 10 वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में प्रासंगिक हैं जिनका पठन निम्नलिखित है:–

> *"09. nkonkjx.k dh vkj l ijhf{kr X;kjg xokgk u dgk fd Hkfe pkl&èkuckn e[; lMd d cxy e vofLFkr Fkh tgk chO lhO lhO ,yO dh vud ifj;ktuk, py jgh Fkh vkj vftr Hkfe ty] fo|r] vkfn lfoèkk oky vk|kfxd {k= d vrxr FkhA i{kk u dfri; nLrkotk ij Hkh fo'okl fd;kA fo}ku ,yO ,O U;k;kèkh'k u ik;k fd Hkfe vtu vfèkdkjh u nj fjikV (çn'k C) d Øekd 9 ij n'kk, x, xkjk ıHkfe d vkèkkj ij vftr Hkfe dk eY;kdu fu;r fd;k Fkk tk fnukd 26.8.1982 dk fu"ikfnr foØ; foy[k d erkfcd 16,667/-#i;k çfr ,dM dh nj ij Fkh(fdr Øekd 3 ij foØ; foy[k fnukd 19.2.1981 dk Lo; chO lhO lhO ,yO }kjk [kjhnh x;h Hkfe l lcfèkr 1,11,250/-#i;k çfr ,dM dh nj ij Fkh vkj Øekd 10 ij n'kk;k x;k nj 40,000/-#i;k çfr ,dM Fkk vkj*

Øekd 16 ij n'kk;k x;k nj 27,727/-#i;k çfr ,dM dh nj ij Fkk ftl ij dkb dkj.k fn, fcuk vFkok bl ij vfo'okl fd, fcuk fopkj ugh fd;k x;k Fkk] vkj blfy,] fo}ku ,y0 ,0 U;k;kèkh'k u vfHkfuèkkfjr fd;k fd vklr nj fjikV e n'kk, x, foØ;k d vkèkkj ij fu;r fd;k tkuk pkfg, Fkk vkj doy Øekd 9 ij mfYyf[kr foØ; eY; d vkèkkj ij Hkfe d eY; dk fu;rdj.k fcYdy euekuk vkj vufpr FkkA çn'k 2 mlh xko d xkjk II Hkfe d lcèk e fnukd 16.11.1981 dk foØ; foy[k Fkk ftl 250/-#i;k çfr fMlfey vFkkr 25,000/-#i;k çfr ,dM dh nj ij cpk x;k FkkA fnukd 1.7.1983 d foØ; foy[k u n'kk;k fd fc;kM Hkfe 600/-#i;k çfr dVBk d nj ij cph x;h Fkh tk 400/-çfr fMlfey d yxHkx gkrk gA Hkfe fun'k dl l0 10 l 30/90 rd dk fu.k; Hkh çn'k 1 d :i e çLrr fd;k x;k FkkA ,y0 ,0 U;k;kèkh'k u ik;k fd mDr ekey e ,y0 ,0 U;k;kèkh'k u iokDr foy[kk vkj xk[ky fjikV ij fo'okl fd;k Fkk vkj xkjk I Hkfe dk 40,000/-fu;r fd;k(cgky Hkfe dh nj 80,000/-#i;k ij fu;r dh x;h Fkh(dukyh Hkfe dh nj 50,000/-#i;k Fkh(cn Hkfe 26,666/-#i;k d nj ij Fkh(xkjk II Hkfe dh nj 13,333/-#i;k Fkh(xkjk III Hkfe 3,333/-#i;k d nj ij Fkh vkj ijrh Hkfe 2500/-#i;k çfr ,dM dh nj ij FkhA fdr] fo}ku ,y0 ,0 U;k;kèkh'k u vfèkfu.kfr;k d fuonu e cy ik;k fd vftr Hkfe vk|kfxd {k= d vrxr vofLFkr Fkh tgk ch0 lh0 lh0 ,y0 dh vud ;ktuk, py jgh Fkh] vkj blfy,] vftr Hkfe dh le#i {kerk Fkh] vkj blfy,] leLr Hkfe dk eY;kdu ,d gh nj ij fu;r fd;k tkuk pkfg,A blu ;g Hkh fopkj e fy;k fd ch0 lh0 lh0 ,y0 {k= d vrxr Hkfe dh dher m|kxk d fodkl vkj ch0 lh0 lh0 ,y0 d DokVjk vkj cxyk d fuek.k d dkj.k lkjoku :i l c< jgh FkhA ekey d leLr çklfxd igyvk dk fopkj e yu d ckn blu ik;k fd leLr fu"i{krk e vftr Hkfe dh e;kfnr vkj vklr eY;kdu 250/-çfr fMlfey vFkkr 25,000/-#i;k çfr ,dM l de ugh gkuk pkfg,A

*10. ekey d rF;k vkj ifjfLFkfr;k e] tl k Åij xkj fd;k x;k g] Jh egrk dk rd fd vklr likV nj fu;r ugh fd;k tkuk pkfg, Fkk] Lohdkj ugh fd;k tk ldrk gA ,y0 ,0 U;k;kèkh'k u lgh çdkj l vfHkfuèkkfjr fd;k g fd vftr Hkfe d fy, vklr likV nj fu;r fd;k tkuk pkfg, D;kfd o le#i {kerk vkj eY;kdu oky FkA vkx] jkT; ,o ch0 lh0 lh0 ,y0 }kjk fo'okl fd, x, nj fjikV (çn'k C) dh nf"V e] çn'k A1 vkj A2 ij iFkd :i l fopkj djuk vko';d ugh FkkA çn'k A1 fnukd 17.2.1981 dk foØ; foy[k g ftld }kjk ,d ,dM Hkfe doy 1000/-#i;k d fy, cph x;h Fkh vkj çn'k A2 fnukd 26.8.1982 dk fu"ikfnr foØ; foy[k g ftld }kjk 6 fMlfey Hkfe doy 1000/-#i;k d fy, cph x;h Fkh tk 16,667/-#i;k çfr ,dM gkrh gA fdr] vfHky[k ij ;g ugh yk;k x;k g fd mDr çn'kk A1 vkj A2 d vèkhu cph x;h Hkfe dh ç'uxr Hkfe dh rjg le#i {kerk FkhA dkrk noh (Åij) d fu.k; e fodkl çHkkjk gr dVkrh d ç'u ij fopkj fd;k x;k FkkA mDr ekey e ekdV dfefV d u, xYyk ckt kj] foJke xg] LVkiQ DokVj] vkfn dh LFkkiuk d fy, Hkfe vftr dh x;h FkhA oreku ekey e] LohÑr :i l Hkfe [kuu ç;ktu l vftr dh x;h Fkh ftld fy, Hkfe d fodkl dh vko';drk ugh gA vfHky[k ij lkefx;k vkj i{kk d fo}ku vfèkoDrk }kjk fn, x, rdk ij fopkj dju d ckn e vk{kfir fu.k; e gLr{ki dju dk dkb dkj.k ugh ikrk gA***

6. पूर्वोक्त निर्णय की दृष्टि में, यह प्रतीत होता है कि वर्तमान मामले पूर्वोक्त निर्णय द्वारा पूरी तरह आच्छादित हैं और इसलिए, मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य के बारे में आगे किसी विस्तृत चर्चा की

आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वर्तमान मामलों के समूह में साक्ष्य का समरुप संवर्ग अभिलेख पर है और पूर्वोक्त प्रकाशित निर्णय में इस पर पहले ही चर्चा की जा चुकी है। उक्त अवस्था की दृष्टि में, ये प्रथम अपीलें खारिज किए जाने योग्य हैं।

7. तद्नुसार, इन समस्त प्रथम अपीलों को व्यय के आदेश के बिना खारिज किया जाता है।

8. चूँकि ये भूमि अर्जन निर्देश मामले एल॰ ए॰ केस सं॰ 35/1983-84 से उद्भूत हुए हैं और लगभग 30 वर्ष बीत चुके हैं, अत: राशि संवितरण आदेश की प्रक्रिया शीघ्रातिशीघ्र की जाए। एल॰ सी॰ आर॰ को संबंधित अवर न्यायालय को भेजा जाए।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

ओरियेंटल इंश्योरेंस कंपनी लि॰ (2403 में)

सुनील कुमार सिंह (2662 में)

cuke

सुनील कुमार सिंह एवं एक अन्य (2403 में)

ओरियेंटल इंश्योरेंस कंपनी लि॰ (2662 में)

W.P. (C) Nos. 2403, 2662 of 2007. Decided on 30th November, 2012.

विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987—धारा 22 (C)—दुर्घटना दावा–पक्षों को किसी सुलह अथवा समझौते का प्रस्ताव दिए बिना स्थायी लोक अदालत द्वारा गुणागुण पर फौरन अधिनिर्णय पारित किया गया–गुणागुण पर विवाद विनिश्चित करने के पहले पक्षों को समझौते का कोई निबंधन विरचित अथवा प्रस्तावित नहीं किया गया था–स्थायी लोक अदालत को धारा 22 (C) के अधीन विहित प्रक्रिया और आज्ञा का अनुसरण करना ही होगा–आक्षेपित अधिनिर्णय अभिखंडित। (पैराएँ 6 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. D.C. Ghose (in 2403); Mr. R. Mukhopadhyay (in 2662), For the Petitioner; Mr. R. Mukhopadhyay (in 2403); Mr. D. C. Ghose (in 2662), For the Respondents.

आदेश

बीमा कंपनी प्रथम मामले में याची है जो पी॰ एल॰ ए॰ केस सं॰ 19 वर्ष 2006 में स्थायी लोक अदालत द्वारा पारित क्रमश: दिनांक 29.12.2006 और दिनांक 30.12.2006 के आदेश और अधिनिर्णय से व्यथित है जिसके द्वारा 6,49,000/- रुपयों का मुआवजा उस पर 12% की दर पर ब्याज के साथ प्रत्यर्थीगण–दावेदारगण के पक्ष में प्रथम याचिका में अधिनिर्णीत किया गया है।

2. द्वितीय रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 2662 वर्ष 2007 में दावेदार–याची पूर्वोक्तानुसार स्थायी लोक अदालत द्वारा प्रदान किए गए अधिनिर्णय बढ़ाये जाने की मांग करते हुए इस न्यायालय के समक्ष आए हैं।

3. याची बीमा कंपनी अधिनिर्णय का इस आधार पर विरोध करती है कि स्थायी लोक अदालत ने अधिनियम, 1987 की धारा 22 (C) 4 से 7 तक के अधीन समझौते के निबंधनों को विरचित नहीं करके और इसके ऊपर परस्पर विरोधी पक्षों को समझौते के लिए सहमत होने अथवा सुलह करने का प्रस्ताव नहीं देकर विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 के अधीन विहित प्रक्रिया का अनुसरण करने में

विफल रहा। यह केवल यह संप्रेक्षित करके कि पक्षगण सुलह करने में विफल रहे, फौरन गुणागुण पर मामले को विनिश्चित करने के लिए अग्रसर हुआ। यह निवेदन किया गया है कि **डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 6971 वर्ष 2007** में **नेशनल इंश्योरेंस कं॰ लि॰ बनाम मो॰ अंजर आलम एवं अन्य** मामले में दिनांक 2.11.2012 के निर्णय के तहत इस न्यायालय द्वारा मान्य ठहराए गए और यहाँ ऊपर निर्दिष्ट प्रासंगिक प्रावधानों के अधीन विधि की आवश्यकता का अनुसरण गुणागुण पर विवाद विनिश्चित करने के लिए अग्रसर होने के पहले स्थायी लोक अदालत द्वारा नहीं किया गया है।

4. याची के अधिवक्ता ने **डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1449 वर्ष 2008** में **स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, धनबाद बनाम झारखंड राज्य** मामले में इस न्यायालय की एकल पीठ द्वारा दिनांक 9.4.2009 को दिए गए निर्णय पर और **डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1975 वर्ष 2007** में **ओरियेंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड, कचहरी रोड, राँची बनाम बोद्या ओराँव एवं एक अन्य** मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा दिनांक 30.4.2012 को दिए गए निर्णय पर भी विश्वास किया है जिस पर पूर्वोक्त निर्णय में भी विश्वास किया गया है। दिनांक 2.11.2012 का पूर्वोक्त निर्णय स्पष्टत: विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम के प्रावधानों के अधीन मोटर यान दुर्घटना दावा मामलों के संबंध में विवाद विनिश्चित करने में स्थायी लोक अदालत की शक्तियों और अधिकारिता की रूपरेखा अधिकथित करता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि यह ऐसा मामला था जहाँ गुणागुणों पर भी दावों का जोरदार प्रतिवाद किया गया था क्योंकि प्रश्नगत अपराध करने वाले वाहन के चालक के पास दुर्घटना होने के समय पर वैध ड्राइविंग लाइसेंस नहीं था। ड्राइविंग लाइसेंस का अवसान पहले ही हो चुका था और इसे बाद में दिनांक 7.7.2004 को नवीकृत किया गया था। इस विवाद्यक पर निर्णय के पैरा 11 में विद्वान स्थायी लोक अदालत का निष्कर्ष मोटर यान अधिनियम की धारा 15 के अधीन विधिक अवस्था के बिल्कुल विपरीत था। ड्राइविंग लाइसेंस को अवसान के 30 दिनों के भीतर नवीकृत करना होगा और केवल तब इसे अवसान की तिथि से नवीकृत किया गया समझा जाएगा। किंतु, विद्वान स्थायी लोक अदालत ने तथ्यों में बिल्कुल विपरीत अभिनिर्धारित किया यद्यपि नवीकरण उक्त ड्राइविंग लाइसेंस के अवसान के 30 दिनों के भीतर नहीं किया गया था।

5. प्रत्यर्थी दावेदार के विद्वान अधिवक्ता याची द्वारा लिए गए आधारों में से किसी को विवादित करने में सक्षम नहीं हुए हैं।

6. मैंने विस्तारपूर्वक पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्रियों और आक्षेपित अधिनिर्णय का परिशीलन किया है। दावा आवेदन संख्या BR 16P 0780 वाले ट्रक द्वारा कारित दिनांक 22.6.2004 को मोटर वाहन दुर्घटना में उसके द्वारा सही गयी उपहतियों के लिए मुआवजा का दावा करते हुए मोटर यान अधिनियम, 1994 की धारा 166 के अधीन दावेदार प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल किया गया था और उस प्रभाव की प्राथमिकी भी दर्ज की गयी थी। तत्पश्चात् दावेदार ने स्थायी लोक अदालत के समक्ष मुकदमा पूर्व मामला पी॰ एल॰ ए॰ केस सं॰ 19 वर्ष 2006 9,85,200/- रुपयों के मुआवजा का दावा करते हुए दावा आवेदन दाखिल किया। वाहन का स्वामी नोटिस के बावजूद उपस्थित नहीं हुआ था। बीमा कंपनी उपस्थित हुई और गुणागुण पर मामले का गंभीर रूप से प्रतिवाद किया। यद्यपि, स्थायी लोक अदालत द्वारा संप्रेक्षण किया गया है कि सुलह का प्रयास किए जाने के बाद भी पक्ष सुलह करने में विफल रहे किंतु यह विवादित नहीं किया गया है कि समझौते के निबंधनों को विरचित नहीं किया गया था और गुणागुण पर मामले में अग्रसर होने के पहले इसे पक्षों को प्रस्तावित नहीं किया गया था। आगे निवेदन किया गया है कि प्रश्नगत अपराध करने वाले वाहन के चालक के लाइसेंस की वैधता के संबंध में अधिनिर्णय के पैरा 11 में विद्वान स्थायी लोक अदालत के निष्कर्ष मोटर यान अधिनियम के अधीन विधि के प्रावधानों के बिल्कुल विपरीत हैं। बीमा कंपनी ऐसे मामलों में मुआवजा का भुगतान करने की दायी नहीं है जहाँ वैधता के निबंधनों और शर्तों का अनुसरण प्रश्नगत वाहन के स्वामी अथवा चालक द्वारा तत्परतापूर्वक और कठोरतापूर्वक नहीं किया जाता है।

7. किंतु, विद्वान स्थायी लोक अदालत विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम के अधीन विहित प्रक्रिया एवं आज्ञा का अनुसरण किए बिना याची के पक्ष में ब्याज के साथ 6,49,000/- रुपयों की सीमा तक अधिनिर्णय देने के लिए अग्रसर हुआ। विवाद्यक कि क्या स्थायी लोक अदालत मोटर यान दुर्घटना दावा से संबंधित विवाद ग्रहण कर सकता है, अब अनिर्णीत विषय नहीं है जैसा **डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1975 वर्ष 2007** में खंडपीठ द्वारा दिए गए निर्णय में अभिनिर्धारित किया गया है और इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के द्वारा उक्त निर्णय में यह भी अभिनिर्धारित किया गया है और पश्चातवर्ती भी अभिनिर्धारित किया गया है और पश्चातवर्ती निर्णयों में इसका अनुसरण किया गया है कि स्थायी लोक अदालत को समझौते के निबंधनों को विरचित करके और पक्षों को इन्हें प्रस्तावित करके और पक्षों के बीच सुलह का प्रयास करके अधिनियम, 1987 की धारा 22 (C), 4 से 7 तक के अधीन विहित आज्ञा और प्रक्रिया का अनुसरण करना होगा। यदि पक्षगण समझौते के निबंधनों के ऊपर सुलह पर आने में विफल रहते हैं, केवल तत्पश्चात गुणागुण पर विवाद विनिश्चित करना होगा। विद्वान लोक अदालत के विधि के अधीन विहित पूर्वोक्त प्रक्रिया का अनुसरण करने में विफल होने पर, आक्षेपित अधिनिर्णय अधिकारिता की गंभीर त्रुटि से पीड़ित है, जिसमें भारत के संविधान के अनुच्छेदों 226 और 227 के प्रयोग में हस्तक्षेप करने की आवश्यकता है जिसके अधीन वर्तमान रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 2403 वर्ष 2007 दाखिल की गयी है। तद्नुसार आक्षेपित अधिनिर्णय, दिनांक 29.12.2006 का आदेश, स्थायी लोक अदालत, जमशेदपुर द्वारा दिनांक 30.12.2006 को अधिनिर्णीत अधिनिर्णय अभिखंडित किया जाता है। तद्नुसार, रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 2403 वर्ष 2007 अनुज्ञात की जाती है।

8. चूँकि डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 2403 वर्ष 2007 में स्वयं आक्षेपित अधिनिर्णय अभिखंडित कर दिया गया है, संबंधित रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 2662 वर्ष 2007 में दावेदार द्वारा इप्सित किया गया अनुतोष भी शेष नहीं रहता है क्योंकि उसने स्थायी लोक अदालत द्वारा अधिनिर्णीत मुआवजा की वृद्धि के लिए दावा किया है। तद्नुसार, डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 2662 वर्ष 2007 भी खारिज की जाती है। किंतु, यह संप्रेक्षित किया जाता है कि दावेदारगण, ऐसी सलाह दिए जाने पर, विधि के अनुरुप मुआवजा इप्सित करने के लिए मोटर यान अधिनियम के अधीन सृजित सक्षम फोरम के पास जाने के लिए स्वतंत्र हैं।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

रमेश चंद्र दूबे एवं एक अन्य

cuke

कमल सिंह सुराना एवं एक अन्य

WP (C) No. 3025 of 2012. Decided on 2nd November, 2012.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 13, नियम 4—साक्ष्य में लिए गए दस्तावेजों का पृष्ठांकन—जब एक बार दस्तावेज साक्ष्य में लिया जाता है, न्यायालय की अनुमति के बिना कोई परिवर्तन करना पक्षों को अनुज्ञेय नहीं है—रजिस्ट्रेशन अधिनियम अथवा बिहार सरकार द्वारा जारी दिनांक 26.5.97 के परिपत्र के अधीन न्यायालय फीस में कमी को पूरा करने की विधिक आवश्यकता हो सकती है किंतु जब एक बार दस्तावेज न्यायालय के समक्ष प्रदर्शित किया जाता है, आवश्यक अनुमति प्राप्त करने की आवश्यकता होती है—याची द्वारा ऐसी कोई अनुमति नहीं ली गयी थी—अवर न्यायालय द्वारा सही प्रकार से आवेदन अस्वीकार किया गया—रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 4 से 6)

निर्णयज विधि.—2001 (3) SCC 1—Distinguished.

अधिवक्तागण.–M/s V. Shivnath, Onkar Nath Tiwary, For the Petitioners; Mr. Prashant Pallav, For the Respondent.

आदेश

पक्षों को सुना गया।

2. याचीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन इस याचिका को दाखिल करके विद्वान उप–न्यायाधीश–I, देवघर द्वारा पारित दिनांक 7.4.2011 के आदेश को अभिखंडित एवं अपास्त करने के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा मूल विक्रय विलेख सं॰ 5065, जिसे पहले ही अभिधान वाद सं॰ 138/2008 में प्रदर्श–7 के रूप में प्रदर्शित किया गया है, को स्वीकार करने के लिए वादी–याची की याचिका खारिज कर दी गयी थी।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय ने आवेदन अस्वीकार करते हुए अवैधता किया है क्योंकि प्रश्नगत विक्रय विलेख के संदर्भ में कोई प्रक्षेप नहीं है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने परिशिष्ट–2 को निर्दिष्ट करते हुए इंगित किया कि दिनांक 26.5.1997 का उक्त परिपत्र बिहार राज्य, रजिस्ट्रेशन विभाग द्वारा जारी किया गया था और केवल दस्तावेज वापस लेने के लिए न्यायालय द्वारा अनुमति दिए जाने के बाद याची को इस परिपत्र के बारे में जानकारी हुई थी। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि इस प्रभाव का प्रकथन प्रत्युत्तर में किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि याचीगण ने बिहार राज्य द्वारा जारी दिनांक 22.5.1997 के परिपत्र के निबंधनानुसार विधि की आवश्यकता को परिपूर्ण करने के लिए रजिस्ट्रार के समक्ष उक्त दस्तावेज दाखिल किया और इसलिए याचीगण ने कोई अवैधता नहीं किया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि प्रश्नगत दस्तावेज की प्रत्यर्थी प्रतिवादी पर किसी प्रतिकूल प्रभाव को कारित करने की संभावना नहीं है। किंतु इस तथ्य का अधिमूल्यन किए बिना अवर न्यायालय ने आवेदन मुख्यत: इस आधार पर अस्वीकार कर दिया है कि याची ने न्यायालय के साथ धोखा किया है। आगे, यह निवेदन किया गया है कि अवर न्यायालय आवेदक के आचरण जो सद्भावपूर्ण आचरण है, का अधिमूल्यन करने में विफल रहा है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन में **2001 (3) SCC 1** में प्रकाशित निर्णय को भी निर्दिष्ट किया है और इस पर विश्वास किया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि रजिस्ट्रेशन विभाग, बिहार सरकार द्वारा जारी दिनांक 26.5.1997 के परिपत्र की दृष्टि में, जिसमें यह प्रावधानित किया गया है कि विक्रय विलेख कोलकाता में निष्पादित किया गया था और यदि समुचित रूप से स्टांप ड्यूटी का भुगतान बिहार राज्य द्वारा विहित दर के अनुसार नहीं किया गया है, तब पक्ष विहित सरकारी दर के अनुसार भुगतान कर सकता है और इसालिए, याची ने सद्भावपूर्ण खरीददार होने के नाते 1520/- रुपयों की स्टांप ड्यूटी की कमी का और 600/- रुपयों की रजिस्ट्रेशन ड्यूटी का देवघर में उक्त मूल विक्रय विलेख के ऊपर भुगतान किया है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि न्यायालय को दिए गए वचन के निबंधनानुसार उक्त दस्तावेज को अभिधान वाद सं॰ 17/98 में विद्वान उप न्यायाधीश के समक्ष पुन: दाखिल किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि सिवाए न्यायालय फीस की कमी के भुगतान के उक्त दस्तावेज में कोई तात्विक परिवर्तन नहीं है जो विधि में आवश्यक है और याची की यह सद्भावपूर्ण कार्रवाई होने के नाते अवर न्यायालय को याची के उक्त आचरण का अधिमूल्यन करने और तद्द्वारा उक्त दस्तावेज को प्रस्तुत करने के लिए याचिका अनुज्ञात करने की आवश्यकता थी, किंतु याचीगण द्वारा किए गए वास्तविक और सद्भावपूर्ण प्रयास का अधिमूल्यन करने के बजाए अवर न्यायालय ने यह संप्रेक्षित करते हुए कि याचीगण की कार्रवाई न्यायालय के साथ धोखा है, याचीगण के विरुद्ध आदेश पारित किया है।

3. इसके विरुद्ध प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने दिनांक 7.4.2011 के आदेश को निर्दिष्ट करके इंगित किया कि उक्त आदेश पारित करते हुए अवर न्यायालय ने कोई अवैधता नहीं की है। प्रत्यर्थी के

विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवादी द्वारा दाखिल प्रति शपथपत्र को निर्दिष्ट करके और दिनांक 16.8.2004 के आदेश (परिशिष्ट–C) को निर्दिष्ट करके इंगित किया कि अवर न्यायालय ने सही प्रकार से याचीगण द्वारा दाखिल दिनांक 2.6.2004 का आदेश अस्वीकार किया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि अवर न्यायालय ने वादी–याचीगण के अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णय सहित पक्षों द्वारा किए गए परस्पर विरोधी निवेदनों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद गुणागुण पर उक्त आवेदन अस्वीकार किया। आगे यह निवेदन किया गया है कि याचीगण द्वारा उक्त आदेश को चुनौती नहीं दी गयी थी और उक्त आदेश ने अपनी अंतिमता प्राप्त कर लिया है। आगे यह निवेदन किया गया है याचीगण को मूल विक्रय विलेख वापस लेने के लिए न्यायालय द्वारा अनुमति प्रदान की गयी थी ताकि उन्हें अभिधान वाद सं० 138/08 में एक अन्य न्यायालय में इसे प्रस्तुत करने के लिए उन्हें सक्षम बनाया जा सके, किंतु उक्त न्यायालय के समक्ष उक्त दस्तावेज प्रस्तुत करने के बजाए याचीगण सब–रजिस्ट्रार के कार्यालय गए और स्टांप में कमी का भुगतान करने की औपचारिकता पूरी की और तत्पश्चात इसे अभिधान वाद सं० 138/08 में विद्वान उप–न्यायाधीश के समक्ष प्रस्तुत किया। आगे यह निवेदन किया गया है कि याचीगण ने कार्यवाही में पारित पूर्व आदेश की परिवंचना करने का प्रयास किया और तद्द्वारा याचीगण ने न्यायालय के साथ धोखा किया। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय का ध्यान आदेश XIII नियम 4 में अंतर्विष्ट प्रावधान की ओर आकृष्ट किया जिसके द्वारा साक्ष्य में दाखिल दस्तावेज के पृष्ठांकन की प्रक्रिया विहित की गयी है। आगे निवेदन किया गया है कि जब एक दस्तावेज ग्रहण किया जाता है और प्रदर्शित किया जाता है अथवा विद्वान न्यायाधीश द्वारा इस पर हस्ताक्षर अथवा लघु हस्ताक्षर किया जाता है, तब पक्षों में से किसी ने द्वारा उक्त दस्तावेज में कोई परिवर्तन करना विधित: अनुज्ञेय नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान मामले में, एक अन्य न्यायालय के समक्ष उक्त दस्तावेज प्रस्तुत करने के बहाने याचीगण ने उक्त दस्तावेज को वापस लिया है और याचीगण द्वारा अनुमति का दुरुपयोग किया गया है और तद्द्वारा याचीगण ने न्यायालय के साथ धोखा किया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि याचिका में गुणागुण नहीं है और इसे अस्वीकार किया जा सकता है।

4. पक्षों के पूर्वोक्त परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करते हुए और प्रतिशपथ पत्र सहित अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री और आक्षेपित आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि विद्वान अवर न्यायालय ने अभिलेख पर प्रदर्श 7 के रूप में प्रदर्शित मूल दस्तावेज को लेने के लिए याचीगण का आवेदन इस आधार पर अस्वीकार कर दिया है कि याचीगण ने उक्त दस्तावेज में परिवर्तन करके न्यायालय के साथ धोखा किया है। आगे यह प्रतीत होता है कि न्यायालय द्वारा याचीगण को उक्त दस्तावेज वापस लेने के लिए अनुमति प्रदान किया गया था। ताकि उन्हें अभिधान वाद सं० 138/08 में एक अन्य न्यायालय के समक्ष इसे प्रस्तुत करने के लिए सक्षम बनाया जा सके। किंतु मूल रूप में उक्त दस्तावेज को प्रस्तुत करने के बजाए याचीगण ने उक्त दस्तावेज को सब–रजिस्ट्रार के कार्यालय के समक्ष प्रस्तुत किया और तद्द्वारा स्टांप कमी का भुगतान किया और तत्पश्चात इसे न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया। आदेश के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय ने मूल दस्तावेज की तुलना इसके प्रमाणित प्रति के साथ किया, और तत्पश्चात न्यायालय ने उक्त दस्तावेज के शीर्षक में उल्लेखनीय परिवर्तन पाया जिसके द्वारा स्टांप कमी के भुगतन के बारे में उल्लेख है। यह भी प्रतीत होता है कि याचीगण ने रजिस्ट्री प्राधिकारी के समक्ष स्टांप कमी का भुगतान करने के प्रयोजन से उक्त दस्तावेज को वापस लेने के लिए पहले आवेदन दाखिल किया था किंतु उक्त आवेदन इस न्यायालय द्वारा दिनांक 16.8.2004 के अपने आदेश के तहत अस्वीकार कर दिया गया था। आगे यह प्रतीत होता है कि याचीगण द्वारा कोई याचिका अथवा पुनर्विलोकन आवेदन दाखिल करके उक्त आदेश को चुनौती नहीं दी गयी थी। यह प्रतीत होता है कि याचीगण ने न्यायालय

की प्रक्रिया की परिवंचना करने की दृष्टि में और तद्द्वारा स्टांप कमी का भुगतान करके उक्त दस्तावेज को उपांतरित करवाने का प्रयास किया, अत: याचीगण के इस आचरण को सद्भावपूर्ण प्रयास के रूप में माना नहीं जा सकता है और इसलिए, यह संप्रेक्षित करके कि यह और कुछ नहीं बल्कि याची द्वारा न्यायालय के साथ किया गया धोखा है, याचीगण का आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था। मैंने आदेश XIII नियम 4 में अंतर्विष्ट प्रावधान का भी परिशीलन किया है जो निम्नलिखित है:–

> *"4. **lk{; e xghr nLrkotk ij i"Bkdu-**&(1) Bhd vkxkeh mifu;e d micU/kk d vèkhu jgr g,] gj ,lh nLrkot ij] tk okn e xg.k dj yh xb g] fuEufyf[kr fof'kf"V;k i"Bfdr dh tk,xh] vFkkr%&*
>
> *(a) okn dk l[;kd vkj 'kh"kd(*
>
> *(b) nLrkot dk i'k dju oky 0;fDr dk uke(*
>
> *(c) og rkjh[k ftl dk og i'k dh xb Fkh(rFkk*
>
> *(d) ml d bl çdkj xg.k fd, tk pdu dk dFku(*
>
> *vkj i"Bkdu U;k;kèkh'k }kjk gLrk{kfjr ;k vk|{kfjr fd;k tk,xk*
>
> *(2) tgk bl çdkj xghr nLrkot fd lh cgh] y[kk ;k vfHky[k e dh çfof"V g vkj Bhd vkxkeh fu;e d vèkhu ey çfr d LFkku e mldh ,d çfr j[k nh xb g ogk iokDr fof'kf"V;k dk i"Bkdu ml çfr ij fd;k tk,xk vkj ml ij dk i"Bkdu U;k;kèkh'k }kjk gLrk{kfjr ;k vk|{kfjr fd;k tk,xkA**

पूर्वोक्त प्रावधान की दृष्टि में, जब एक बार साक्ष्य में दस्तावेज ग्रहण किया जाता है, न्यायालय की अनुमति के बिना कोई परिवर्तन करना पक्षों को अनुज्ञेय नहीं है किंतु वर्तमान मामले में याचीगण ने न्यायालय की अनुमति का दुरुपयोग किया है और अनुमति के बिना उन्होंने उक्त दस्तावेज में परिवर्तन किया है। रजिस्ट्रेशन अधिनियम अथवा बिहार सरकार द्वारा जारी दिनांक 26.5.1997 के परिपत्र के अधीन न्यायालय फीस में कमी को पूरा करने की विधिक आवश्यकता हो सकती है किंतु जब एक बार न्यायालय के समक्ष दस्तावेज प्रदर्शित किया जाता है, आवश्यक अनुमति प्राप्त करने की आवश्यकता होती है। किंतु वर्तमान मामले में याचीगण द्वारा कोई ऐसी अनुमति प्राप्त नहीं की गयी थी और इसलिए, अवर न्यायालय ने अपने समक्ष किए गए निवेदनों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद उक्त आवेदन अस्वीकार कर दिया है और इसलिए, इस न्यायालय का दृष्टिकोण है कि अवर न्यायालय ने स्वयं में निहित अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते हुए कोई अवैधता अथवा अनियमितता नहीं किया है। मैंने याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत **2001 (3) SCC 1** में प्रकाशित निर्णय का भी परिशीलन किया है किंतु यह वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में प्रयोज्य नहीं है।

5. उक्त प्रतिपादना की दृष्टि में, इस न्यायालय का दृष्टिकोण है कि अवर न्यायालय ने स्वयं में निहित अधिकारिता का प्रयोग करते हुए कोई अनियमितता और अवैधता नहीं किया है और, इसलिए, भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन इस न्यायालय का हस्तक्षेप अपेक्षणीय नहीं है।

6. पूर्वोक्त संप्रेक्षण के साथ यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

7. परिणामस्वरुप, इस न्यायालय द्वारा पहले प्रदान किया गया अंत:कालीन आदेश भी रिक्त किया जाता है।

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

सोहन बेदिया

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Revision No. 799 of 2012. Decided on 2nd November, 2012.

किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) नियमावली, 2007—नियम 12—किशोर अपचारी की आयु का विनिश्चयकरण–विद्यालय, आदि से किसी जन्म प्रमाण पत्र की अनुपस्थिति में विधि का उल्लंघन करने वाले किशोर की आयु चिकित्सीय मत के आधार पर विनिश्चित करना होगा–याची द्वारा प्रस्तुत विद्यालय परित्याग प्रमाण पत्र पर अवर न्यायालय द्वारा सही प्रकार से विश्वास नहीं किया गया था–किसी विद्यालय प्रमाण पत्र की अनुपस्थिति में मेडिकल बोर्ड की रिपोर्ट किशोर की आयु का निश्चयात्मक प्रमाण होगी–उसके रिमांड के समय निर्धारित याची की आयु की दृष्टि में मेडिकल बोर्ड के निष्कर्ष को अनदेखा करने में अवर न्यायालयों ने गलती की–आक्षेपित आदेश अपास्त–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 5 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Kripa Shankar Nanda, For the Petitioner; Mr. Prem Prakash, For the Opp. Party.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची दांडिक अपील सं॰ 99 वर्ष 2012 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 18.8.2012 के आदेश से व्यथित है, जिसके द्वारा रामगढ़ पी॰ एस॰ केस सं॰ 138 वर्ष 2012 से उद्भूत जी॰ आर॰ सं॰ 1663 वर्ष 2012 में उसको किशोर घोषित करने के लिए अभियुक्त याची द्वारा दाखिल आवेदन अस्वीकार करते हुए विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 24.7.2012 के आदेश के विरुद्ध याची द्वारा दाखिल अपील विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गयी थी।

3. याची को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 395 के अधीन अपराध के लिए रामगढ़ पी॰ एस॰ केस सं॰ 138 वर्ष 2012, जी॰ आर॰ सं॰ 1663 वर्ष 2012 के तत्सम, में अभियुक्त बनाया गया है। याची ने यह कथन करते हुए कि वह किशोर था, अवर न्यायालय के समक्ष अपना आवेदन दाखिल किया और तद्नुसार, सी॰ जे॰ एम॰ के न्यायालय ने याची के दावा का जाँच किया। विद्वान सी॰ जे॰ एम॰ द्वारा पारित दिनांक 24.7.2012 के आदेश से यह प्रतीत होता है कि याची ने अपना विद्यालय परित्याग प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया था जिसमें उसकी जन्मतिथि 4.1.1995 के रूप में उल्लिखित की गयी थी और कुछ गवाहों का परीक्षण किया गया था। आक्षेपित आदेश दर्शाता है कि आदेश में दर्ज किए गए कारणों से अवर न्यायालय ने याची के पक्ष में जारी विद्यालय परित्याग प्रमाण पत्र पर विश्वास नहीं किया था। विद्यालय परित्याग प्रमाण पत्र पर विश्वास नहीं करने के लिए विद्वान सी॰ जे॰ एम॰ द्वारा दर्ज कारण वैध और तर्कपूर्ण हैं।

4. आक्षेपित आदेश से यह प्रतीत होता है कि तत्पश्चत याची की आयु अभिनिश्चित करने के लिए मेडिकल बोर्ड गठित किया गया था और मेडिकल बोर्ड ने दिनांक 21.7.2012 को अवर न्यायालय में अपना रिपोर्ट प्रस्तुत किया जिसमें मेडिकल बोर्ड में मत दिया था कि दिनांक 20.7.2012 को याची की आयु लगभग 18 वर्ष थी। किंतु अवर न्यायालय ने कथन किया कि रिमांड के समय पर याची की आयु 20 वर्ष निर्धारित की गयी थी और तद्नुसार, उसको किशोर घोषित करने के लिए याची का आवेदन

अस्वीकार कर दिया है। उक्त आदेश के विरुद्ध दाखिल अपील भी अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गयी थी।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालयों द्वारा पारित आदेश पूर्णत: अवैध हैं, क्योंकि किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) नियमावली, 2007 (इसके बाद 'नियमावली' के रूप में निर्दिष्ट) में विधि का उल्लंघन करने वाले किशोर अथवा बालक की आयु अभिनिश्चित करने के लिए प्रक्रिया विहित की गयी है। उक्त नियमावली का नियम 12 स्पष्टत: प्रावधानित करता है कि विद्यालय, आदि से किसी जन्म प्रमाण पत्र की अनुपस्थिति में विधि का उल्लंघन करने वाले किशोर की आयु को सम्यक रूप से गठित मेडिकल बोर्ड के मेडिकल मत के आधार पर विनिश्चित करना होगा जो किशोर अथवा बालक की आयु की घोषणा करेगा और यह विधि का उल्लंघन करने वाले किशोर के संबंध में आयु का निश्चयात्मक प्रमाण होगा। यह नियम यह भी प्रावधानित करता है कि यदि आवश्यक समझा जाता है, एक वर्ष के मार्जिन के भीतर निम्नतर पक्ष पर उसकी आयु पर विचार करके बालक को लाभ दिया जाना होगा। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश पूर्णत: अवैध है क्योंकि याची की आयु सम्यक रूप से गठित मेडिकल बोर्ड द्वारा दिनांक 20.7.2012 को लगभग 18 वर्ष पायी गयी थी। घटना की तिथि दिनांक 22.5.2012 होने के नाते याची निश्चय ही 18 वर्ष से कम आयु का था और इस प्रकार उसको किशोर घोषित करना ही था।

6. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया और निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश में अवैधता/अनियमितता नहीं है।

7. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं याची के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन में बल पाता हूँ। अभिलेख स्पष्टत: दर्शाते हैं कि याची द्वारा प्रस्तुत विद्यालय परित्याग प्रमाण पत्र पर अवर न्यायालय द्वारा विश्वास नहीं किया गया था और मेरे सुविचारित मत में, आक्षेपित आदेश में की गयी चर्चा की दृष्टि में सही प्रकार से ऐसा नहीं किया गया था। तद्नुसार, न्यायालय ने याची की आयु अभिनिश्चित करने के लिए मेडिकल बोर्ड का मत इप्सित किया और मेडिकल बोर्ड की रिपोर्ट के अनुसार याची की आयु दिनांक 20.7.2012 को लगभग 18 वर्ष थी। नियमावली का नियम 12 स्पष्टत: प्रावधानित करता है कि किसी विद्यालय प्रमाण पत्र, आदि की अनुपस्थिति में मेडिकल बोर्ड की रिपोर्ट किशोर की आयु का निश्चयात्मक प्रमाण होगी। यदि दिनांक 20.7.2012 को याची की आयु लगभग 18 वर्ष ली जाती है, वह निश्चय ही दिनांक 22.5.2012 को 18 वर्ष से कम आयु का था और इस प्रकार उसको घटना की तिथि पर अर्थात् दिनांक 22.5.2012 को किशोर घोषित करना ही था। वस्तुत: एक वर्ष के मार्जिन के भीतर निम्नतर पक्ष पर उसकी आयु पर विचार करके बालक को लाभ देने के लिए प्रावधान भी है। मेरे सुविचारित दृष्टिकोण में, अवर न्यायालयों ने उसके रिमांड के समय पर निर्धारित याची की आयु की दृष्टि में मेडिकल बोर्ड के मत को अनदेखा करने में गलती की। इस प्रकार, अवर न्यायालयों द्वारा पारित आदेश विधिक दुर्बलता से पीड़ित है और इन्हें विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

8. ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, रामगढ़ पी॰ एस॰ केस सं॰ 138 वर्ष 2012 से उद्भूत जी॰ आर॰ सं॰ 1663 वर्ष 2012 में विद्वान सी॰ जे॰ एम॰, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 24.7.2012 का आक्षेपित आदेश और दांडिक अपील सं॰ 99 वर्ष 2012 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 18.8.2012 का आदेश भी एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। अवर न्यायालय को विधि के अनुरूप नया आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाता है। तद्नुसार, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

सेन्ट्रल कोल फील्ड्स लि॰

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W. P. (C) No. 6863 of 2007. Decided on 2nd November, 2012.

भूमि अर्जन अधिनियम, 1894—धाराएँ 4 एवं 8—भूमि का अर्जन–मुआवजा–याची सी॰ सी॰ एल॰ को पक्षकार बनाए बिना अथवा इसको कोई नोटिस जारी किए बिना मुआवजा की राशि बढ़ायी गयी–याची जिससे मुआवजा की वृद्धि का भार उठाने की उम्मीद की जाती थी को किसी नोटिस के बिना आक्षेपित निर्णय एवं अधिनिर्णय पारित किया गया–आक्षेपित निर्णय एवं अधिनिर्णय अभिखंडित किया गया–निर्देश न्यायालय को नए सिरे से मामला विनिश्चित करने का निर्देश दिया गया–याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 3 से 6)

निर्णयज विधि.–AIR 1990 SC 1321; 2010(4) JCR 191(Jhr)—Relied on.

अधिवक्तागण.–Ms. Ritu Kumar, For the Petitioner; Mr. Shyam Narsaria, For the Respondents.

आदेश

याची के अधिवक्ता और राज्य के अधिवक्ता सुने गए। निजी प्रत्यर्थीगण पहले उपस्थित हुए थे और निजी प्रत्यर्थी सं॰ 4 की मृत्यु पर प्रतिस्थापन याचिका आई॰ ए॰ सं॰ 2508 वर्ष 2008 दाखिल की गयी थी जिस पर जोर नहीं दिए जाने के कारण दिनांक 6.3.2012 के आदेश के तहत इसे अस्वीकार कर दिया गया था। आज याची के अधिवक्ता और राज्य के अधिवक्ता की उपस्थिति में मामला गुणागुण पर विनिश्चित किया जा रहा है।

2. याची भूमि निर्देश केस सं॰ 74 वर्ष 1989 में विद्वान सब–जज II, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 8.8.2005 के निर्णय और उसके अनुसरण में भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के अधीन दिए गए अधिनिर्णय से व्यथित है। याची के अनुसार ग्राम पिंदरा, पी॰ एस॰ मांडू, जिला हजारीबाग के 5.78 एकड़ मापवाली खाता सं॰ 1, भूखंड सं॰ 213/2, 213/1 और 213/3 की भूमि राज्य सरकार द्वारा अर्जित की गयी थी जिसके लिए दिनांक 2.3.1987 को अधिनियम की धारा 4 के अधीन अधिसूचना लोकल गजट में प्रकाशित की गयी थी। अर्जन कार्यवाही के बाद भूमि खोनेवालों/अधिनिर्णीतियों को भुगतान के प्रयोजन से जिला भूमि अर्जन अधिकारी, हजारीबाग के कार्यालय में याची द्वारा अधिनिर्णय राशि जमा की गयी थी। दावेदार ने असंतुष्ट होने पर कलक्टर के समक्ष धारा 18 के अधीन आपत्ति दाखिल की थी। तत्पश्चात्, मुआवजा राशि के पुनः नियतकरण के लिए कलक्टर द्वारा किए गए निर्देश पर उप–न्यायाधीश II, हजारीबाग के न्यायालय में भूमि निर्देश केस सं॰ 74/89 दर्ज किया गया था जिसमें दावेदार को और राज्य को भी नोटिस जारी किया गया था। किंतु यह स्पष्टतः कथन किया गया है कि याची को न तो नोटिस जारी की गयी थी और न ही पक्ष के रूप में पक्षकार बनाया गया था जिसके प्रयोजन से भूमि अर्जित की गयी थी और जिस पर मुआवजा का भार डाला जाना इप्सित किया गया था। तत्पश्चात, विद्वान न्यायालय ने तोषण, ब्याज और अन्य सांविधिक लाभों के अतिरिक्त बाजार दर के दोगुना के मुताबिक 3,80,726/- रुपयों की राशि तक मुआवजा बढ़ाते हुए निर्देश केस सं॰ 74/89 में दिनांक 8.8.2005 का निर्णय परित किया। याची ऐसे निर्णय से बिल्कुल अवगत नहीं था और तत्पश्चात्, अधिनिर्णय पृथक रूप से तैयार एवं प्रकाशित किया गया था। किंतु, याची को प्रश्नगत निर्णय और तत्पश्चात् तैयार किए गए अधिनिर्णय की जानकारी केवल तब हुई जब उसने जिला भूमि अर्जन अधिकारी, हजारीबाग से उसको

समुचित फोरम के समक्ष उक्त राशि अथवा आगम को जमा करने के लिए कहते हुए दिनांक 13.4.2006 का पत्र सं॰ 53 (परिशिष्ट-3) प्राप्त किया। याची के विद्वान अधिवक्ता ने इस परिस्थिति में **नीलागंगबई एवं एक अन्य बनाम कर्नाटक राज्य एवं अन्य, AIR 1990 SC 1321,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर विश्वास किया है। उन्होंने **सेंट्रल कोल फील्ड्स लि॰ बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, 2010 (4) JCR 1991 (Jhr.)** में इस न्यायालय के निर्णय पर एक अन्य निर्देश केस में विश्वास किया है जिसमें भी ऊपर निर्दिष्ट माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया गया है। पूर्वोक्त निर्णय को निर्दिष्ट करते हुए यह निवेदन किया गया है कि भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्टत: अभिनिर्धारित किया है कि जब भूमि स्वीकृत रूप से प्रत्यर्थी निगम के प्रयोजन से अर्जित की गयी थी, मुआवजा का भार केवल निगम पर है, अत: मुआवजा दावा को विनिश्चित करने के लिए अग्रसर होने के पहले प्रत्यर्थी-निगम पर नोटिस का तामील कराना निर्देश न्यायालय के लिए आज्ञापक था। ऐसी परिस्थिति में, निर्देश केस में दिए गए निर्णय को अवैध अभिनिर्धारित किया गया था और यह निगम पर बाध्यकारी नहीं था। ऊपर निर्दिष्ट माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का पैरा 3 नीचे उद्धृत किया जाता है:-

> *^^ijk 3. LohÑr :i l] Hkfe çR;Fkh fuxe d ç;ktu l vftr dh x;h Fkh vkj evkotk d Hkxrku dk Hkkj fuxe ij FkkA bl i"BHkfe e mPp U;k;ky; u vfHkfuèkkfjr fd;k g fd evkotk nkok dk fofuf'pr dju d fy, vxlj gku d igy çR;Fkh fuxe ij ukfVl rkehy djuk fun'k U;k;ky; d fy, vkKkid FkkA pfd çR;Fkh fuxe dk dkb ukfVl ugh fn;k x;k Fkk vkj bl çdkj bl U;k;ky; d le{k viuk ekeyk j[ku d volj l ofpr fd;k x;k Fkk] fun'k dl e fn;k x;k fu.k; voèk Fkk vkj fuxe ij ckè;dkjh ugh FkkA ge bl nf"Vdk.k l lger gA Hkfe vtu vfèkfu;e dh èkkjk 20, tl k ;g dukVd jkT; ij ç;kT; g] dk iBu fuEufyf[kr g%*
>
> *^^20. **ukfVl dh rkehyk-**&rRi'pkr U;k;ky; ml frfFk dk fofufn"V djr g, ,d ukfVl dh rkehyk djok;xk] ft lij U;k;ky; fun'k voèkkfjr djxk rFkk ml fnu U;k;ky; d le{k mudh mifLFkfr dk fun'k nr g, ft ldh rkfeyk fuEufyf[kr 0;fDr;k ij dh tk;xh] vFkkr%&*
>
> *(a) mik;Dr(*
>
> *(b) fun'k e fgr j[ku oky lHkh 0;fDr;k(,o*
>
> *(c) vxj ljdkj }kjk vtu ugh fd;k tkrk g] ml 0;fDr ;k ikfèkdkj dk ft ld fy, ,lk fd;k tk jgk gA*
>
> *Åij mfYyf[kr èkkjk 20 d [kM (c) e ç;Dr Li"V Hkk"kk dh nf"V e] ble dkb lng ugh gk ldrk g fd fun'k fofuf'pr fd, tk ldu d igy çR;Fkh fuxe lu tku dk gdnkj FkkA mPp U;k;ky; u fgeky;u VkbEl ,o ekcYl (çkO) fy0 cuke Ýfl l foDVj dfVUgk (er) ,y0 vkj0 }kjk] (1980)3 SCR 235: (AIR 1980 SC 118) e fn, x, fu.k; ij Hkh fo'ok l fd;k g ft le vfHk0;fDr ^^fgrc) 0;fDr** dk 0;k[;k mnkj :i l dh x;h Fkh rkfd oreku ekey e fuxe tl çkfèkdj.k dk lfEefyr fd;k tk ld fdr [kM (c) e çkfèkdj.k ft ld fy, vtu fd;k x;k g dk fofufn"Vr% mfYyf[kr dju oky vkx çkoèkku dh nf"V e oreku vihy e èkkjk 20 e [kM (b) dh 0;k[;k djuk vko';d ugh*

*gA rnulkj ge mPp U;k;ky; d fun'k dk li"V djr g tlk vk{kfir fu.k; e vrfo"V g fd çe[k flfoy U;k;kèkh'k dk ,y0 ,0 dl l0 64 o"k 1989 e dk;okgh iu% vkjHk djuk pkfg, vkj eY;kdu d ç'u ij fuxe dk viuk lk{; nu dk volj nu d ckn u, flj l ekeyk fofuf'pr djuk pkfg,A pfd ekeyk ijkuk g] çR;Fkh fuxe dk vkx fdlh ukfVl dh çrh{kk fd, fcuk vkt d fnu l rhu llrkg d Hkhrj mDr ekey e mifLFkr gku dk fun'k ,rn }kjk fn;k tkrk gA***

3. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और आक्षेपित अधिनिर्णय सहित अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया है। अभिलेख से और पक्षों के निवेदन से सामने आने वाले अविवादित तथ्य ये हैं कि आपत्तिकर्ता–दावेदार द्वारा दाखिल धारा 18 के अधीन निर्देश में निर्देश केस सं॰ 74 वर्ष 1989 मुआवजा को 3,80,726/- रुपया तक बढ़ाते हुए याची सी॰ सी॰ एल॰ को पक्षकार बनाए बिना अथवा इसको नोटिस दिए बिना निर्देश न्यायालय अर्थात् उप–न्यायाधीश 2 हजारीबाग द्वारा विनिश्चित किया गया है। तत्पश्चात् तैयार किए गए अधिनिर्णय का निष्पादन दिनांक 13.4.2006 के पत्र द्वारा जिला भूमि अर्जन अधिकारी द्वारा बढ़ायी गयी राशि को जमा करने का निर्देश याची को देते हुए इप्सित किया गया था। पूर्वोक्त परिस्थिति में, आक्षेपित निर्णय और उसके अनुसरण में जारी अधिनिर्णय में याची जिससे मुआवजा की वृद्धि का भार उठाने की उम्मीद की जाती थी को कोई नोटिस अथवा अवसर नहीं दिया गया था।

4. अत: ऊपर निर्दिष्ट निर्णय में भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित निर्णयाधार की दृष्टि में यह न्यायालय निर्देश केस सं॰ 74/89 में दिनांक 8.8.2005 के निर्णय तथा उसके अनुशरण में दिए गए अधिनिर्णय को अभिखंडित किया जाता है। तद्नुसार, आक्षेपित निर्णय तथा अधिनिर्णय अभिखंडित किया जाता है।

5. किंतु, निर्देश न्यायालय मुआवजा की वृद्धि के प्रश्न पर याची सी॰ सी॰ एल॰ को साक्ष्य देने के अवसर का नोटिस देने के बाद विधि के अनुरुप मामले को नए सिरे से विनिश्चित करेगा।

6. पूर्वोक्त निबंधनों में यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t;k jk;] U;k;efr

हरिहर यादव एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Cont. (C) Case No. 513 of 2011. Decided on 26th November, 2012.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 215—न्यायालय का अवमान–विगत सेवा के लाभों के साथ 'झालको' में कर्मचारियों के आमेलन के लिए उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देश का अभिकथित अननुपालन–राज्य पहले ही 5.42 करोड़ रुपयों का अंतरण कर चुका है, जिसमें से 3,43,42,000/- रुपयों का भुगतान 'झालको' में आमेलित कर्मचारियों को किया जा चुका है–विवाद उन कर्मचारियों जिन्हें आमेलित नहीं किया गया है की मजदूरी के भुगतान के संबंध में था–प्रत्यर्थीगण को अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करने का एक और अवसर प्रदान किया गया। (पैराएँ 7 से 9)

अधिवक्तागण.–M/s. Priya Hingorani, S. Prasad, For the Appellant; Mr. R. Pallav, For the Respondent-State; Mr. Gautam Rakesh, For the Respondent-State.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. दिनांक 16 जून, 2011 के निर्णय द्वारा इस न्यायालय ने 'झालको' के कर्मचारियों को आमेलित करने का निर्देश दिया और यह आदेश भी पारित किया कि अब और इस न्यायालय के आदेश की तिथि अर्थात् दिनांक 16 जून, 2011 से कर्मचारियों को 'भालको' के अधीन कार्यरत कर्मचारियों द्वारा दी गयी विगत सेवा के लाभ के साथ 'झालको' में आमेलित समझा जाएगा। 'झालको' के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि 'झालको' ने एस॰ एल॰ पी॰ दाखिल किया है जो माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 14 नवंबर, 2011 के आदेश से प्रकट है जिसमें यह आदेश दिया गया है कि दोनों एस॰ एल॰ पी॰ में नोटिस जारी की जाए और दिनांक 14 नवंबर, 2011 के उक्त आदेश में अवमान कार्यवाही स्थगित कर दी गयी है। 'झालको' के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, यह प्रतीत होता है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय के दिनांक 6 अगस्त, 2012 के आदेश में अनवधानता से यह उल्लिखित किया गया है कि उक्त आदेश केवल झारखंड राज्य को संरक्षित करेगा जिसने इस न्यायालय के दिनांक 16 जून, 2011 के निर्णय की शुद्धता को चुनौती देना चुना है। यह निवेदन भी किया गया है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दिनांक 6 अगस्त, 2012 के स्पष्टीकरण आदेश में इस न्यायालय को एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 77 और 79 वर्ष 2009 में पारित दिनांक 16 जून, 2011 के निर्णय के पैराग्राफ 37 में दिए गए निर्देशों को क्रियान्वित करने का निर्देश दिया और 'झालको' के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उक्त आदेश से यह भी स्पष्ट है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दिनांक 16 जून, 2011 के निर्णय में अंतर्विष्ट सीमित निर्देशों को क्रियान्वित करने का निर्देश दिया और वह कर्मचारियों जिन्हें 'झालको' में आमेलित किया गया है की मजदूरी के भुगतान को सुरक्षित करने के लिए है और ऐसा स्पष्टतः इस कारण से है कि झारखंड राज्य ने सर्वोच्च न्यायालय को सूचित किया कि राज्य ने पहले ही आमेलित कर्मचारियों की बकाया मजदूरी के लिए 6 करोड़ रुपया कर्णांकित किया है।

3. 'झालको' के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे यह निवेदन किया गया है कि इसलिए 'झालको' इस धारणा के अधीन था कि दिनांक 16 जून, 2011 के निर्णय में अंतर्विष्ट शेष निर्देश को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्थगित कर दिया गया है। सिवाए आमेलित कर्मचारियों जिन्हें पहले ही 'झालको' द्वारा आमेलित कर लिया गया है, को मजदूरी के भुगतान के संबंध में, 'झालको' के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि 'झालको' माननीय सर्वोच्च न्यायालय से आगे स्पष्टीकरण इप्सित कर सकता है, जिसके लिए 'झालको' को समय दिया जा सकता है।

4. रिट याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि जब दिनांक 19 नवंबर, 2012 को एस॰ एल॰ पी॰ माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष सूचीबद्ध किया गया था, एस॰ एल॰ पी॰ के अपीलार्थी की ओर से कथन किया गया था कि इस अवमान याचिका में इस न्यायालय द्वारा पहले ही पारित विनिर्दिष्ट आदेश की दृष्टि में अवमान याचिका को दिनांक 26 नवंबर, 2012 को सूचीबद्ध किए जाने की संभावना है, अतः एस॰ एल॰ पी॰ स्थगित किया जा सकता है। याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, इस न्यायालय ने पहले ही इस तथ्य को ध्यान में लिया है कि अनेक कर्मचारियों की मृत्यु सेवारत रहते हुए हो गयी, जो मजदूरी नहीं पा सके थे और इस न्यायालय द्वारा जारी निर्देशों को क्रियान्वित नहीं किया जा रहा है और यहाँ यह कथन किया गया है कि 'झालको' को माननीय सर्वोच्च न्यायालय से आदेश प्राप्त करने दिया जाए, जबकि माननीय सर्वोच्च न्यायालय में यह कथन किया गया है कि उच्च न्यायालय को अवमान याचिका में आदेश पारित करने दिया जाए।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उनकी सूचना के मुताबिक राशि, जिसे दिनांक 16 जून, 2011 के लाभार्थियों को भुगतान के लिए कर्णांकित किया गया है, का भुगतान शायद उन कर्मचारियों को किया जा चुका था जिनको दिनांक 16 जून, 2011 के निर्णय के पहले ही आमेलित कर लिया गया है और स्वीकृत रूप से दिनांक 16 जून, 2011 के निर्णय के बाद किसी भी कर्मचारी को

आमेलित नहीं किया गया है, अत: 5.42 करोड़ रुपयों में से 3,43,42,000/- रुपयों की राशि का 'झालको' द्वारा दुरुपयोग किया गया है और पहले ही आमेलित कर्मचारियों को इसका भुगतान किया गया है, जबकि राज्य द्वारा इस निधि को कर्णांकित गया था और 'झालको' को उन कर्मचारियों के लिए दिया गया था जिनको दिनांक 16 जून, 2011 के निर्णय में अंतर्विष्ट निर्देशों के अनुसरण में आमेलित किया जाना है, अत: कर्मचारियों, जिनको इस न्यायालय के निर्देशों की दृष्टि में आमेलित किए जाने की आवश्यकता थी, को मजदूरी के भुगतान के संबंध में भी इस न्यायालय के आदेश का अनुपालन नहीं हुआ है। यह निवेदन किया गया है कि वस्तुत: इस न्यायालय के निर्देशों की ओट में झालको ने उन कर्मचारियों जिनको पहले ही आमेलित किया गया है और जिनका इस मुकदमा से कोई संबंध नहीं है को भुगतान करके राशि का दुरुपयोग किया है। याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, केवल उन व्यक्तियों जिनको आमेलित किया जाना था को राशि का भुगतान करने की आवश्यकता है।

प्रत्यर्थीगण का दृष्टिकोण जानने के बाद इस विवाद्यक पर विचार किया जाएगा।

6. चूँकि यह अत्यावश्यकता का मामला है और विनिर्दिष्ट निर्देश हैं और आरंभ में 14 नवंबर, 2011 को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अंतरिम आदेश पारित किया गया है और दिनांक 6 अगस्त, 2012 को स्पष्ट किया गया था कि यदि 'झालको' माननीय सर्वोच्च न्यायालय से कोई स्पष्टीकरण चाहता है, यह इसके लिए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष समुचित आवेदन दाखिल कर सकता है। समस्त पक्षगण भी इस तथ्य को सत्यापित कर सकते हैं कि क्या 'झालको' ने भी इस न्यायालय के दिनांक 16 जून, 2011 के निर्णय के विरुद्ध एस॰ एल॰ पी॰ दाखिल किया है।

7. किंतु, जहाँ तक कर्मचारियों के मजदूरी के भुगतान, जिसके लिए प्रत्यर्थी राज्य ने 6 करोड़ रुपयों की राशि कर्णांकित की है, का संबंध है, झारखंड राज्य के लिए उपस्थित अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि 'झालको' के उत्तर के मुताबिक राज्य ने पहले ही 5.42 करोड़ रुपया अंतरित किया है जिसमें से 3,43,42,000/- रुपयों का भुगतान 'झालको' में आमेलित कर्मचारियों को किया गया है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उन्हें यह स्पष्ट करने के लिए कुछ समय दिया जा सकता है कि क्या आमेलित कर्मचारियों की मजदूरी के भुगतान के लिए कर्णांकित 6 करोड़ रुपयों का भुगतान किया गया है।

8. हम इसे स्पष्ट कर रहे हैं कि विवाद कर्मचारियों जिनको आमेलित नहीं किया गया है को मजदूरी के भुगतान के संबंध में था और यहाँ इस मामले में दिनांक 16 जून, 2011 के निर्णय से यह स्पष्ट है कि इस न्यायालय ने पैराग्राफ 37 में न केवल 'झालको' को कर्मचारियों को आमेलित करने का निर्देश दिया बल्कि यह आदेश भी दिया कि आदेश की तिथि अर्थात् 16 जून, 2011 से कर्मचारियों को विगत सेवा के लाभ के साथ 'झालको' में आमेलित समझा जाएगा और माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्देशों को क्रियान्वित करने का निर्देश दिया है और कर्मचारियों, जिनको स्पष्टत: दिनांक 16 जून, 2011 के निर्णय में अंतर्विष्ट निर्देशों की दृष्टि में आमेलित किए जाने की उम्मीद की जाती है, की मजदूरी के भुगतान के लिए राज्य द्वारा 6 करोड़ रुपया कर्णांकित किए जाने के तथ्य को ध्यान में लिया है।

9. तथ्यों की संपूर्णता को देखते हुए प्रत्यर्थीगण को अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करने का एक और अवसर दिया जाता है और चूँकि मामले को दिनांक 30 नवंबर, 2012 को माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष सूचीबद्ध किए जाने की संभावना है, 'झालको' को किसी स्पष्टीकरण प्राप्त करने के लिए अवसर देने के लिए मामले को दिनांक 17 दिसंबर, 2012 को सूचीबद्ध करना समुचित होगा।

इस आदेश की प्रतियों को याची, राज्य और झालको के विद्वान अधिवक्ता को दी जाए।

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

श्री प्रकाश सिंह उर्फ श्री बाबू

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (Cr.) No. 230 of 2011. Decided on 21st December, 2012.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 215 एवं 226—न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971—धारा 12—न्यायालय का अवमान–उच्च न्यायालय द्वारा इस प्रभाव के विनिर्दिष्ट निर्देश के बावजूद न्यायालय में अवमानकर्ताओं की अनुपस्थिति–अवमानकर्तागण न्यायालय के आदेश का उल्लंघन कर रहे हैं और वे सोच रहे हैं कि वे विधि के ऊपर हैं और वे कुछ भी कर सकते हैं जो वे चाहते हैं–कुछ सीमा तक यह उनके आचरण और व्यवहार से प्रकट है–अवमानकर्ता अच्छी तरह जानते हुए कि उनके विरुद्ध अवमान कार्यवाही आरंभ की गयी है, राज्य के उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपनी उपस्थिति से बच रहे हैं–अवमानकर्ता के विरुद्ध गैर-जमानती गिरफ्तारी वारन्ट जारी करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 2 से 4)

अधिवक्तागण.–M/s. Dr. J.P. Gupta, Ashutosh Anand, For the Petitioner; Mr. Abhay Kr. Mishra, For the State; Mr. Bhola Nath Ojha, For the Respondent No.2.

आदेश

यह प्रकट है कि डब्ल्यू॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 230 वर्ष 2011 में पारित दिनांक 31.10.2012 के आदेश का अनुपालन नहीं करने के लिए श्री प्रकाश सिंह उर्फ श्री बाबू और उसके पुत्र शेखर सिंह के विरुद्ध स्वप्रेरणा पर अवमान कार्यवाही आरंभ की गयी थी। उन्हें तीन बालकों को प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया था जिसके लिए सर्च वारन्ट भी जारी किया गया था। अवमानकर्ताओं श्री प्रकाश सिंह उर्फ श्री बाबू और उसके पुत्र शेखर सिंह को आदेश का अनुपालन करने का निर्देश दिया गया था, किंतु न्यायालय के आदेश का पालन करने के बजाए वे अनुपस्थित बने रहे। उक्त दोनों अवमानकर्ताओं को न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने का निर्देश दिया गया था जिसके लिए नोटिस भी जारी किए गए थे।

2. आज अवमानकर्ताओं में से एक श्री प्रकाश सिंह उर्फ श्री बाबू ने यह कथन करते हुए कि बालक उसके पास नहीं हैं और इसलिए वह आदेश का अनुपालन करने में अक्षम हैं, अपने अधिवक्ता के माध्यम से कारण बताओ दाखिल किया है। यह पता चलता है कि अवमानकर्ता श्री प्रकाश सिंह उर्फ श्री बाबू आज न्यायालय में व्यक्तिगत रूप से उपस्थित नहीं है यद्यपि नोटिस जारी की गयी थी। कारण बताओं में किए गए प्रतिवाद पर विचार करने के पहले मैं समझता हूँ कि अवमान कार्यवाही हेतु अग्रसर होने के लिए श्री प्रकाश सिंह उर्फ श्री बाबू की उपस्थिति आवश्यक है जिसके लिए उसे इस न्यायालय के समक्ष व्यक्तिगत रूप से उपस्थित रहने के लिए दिनांक 4.1.2013 को निर्देश दिया गया था जिसमें विफल रहने पर उसके विरुद्ध गैर-जमानती गिरफ्तार वारन्ट जारी किया जाएगा।

3. एक अन्य अवमानकर्ता शेखर सिंह, जो श्री प्रकाश सिंह उर्फ श्री बाबू का पुत्र है, अनुपस्थित है और वह व्यक्तिगत तौर पर अथवा अपने अधिवक्ता के माध्यम से उपस्थित नहीं हुआ था। यह कहना अनावश्यक है कि पूर्व अवसर पर डब्ल्यू॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 230 वर्ष 2011 में सुनवाई के दौरान शेखर सिंह और उसके पिता श्री प्रकाश सिंह उर्फ श्री बाबू दोनों साथ-साथ उपस्थित हुए थे और इसलिए यह उपधारित किया जाता है कि उसे उसके पिता श्री प्रकाश सिंह उर्फ श्री बाबू द्वारा अवमान कार्यवाही आरंभ किए जाने के बारे में भी संसूचित किया गया है। यह पराकाष्ठा है कि अवमानकर्ता अच्छी तरह जानते हुए कि उनके विरुद्ध अवमान कार्यवाही आरंभ की गयी है, राज्य के उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपनी उपस्थिति से बच रहे हैं।

4. मैंने अवमान कार्यवाही में पहले ही संप्रेक्षित किया है कि अवमानकर्ता न्यायालय के आदेश का उल्लंघन कर रहे हैं और वे सोच रहे हैं कि वे विधि के ऊपर हैं और वे कुछ भी कर सकते हैं जो वे चाहते हैं। कुछ सीमा तक यह उनके आचरण और व्यवहार से प्रकट है जिसको इस न्यायालय द्वारा पहले की गयी सुनवाई और अपने परिवार के साथ उन दो व्यक्तियों की उपस्थिति के दौरान ध्यान में लिया गया है। यह न्यायालय मामले पर गंभीर दृष्टिकोण अपनाता है और शेखर सिंह के विरुद्ध गैर-जमानती गिरफ्तारी वारंट जारी करने का निर्देश दिया जाता है और इस प्रकार जारी किए गए गिरफ्तारी वारन्ट को डी॰ जी॰ पी॰, महाराष्ट्र और डी॰ जी॰ पी॰, बिहार की प्रेरणा पर निष्पादित करना ही होगा। यदि शेखर सिंह को महाराष्ट्र राज्य अथवा बिहार राज्य में पाया जाता है, संबंधित डी॰ जी॰ पी॰ को ऐसे व्यक्ति जिसे देश के कानून के प्रति श्रद्धा नहीं है का पता लगाने के लिए समस्त सकारात्मक कदमों को उठाने का निर्देश दिया जाता है।

5. रजिस्ट्रार-जेनरल शेखर सिंह के विरुद्ध गैर जमानती गिरफ्तारी वारंट जारी करने के लिए समस्त कदम उठाएँगे। गिरफ्तारी वारन्ट जारी किए जाने के बारे में डी॰ जी॰ पी॰, झारखंड द्वारा संबंधित डी॰ जी॰ पी॰ को गिरफ्तारी वारंट जारी करने की तिथि से तीन दिनों के भीतर संसूचित किया जाएगा।

6. कार्यालय को अवमान कार्यवाही पृथक करने और इसे अवमान मामला के रूप में दर्ज करने का निर्देश दिया जाता है।

7. डब्ल्यू॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 230 वर्ष 2011 के साथ अवमान कार्यवाही की फाइल इसी शीर्ष के अधीन दिनांक 4.1.2013 को रखी जाए।

8. इस आदेश की प्रति पक्षों के अधिवक्ता को सौंपी जाए।

---

ekuuh; ,p lh feJk] U;k;efr

अनिल खिरवाल

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Rev. No. 686 of 2004. Decided on 10th January, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 379/411 सह-पठित खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957 की धारा 21 (1) एवं 21 (4)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 239—अवैध खनन—उन्मोचन आवेदन अस्वीकार किया जाना—लौह अयस्क खानों से लौह अयस्क की चोरी से संबंधित मामला—प्रत्यक्ष अभिकथन है कि टिस्को के पट्टाधृत खनन क्षेत्र से लौह अयस्क की चोरी की जा रही थी और लौह अयस्क की चोरी में लगे डंपरों को पुलिस द्वारा पकड़ा गया था और याची उनमें से एक डंपर का स्वामी था—किंतु, धारा 21 एवं 22 के अधीन अपराध का संज्ञान वर्जित है क्योंकि मामला समुचित सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा लिखित में किए गए परिवाद के आधार पर नहीं बल्कि पुलिस रिपोर्ट के आधार पर संस्थापित किया गया था—किंतु, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 379 के अधीन अपराध के लिए याची के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही जारी रखने में कोई रूकावट नहीं है—आवेदन खारिज।

(पैराएँ 8 से 10)

अधिवक्तागण.—Mr. Ananda Sen, For the Petitioner; Mr. Pankaj Kumar, For the Respondent.

आदेश

एच॰ सी॰ मिश्रा, न्यायमूर्ति.–याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन जी॰ आर॰ सं॰ 361 वर्ष 2003 में विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, सदर, चाईबासा द्वारा पारित दिनांक 30.6.2004 के आदेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 239 के अधीन उन्मोचन के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा यह पाते हुए कि याची के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री है, अस्वीकार कर दी गयी है।

3. याची को नोआमुंडी पी॰ एस॰ केस सं॰ 36 वर्ष 2003, जी॰ आर॰ सं॰ 361 वर्ष 2003 के तत्सम में भारतीय दंड संहिता की धारा 379/411 और खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957 (इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 21 (1) और 21 (4) के अधीन अपराध के लिए अभियुक्त बनाया गया है।

4. अभियोजन मामले के अनुसार, जिसे दिनांक 10.9.2003 को नोआमुंडी पुलिस थाना के सहायक सब इंस्पेक्टर द्वारा दर्ज स्व-बयान के आधार पर संस्थापित किया गया था, टिस्को खान क्षेत्र में लौह अयस्क से लदे दो डंपरों को पकड़ा गया था। डंपरों के चालक भागने में सफल हुए थे और तद्नुसार, डंपरों को जब्त किया गया था। याची को डंपरों में से एक का स्वामी होने के नाते इस मामले में अभियुक्त बनाया गया है क्योंकि डंपरों को टिस्को के पट्टा धृत लौह अयस्क खानों से लौह अयस्क की चोरी करने में उपयोग किया गया पाया गया था और पुलिस मामला संस्थापित किया गया था और अन्वेषण किया गया था। यह प्रतीत होता है कि अन्वेषण के बाद पुलिस ने याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया और भारतीय दंड संहिता की धारा 379/411 और अधिनियम की धारा 21 (1) और 21 (4) के अधीन अपराध का संज्ञान याची के विरुद्ध लिया गया था। याची ने बाद में, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 239 के अधीन उन्मोचन के लिए अपना आवेदन दाखिल किया जिसे आक्षेपित आदेश द्वारा अवर न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन अपराध बनता नहीं कहा जा सकता है क्योंकि खनिजों से संबंधित विशेष विधि है और यदि उक्त विशेष विधि के अधीन अपराध किया गया है, भारतीय दंड संहिता में सामान्य विधि इस मामले के तथ्यों पर प्रयोज्य नहीं कही जा सकती है। याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि अधिनियम की धारा 22 समुचित सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा लिखित में किए गए परिवाद के सिवाए अधिनियम के अधीन किसी अपराध का संज्ञान लिया जाना प्रतिषिद्ध करती है। तद्नुसार, यह निवेदन किया गया है कि चूँकि पुलिस रिपोर्ट के आधार पर याची के विरुद्ध अभियोजन संस्थापित किया गया है, आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

6. अपने प्रतिवाद के समर्थन में याची के विद्वान अधिवक्ता ने दिनांक 9.10.2012 को विनिश्चित **दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 312 वर्ष 2004, पंचम सिंह बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य** मामले में इस न्यायालय के अप्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें मामला पत्थरों और मोरम जिनका उपयोग पथ निर्माण के लिए किया जा रहा था के अवैध खान से संबंधित था और भारतीय दंड संहिता की धारा 379 और अधिनियम की धारा 21 के अधीन अपराध के लिए मामला संस्थापित किया गया था। उक्त मामले के तथ्यों में अभिनिर्धारित किया गया था कि भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन अपराध

नहीं बनता था और अधिनियम के अधीन समुचित सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा लिखित में किए गए परिवाद के सिवाए अपराध का संज्ञान वर्जित था। इस निर्णय पर विश्वास करते हुए विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है। विद्वान अधिवक्ता ने यह भी इंगित किया है कि वर्तमान मामले में भी भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन अपराध बनता हुआ नहीं कहा जा सकता है क्योंकि अधिनियम की धारा 21 (4) उठाए जाने और परिवहन अर्थात् किसी भूमि से किसी खनिज के हटाए जाने के बारे में कहती है और तद्नुसार, खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957 के अधीन विशेष प्रावधान है और यह अभिकथन करते हुए कि उक्त हटाया जाना चोरी के तुल्य होगा, किसी भूमि से खनिज को हटाए जाने के इसी अभिकथन पर मामले के तथ्यों में भारतीय दंड संहिता की धारा 379 प्रयोज्य नहीं होगी।

7. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है और निवेदन किया है कि पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप लायक आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है। विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि याची के विरुद्ध प्रत्यक्ष अभिकथन है कि टिस्को के पट्टाधृत खनन क्षेत्र से चोरी करने में याची के वाहन का उपयोग किया गया था और तद्नुसार, मामले के तथ्यों में भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन अपराध स्पष्टत: बनता है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने दिनांक 1.7.2011 को विनिश्चित **डब्ल्यू॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 405 वर्ष 2010 में मो॰ अबरार आलम एवं अन्य बनाम झारखंड राज्य** में इस न्यायालय के अप्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें भारतीय दंड संहिता की धाराओं 379, 413 और 340 के अधीन और झारखंड खान एवं खनिज रियायत नियमावली, 2004 के नियम 67 (1) के अधीन भी संज्ञान लिया गया था, जिसमें भी यही अभिवचन किया गया था कि इस निमित्त प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा लिखित में किए गए परिवाद के सिवाए अधिनियम अथवा उसके अधीन बनाए गए किसी नियमावली के अधीन दंडनीय अपराध का कोई न्यायालय संज्ञान नहीं ले सकता है और भारतीय दंड संहिता की धाराओं 379 और 413 के अधीन अपराध नहीं बनाया जा सकता है। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 379 और 413 के अधीन अपराध संज्ञेय अपराध होने के कारण किसी के द्वारा प्राथमिकी दर्ज की जा सकती है। जहाँ तक अधिनियम की धारा 22 का संबंध है, वह केवल उक्त अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध से संबंधित है और दंड प्रक्रिया संहिता में वर्ष 1957 के अधिनियम अथवा उसके अधीन बनायी गयी नियमावली में बनाए गए प्रावधानों के साथ संघर्ष नहीं है। उक्त मामले में यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि मामले के तथ्यों में भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन अपराध बनता था। इस निर्णय पर विश्वास करते हुए राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957 के अधीन संज्ञान वर्जित हो सकता है किंतु इस मामले के तथ्यों में भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन याची के विरुद्ध अपराध स्पष्टत: बनता है जिसके लिए किसी के द्वारा प्राथमिकी दर्ज की जा सकती है और प्राथमिकी के आधार पर याची के विरुद्ध संज्ञान लेने में कोई अवैधता नहीं है।

8. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि प्रत्यक्ष अभिकथन है कि टिस्को के पट्टाधृत खान क्षेत्र से लौह अयस्क की चोरी की जा रही थी और चोरी करने में लगे डंपरों को पुलिस द्वारा पकड़ा गया था और याची डंपरों में से एक का स्वामी है। मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विश्वास किए गए **पंचम सिंह के मामले (ऊपर)** में इस न्यायालय का निर्णय याची की मदद नहीं करता है क्योंकि वर्तमान मामले में

प्रत्यक्ष अभिकथन है कि टिस्को के पट्टाधृत खान क्षेत्र से लौह अयस्क की चोरी की जा रही थी। विद्वान अधिवक्ता का प्रतिवाद कि अधिनियम की धारा 21 (4) विनिर्दिष्टत: किसी भूमि से खनिज के हटाए जाने पर विचार करती है किंतु तथ्य बना रहता है कि अधिनियम की धारा 21 (4) किसी विधिपूर्ण प्राधिकार के बिना किसी भूमि से खनिज को ऐसे हटाए जाने में लगे किसी औजार, वाहन, उपकरण, आदि के अभिग्रहण के लिए केवल सक्षमकारी प्रावधान है। अधिनियम की धारा 21 (1) दांडिक प्रावधान है। खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957 की धारा 21(1) और (4) का पठन निम्नलिखित है:–

*"21. **nM-**&(1) tk dkb Hkh èkkjk 4 dh mièkkjk (1) vFkok mièkkjk (1A) dk mYy?ku djrk g] ml vofèk tk nk o"kk rd c<k;h tk ldrh g d dkjkokl d lkFk vFkok tekuk ftl ipkl gtkj #i;k rd c<k;k tk ldrk g d lkFk vFkok nkuk d lkFk nfMr fd;k tk,xkA*

(2).........

(3).........

*(4) tc dHkh Hkh dkb 0;fDr fofèki.k çkfèkdkj d fcuk fdlh Hkfe l dkb [kfut mBkrk g vFkok ifjofgr djrk g vFkok bldk mBk;k tkuk vFkok ifjofgr fd;k tkuk dkfjr djrk g vkj ml ç;ktu l fdlh vktkj] midj.k] okgu vFkok fdlh vU; pht dk mi;kx djrk g] ,lk [kfut vktkj] midj.k] okgu vFkok dkb vU; pht bl fufeÙk fo'k"kr% l'kDr cuk, x, vfèkdkjh vFkok çkfèkdkjh }kjk vfHkxfgr fd, tku dh nk;h gkxhA***

9. इस प्रकार, इन दोनों प्रावधानों के सादे पठन से यह प्रकट है कि अधिनियम की धारा 21 (4) किसी विधिपूर्ण प्राधिकार के बिना किसी भूमि से खनिज हटाने में लगे किसी औजार, उपकरण अथवा वाहन, आदि के अभिग्रहण के लिए सामर्थ्यकारी उपबंध है जबकि दांडिक प्रावधान अधिनियम की धारा 21 (1) है जो अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (1) और उपधारा (1A) के उल्लंघन के लिए दंड प्रावधानित करती है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*^^èkkjk 4.—**io{k.k vFkok [kuu lfØ;k vuKfIr vFkok iVVk d vèkhu gkxh-**&(1) dkb 0;fDr bl vfèkfu;e vFkok bld vèkhu cuk;h x;h fu;ekoyh d vèkhu çnku fd, x, oh{k.k vuKki= vFkok io{k.k vuKfIr vFkok] ;FkkfLFkfr] [kuu iVVk d fucèkuk vkj 'krk d vèkhu vkj vu:i d flok, fdlh {k= e dkb oh{k.k] io{k.k vFkok [kuu lfØ;k ugh djxkA*

xxx

xxx

xxx

*(1A) dkb 0;fDr bl vfèkfu;e vFkok bld vèkhu cuk;h x;h fu;ekoyh d çkoèkkuk d vu:i d fcuk fdlh [kfut dk ifjogu vFkok HkMkj.k ugh djxk vFkok budk ifjogu vFkok HkMkj.k fd;k tkuk dkfjr ugh djxkA***

ये दोनों प्रावधान किसी अन्य व्यक्ति अथवा कंपनी के पट्टाधृत खनन क्षेत्र से लौह अयस्क की चोरी के विनिर्दिष्ट अपराध पर विचार नहीं करते हैं। तद्नुसार, मेरे सुविचारित दृष्टिकोण में, भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन अपराध के लिए याची के विरुद्ध अपराध स्पष्टत: बनता है और इस तथ्य की दृष्टि में कि भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन अपराध संज्ञेय अपराध है, पुलिस

अधिकारी, जिसने लौह अयस्क की चोरी करने में लगे वाहनों को जब्त किया था, द्वारा दर्ज प्राथमिकी के आधार पर दांडिक कार्यवाही संस्थापित की जा सकती है।

10. मैं याची के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन में बल पाता हूँ कि अधिनियम की धारा 21 के अधीन अपराध का संज्ञान अधिनियम की धारा 22 की दृष्टि में वर्जित है क्योंकि मामला समुचित सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा लिखित में किए गए परिवाद के आधार पर संस्थापित नहीं किया गया है, जैसा अधिनियम की धारा 22 के अधीन प्रावधानित किया गया है, बल्कि इसे पुलिस रिपोर्ट के आधार पर संस्थापित किया गया है। किंतु इसी समय पर, मैं अवर न्यायालय के विनिर्दिष्ट निष्कर्ष की दृष्टि में कि भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन अपराध के लिए भी याची के विरुद्ध सामग्री है, भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन अपराध के लिए आरोप विरचित करने में अवैधता नहीं पाता हूँ। मैं इस चरण पर याची को उन्मोचित करने से इनकार करते हुए अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता नहीं पाता हूँ। इस प्रकार, इस मामले के तथ्यों में भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन अपराध के लिए याची के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही जारी रखने में कोई रूकावट नहीं है। तद्नुसार, मैं इस आवेदन में कोई गुणागुण नहीं पाता हूँ और इसे एतद् द्वारा खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

कृष्णा देवी एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1523 of 2012. Decided on 8th January, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 420, 468, 471, 477 एवं 120B—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—छल, कूटरचना एवं षडयंत्र–संज्ञान–सूचक की भूमि के संबंध में विक्रय विलेख कूट रचना और छल करके निष्पादित किया गया–जब किसी व्यक्ति द्वारा किसी संपत्ति, यद्यपि यह उसकी संपत्ति नहीं है, का दावा करते हुए दस्तावेज निष्पादित किया जाता है किंतु जब वह यह दावा नहीं करता है कि उसे किसी अन्य द्वारा प्राधिकृत किया गया है अथवा वह कोई अन्य है, ऐसे दस्तावेज के निष्पादन को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 464 के निबंधनानुसार झूठा दस्तावेज नहीं कहा जा सकता है और यदि यह झूठा दस्तावेज नहीं है, धाराओं 467, 468 एवं 471 के अधीन अपराध करने का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है–याचीगण को छल का कोई अपराध करता हुआ नहीं कहा जा सकता है क्योंकि याचीगण को सूचक को धन से अलग होने के लिए कपटपूर्वक अथवा गैर ईमानदार रूप से उत्प्रेरित करता हुआ कभी नहीं अभिकथित किया गया है–दांडिक अभियोजन अपास्त किया गया–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 8 से 13)

निर्णयज विधि.–2009(8) SCC 751—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s Rajiv Kumar Sharma, J.J. Sanga, For the Petitioners; A.P.P., For the State.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन दिनांक 6.1.2012 के आदेश, जिसके द्वारा और जिसके अधीन विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, राँची ने याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 468, 471, 477

और 120B के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया, सहित कोतवाली (राँची) पी॰ एस॰ केस सं॰ 377 वर्ष 2011 (जी॰ आर॰ सं॰ 2128 वर्ष 2011) की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है। वह आदेश इस आवेदन में चुनौती के अधीन है।

3. याची की ओर से किए गए निवेदन पर आने से पहले सूचक के मामले पर गौर करना आवश्यक है।

4. सूचक का मामला यह है कि सूचक के दादा ने किसी शेख आसिम अली से कतिपय भूमि खरीदा था जिस भूमि को सूचक के पिता ने विरासत में पाया था जिसके घर में याची सं॰ 1 का पति और याची सं॰ 1 के पति का पिता काम कर रहे थे, किंतु समय के क्रम में उन्होंने सूचक की भूमि के कतिपय टुकड़े के संबंध में विक्रय विलेख अभिलिहखत अभिधारी शेख आसिम अली के उत्तराधिकारियों द्वारा अपने पक्ष में निष्पादित करवाया। इस पर, सूचक द्वारा अभिधान वाद सं॰ 168 वर्ष 1994 दाखिल किया गया था जिसे इसके गैर-अभियोजन के कारण दिनांक 14.3.2000 को खारिज कर दिया गया था। पुनः याचीगण के विरुद्ध अभिधान वाद सं॰ 135 वर्ष 2011 दाखिल की गयी थी। इस पर, यह प्राथमिकी इस अभिवचन पर दाखिल की गयी है, जैसा ऊपर कथन किया गया है, जिसमें यह अभिकथित किया गया है कि अभियुक्तगण ने सूचक की भूमि के संबंध में विक्रय विलेख निष्पादित करवा कर कूटरचना और छल का अपराध किया है। उक्त अभिकथन पर, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 468 एवं 471 के अधीन कोतवाली (राँची) पी॰ एस॰ केस सं॰ 377 वर्ष 2011 के रूप में प्राथमिकी दर्ज की गयी थी। अन्वेषण पूरा करने पर, आरोप पत्र दाखिल किया गया था जिस पर याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 468, 471, 477 और 120-B के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान दिनांक 6.1.2012 के आदेश के तहत लिया गया था। वह आदेश इस आवेदन में चुनौती के अधीन है।

5. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्राथमिकी में किए गए संपूर्ण अभिकथन को सत्य मानने पर भी छल अथवा कूटरचना का मामला नहीं बनता है।

6. विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि सूचक के मामले के अनुसार, विक्रय विलेख शेख आसिम अली के उत्तराधिकारियों और विधिक प्रतिनिधियों द्वारा स्वयं के भूमि का स्वामी होने का दावा करते हुए निष्पादित किया गया है और तद्द्वारा **मोहम्मद इब्राहिम एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य, [2009 (8) SCC 751]** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित निर्णयाधार की दृष्टि में कूटरचना का मामला नहीं बनता है।

7. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख तथा निर्णयज विधि के परिशीलन पर मैं पाता हूँ कि माननीय न्यायाधीशों ने कूट रचना से संबंधित अन्य प्रावधानों और धारा 470 में अंतर्विष्ट प्रावधानों को ध्यान में रखने के बाद निम्नलिखित संप्रेक्षित किया:-

> *^^èkkjk vk 467 vkj 471 d vèkhu vijkèk d fy, ijkHkk0; 'kr dVjpuk gA dVjpuk d fy, ijkHkk0; 'kr >Bk nLrkot (vFkok >Bk byDVkfud fjdkM vFkok mld v'k) cukuk gA ;g ekeyk fdlh >B byDVkfud fjdkM l lcfèkr ugh gA vr%] ç'u ;g g fd D;k çFke vfHk;Dr dk lifÙk (Hky gh ;g mièkkfjr fd;k tkrk g fd ;g mldh ugh Fkh) dk cpu dk rkRi; j[kr g, nk foØ; foy[kk dk fu"iknu vkj jftLVj dju e vU; vfHk;Drx.k d lkFk >Bk nLrkot cukr vkj fu"ikfnr djr g, dgk tk ldrk gA***

8. न्यायालय ने आगे संप्रेक्षित किया है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 464 का विश्लेषण दर्शाता है कि यह झूठे दस्तावेजों को तीन कोटियों में विभक्त करती है जो निम्नलिखित हैं:–

^^igyh dkfV og g tgk 0;fDr ;g fo'okl dkfjr dju d vk'k; d lkFk xj bekunkj :i l vFkok diViod nLrkot cukrk g vFkok fu"ikfnr djrk g fd ,l nLrkot fdlh vU; 0;fDr }kjk cuk;k x;k Fkk vFkok fu"ikfnr fd;k x;k Fkk vFkok fdlh vU; 0;fDr d çkfèkdkj }kjk ftld }kjk vFkok ftld çkfèkdkj }kjk og tkurk g fd bl ugh cuk;k x;k Fkk vFkok fu"ikfnr fd;k x;k FkkA

nljh dkfV og g tgk 0;fDr Lo; }kjk vFkok fdlh vU; 0;fDr }kjk bldk cuk, tku vFkok fu"ikfnr fd, tku d ckn fdlh fofèki.k çkfèkdkj d fcuk jídj.k }kjk vFkok vU;Fkk xjbekunkj :i l vFkok diViod nLrkotk d fdlh rkfRod Hkkx e ifjofrr djrk gA

rhljh dkfV og g tgk 0;fDr ;g tkur g, fd ,l 0;fDr (a) vfLFkj cf)] (b) u'kk] vFkok (c) mld lkFk dh x;h çopuk d dkj.k l nLrkot dh fo"k;oLr vFkok ifjoru dh çÑfr dk tku ugh ldrk Fkk] xj bekunkj :i l vFkok diViod fdlh 0;fDr dk nLrkot ij gLrk{kj vFkok bldk fu"iknu vFkok ifjoru dkfjr djrk gA

l{ki e] 0;fDr dk ^>Bk c;ku nrk gvk dgk tkrk g] ;fn (i) mlu dkbZ vU; gku vFkok fdlh vU; }kjk çkfèkÑr fd, tku dk nkok djr g, nLrkot cuk;k vFkok fu"ikfnr fd;k gk] vFkok (ii) mlu nLrkot ifjofrr fd;k gk vFkok ble NMNkM fd;k gk(vFkok (iii) mlu çopuk djd vFkok 0;fDr ftldk viuh bfn;k ij fu;=.k ugh g l nLrkot çkIr fd;k gkA*

*çFke vihykFkh }kjk fu"ikfnr foØ; foy[k Li"Vr% vkj çdVr% ^^>B c;ku** d çFke vkj f}rh; dkfV d vèkhu ugh vkr gA vr%] ;g n[kk tkuk 'k"k g fd D;k ifjoknh dk nkok fd çFke vfHk;Dr] tk fdlh :i e Hkfe l lcfèkr ugh Fkk] }kjk foØ; foy[kk dk fu"iknu ifjoknh dh Hkfe dk dCtk yu d vk'k; d lkFk nLrkotk dh dV jpuk (vkj fd vfHk;Drx.k 2 l 5 rd u [kjhnnkj] xokg] LØkbc vkj LVki oMj d :i e mDr foØ; foy[kk d fu"iknu vkj jftLV'ku e çFke vfHk;Dr d lkFk njfHklfèk fd;k) d rY; gvk tk ekey dk çFke dkfV d vèkhu yk,xkA*

*;g nkok djr g, fd gLrkrfjr lifÙk mldh lifÙk g foØ; foy[k dk fu"ikfnr dju oky 0;fDr vkj Lokeh dk çfr:i.k djd vFkok Lokeh dh vkj l foy[k dk fu"ikfnr dju d fy, Lokeh }kjk çkfèkÑr vFkok fd, tku vFkok l'kDr cuk, tku dk >Bk nkok dju oky 0;fDr d chp ey vrj gA tc dkbZ 0;fDr lifÙk dk viuk gku d :i e o.ku djr g, lifÙk gLrkrfjr djr g, nLrkot fu"ikfnr djrk g] rc nk lHkkouk, gA igyk ;g g fd og lnHkkoi.k fo'okl djrk g fd lifÙk oLrr% mldh gA nljk ;g g fd og bldk viuk gku dk xj bekunkj :i l vFkok diViod nkok dj ldrk g ;|fi og tkurk g fd ;g mldh lifÙk ugh gA fdr ^^>B nLrkot** dh çFke dkfV d vèkhu vku d fy, ;g i;kIr ugh g fd nLrkot xj bekunkj :i l vFkok diViod cuk;k x;k g vFkok fu"ikfnr fd;k x;k gA vkx vko';drk ;g g fd bl ;g fo'okl dkfjr dju d vk'k; d lkFk cuk;k tkuk pkfg, Fkk fd ,l nLrkot 0;fDr }kjk vFkok 0;fDr d çkfèkdkj }kjk] ftld }kjk vFkok ftld çkfèkdkj }kjk og tkurk g fd bl ugh cuk;k x;k Fkk vFkok fu"ikfnr ugh fd;k x;k Fkk] cuk;k x;k Fkk vFkok fu"ikfnr fd;k x;k FkkA*

*tc dkb nLrkot fdlh 0;fDr }kjk lifÙk tk mldh ugh g dk nkok djr g, fu"ikfnr fd;k tkrk g] og ;g nkok ugh dj jgk g fd og dkb vkj g vkj u gh og ;g nkok dj jgk g fd ml fdlh vU; }kjk çkfèkÑr fd;k x;k gA vr%] ,l nLrkot dk fu"iknu (fdlh lifÙk ftldk og Lokeh ugh g dk rkRif;r :i l gLrkrfjr djr g,) >B nLrkot dk fu"iknu ugh g tlk lfgrk dh èkkjk 464 d vèkhu ifjHkkf"kr fd;k x;k gA ;fn tk fu"ikfnr fd;k x;k g >Bk nLrkot ugh g] rc dkb dV jpuk ugh gA ;fn dkb dVjpuk ugh g] rc u rk lfgrk dh èkkjk 467 vkj u gh èkkjk 471 vkÑ"V gkrh gA**

9. इस प्रकार, यह स्पष्टतः अभिनिर्धारित किया गया है कि जब कोई दस्तावेज किसी व्यक्ति द्वारा संपत्ति, यद्यपि यह उसकी संपत्ति नहीं है, का दावा करते हुए निष्पादित किया जाता है किंतु जब वह यह दावा नहीं कर रहा है कि उसे किसी अन्य द्वारा प्राधिकृत किया गया है अथवा वह कोई अन्य है, ऐसे दस्तावेज के निष्पादन को भारतीय दंड संहिता की धारा 464 के निबंधनानुसार झूठा दस्तावेज नहीं कहा जा सकता है, तब धाराओं 467, 468 और 471 के अधीन अपराध करने का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है।

10. जहाँ तक इस मामले का संबंध है, शेख आसिम अली के उत्तराधिकारियों ने स्वयं का शेख आलिम अली का उत्तराधिकारी होने का दावा करते हुए विक्रय विलेख निष्पादित किया है और इस प्रकार, ऊपर निर्दिष्ट मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित निर्णयाधार की दृष्टि में कूटरचना का मामला बनता है।

11. जहाँ तक छल के अपराध का संबंध है, याचीगण को छल का कोई अपराध करता हुआ नहीं कहा जा सकता है क्योंकि याचीगण को सूचक को कपटपूर्वक अथवा गैर ईमानदार रूप से धन से अलग होने के लिए उत्प्रेरित करता हुआ अभिकथित कभी नहीं किया गया है और इस प्रकार, कूट रचना अथवा छल का अपराध नहीं बनता है।

12. ऐसी स्थिति में, दिनांक 6.1.2012 का संज्ञान लेने वाला आदेश सहित कोतवाली (राँची) पी॰ एस॰ केस सं॰ 377 वर्ष 2011 (जी॰ आर॰ सं॰ 2128 वर्ष 2011) की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है जहाँ तक वर्तमान याचीगण का संबंध है।

13. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

तीरथ सिंह

cuke

बिहार राज्य (अब झारखंड)

Cr. Rev. No. 156 of 2000 (R). Decided on 10th January, 2013.

बिहार लघु खनिज रियायत नियमावली, 1972—नियम 40(1) सह-पठित खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957 की धारा 21 और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 379—अवैध खनन–उन्मोचन आवेदन अस्वीकार किया जाना–याची ने रॉयल्टी की राशि जमा किया था और उस प्रभाव की सूचना सूचक जिला खनन अधिकारी द्वारा संबंधित पुलिस थाना को दी गयी थी–इस प्रकार, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 379 प्रयोज्य नहीं होगी–अधिनियम एवं नियमावली के अधीन पुलिस मामले पर संज्ञान वर्जित है–अधिनियम एवं नियमावली के अधीन अपराध शमनीय प्रकृति के हैं–याची के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही बिल्कुल अवैध है–आक्षेपित आदेश अपास्त–याची उन्मोचित। (पैराएँ 6 से 11)

निर्णयज विधि.–1996 (2) East Cr. C. 805 (Pat)—Applied.

अधिवक्तागण.–M/s. Jai Prakash, Chaitali C. Sinha, Yogesh Modi, For the Petitioner; Mr. Moti Gope, For the Respondent.

आदेश

एच॰ सी॰ मिश्रा, न्यायमूर्ति.–याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची गोविन्दपुर (बरवड्डा) पी॰ एस॰ केस सं॰ 111 वर्ष 1999, जी॰ आर॰ सं॰ 1248 वर्ष 1999 के तत्सम, में श्री ए॰ के॰ सिंह, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 3.4.2000 के आदेश से व्यथित है, जिसके द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए कि बिहार लघु खनिज रियायत नियमावली, 1972 (इसके बाद ''नियमावली'' के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 40(1) के अधीन, खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957 (इसमें इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 21 के अधीन और भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन याची के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री है, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 239 के अधीन उन्मोचन के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया है और आरोप विरचित करने के लिए मामला नियत किया गया था।

3. मामले के तथ्य संक्षिप्त हैं। याची को मिट्टी के अवैध खनन के बाद ईंट निर्माण के काम में लगा हुआ पाया गया था और तद्नुसार, यह कथन करते हुए कि मिट्टी नियमावली के अर्थ के अंतर्गत लघु खनिज है और मिट्टी के अवैध निष्काषण के कारण उक्त नियमावली के नियम 40(1) के प्रावधानों के अधीन और अधिनियम की धारा 21 के अधीन और इस तथ्य की दृष्टि में कि याची सरकारी राजस्व का नुकसान भी कारित कर रहा था, उसने भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन अपराध भी किया था, याची दायी था, दिनांक 22.4.1999 को जिला खनन अधिकारी, धनबाद द्वारा प्रस्तुत लिखित रिपोर्ट के आधार पर प्राथमिकी दर्ज की गयी थी। जिला खनन अधिकारी, धनबाद द्वारा पूर्वोल्लिखित प्रभाव के पत्र के आधार पर प्राथमिकी दर्ज की गयी थी और अन्वेषण किया गया था।

4. आक्षेपित आदेश से यह प्रतीत होता है कि अन्वेषण के बाद पुलिस ने नियमावली के नियम 40(1) के अधीन, अधिनियम की धारा 21 के अधीन और भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया किंतु केवल भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन और न कि नियमावली के नियम 40(1) अथवा अधिनियम की धारा 21 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया था।

5. यह प्रतीत होता है कि इस बीच याची ने ट्रेजरी चालान के तहत राज्य सरकार के 25,580/- रुपयों की रॉयल्टी का भुगतान किया और उस प्रभाव की सूचना जिला खनन अधिकारी द्वारा बरवड्डा पुलिस थाना के प्रभारी-अधिकारी को दिनांक 4.5.1999 के मेमो सं॰ 494 में अंतर्विष्ट पत्र के तहत दी गयी थी और सूचित किया गया था कि याची ने पहले ही रॉयल्टी का भुगतान किया है और इस प्रकार आवश्यक कार्रवाई की जा सकती है। उक्त पत्र को इस आवेदन के परिशिष्ट-2 के रूप में अभिलेख पर लाया गया है। आक्षेपित आदेश से यह प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय ने भी इस तथ्य को ध्यान में लिया है कि याची ने ट्रेजरी चालान के जरिए राज्य सरकार को रॉयल्टी का भुगतान किया था।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश बिल्कुल अवैध है क्योंकि मामला पुलिस मामला के रूप में संस्थापित किया गया था और नियमावली के नियम 41 और अधिनियम की धारा 22 के अधीन संज्ञान वर्जित है, क्योंकि वे दोनों प्रावधानित करते

हैं कि इस निमित्त प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा लिखित में परिवाद के सिवाए अधिनियम और नियमावली के अधीन दंडनीय किसी अपराध का संज्ञान नहीं लिया जाएगा। तद्नुसार, यह उन्मोचन के लिए सुयोग्य मामला था। यह निवेदन भी किया गया है कि अधिनियम तथा नियमावली के अधीन अपराध शमनीय प्रकृति के हैं, क्योंकि नियमावली का नियम 42 तथा अधिनियम की धारा 23A अपराध का प्रशमन प्रावधानित करता है। याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि इस तथ्य की दृष्टि में कि राज्य सरकार द्वारा रॉयल्टी स्वीकार की गयी थी और जिला खनन अधिकारी, धनबाद ने ज्ञापन सं॰ 494 दिनांक 4.5.1999 में अंतर्विष्ट अपने पत्र द्वारा इसके बारे में उनको समुचित कार्रवाई करने के लिए कहते हुए पुलिस अधिकारी को सूचित किया गया था, अत: स्वयं इसी चरण पर मामला छोड़ दिया जाना चाहिए था। विद्वान अधिवक्ता ने **सदानंद प्रसाद सिंह बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य, 1996 (2) East Cr.C. 805 (Pat.)** में पटना उच्च न्यायालय (राँची पीठ) के निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें समरुप मामले में जो स्टोन चिप्स के अवैध खनन से संबंधित था और अभियुक्त ने जुर्माना रॉयल्टी, आदि जमा किया था और न्यायालय को इसके बारे में सूचित किया गया था और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अपराध शमनीय प्रकृति का था। यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि भारतीय दंड संहिता की धारा 379 मामले के तथ्यों पर प्रयोज्य नहीं थी और संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित कर दी गयी थी। उक्त निर्णय पर विश्वास करते हुए, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

7. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन अपराध के लिए याची के विरुद्ध अपराध स्पष्टत: बनता है क्योंकि यह राज्य सरकार को राजस्व की हानि का मामला था और अभिलेख पर मौजूद सामग्री के आधार पर अवर न्यायालय ने पाया है कि याची के विरुद्ध अपराध बनता है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप लायक आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है।

8. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि इस विनिर्दिष्ट अभिकथन के साथ कि राज्य सरकार को कारित राजस्व हानि के कारण भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 379 का मामला बनता है, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 379 के अधीन मामला संस्थापित किया गया है। यह प्रकट है कि याची ने रॉयल्टी की राशि जमा किया था और उस प्रभाव की सूचना सूचक जिला खनन अधिकारी द्वारा पुलिस थाना को दी गयी थी। यह भी प्रकट है कि अवर न्यायालय द्वारा भी दिनांक 3.4.2000 के आक्षेपित आदेश में याची द्वारा रॉयल्टी जमा किए जाने का तथ्य ध्यान में लिया गया है।

9. इस तथ्य की दृष्टि में कि याची ने पहले ही रॉयल्टी जमा किया था और उस प्रभाव की सूचना जिला खनन अधिकारी, धनबाद द्वारा संबंधित पुलिस थाना को दी गयी थी और इस तथ्य की दृष्टि में भी कि नियमावली और अधिनियम के अधीन अपराध शमनीय प्रकृति के हैं, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि याची का मामला **सदानन्द प्रसाद सिंह के मामले (ऊपर)** में पटना उच्च न्यायालय के निर्णय द्वारा पूर्णत: आच्छादित है और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 379 इस मामले के तथ्यों पर प्रयोज्य नहीं है। मैं विद्वान अधिवक्ता के निवेदन में भी बल पाता हूँ कि अधिनियम और नियमावली के अधीन पुलिस मामला पर संज्ञान वर्जित है और तद्नुसार, याची के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही पूर्णत: अवैध है। इस प्रकार, आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

10. तद्नुसार, गोविन्दपुर (बरवड्डा) पी॰ एस॰ केस सं॰ 111 वर्ष 1999, जी॰ आर॰ सं॰ 1248 वर्ष 1999 के तत्सम में श्री ए॰ के॰ सिंह, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 3.4.2000 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। परिणामस्वरुप, याची को उन्मोचित किया जाता है।

11. तद्नुसार, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है। अवर न्यायालय अभिलेख को तुरन्त वापस भेजा जाए।

---

ekuuh; vkykd flg] U;k;efr

आरिफ पाल एवं अन्य

cuke

बिजय कुमार सारावागी एवं अन्य

Second Appeal No. 90 of 2012. Decided on 4th January, 2013.

बिहार मकान (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 1982—धारा 2(h)—बेदखली वाद–बेदखली अपील में प्रतिस्थापन इप्सित करने वाले आवेदन की खारिजी–किराएदार की मृत्यु पर प्रथमतः उसके पति या पत्नी को किराएदार समझा जाएगा और पति या पत्नी की अनुपस्थिति में उसके पुत्र अथवा अविवाहित पुत्री को किराएदार समझा जाएगा–किंतु, ऐसे पति या पत्नी की मृत्यु के बाद मूल किराएदार के अन्य विधिक उत्तराधिकारी या उनके पति अथवा पत्नी किरायेदार नहीं माने जायेंगें–मूल किराएदार की विधवा के पास केवल निजी अधिकार थे और किराएदारी का उसका निजी अधिकार उसकी मृत्यु पर अन्य विधिक उत्तराधिकारियों (अपीलार्थीगण) को अंतरित अथवा न्यागत नहीं होगा–अपील खारिज। (पैराएँ 2 से 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Ayush Aditya, For the Appellants; None, For the Respondents.

आदेश

वादी–प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 द्वारा मूलतः शेख निजामुद्दीन के विरुद्ध निजी आवश्यकता और किराया के बकाया के आधार पर बेदखली वाद दाखिल किया गया था। वाद लंबित रहने के दौरान मूल किराएदार अर्थात् शेख निजामुद्दीन की मृत्यु हो गयी और उसकी विधवा श्रीमती असगरी बेगम को बेदखली वाद में प्रतिस्थापित किया गया था। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा बेदखली वाद डिक्री किया गया था। बेदखली डिक्री से व्यथित होकर श्रीमती असगरी बेगम ने प्रथम अपील अभिधान अपील सं॰ 148 वर्ष 2009 दाखिल किया। बेदखली डिक्री के विरुद्ध प्रथम अपील के लंबित रहने के दौरान असगरी बेगम की भी मृत्यु हो गयी। असगरी बेगम की मृत्यु के बाद वर्तमान अपीलार्थीगण ने स्वयं को स्व॰ असगरी बेगम के पुत्र और विवाहित पुत्रियाँ होने का दावा करते हुए प्रतिस्थापन आवेदन दाखिल किया। दिनांक 11 मई, 2012 के आक्षेपित आदेश के तहत प्रतिस्थापन इप्सित करने वाला आवेदन खारिज कर दिया गया था और अपील खारिज कर दी गयी थी। व्यथित होकर, अपीलार्थीगण ने वर्तमान अपील दाखिल किया है।

2. बिहार मकान (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 1982 (संक्षेप में 'अधिनियम') की धारा 2 (h) के अधीन किराएदार को परिभाषित किया गया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *"(h) ^fdjk,nkj* l vfHkçr g dkb 0;fDr ftld }kjk vFkok ftld dkj.k Hkou d fy, fdjk;k Hkxrku ;kX; g vkj ;g%*
>
> *(i) mld i{k e fdjk,nkjh dh lekfIr d ckn dkfct cu jgu okyk 0;fDr(vkj*

(ii) 0;fDr tk fdjk, d Hkxrku ij vFkok vU;Fkk ,l Hkou d ekfyd d depkjh d :i e Hkou dk vfèkHkkx j[krk g(

(iii) dkfct cu g, 0;fDr dh eR; dh fLFkfr e] bl [kM d Øe'k% Li"Vhdj.k I vkj II e mÙkjkfèkdkj d vkn'k vkj fofufn"V 'kr d vè;èkhu mldh fdjk,nkjh dh lekflr d ckn ,l iokDr 0;fDr dk@dh

(a) ifr ;k iRuh]

(b) i= vFkok fookfgr i=h vFkok tgk nkuk g] o nkuk(

(c) ekrk&firk]

(d) io er i= dh foèkok gku d ukr cg tk mldh eR; dh frfFk rd mld ifjokj d lnL; vFkok lnL;k d :i e ,l 0;fDr d lkFk ifjlj e lkekU; r% fuokl dj jgh Fkh fdr ,l 0;fDr dk lfEefyr ugh djrk g ftld fo#) cn[kyh d fy, vkn'k vFkok fMØh ikfjr dh x;h gA

Li"Vhdj.k (I)—viuh fdjk,nkjh dh lekflr d ckn dkfct cu 0;fDr dh eR; dh fLFkfr e mÙkjkfèkdkj dk Øe fuEufyf[kr gkxk%

(a) çFker%] mld mÙkjthoh ifr ;k iRuh }kjk

(b) f}rh;r% mld i= vFkok vfookfgr i=h vFkok nkuk ;fn mÙkjthoh ifr ;k iRuh ugh g vFkok ;fn mÙkjthoh ifr ;k iRuh mldh eR; dh frfFk rd mld ifjokj d lnL; d :i e erd 0;fDr d lkFk lkekU; r% fuokl ugh dj jgk@jgh FkhA

(c) rrh;r% mld ekrk&firk ;fn erd 0;fDr dk mÙkjthoh ifr ;k iRuh] i= vFkok vfookfgr i=h ugh g vFkok ;fn ,lk mÙkjthoh ifr ;k iRuh] i= vFkok vfookfgr i=h vFkok mue l dkb mldh eR; dh frfFk rd erd 0;fDr d ifjokj d lnL; d :i e ifjlj e lkekU; r% fuokl ugh dj jg Fk(vkj

(d) prFkr%] io er i= dh foèkok gku d ukr cg ;fn erd 0;fDr dk mÙkjthoh ifr ;k iRuh] i=] vfookfgr i=h vFkok ekrk&firk vFkok mue l dkb ugh g vFkok ;fn ,lk mÙkjthoh ifr ;k iRuh] i=] vfookfgr i=h vFkok ekrk&firk vFkok mue l dkb mldh eR; dh frfFk rd erd 0;fDr d ifjokj d lnL; d :i e ifjlj e lkekU; r% fuokl ugh dj jg FkA

Li"Vhdj.k II—;fn 0;fDr] tk mÙkjkfèkdkj }kjk fdjk,nkjh dh lekflr d ckn dkfct cu jgu dk vfèkdkj vftr djrk g] mldh eR; dh frfFk ij erd 0;fDr ij foÙkh; :i l vkfJr ugh Fkk] ,lk mÙkjkfèkdkjh ,d o"k dh lhfer vofèk d fy, ,lk vfèkdkj vftr djxk vkj ,lh vofèk d volku ij vFkok mldh eR; ij] tk Hkh igy gk] fdjk,nkjh dh lekflr d ckn dkfct cu jgu dk ,l mÙkjkfèkdkjh dk vfèkdkj fuokfir gk tk,xkA

Li"Vhdj.k III—lng dk nj dju d fy,] ,rn }kjk ;g ?kkf"kr fd;k tkrk g&

(a) tgk Li"Vhdj.k II d dkj.k fdjk,nkjh dh lekflr d ckn dkfct cu jgu dk fdlh mÙkjkfèkdkjh dk vfèkdkj fuokfir gk tkrk g] ,lk fuokiu mlh dkfV d fdlh vU; mÙkjkfèkdkjh d vfèkdkj dk çHkkfor ugh djxk] fdjk,nkjh dh lekflr d ckn dkfct cu jgu dk vfèkdkj ,l fuokiu ij ;Fkk fLFkfr fdlh fuEurj dkfV vFkok dkfV;k e fofufn"V fdlh vU; mÙkjkfèkdkjh ij lØkr ugh gkxkA

*(b) Li"Vhdj.k le fufn"V çR;d mÙkjkfèkdkjh dk fdjk,nkjh dh lekfIr ij dkfct cu jgu dk vfèkdkj mld fy, o;fDrd gkxk vkj ,l mÙkjkfèkdkjh dh eR; ij mld fdlh mÙkjkfèkdkjh ij U;kxr ugh gkxkA***

3. अधिनियम की धारा 2 (h) के स्पष्टीकरण I और III के साथ पठन करने पर किराएदार की परिभाषा के मुताबिक किराएदार की मृत्यु पर प्रथमतः उसका पति या पत्नी किराएदार समझा जाएगा और पति या पत्नी की अनुपस्थिति में उसके पुत्र अथवा अविवाहित पुत्री को किराएदार समझा जाएगा। किंतु, ऐसे पति या पत्नी की मृत्यु के बाद मूल किराएदार अथवा अन्य विधिक उत्तराधिकारियों के पति या पत्नी को किराएदार के रूप में नहीं माना जाएगा। वर्तमान विवाद को विनिश्चित करने के प्रयोजन से स्पष्टीकरण III का उपखंड (b) अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अधिनियम की धारा 2 (h) के स्पष्टीकरण III के उपखंड (b) की दृष्टि में, असगरी बेगम के पास केवल वैयक्तिक अधिकार थे और उसकी मृत्यु पर उसके वैयक्तिक अधिकार अन्य विधिक उत्तराधिकारियों अर्थात् अपीलार्थीगण को अंतरित अथवा न्यागत नहीं होंगे।

4. उक्त की दृष्टि में, मैं प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आदेश में कोई अवैधता नहीं पाता हूँ। उक्त चर्चा की दृष्टि में, वर्तमान अपील में विधि का सारवान प्रश्न उद्भूत नहीं होता है।

5. अतः, वर्तमान अपील विफल होती है और एतद् द्वारा खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

शिवजी सिंह एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1493 of 2012. Decided on 8th January, 2013.

कारखाना अधिनियम, 1948—धाराएँ 9, 92 एवं 106—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 468 एवं 482—दुर्घटना में मजदूर की मृत्यु–संज्ञान–परिसीमा–कारखाना अधिनियम के प्रावधान के उल्लंघन की स्थिति में, अभिकथित अपराध किए जाने की तिथि से अथवा उस तिथि से, जब निरीक्षक को घटना अथवा दुर्घटना के बारे में जानकारी हुई, 90 दिनों के भीतर परिवाद दाखिल किए जाने की आवश्यकता है–निरीक्षक, जो मृत्यु अथवा शारीरिक उपहति में परिणत होने वाली दुर्घटना अथवा खतरनाक घटना की जाँच कर रहा है, दुर्घटना का मामला सिद्ध करने के आवश्यकतः परीक्षण किए जाने वाले गवाहों को प्रस्तुत करने के लिए कारखाना के प्रबंधक/अधिभोगी को नहीं कह सकता है अथवा मजबूर नहीं कर सकता है–किसी व्यक्ति को किसी प्रश्न का उत्तर देने के लिए अथवा कोई साक्ष्य देने के लिए, जो स्वयं को अपराध में फँसाने वाला है, मजबूर नहीं किया जा सकता है–उक्त घटना के गवाहों को प्रस्तुत करने के संबंध में याचीगण को निर्देश देता हुआ निरीक्षक द्वारा लिखित में कोई आदेश निश्चय ही याचीगण को अपराध में फँसाएगा–मामला कारखाना अधिनियम की धारा 106 के मुख्य प्रावधान द्वारा आच्छादित होगा जो तीन माह के भीतर परिवाद दाखिल किया जाना विहित करता है–चूँकि, संज्ञान ऐसे परिवाद पर लिया गया है जिसे घटना की जानकारी होने के 90 दिनों के काफी बाद दाखिल किया गया है, यह परिसीमा द्वारा वर्जित है–संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 11, 15 से 19)

अधिवक्तागण.–Mr. P.A.S. Pati, For the Petitioners; APP, For the State.

आदेश

यह प्रतीत होता है कि प्रति शपथ पत्र दाखिल करने के लिए राज्य के विद्वान अधिवक्ता को समय दिए जाने के बावजूद कोई प्रति शपथ पत्र दाखिल नहीं किया गया है।

2. मामले के उस दृष्टिकोण में, याचीगण के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

3. यह आवेदन दिनांक 11.1.2012 के आदेश, जिसके द्वारा और जिसके अधीन विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, सरायकेला ने याचीगण के विरुद्ध कारखाना अधिनियम की धारा 92 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया, सहित जी॰ ओ॰ सं॰ 41 वर्ष 2012 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है। संज्ञान लेने वाले उक्त आदेश का अभिखंडन इस आधार पर इप्सित किया जा रहा है कि संज्ञान लेने वाला आदेश परिसीमा द्वारा वर्जित है।

4. यह प्रतीत होता है कि दिनांक 4.10.2011 को कोई मजदूर विभूति भूषण महतो, जब वह कारखाना मेसर्स सिद्धि विनायक मेटोकॉम लि॰ के मेन गेट से लौट रहा था, ट्रक से दुर्घटनाग्रस्त हो गया जिसके परिणामस्वरुप उसने गंभीर उपहतियाँ प्राप्त किया। उसे अस्पताल ले जाया गया था जहाँ डॉक्टर ने उसे मृत घोषित किया।

5. उक्त दुर्घटना के बारे में, दिनांक 7.10.2011 को कारखाना निरीक्षक को सूचना दी गयी थी किंतु परिवाद दिनांक 11.1.2012 को दाखिल किया गया था। चूँकि घटना की सूचना पाने के 90 दिनों के बाद परिवाद दाखिल किया गया था, इसका अभिखंडन इस आधार पर इप्सित किया जा रहा है कि अपराध का संज्ञान लेने वाला आदेश परिसीमा द्वारा वर्जित है।

6. परिवाद के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि 90 दिनों के बाद मामला दर्ज करने का औचित्य परिवाद के पैराग्राफ–8 में दिया गया है जिसमें कथन किया गया है कि दिनांक 11.10.2011 को कारखाना के अधिभोगी को ट्रक के चालक और खलासी को कारखाना निरीक्षक के कार्यालय में उपस्थित होने का निर्देश देने के लिए सूचित किया गया था किंतु वे समय के भीतर उपस्थित नहीं हुए थे। शायद यह कारण है कि परिवाद घटना की जानकारी की तिथि से 90 दिनों के अवसान के बाद दर्ज किया गया था।

7. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि शायद इस उपधारणा के अधीन कि मामला कारखाना अधिनियम की धारा 106 के परन्तुक के अंतर्गत आएगा जिसके द्वारा यह परिसीमा की अवधि छह माह विहित करता है, मामला 90 दिनों के अवसान के बाद दाखिल किया गया है किंतु वर्तमान मामले में धारा 106 का परन्तुक प्रयोज्य नहीं है।

8. इस संबंध में, याचीगण के विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि कारखाना अधिनियम की धारा 106 का परन्तुक अधिनियम अथवा नियमावली के प्रावधान के अनुपालन के बारे में कहता है किंतु जहाँ परिवादी याचीगण को कतिपय चीजों को करने का आदेश देते हुए लिखित में आदेश पारित करता है, उस आदेश को कारखाना अधिनियम की धारा 106 के परन्तुक के निबंधनानुसार लिखित आदेश नहीं माना जाएगा।

9. इस संबंध में, याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने कारखाना अधिनियम की धारा 9 को निर्दिष्ट किया जो मृत्यु अथवा शारीरिक उपहति में परिणत होने वाली घटना/दुर्घटना की जाँच करने के लिए निरीक्षक को सशक्त बनाती है किंतु ऐसी जाँच के संबंध में वह इन याचीगण को लिखित में कतिपय कृत्य करने का निर्देश नहीं दे सकता है जो याचीगण को अपराध में फँसाने वाला होगा क्योंकि यह कारखाना अधिनियम की धारा 9 के परन्तुक के अधीन प्रतिषिद्ध है।

10. निवेदन के संदर्भ में, कारखाना अधिनियम की धारा 106 को ध्यान में लेने की आवश्यकता है जिसका पठन निम्नलिखित है;–

*"106. **vfHk;ktu dh ifjlhek**-&dkb U;k;ky; bl vfèkfu;e d vèkhu nMuh; fdlh vijkèk dk lKku ugh yxk tc rd ml frfFk] ftl ij vfHkdfFkr vijkèk fd, tku dh tkudkjh fujh{kd dh tkudkjh e vk;h] d rhu ekg d Hkhrj bldk ifjokn ugh fd;k tkrk g(*

*ijUr ;g fd tgk vijkèk fujh{kd }kjk fn, x, fyf[kr vkn'k dh voKk fd, tku l xfBr g] bldk ifjokn frfFk] ftl ij vijkèk vfHkdfFkr :i l fd;k x;k g] d Ng ekg d Hkhrj fd;k tk ldrk gA**"*

11. पूर्वोक्त प्रावधान के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि कारखाना अधिनियम के प्रावधान के उल्लंघन की स्थिति में अभिकथित अपराध किए जाने की तिथि से अथवा उस तिथि से, जब निरीक्षक को घटना अथवा दुर्घटना की जानकारी होती है, 90 दिनों के भीतर परिवाद दाखिल करना आवश्यक है।

12. किंतु, इसका परन्तुक विहित करता है कि परिवाद दाखिल करने की परिसीमा छह माह होगी जहाँ यह लिखित में दिए गए आदेश की अवज्ञा से संबंधित है।

13. यहाँ वर्तमान मामले में, चूँकि याचीगण ने गवाहों को पेश नहीं किया था जैसा निरीक्षक द्वारा लिखित में आदेश दिया गया था, राज्य द्वारा अभिवचन किया जा रहा है कि इन परिस्थितियों के अधीन परिवाद दाखिल करने की विहित अवधि छह माह होगी और न कि तीन माह।

14. उक्त निवेदन कारखाना अधिनियम की धारा 9 में अंतर्विष्ट प्रावधान की दृष्टि में मान्य प्रतीत नहीं होता है जो निरीक्षक की शक्तियों के बारे में कहती है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*^^èkkjk 9: **fujh{kdk dh 'kfDr;k**-&bl fufeÙk cuk, x, fdlh fu;e d vè;èkhu fujh{kd LFkkuh; lhekvk ftud fy, ml fu;Dr fd;k x;k g d vrxr*

(a) ,l lgk;dk d lkFk tk ljdkj vFkok fdlh LFkkuh; vFkok vU; ykd çkfèkdkjh dh lok e g vFkok fdlh fo'k"kK d lkFk tl k og l;kX; le>rk g] fdlh LFkku] ftldk dkj[kkuk d :i e mi;kx fd;k tkrk g vFkok bldk ftld ,l mi;kx fd, tku dk fo'okl dju d fy, mld ikl dkj.k g] e ço'k dj ldrk g(

(b) ifjlj] lykUV] e'khujh] oLr vFkok inkFk dk ijh{k.k dj ldrk g(

(c) fdlh n?kVuk vFkok [krjukd ?kVuk] pkg budk ifj.kke 'kkjhfjd migfr vFkok fu%'kDrrk e gk ;k ugh(dh tkp dj ldrk g vkj ?kVukLFky ij vFkok vU;Fkk fdlh 0;fDr dk c;ku y ldrk g ftl og ,lh tkp d fy, vko';d le>rk g(

(d) dkj[kkuk l lcfèkr fdlh fofgr jftLVj vFkok fdlh vU; nLrkot dk çLrr dju d fy, dg ldrk g(

(e) fdlh jftLVj] vfHky[k vFkok vU; nLrkot vFkok bld fdlh v'k dk tCr dj ldrk g vFkok bldh çfr;k y ldrk g ftUg og bl vfèkfu;e d vèkhu fdlh vijkèk ftld ckj e mld ikl fo'okl dju dk dkj.k g fd vijkèk fd;k x;k g d lcèk e vko';d le>rk gA

(f) vfèkHkkxh dk fun'k n ldrk g fd fdlh ifjlj vFkok bld fdlh Hkkx] vFkok mle iMh fdlh pht dk (lkekU;r% vFkok igy fo'k"k e) rc rd vckfèkr

NkM fn;k tk,xk tc rd [kM (b) d vèkhu fdlh ijh{k.k d ç;ktu l vko';d g(

(g) viu lkFk fdlh vko';d midj.k vFkok vktkj ydj eki vkj QkVkxkQ y ldrk g vkj ,lh fjdkfMx dj ldrk g tlk og [kM (b) d vèkhu fdlh ijh{k.k d ç;ktu l vko';d le>rk g(

(h) fdlh ifjlj e ik;h x;h fdlh oLr vFkok inkFk d ,lh oLr vFkok inkFk gku dh fLFkfr e tk ml etnjk d LokLF; vFkok lj{kk dk [krjk igpkrh vFkok [krjk dkfjr dju dh lHkkouk j[krh çrhr gkrh g] og ml rkMu vFkok fdlh çfØ;k vFkok ijh{kk d vè;èkhu dju dk fun'k n ldrk g (fdr bl çdkj ugh tk bl udlku igpk, vFkok fou"V dj n tc rd ;g bl vfèkfu;e d ç;ktu dk ijk dju d fy, bl ifjfLFkfr e vko';d ugh g) vkj ,lh fdlh oLr vFkok inkFk vFkok bld Hkkx dk dCtk y ldrk g vkj bl rc rd fu#) dj ldrk g tc rd og ,l ijh{k.k d fy, vko';d le>rk g(

(i) ,lh vU; 'kfDr;k dk ç;kx dj ldrk g tlk fofgr fd;k tk ldrk g(

ijUr ;g fd dkb 0;fDr Lo; dk vijkèk e Qlku dh çofr j[ku oky fdlh ç'u dk mÙkj nu d fy, vFkok fdlh lk{; dk nu d fy, bl èkkjk d vèkhu etcj ugh fd;k tk,xkA

15. धारा 9 का उपखंड (c) मृत्यु अथवा शारीरिक उपहति में परिणत होने वाली किसी दुर्घटना अथवा खतरनाक घटना की जाँच करने की निरीक्षक की शक्ति के बारे में कहता है किंतु वह कारखाना के प्रबंधक/अधिभोगी को दुर्घटना का मामला सिद्ध करने के लिए आवश्यकत: परीक्षण किए जाने के लिए गवाहों को पेश करने के लिए मजबूर नहीं कर सकता है अथवा कह नहीं सकता है जो प्रतिषेध कारखाना अधिनियम की धारा 9 के परन्तुक के अधीन है, जो कहती है कि किसी व्यक्ति को किसी प्रश्न का उत्तर देने के लिए अथवा कोई साक्ष्य देने के लिए, जो स्वयं को अपराध में फँसाने वाली है, मजबूर नहीं किया जा सकता है। उक्त घटना के गवाहों की प्रस्तुति के संबंध में याचीगण को निर्देश देता हुआ निरीक्षक द्वारा लिखित में कोई आदेश निश्चय ही याचीगण के लिए अपराध में फँसाने वाला होगा।

16. इस स्थिति के अधीन, मामला कारखाना अधिनियम की धारा 106 के परन्तुक के अंतर्गत कभी नहीं आएगा बल्कि वर्तमान मामला कारखाना अधिनियम की धारा 106 के मुख्य प्रावधान द्वारा आच्छादित होगा जो घटना की तिथि से अथवा निरीक्षक को इसकी जानकारी की तिथि से तीन माह के अंतर्गत परिवाद दाखिल किया जाना विहित करती है।

17. चूँकि, संज्ञान ऐसे परिवाद पर दाखिल किया गया है जिसे घटना की जानकारी होने के 90 दिनों के काफी बाद दाखिल किया गया है, यह परिसीमा द्वारा वर्जित है।

18. तद्नुसार, विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, सरायकेला द्वारा पारित दिनांक 11.1.2012 के आदेश सहित जी॰ ओ॰ सं॰ 41 वर्ष 2012 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

19. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

दामोदर थापा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Cr. Revision No. 555 of 2009. Decided on 4th January, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 125—भरण-पोषण—अवर न्यायालय ने याची के दो अवयस्क संतानों में से प्रत्येक को 1000/- रुपयों का भरण-पोषण प्रदान किया और याची की पत्नी को भरण-पोषण प्रदान करने से इनकार किया—पत्नी को भरण-पोषण प्रदान करने से इस आधार पर इनकार किया गया कि वह स्वेच्छा से पृथक रूप से और जारकर्म में रह रही थी—अवयस्क संतानों को भरण-पोषण प्रदान करने में अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है—आक्षेपित आदेश में उपांतरण के साथ आवेदन खारिज किया गया। (पैराएँ 7 से 10)

अधिवक्तागण.—Mr. Kailash Prasad Deo, For the Petitioner; Mr. Shashank Shekhar Prasad, For the State; M/s A.K. Trivedi, Prabha Trivedi, R.K. Trivedi, V.K. Sinha, For the Opposite Parties.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता, राज्य के विद्वान अधिवक्ता और निजी विरोधी पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची भरण-पोषण केस सं॰ 36 वर्ष 2005 में प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 12.6.2009 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा अवर न्यायालय ने याची के दो अवयस्क संतानों में से प्रत्येक को 1000/- रुपयों का भरण-पोषण प्रदान किया है और याची की पत्नी को भरण-पोषण प्रदान करने से इनकार किया है।

3. मामले के तथ्य संक्षिप्त हैं। याची और विरोधी पक्षकारों की माता का विवाह वर्ष 1989 में हिंदू रीति रिवाजों के अनुसार हुआ था। याची की पत्नी ने यह कथन करते हुए कि वह याची की विधिवत् विवाहित पत्नी थी और विवाह से उसको चार संतानें हुई थी और अंतत: उसे उसके दांपत्य गृह से दो अवयस्क संतानों के साथ निकाल दिया गया था, क्योंकि याची ने अपनी 'भाभी' के साथ अवैध विकसित कर लिया था, स्वयं के लिए और अपने साथ रह रहे दो अवयस्क संतानों के लिए भरण-पोषण के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन आवेदन दाखिल किया। याची द्वारा अवर न्यायालय में पत्नी के दावा से इनकार यह अभिकथन करते हुए किया गया था कि वह किसी संजय बहादुर के साथ जारकर्म में रह रही थी और दो संतानें, जिनके लिए उसकी पत्नी द्वारा भरण-पोषण का दावा किया गया था, संजय बहादुर के साथ उसके अवैध संबंध से जन्मी संतानें थी। पक्षों के बीच इस विवाद के साथ दोनों पक्षों ने अवर न्यायालय में साक्ष्य दिया।

4. आक्षेपित आदेश से यह प्रतीत होता है कि साक्ष्य से यह पता चला कि संजय बहादुर, जिसके बारे में अभिकथित किया गया है कि याची की पत्नी का उसके साथ अवैध संबंध था, याची की पत्नी की बहन का बेटा है। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य से यह भी प्रतीत होता है कि याची की ओर से यह दर्शाने के लिए दस्तावेज सिद्ध किए गए थे कि याची की पत्नी का संजय बहादुर के साथ अवैध संबंध था और उसने पंचायती में इस तथ्य को स्वीकार किया था और पंचायती में दर्ज उसके बयान पर उसका हस्ताक्षर सिद्ध किया गया था और अवर न्यायालय में उक्त बयान सिद्ध किया गया था, यद्यपि याची की पत्नी द्वारा दावा किया गया था कि उक्त बयान उसको कभी पढ़कर सुनाया नहीं गया था। दूसरी ओर, याची की पत्नी ने पश्चिम बोकारो अस्पताल द्वारा जारी अपनी सबसे छोटी संतान का जन्म प्रमाण पत्र सिद्ध किया था जहाँ दिनांक 6.8.2000 को संतान का जन्म हुआ था और अवर न्यायालय में यह दर्शाने के लिए साक्ष्य दिया गया था कि याची की पत्नी को स्वयं याची द्वारा सबसे छोटी पुत्री को जन्म देने के लिए अस्पताल में भरती किया गया था और प्रसव का खर्च याची द्वारा उठाया गया था। आक्षेपित आदेश दर्शाता

है कि इस बिंदु पर उनके परिसाक्ष्य को झुठलाने के लिए गवाहों के प्रति परीक्षण में कुछ भी नहीं है और संतान का जन्म प्रमाण पत्र, जिसे प्रदर्श I के रूप में सिद्ध किया गया था, पर विवाद नहीं किया गया था। अवर न्यायालय ने दोनों पक्षों की ओर से अभिलेख पर लाए गए साक्ष्यों पर चर्चा किया है और इस निष्कर्ष पर आया है कि याची की पत्नी अर्थात् अनिता देवी दिनांक 4.8.2002 से स्वेच्छापूर्वक पृथक रूप से रह रही थी और तद्नुसार याची की पत्नी को भरण-पोषण प्रदान करने से इनकार किया। किंतु अवर न्यायालय ने पाया कि अपनी माता के साथ रहने वाली दो संतानें एक पुत्र और एक पुत्री विवाह संबंध से उत्पन्न याची की वैध संतानें हैं और याची को इन दोनों संतानों में से प्रत्येक को उनके वयस्क होने तक 1000/- रुपयों के भरण-पोषण का भुगतान करने का निर्देश दिया।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश बिल्कुल अवैध है और अवर न्यायालय में याची की ओर से दिए गए साक्ष्य पर और पंचायती से संबंधित दस्तावेज जिसमें यह आया था कि याची की पत्नी जारकर्म में रह रही थी, पर अपना विश्वास स्थापित किया है। विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि याची की पत्नी के साथ रह रही दो संतानें याची की संतानें नहीं हैं और तद्नुसार, याची दोनों संतानों का भरण-पोषण का कोई भुगतान करने का दायी नहीं है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

6. निजी विरोधी पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि आक्षेपित आदेश में अवैधता नही है क्योंकि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 स्पष्टत: आज्ञा देती है कि अवैध संतानें भी भरण-पोषण की हकदार हैं। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि भले ही अवर न्यायालय ने अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के आधार पर यह पाया है कि माता भरण-पोषण की हकदार नहीं थी किंतु अवर न्यायालय द्वारा सही प्रकार से संतानों को भरण-पोषण प्रदान किया गया है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप करने लायक आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है।

7. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि अवर न्यायालय ने दोनों पक्षों द्वारा अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य पर विस्तारपूर्वक चर्चा किया है और इस निष्कर्ष पर आया है कि याची की पत्नी दिनांक 4.8.2002 से स्वेच्छापूर्वक पृथक रूप से रह रही थी और तद्नुसार, वह भरण-पोषण की हकदार नहीं है। अभिलेख पर लाया गया साक्ष्य, विशेषत: अवर न्यायालय में याची की पत्नी द्वारा सिद्ध किया गया प्रदर्श-1 दर्शाता है कि सबसे छोटी पुत्री का जन्म दिनांक 6.8.2000 को हुआ था अर्थात् दिनांक 4.8.2002 के काफी पहले। आक्षेपित आदेश में यह उल्लेख पाता है कि प्रदर्श 1 में पुत्री के पिता के रूप में याची के नाम की प्रविष्टि को याची द्वारा बिल्कुल विवादित नहीं किया गया है। मामले के उस दृष्टिकोण में, अवर न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि इन संतानों का जन्म विवाह संबंध से हुआ था, दो संतानों–एक पुत्र और पुत्री को भरण-पोषण प्रदान किया है। आक्षेपित आदेश में यह भी उल्लेख पाता है कि यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है कि समय के किसी बिंदु पर पक्षों के बीच विवाह विघटित किया गया था।

8. इस प्रकार, मैं विवाह संबंध से जन्में याची की अवयस्क संतानों को भरण-पोषण प्रदान करते हुए अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप करने लायक कोई अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं पाता हूँ। इसी समय पर, मैं पाता हूँ कि अवर न्यायालय ने संतानों

को उनके वयस्क होने की आयु तक भरण-पोषण प्रदान करने का निर्देश दिया है। संतानों में से एक पुत्री है और तद्नुसार, वह न केवल वयस्कता की आयु प्राप्त करने तक भरण-पोषण की हकदार होगी बल्कि अपना विवाह होने तक अथवा लाभदायी रूप से रोजगार पाने तक भरण-पोषण की हकदार होगी।

9. पूर्वोक्त चर्चा की दृष्टि में, भरण-पोषण केस सं॰ 36 वर्ष 2005 में विद्वान प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 12.6.2009 का आक्षेपित आदेश इस सीमा तक उपांतरित किया जाता है कि विरोधी पक्षकार सं॰ 3 सुश्री शिवानी उर्फ रोहणी कुमारी जो याची की पुत्री है न केवल वयस्कता की आयु प्राप्त करने तक भरण-पोषण की हकदार होगी बल्कि वह अपना विवाह हो जाने तक अथवा लाभदायी रूप से रोजगार पाने तक भरण-पोषण की हकदार होगी।

10. आक्षेपित आदेश में इस उपांतरण के साथ यह आवेदन खारिज किया जाता है। अवर न्यायालय अभिलेख को तुरन्त वापस भेजा जाए।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

प्रमोद दूबे

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1790 of 2012. Decided on 8th January, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 414 सह-पठित आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 की धारा 7 और विस्फोटक पदार्थ अधिनियम, 1908 की धारा 9 (B) और एल॰ पी॰ जी॰ (आपूर्ति एवं वितरण विनियमन) आदेश, 2000 की धाराएँ 3, 4, 5 एवं 7—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—एल॰ पी॰ जी॰ सिलिंडरों का अभिग्रहण—संज्ञान—केवल केंद्र अथवा राज्य सरकार द्वारा सम्यक रूप से प्राधिकृत केंद्र अथवा राज्य सरकार का कोई अधिकारी, जो इंस्पेक्टर के रैंक से नीचे का न हो, तलाशी एवं जब्ती कर सकता है—तलाशी एवं जब्ती ए॰ एस॰ आई॰ रैंक के अधिकारी द्वारा प्रभाव दी गयी है और तद्द्वारा, एल॰ पी॰ जी॰ आपूर्ति आदेश, 2000 के प्रावधान के अधीन अधिकारी जो सक्षम नहीं है द्वारा प्रभाव दी गयी तलाशी एवं जब्ती बिल्कुल अवैध बन जाती है—अवैध तलाशी एवं जब्ती के आधार पर आधारित अभियोजन संपोषित नहीं किया जा सकता है—संपूर्ण दांडिक मामला अभिखंडित—आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 7 से 9)

अधिवक्तागण.—Mr. Indrajeet Sinha, For the Petitioners; Mr. APP, For the State.

आदेश

पहले दिनांक 10.10.2012 को राज्य को प्रति शपथ पत्र दाखिल करने के लिए समय प्रदान किया गया था। जब इसे दाखिल नहीं किया गया था, प्रति शपथपत्र दाखिल करने के लिए पुनः 27.11.2012 को समय दिया गया था। साथ ही, आदेश पारित किया गया था कि यदि अगली तिथि पर प्रति शपथ पत्र दाखिल नहीं किया जाता है, मामला अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर विनिश्चित किया जाएगा। इसके बावजूद प्रतिशपथ पत्र दाखिल नहीं किया गया है।

2. ऐसी स्थिति में, मामले के गुणागुण पर याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

3. यह आवेदन सिधगोरा पी॰ एस॰ केस सं॰ 49 वर्ष 2011 (जी॰ आर॰ सं॰ 829 वर्ष 2011) में पारित दिनांक 9.6.2011 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है, जिसके द्वारा और जिसके अधीन तत्कालीन मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, जमशेदपुर ने भारतीय दंड संहिता की धारा 414, आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 9 (B) और एल॰ पी॰ जी॰ (आपूर्ति एवं वितरण का विनियमन) आदेश, 2000 की धाराओं 3, 4, 5 और 7 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया।

4. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि इस अभिकथन पर कि याची को किसी प्रकार की अनुज्ञप्ति के बिना पाँच खाली एल॰ पी॰ जी॰ सिलेंडरों और कुछ भरे हुए सिलेंडरों पर काबिज पाया गया था, भारतीय दंड संहिता की धारा 414 के अधीन और विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 9 (B) के अधीन भी और ई॰ सी॰ अधिनियम की धारा 7 के अधीन भी एल॰ पी॰ जी॰ (आपूर्ति एवं वितरण का विनियमन) आदेश, 2000 की धाराओं 3, 4, 5 और 7 के प्रावधानों के उल्लंघन के लिए सिधगोरा पी॰ एस॰ केस सं॰ 49 वर्ष 2011 (जी॰ आर॰ सं॰ 829 वर्ष 2011) के रूप में मामला दर्ज किया गया था। आरोप–पत्र दाखिल किए जाने पर पूर्वोक्तानुसार अपराधों का संज्ञान लिया गया है जो बिल्कुल अवैध है क्योंकि केंद्र सरकार अथवा राज्य सरकार का अधिकारी, जो पुलिस इंस्पेक्टर के नीचे के रैंक का है, तलाशी एवं जब्ती करने के लिए सक्षम नहीं है, किंतु इस मामले में ए॰ एस॰ आई॰ के रैंक के अधिकारी द्वारा तलाशी एवं जब्ती को प्रभाव दिया गया है और तद्द्वारा, पुलिस इंस्पेक्टर के रैंक के नीचे के अधिकारी द्वारा की गयी जब्ती के आधार पर पूर्वोक्त आदेश के प्रावधान के उल्लंघन के लिए आरंभ किया गया अभियोजन अवैध होगा।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि भले ही याची को खाली सिलेंडरों एवं भरे सिलेंडरों पर काबिज पाया गया है, याची को विस्फोटक पदार्थ अधिनियम के अधीन अभियोजित नहीं किया जा सकता है यद्यपि विस्फोटक पदार्थ अधिनियम के प्रावधान प्रयोज्य हो सकते हैं किंतु विस्फोटक पदार्थ अधिनियम के अधीन अपराध असंज्ञेय होने के नाते न्यायालय की अनुमति के बिना मामला दर्ज नहीं किया जा सकता है और जहाँ तक भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 414 का संबंध है, यह प्रयोज्य नहीं है क्योंकि अभियोजन का मामला यह कभी नहीं है कि याची को उन एल॰ पी॰ जी॰ सिलेंडरों जिन्हें चुराया गया था पर काबिज पाया गया था और उस स्थिति में संज्ञान लेने वाला आदेश दोषपूर्ण है।

6. इन निवेदनों की दृष्टि में, एल॰ पी॰ जी॰ (आपूर्ति एवं वितरण का विनियमन) आदेश, 2000 के खंड 13 में अंतर्विष्ट प्रावधानों को ध्यान में लेने की आवश्यकता है जिनका पठन निम्नलिखित है:–

> *"13. **ços'k] ryk'kh vkSj tCrh dh 'kfDr-**&(1) ;FkkfLFkfr dsUnz ljdkj vFkok jkT; ljdkj }kjk] lkekU; vFkok fo'k"k vkns'k }kjk lE;d :i ls çkfèkÑr dsUnz vFkok jkT; ljdkj dk dksbZ vfèkdkjh tks bLiDVj d jSd ls uhps dk ugha gS] vFkok dsUnz ljdkj }kjk çkfèkÑr ljdkjh rsy dEiuh dk vfèkdkjh tks foØ; vfèkdkjh d jSd ls uhps dk ugha gS] bl vkns'k vFkok blds vèkhu fn, x, fdlh vU; vkns'k dk lE;d vuqikyu lqfuf{kr djus dh nf"V ls%*
>
> *(a) fdlh iVkfy;e mRikn d ifjogu vFkok HkaMkj.k d fy, mi;kx fd, x, vFkok mi;kx fd, tku ;kX; fdlh oLrq vFkok okgu dk jkd ldrk gS vkSj ryk'kh y ldrk gS]*
>
> *(b) fdlh LFkku dh ryk'kh d fy, ços'k dj ldrk gS]*

(c) dVujk vkj vFkok midj.kk tl flyMjk] xl flyMj okYok] ç'kj jxyVjk vkj lhyk d lkFk rjy cuk, x, iVkfy;e xl d LVkd dk tCr dj ldrk g ftud lcèk e mld ikl ;g fo'okl dju dk dkj.k g fd bl vkn'k dk mYy?ku fd;k x;k g vFkok fd;k tk jgk g vFkok fd;k tku okyk gA

*(2) ljdkjh ry diuh dk foØ; vfèkdkjh tuforj.k ç.kkyh d vèkhu fu;Dr forjdk }kjk vFkok mud }kjk jftLVM fd, x, miHkkDrk }kjk bl vkn'k dk vuikyu lfuf'pr dju d fy, çkfèkÑr fd;k tk,xkA***

7. पूर्वोक्त प्रावधान के पठन पर यह स्पष्ट है कि यथास्थिति केंद्र सरकार द्वारा अथवा राज्य सरकार द्वारा, सामान्य अथवा विशेष आदेश द्वारा सम्यक रूप से प्राधिकृत केंद्र अथवा राज्य सरकार का कोई अधिकारी जो इंस्पेक्टर के नीचे के रैंक का नहीं है अथवा केंद्र सरकार द्वारा प्राधिकृत सरकारी तेल कंपनी का कोई अधिकारी आदेश का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए तलाशी एवं जब्ती को प्रभाव दे सकता है।

8. स्वीकृत रूप से, यहाँ वर्तमान मामले में, ए॰ एस॰ आई॰ के रैंक के अधिकारी द्वारा तलाशी एवं जब्ती को प्रभाव दिया गया है और तद्द्वारा, अधिकारी, जो एल॰ पी॰ जी॰ (आपूर्ति एवं वितरण का विनियमन) आदेश, 2000 के प्रावधानों के अधीन सक्षम नहीं है, द्वारा प्रभाव दिया गया तलाशी एवं जब्ती बिल्कुल अवैध बन जाता है। परिणामस्वरुप, तलाशी एवं जब्ती जो अवैध है के आधार पर आधारित अभियोजन संपोषित नहीं किया जा सकता है। तद्नुसार, दिनांक 9.6.2011 के संज्ञान लेने वाले आदेश सहित सिधगोरा पी॰ एस॰ केस सं॰ 49 वर्ष 2011 का संपूर्ण दांडिक मामला एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

9. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

झारखंड राज्य एवं अन्य

cuke

मंजू सूरी एवं एक अन्य

L.P.A. No. 135 of 2012. Decided on 3rd January, 2013.

परिसीमा अधिनियम, 1963—धारा 5—अपील–विलंब–माफी–एल॰ पी॰ ए॰ दाखिल करने में 816 दिनों का विलंब–सरकारी मशीनरी और इसके अभिकरणों में कोई सुधार नहीं हुआ है–ऐसे मामलों में भी, जहाँ उक्त निर्णय विधि के विपरीत हैं, निर्णयों को चुनौती देने में विलंब ने न्यायालयों के लिए बड़ी समस्या सृजित किया है–यदि ऐसे निर्णयों के विरुद्ध अपीलों को खारिज किया जाता है, विपरीत निर्णय अंतिमता प्राप्त कर लेंगे और संपूर्ण प्रक्रिया असमधान्य हो जाएगी–त्रुटिकर्ता की ओर से व्यपगमन अनवधानता के कारण हो सकती है किंतु जानबूझकर और प्रेरित कारण से ऐसा करने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है–जब विधि की तकनीकी पेचीदगियाँ न्याय के सामने होती है, तब न्याय अभिभावी होना चाहिए–10,000/- रुपयों के वाद व्यय के भुगतान के अध्यधीन एल॰ पी॰ ए॰ दाखिल करने में विलंब को माफ किया गया। (पैराएँ 2 एवं 3)

निर्णयज विधि.–(2012) 3 SCC 563—Referred.

अधिवक्तागण.–J.C. to G.P.-IV, For the Appellants; Mr. Saurav Arun, For the Respondents.

आदेश

विलंब की माफी के लिए आवेदन पर अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया। अपील दाखिल करने में 816 दिनों का अत्यधिक विलंब हुआ है और, इसलिए, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता को गंभीर आपत्ति है। उन्होंने **महा डाकपाल एवं अन्य बनाम लिविंग मीडिया इंडिया लिमिटेड एवं एक अन्य, (2012)3 SCC 563,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर विश्वास किया है। उक्त निर्णय में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने संप्रेक्षित किया है कि सत्यभासी और स्वीकार्य स्पष्टीकरण की अनुपस्थिति में, मात्र इसलिए कि सरकार अथवा सरकार का एक अंग माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष पक्ष है, यांत्रिक रूप से विलंब माफ नहीं करना है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैराग्राफ 28 में आगे संप्रेक्षित किया कि यद्यपि हम इस तथ्य से अवगत हैं कि विलंब की माफी के मामले में जब घोर उपेक्षा अथवा जानबूझ कर निष्क्रियता अथवा सद्भाव की कमी नहीं हो, सारभूत न्याय को आगे ले जाने के लिए उदारवादी रियायत दी जानी होगी और उक्त मामले के तथ्यों में संप्रेक्षित और अभिनिर्धारित किया कि इन तथ्यों और परिस्थितियों में, विभाग अनेक पूर्व निर्णयों का लाभ नहीं ले सकता है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि उपयोग की जा रही तथा उपलब्ध आधुनिक प्रौद्योगिकियों की दृष्टि में अवैयक्तिक मशीनरी और अनेक नोट लिखने की विरासत में पायी गयी नौकरशाही पद्धति के कारण दावा स्वीकार नहीं किया जा सकता है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आगे संप्रेक्षित किया कि परिसीमा की विधि नि:संदेह सरकार सहित सबों को बांधती है।

2. हमारा सुविचारित मत है कि न्यायालयों ने ऐसे मामलों में, जब अधिकारियों के विरुद्ध पारित अनेक अवक्षेपों के बावजूद अत्यधिक विलंब के बाद याचिकाओं अथवा अपीलों को दाखिल किया जाता है, सरकार अथवा सरकारी मशीनरी के रुख के बारे में अनेक बार संप्रेक्षण किया है। सरकारी मशीनरी और इसके अभिकरणों में कोई सुधार नहीं हुआ है। इसने ऐसे मामलों में भी, जहाँ उक्त निर्णय विधि के विपरीत है और कुछ उच्च न्यायालयों के वृहत पीठ के निर्णयों के भी विरुद्ध हैं और सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों के भी विपरीत हैं, निर्णयों को चुनौती देने में विलंब के कारण न्यायालयों के लिए बड़ी समस्या सृजित किया है। यदि ऐसे निर्णयों के विरुद्ध अपीलों को खारिज किया जाता है, विपरीत निर्णय अंतिमता प्राप्त कर लेंगे और उसका परिणाम संपूर्ण प्रक्रिया को असमाधान्य बनाते हुए दो विपरीत निर्णयों को अंतिमता देने में हो सकता है। त्रुटिकर्ता की ओर से व्यपगमन अनवधानता के कारण हो सकती है किंतु जानबूझकर और प्रेरित कारण से ऐसा करने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है जब मामला उसी मशीनरी के भाग से संबंधित है जो विलंब के कारण खारिजी का लाभ पाता है। अत:, प्रत्येक मामले पर उस मामले के तथ्यों के अनुसार विचार किए जाने की आवश्यकता है और हम पैराग्राफ 28 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के संप्रेक्षण की मदद ले सकते हैं जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि सारभूत न्याय को आगे ले जाने के लिए उदारवादी रियायत देना होगा। हम इस बात से भी अवगत हैं कि विधि सुनिश्चित है कि जब विधि की तकनीकी पेचीदगियाँ न्याय के सामने होती है, तब न्याय अभिभावी होना चाहिए।

3. उक्त कारणों की दृष्टि में, मामले के तथ्यों में, जिन्हें विस्तारपूर्वक दिया गया है, इस एल॰ पी॰ ए॰ को दाखिल करने में विलंब को माफ करना होगा, किंतु, 10,000/- रुपयों के व्यय के भुगतान पर जिसका भुगतान राज्य द्वारा पहले प्रत्यर्थीगण को किया जाएगा और जो एल॰ पी॰ ए॰ दाखिल करने में विलंब कारित करने के लिए दोषी व्यक्ति से वसूल की जाएगी। हम इसे स्पष्ट कर रहे हैं कि केवल 10,000/- रु॰ के भुगतान पर अपील ग्रहण की जाएगी जिसका भुगतान दिनांक 4 फरवरी, 2013 तक अथवा इसके पहले करना होगा।

4. उक्त शर्त के अध्यधीन विलंब माफ किया जाता है। आई॰ ए॰ सं॰ 688 वर्ष 2012 निपटाया जाता है।

5. इस मामले को दिनांक 4 फरवरी, 2013 को रखा जाए। व्यय के भुगतान की रसीद अपीलार्थी द्वारा रजिस्ट्री में दाखिल की जाएगी। गैर भुगतान की स्थिति में आवेदन और एल॰ पी॰ ए॰ न्यायालय को आगे निर्देश बिना खारिज किया जाएगा।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

विजय कुमार रस्तोगी

cuke

झारखंड राज्य निगरानी के माध्यम से एवं अन्य

Cr. M.P. No. 1031 of 2012. Decided on 11th January, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 161, 406, 409, 420, 467, 468 एवं 471/34 सह-पठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 7/13 (i-d)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—सहायक अभियंता द्वारा न्यास का दांडिक भंग, छल एवं षडयंत्र–स्टेडियम के निर्माण के लिए अग्रिम लिया गया सरकारी धन अपने स्थानांतरण के बाद याची के उत्तरवर्ती द्वारा विभाग के पास जमा नहीं किया गया–इसी अभिकथन पर प्राथमिकी दर्ज की गयी जिसने विशेष मामला उद्भूत किया है और इसे संपोषित नहीं किया जा सकता है–पहले के मामले में, याची की ओर से सह-अपराधिता नहीं पायी गयी थी और उसे विमुक्त किया गया था–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 5 से 9)

निर्णयज विधि.–(2001) 6 SCC 181; (2010) 12 SCC 254—Applied.

अधिवक्तागण.–M/s B.P. Pandey, V.K. Tiwary, For the Petitioner; Mr. T.N. Verma, For the State.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान वरीय अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन खूँटी पी॰ एस॰ केस सं॰ 112/2010 से उद्भूत होने वाले विशेष केस सं॰ 59/2010 की प्राथमिकी के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है जिसे भारतीय दंड संहिता की धाराओं 161, 406, 409, 420, 467, 468, 471/34 के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7/13 (i-d) के अधीन भी संस्थापित किया गया है।

3. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान वरीय अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि योजना के अधीन विभागीय रूप से टोर्पा, खूँटी में स्टेडियम का निर्माण किया जाना था। इस याची ने सहायक अभियंता होने के नाते स्टेडियम के निर्माण के लिए कनीय अभियंता को चेक के रूप में 50 लाख रुपयों की राशि का अग्रिम दिया। एक या दूसरे कारण से काम रूक गया था। इस बीच, याची का वहाँ से स्थानांतरण हो गया किंतु कनीय अभियंता ने विभाग के पास उक्त राशि को जमा नहीं किया था। बाद में, कनीय अभियंता का भी स्थानांतरण हो गया और तब राँची (कोतवाली) पी॰ एस॰ केस सं॰ 411/2010 के रूप में मामला दर्ज किया गया था। उस मामले का अन्वेषण किया गया था, जिसके द्वारा अन्वेषण अधिकारी ने केवल कनीय अभियंता की ओर से सह-अपराधिता पाया था जबकि इस याची की ओर से

सह–अपराधिता नहीं पायी गयी थी और, इसलिए, याची को अभियोग से विमुक्त करते हुए फाइनल फॉर्म दाखिल किया गया था। कालक्रम में, जब कनीय अभियंता ने उक्त राशि को जमा नहीं किया था, उसके विरुद्ध विभागीय कार्यवाही आरंभ करने का निर्देश दिया गया था। साथ ही, न केवल उक्त कनीय अभियंता के विरुद्ध बल्कि इस याची और अन्य अभियंताओं के विरुद्ध भी भारतीय दंड संहिता की धाराओं 161, 406, 409, 420, 467, 468, 471/34 के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7/13 (i-d) के अधीन भी खूँटी पी॰ एस॰ केस सं॰ 112/2010 के रूप में प्राथमिकी भी दर्ज की गयी थी।

4. कालक्रम में, उस मामले को निगरानी न्यायालय के पास अंतरित किया गया था ताकि निगरानी विभाग अभिकथनों के उसी संवर्ग, पर, जो राँची में दर्ज पूर्विक मामले के विषय वस्तु थे, मामले का अन्वेषण अपने हाथ में ले सके। तद्नुसार, विशेष केस सं॰ 59/2010 दर्ज किया गया था जिसे **टी॰ टी॰ एंटोनी बनाम केरल राज्य एवं अन्य, (2001)6 SCC 181** में और **बाबूभाई बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य, (2010)12 SCC 254,** में दिए गए निर्णयों की दृष्टि में पोषित किए जाने की अनुमति नहीं दी गयी थी। अत:, विशेष केस सं॰ 59/2010 को उद्भूत करने वाले द्वितीय मामले खूँटी पी॰ एस॰ केस सं॰ 112/2010 को अभिखंडित किया जाए।

5. प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है, जिसमें प्रत्येक तथ्य, जिनका कथन ऊपर किया गया है, स्वीकार किया गया है। किंतु, इस अभिवचन पर कि पूर्विक राँची (कोतवाली) पी॰ एस॰ केस सं॰ 411/2010 योजना जिसके अधीन टोर्पा–खूँटी में स्टेडियम का निर्माण किया जाना था सहित अनेक योजनाओं में की गयी अवैधता के संबंध में भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 409 के अधीन अपराध के लिए संस्थापित किया गया था जबकि वर्तमान खूँटी पी॰ एस॰ केस सं॰ 112/2010, जिसने विशेष केस सं॰ 59/2010 को उद्भूत किया है, विशेषत: योजना जिसके अधीन टोर्पा–खूँटी में स्टेडियम का निर्माण किया जाना था के लिए दर्ज किया गया था, इस मामले को **टी॰ टी॰ एंटोनी बनाम केरल राज्य एवं अन्य और बाबूभाई बनाम गुजरात राज्य (ऊपर)** के मामले से सुभिन्न करने का प्रयास किया गया है।

6. राज्य की ओर से दाखिल प्रति शपथपत्र में दिया गया वह बयान इस मामले को उक्त निर्दिष्ट मामलों में अधिकथित निर्णयाधार से सुभिन्न नहीं करता है। स्वीकृत रूप से, इस मामले में, जिसे राँची (कोतवाली) पी॰ एस॰ केस सं॰ 411/2010 के रूप में दर्ज किया गया था, याची की ओर से सह–अपराधिता नहीं पायी गयी थी और, इसलिए, उसे अभियोग से विमुक्त करते हुए फाइनल फॉर्म दाखिल किया गया था।

7. उस मामले में, अभिकथन यह था कि इस याची ने सहायक अभियंता होने के नाते कनीय अभियंता को चेक के रूप में 50 लाख रुपयों की अग्रिम राशि को दिया था जिसने न तो स्टेडियम का निर्माण पूरा किया और न ही विभाग के समक्ष उक्त राशि को जमा किया। इसी अभिकथन के लिए बाद में याची के विरुद्ध खूँटी पी॰ एस॰ केस सं॰ 112/2010 दर्ज किया गया था और उस स्थिति के अधीन यदि अनेक योजनाओं के संबंध में राँची (कोतवाली) पी॰ एस॰ केस सं॰ 411/2010 के रूप में मामला पहले दर्ज किया गया था, जबकि वर्तमान खूँटी पी॰ एस॰ केस सं॰ 112/2010 केवल उस योजना जिसके अधीन स्टेडियम का निर्माण किया जाना था के लिए दर्ज किया गया था, यह शायद ही कोई भिन्नता बनाता है।

8. इस प्रकार, वर्तमान मामला **टी॰ टी॰ एंटोनी बनाम केरल राज्य एवं अन्य (ऊपर)** और **बाबूभाई बनाम गुजरात राज्य (ऊपर)** के मामलों में अधिकथित निर्णयाधार से पूरी तरह आच्छादित है क्योंकि एक ही अभिकथन के लिए खूँटी पी॰ एस॰ केस सं॰ 112/2010, जिसने विशेष मामला सं॰ 59/2010 को उद्भूत किया है, दर्ज किया गया है और तद्द्वारा, इसे संपोषित नहीं किया जा सकता है और,

इसलिए, खूँटी पी॰ एस॰ केस सं॰ 112/2010 जिसने विशेष केस सं॰ 59/2010 को उद्भूत किया है, की प्राथमिकी एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है जहाँ तक इस याची का संबंध है।

9. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

इस्लाम अंसारी

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (DB) No. 1067 of 2012. Decided on 9th January, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 364, 387 एवं 458—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—घात लगाकर गृह अतिचार, अपहरण और फिरौती की मांग–दोषसिद्धि–दंडादेश का निलंबन–अपीलार्थी विचारण के दौरान फरार रहा–अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य और अपराध में अपीलार्थी की महत्वपूर्ण भूमिका की दृष्टि में, न्यायालय अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दंडादेश का निलंबन करने के लिए इच्छुक नहीं है–दंडादेश के निलंबन के लिए प्रार्थना अस्वीकार की गयी। (पैराएँ 3 से 5)

अधिवक्तागण.–Mr. R.R. Ravidas, For the Appellant; A.P.P., For the Respondent.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–वर्तमान अपीलार्थी को विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 458 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दस वर्षों का कारावास, भारतीय दंड संहिता की धारा 387 के अधीन पाँच वर्षों का कठोर कारावास भुगतने के लिए दंड दिया गया है और उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 364 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आजीवन कारावास भुगतने का भी दंडादेश दिया गया है और समस्त दंडादेशों को साथ-साथ चलने का आदेश दिया गया है।

2. वर्तमान अपील को दिनांक 18 दिसंबर, 2012 के आदेश के तहत पहले ही ग्रहण किया गया है और सत्र विचारण सं॰ 767 वर्ष 1998 (एस॰) के अभिलेख और कार्यवाही को दंडादेश के निलंबन के लिए प्रार्थना पर विचार करने के पहले विचारण न्यायालय से मंगवाया गया था। सत्र विचारण सं॰ 767 वर्ष 1998 (एस॰) के अभिलेख और कार्यवाही को प्राप्त किया गया है और हमने इसका परिशीलन किया है।

3. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि वर्तमान अपीलार्थी अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 5, अ॰ सा॰ 6 और अ॰ सा॰ 7 के अभिसाक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि वर्तमान अपीलार्थी–अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है। विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा यह भी निवेदन किया गया है कि जैसा अभियोजन द्वारा अभिकथित किया गया है, अपराध में एक से अधिक अभियुक्त अंतर्ग्रस्त हैं किंतु वर्तमान अपीलार्थी विचारण के दौरान फरार था और, इसलिए, उसका विचारण पृथक कर दिया गया था। वर्तमान अपीलार्थी सात वर्षों बाद अर्थात् दिनांक 30 अक्टूबर, 2011 को गिरफ्तार किया गया था। यह अपहरण और फिरौती राशि की मांग का मामला है जो पहले एक लाख रुपया थी और अंततः इसे 60,000/- रुपया पर तय किया गया था और अभियुक्तगण ने बंदूकों की मांग भी की थी।

4. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि सह-अभियुक्त, जिसे दोषसिद्ध किया गया है, ने अपील दाखिल किया है और दंडादेश के निलंबन के लिए उसकी प्रार्थना को इस न्यायालय द्वारा मंजूर किया गया है और, इसलिए, अपीलार्थी के दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना को भी मंजूर किया जा सकता है। हम अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए और अपराध में अपीलार्थी की महत्वपूर्ण भूमिका को भी देखते हुए और इसे भी दृष्टि में रखते हुए कि वह लगभग सात वर्षों तक विचारण के दौरान फरार था, इस तर्क को स्वीकार नहीं कर रहे हैं।

5. अभिलेख पर मौजूद इन साक्ष्यों की दृष्टि में और अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और जिस तरीके से वर्तमान अपीलार्थी अपराध में अंतर्ग्रस्त है जैसा अभियोजन द्वारा अभिकथित किया गया है, को देखते हुए हम विचारण न्यायालय द्वारा उसको अधिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं। अत: दंडादेश के निलंबन की उसकी प्रार्थना एतद् द्वारा अस्वीकार की जाती है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

डॉ॰ प्रकाश सिंह

cuke

कोल इंडिया लिमिटेड एवं अन्य

L.P.A. No. 273 of 2011. Decided on 2nd January, 2013.

सेवा विधि–विभागीय कार्यवाही–जानबूझकर स्थानांतरण आदेश की अवज्ञा करना और अवकाश बिना अनुपस्थित रहने का अभिकथन–याची का स्थानांतरण आदेश न तो अधर में रखा गया था और न ही वी॰ आर॰ एस॰ स्वीकार किया गया था–याची को विभागीय कार्यवाहियों में से एक में दंड दिया गया है–जब दंड का आदेश चुनौती के अधीन है, अभिकथित अवचार के लिए आरोप-पत्र अभिखंडित करने के लिए आधार नहीं बनता है–प्रत्यर्थीगण को छह माह की अवधि के भीतर विभागीय कार्यवाही विनिश्चित करने का निर्देश दिया गया–याची को असद्भाव और अन्य ताथ्यिक पहलूओं तथा विधिक बिंदुओं सहित अपने समस्त अभिवचनों को अनुशासनिक प्राधिकारी के समक्ष रखने की स्वतंत्रता दी गयी। (पैराएँ 3, 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–M/s Rajiv Ranjan, Krishna Murari, For the Appellant; Mr. Anoop Kumar Mehta, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. अपीलार्थी डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 4567 वर्ष 2008 में पारित दिनांक 12 जुलाई, 2011 के निर्णय के विरुद्ध व्यथित है जिसके द्वारा याची की रिट याचिका को खारिज कर दिया गया है।

3. याची ने दिनांक 26 सितंबर, 2007 के आरोप-पत्र को चुनौती दिया। याची के विरुद्ध दिनांक 18 जुलाई, 2005 को स्थानांतरण आदेश की जानबूझकर अवज्ञा करने और दिनांक 19 जुलाई, 2005 से अवकाश बिना अनुपस्थित रहने का अभिकथन है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि एक डॉक्टर ने आत्महत्या की थी और उसके पुत्र ने प्राथमिकी दर्ज की है जिसमें याची गवाह है और इसलिए प्रबंधन याची से खुश नहीं था। यह निवेदन किया गया है कि याची को वर्ष 2004 में स्थानांतरित

किया गया था और याची ने स्थानांतरण के स्थान पर पद ग्रहण किया था। किंतु, प्राथमिकी दर्ज किए जाने के बाद याची पर दिनांक 18.7.2005 का चेतावनी पत्र तामील किया गया था जिसमें कथन किया गया था कि याची विलंब से कर्तव्य स्थान पर आ रहा है और समय के पहले चला जा रहा है। यह निवेदन भी किया गया है कि याची की पत्नी भी डॉक्टर है और चूँकि याची को केवल 30 कि॰ मी॰ दूर के स्थान पर स्थानांतरित किया गया था, अत: याची पत्नी के साथ रहता था और, इसलिए, वह कर्तव्य स्थल पर आता-जाता था किंतु उस तरह नहीं जैसा प्रबंधन ने अभिकथित किया है अर्थात् देर से जाना और जल्दी आना। चाहे जो भी हो, याची पर दिनांक 14.6.2005 का आरोप पत्र तामील किया गया था और उस जाँच के लंबित रहने के दौरान, उसे दिनांक 14.7.2005 के आदेश के तहत धनबाद से मध्य प्रदेश राज्य में किसी स्थान जो 300 कि॰ मी॰ की दूरी पर है पर स्थानांतरित कर दिया गया था। तब याची ने दिनांक 19 अक्टूबर, 2005 को वी॰ आर॰ एस॰ के लिए आवेदन दिया और ये अनुरोध भी किया कि उसके स्थानांतरण को प्रास्थगित रखा जाय। किंतु, याची का स्थानांतरण न तो प्रास्थगित किया गया था और न ही वी॰ आर॰ एस॰ स्वीकार किया गया था। एक विभागीय कार्यवाही में याची को दंडित किया गया था और उसकी अपील भी खारिज की गयी थी किंतु याची द्वारा पृथक रूप से उन आदेशों को चुनौती दी गयी थी। याची के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया कि याची ने प्रबंधन के जाँच अधिकारी के विरुद्ध असद्भाव का अभिकथन किया है और, इसलिए, याची को कोलकाता में विभागीय कार्यवाही का सामना करने के लिए कहा जा रहा है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, केवल असद्भाव के कारण याची के वी॰ आर॰ एस॰ आवेदन पर विचार नहीं किया जा रहा है और इसलिए, प्रत्यर्थी को याची के वी॰ आर॰ एस॰ आवेदन पर विचार करने का निर्देश दिया जाय। याची ने दिनांक 14.6.2005 के आरोप-पत्र द्वारा आरंभ की गयी कार्यवाही को भी चुनौती दिया है।

4. विद्वान एकल न्यायाधीश ने याची का प्रतिवाद अस्वीकार कर दिया। अत:, एल॰ पी॰ ए॰ दाखिल किया गया है।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद हमारा सुविचारित मत है कि याची विभागीय जाँच का सामना कर रहा है और दिनांक 12 सितंबर, 2007 को याची पर आरोप-पत्र तामील किया गया था और पाँच वर्ष पहले ही बीत गए हैं। वी॰ आर॰ एस॰ अधिकार नहीं है और, इसलिए, विभागीय जाँच के लंबित रहने के दौरान और विशेषत: तब जब याची को विभागीय कार्यवाहियों में से एक में दंड दिया गया है जो दंड आदेश चुनौती के अधीन हो सकता है, हमारा सुविचारित मत है कि अभिकथित अवचार के लिए आरोप-पत्र का अभिखंडन करने के लिए कोई आधार नहीं बनाया गया है। किंतु, हम यह स्पष्ट कर रहे हैं कि याची असद्भाव के अपने अभिवचन सहित समस्त अभिवचनों को विभागीय जाँच में रखने के लिए स्वतंत्र है। जहाँ तक नामित व्यक्तियों का संबंध है, वे अब विभागीय कार्यवाही में नहीं हैं, अत: व्यक्तिगत असद्भाव का प्रश्न शेष नहीं रहता है।

6. उक्त कारणों की दृष्टि में, प्रत्यर्थीगण को इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से छह माह की अवधि के भीतर विभागीय कार्यवाही को विनिश्चित करने का निर्देश दिया जाता है। याची अनुशासनिक प्राधिकारी के समक्ष असद्भाव और अन्य ताथ्यिक पहलू तथा विधिक बिंदुओं सहित अपने समस्त अभिवचनों को रखने के लिए स्वतंत्र होगा, जिसे प्रत्यर्थीगण द्वारा विभागीय कार्यवाही के समापन पर विनिश्चित किया जा सकता है। हम इसे स्पष्ट कर रहे हैं कि हमारे द्वारा ऊपर किए गए संप्रेक्षणों में से कोई भी याची के रास्ते में अथवा प्रत्यर्थी प्रबंधन के पक्ष में नहीं जाएगा। विभागीय कार्यवाही समाप्त करने के बाद प्रत्यर्थीगण अपीलार्थी के वी॰ आर॰ एस॰ आवेदन पर विचार करने के लिए स्वतंत्र होंगे।

7. इन संप्रेक्षणों और निर्देशों के साथ यह एल॰ पी॰ ए॰ निपटाया जाता है।

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

पी॰ ईश्वरन एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1002 of 2009. Decided on 7th January, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406 एवं 420/34—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक भंग एवं छल–सामान्य आशय–संज्ञान–संज्ञान आदेश का अभिखंडन इस आधार पर इप्सित किया जा रहा है कि परिवादी ने सुलह कर लिया है और वह मामले को आगे ले जाने का आशय नहीं रखता है–पक्षों ने मैत्रीपूर्ण ढंग से अपना विवाद सुलझा लिया है जो निजी प्रकृति का था और किसी लोक नीति को अंतर्ग्रस्त नहीं करता था–संज्ञान लेने वाले आदेश सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की गयी–आवेदन अनुज्ञात किया गया।

(पैराएँ 5, 8 से 10)

अधिवक्तागण.–Mr. N.K. Pasari, For the Petitioners; Mr. A.P.P., For the State.

आदेश

तामील रिपोर्ट प्राप्त की गयी है जिसमें रिपोर्ट किया गया है कि वि॰ प॰ सं॰ 2 ने नोटिस स्वीकार करने से इनकार कर दिया।

2. ऐसी स्थिति में, नोटिस को वैध रूप से वि॰ प॰ सं॰ 2 पर तामील किया गया स्वीकार किया जाता है।

3. मामले के गुणागुण पर याचीगण की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

4. यह आवेदन दिनांक 8.4.2005 के आदेश, जिसके द्वारा और जिसके अधीन इन याचीगण, जो मेसर्स शिवसु वाटेक प्रा॰ लि॰, चेन्नई के प्रबंध निदेशक, तकनीकी निदेशक, निदेशक और सहायक महाप्रबंधक हैं, के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406 और 420/34 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया है, सहित परिवाद केस सं॰ C/1228 वर्ष 2003 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

5. दिनांक 8.4.2005 के संज्ञान लेने वाले आदेश सहित संपूर्ण दांडिक मामले का अभिखंडन इस आधार पर इप्सित किया जा रहा है कि परिवादी ने सुलह कर लिया है और, तद्द्वारा, वह मामले को आगे ले जाने का आशय नहीं रखता है और, इसलिए, उसने अवर न्यायालय के समक्ष मामला वापस लेने के लिए आवेदन दाखिल किया किंतु जब कोई आदेश पारित नहीं किया गया था, याचीगण इस न्यायालय के पास आए हैं।

6. परिवादी का मामला जैसा परिवाद याचिका से, प्रतीत होता है, यह है कि परिवादी कंपनी मेसर्स मैकडॉवेल एंड कं॰ लि॰ का फ्रैंचाइजी दिए जाने पर मिनरल वाटर और सोडा के उत्पादन के लिए संयंत्र लगाना चाहता था। संयंत्र लगाने के लिए, परिवादी याचीगण के पास गया, जो मेसर्स शिवसु वाटेक प्रा॰ लि॰, चेन्नई के पदधारीगण है, जिन्होंने परिवादी कंपनी को बताया कि वे कंपनी के लिए संयंत्र स्थापित करेंगे/मशीनरी की आपूर्ति करेंगे। यह वादा करके, याचीगण ने परिवादी कंपनी से 6,50,000/- रुपयों की राशि ली। इस बीच, जब परिवादी कंपनी को पता चला कि याची की कंपनी द्वारा किसी मेसर्स क्लासिक वाटेक को आपूर्ति की गयी मशीनरी निम्नतर गुणवत्ता की है, उसने याची को मशीनरी की आपूर्ति नहीं

करने के लिए कहा बल्कि धन लौटाने के लिए कहा किंतु याचीगण ने धन लौटाने से इनकार कर दिया और, तद्द्वारा, अभिकथित किया गया है कि याचीगण ने छल और न्यास के दांडिक भंग का अपराध किया। ऐसे अभिकथन पर, परिवाद दर्ज किया गया था जिसे परिवाद मामला सं॰ सी॰/1228 वर्ष 2003 के रूप में दर्ज किया गया था और दिनांक 8.4.2005 के आदेश के तहत भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406 और 420/34 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया था जो चुनौती के अधीन है।

7. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री पसारी निवेदन करते हैं कि याचीगण और परिवादी कंपनी के बीच जो भी विवाद था, उसे सुलझा लिया गया है और, इसलिए, परिवाद वापस लेने के लिए परिवादी की ओर से अवर न्यायालय के समक्ष याचिका दाखिल की गयी थी किंतु अवर न्यायालय द्वारा कोई आदेश पारित नहीं किया गया था और, इसलिए, याचीगण ने संज्ञान लेने वाले आदेश सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए इस न्यायालय के पास आए हैं क्योंकि पक्षों के बीच विवाद जो निजी प्रकृति का था और किसी लोक नीति को अंतर्ग्रस्त नहीं करता है।

8. चूँकि, परिवादी की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ है, परिवादी का दृष्टिकोण जाना नहीं जा सका था। किंतु, मामला वापस लेने के आवेदन के परिशीलन से प्रतीत होता है कि परिवादी ने मामला वापस लेने के लिए आवेदन दाखिल किया था जिसमें कार्यवाही छोड़ देने की प्रार्थना की गयी थी जो स्वयं उपदर्शित करता है कि पक्षों ने अपना विवाद मैत्रीपूर्ण रूप से सुलझा लिया है, जो यह निजी प्रकृति का था और किसी लोक नीति को अंतर्ग्रस्त नहीं करता था।

9. मामले के इस दृष्टिकोण में, दिनांक 8.4.2005 के संज्ञान लेने वाले आदेश सहित परिवाद मामला सी॰/1228 वर्ष 2003 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की जाती है।

10. परिणामस्वरुप यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

सेंट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड

cuke

हीरा देवी

L.P.A. No. 234 of 2012. Decided on 2nd January, 2013.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–धनीय लाभ–अनुकंपा पर नियुक्ति के बदले धनीय लाभ की मंजूरी–यदि याची ने गलत धारणा के अधीन कोई गलती की, यह नहीं कहा जा सकता है कि वह वैकल्पिक उपचार पाने की इच्छुक नहीं थी जो याची के लिए कम लाभदायी है–यदि एकल न्यायाधीश ने योजना के अधीन धनीय लाभ के लिए याची को अनुतोष अनुज्ञात किया, यह अनुकंपा पर नियुक्ति इप्सित करने वाले आवेदन को धनीय लाभ के लिए आवेदन के संपरिवर्तन के कारण हो सकता है–आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप का कारण नहीं है–याची को अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए दाखिल आवेदन की तिथि से समस्त धनीय लाभ दिया जाएगा।

(पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Das, For the Appellant; None, For the Respondents.

आदेश

अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता सुने गए। प्रत्यर्थी पर नोटिस तामील किए जाने के बाद भी प्रत्यर्थी के लिए कोई उपस्थित नहीं हुआ।

2. अपीलार्थी दिनांक 17 अक्टूबर, 2011 के निर्णय से व्यथित है जिसके द्वारा रिट याची की रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 4438 वर्ष 2010 याची को इस अनुतोष के साथ निपटायी गयी है कि याची को याची के पति की मृत्यु की तिथि से धनीय लाभ का भुगतान किया जाएगा।

3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, याची के पति की मृत्यु वर्ष 1998 में हो गयी और जब उसने अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए आवेदन दिया, वह 45 वर्ष से अधिक आयु की थी, और इसलिए, उसे अनुकंपा पर नियुक्ति नहीं दी जा सकती थी और उसे दिनांक 8 अप्रिल, 1995 के मार्गदर्शक सिद्धांतों के अधीन धनीय लाभ के लिए आवेदन देने की सलाह दी गयी थी जिसमें यह प्रावधानित किया गया है कि मासिक आधार पर उस माह, जिसमें मृतक कर्मचारी की विधवा/महिला आश्रित द्वारा आवेदन दिया गया है, के अगले माह के प्रथम दिन से कर्मचारी की महिला आश्रित को भुगतान किया जाएगा। ऐसी सलाह के बावजूद, याची ने धनीय लाभ के लिए कोई आवेदन नहीं दिया था और रिट याचिका दाखिल किया था, जिसे याची के पति की मृत्यु की तिथि से धनीय लाभ का अनुतोष देते हुए दिनांक 17 अक्टूबर, 2011 के निर्णय द्वारा निपटाया गया है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि मार्गदर्शक सिद्धांतों की दृष्टि में धनीय लाभ केवल धनीय लाभ के लिए आवेदन की प्रस्तुति की तिथि से याची को दिया जा सकता है। अत:, अपीलार्थी की शिकायत है कि याची को याची के पति की मृत्यु की तिथि से धनीय लाभ नहीं दिया जा सकता है।

4. हमने अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन पर विचार किया है और दिनांक 17 अक्टूबर, 2011 के निर्णय में दिए गए कारणों और योजना का भी परिशीलन किया है। योजना की संपूर्णता से यह प्रतीत होता है कि आश्रित और विशेषत: मृतक कर्मचारी की महिला आश्रित दो लाभों की हकदार है जो वैकल्पिक है–पहला अनुकंपा पर नियुक्ति और दूसरा धनीय लाभ। यह प्रतीत होता है कि कर्मचारी की विधवा याची इस धारणा के अधीन थी कि वह अनुकंपा पर नियुक्ति पा सकती है जो याची को अधिक लाभदायी प्रतीत होता है और उसने वर्ष 2010 में रिट याचिका दाखिल करके भी अनुकंपा पर नियुक्ति के अपने उपचार का अनुसरण किया। अत: यदि याची ने गलत धारणा के अधीन कोई गलती की, यह नहीं कहा जा सकता है कि वह वैकल्पिक उपचार की इच्छुक नहीं है जो याची के लिए कम लाभदायी है। अत: मामले के तथ्यों में, हमारा दृष्टिकोण है कि यदि विद्वान एकल न्यायाधीश ने योजना के अधीन धनीय लाभ के लिए याची को अनुतोष अनुज्ञात किया है, ऐसा केवल अनुकंपा पर नियुक्ति इप्सित करने वाले आवेदन का धनीय लाभ के लिए आवेदन में संपरिवर्तन के कारण हो सकता है।

5. उक्त कारणों की दृष्टि में, हमारा सुविचारित मत है कि आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप का कारण नहीं है। किंतु, याची को अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए दाखिल आवेदन की तिथि से समस्त धनीय लाभ दिया जाएगा।

इस उपांतरण के साथ इस एल॰ पी॰ ए॰ को निपटाया जाता है।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

श्री कृष्ण कुमार खवरे

cuke

आचार्य विनोबा भावे विश्वविद्यालय एवं अन्य

WP(S) No. 5457 of 2004. Decided on 2nd January, 2013.

सेवा विधि–वेतन–अप्रिल, 1981 से वेतन का भुगतान नहीं किया गया–पटना उच्च न्यायालय के समक्ष याची द्वारा दाखिल की गयी पहली याचिका खारिज कर दी गयी थी–याची को किसी रिक्त पद पर नियुक्त नहीं किया गया था और शासी निकाय छह माह से अधिक के बाद ऐसे पद के विरुद्ध नियुक्ति करने के लिए सक्षम नहीं था–पुस्तकालय सहायक के पद पर अप्रिल, 1981 से वेतन के भुगतान का दावा किसी विधिक आधार पर संपोषणीय नहीं है–रिट आवेदन खारिज। (पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Manish Kumar, For the Petitioner; Mrs. I. Sen Choudhary, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह रिट याची वर्ष 2004 में वर्तमान रिट याचिका में याची को वेतन जिसका भुगतान इस तथ्य के बावजूद जैसा याची द्वारा अभिकथित किया गया है, कि वह लगातार पुस्तकालय सहायक के पद पर बालानंद संस्कृत महाविद्यालय, देवघर में वर्ग III कर्मचारी के रूप में कार्यरत है, अप्रिल, 1981 से आज की तिथि तक नहीं किया गया है, का भुगतान करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश देने के लिए इस न्यायालय के पास आया है।

3. याची पहले अप्रिल, 1981 से वेतन के भुगतान के इसी और समरुप अनुतोष के लिए सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 2867 वर्ष 2000 (P) में पटना उच्च न्यायालय के समक्ष गया था। याची का मामला यह है कि उसे महाविद्यालय, जो वर्ष 1982 में घटक बन गया, के शासी निकाय द्वारा वर्ष 1981 में पुस्तकालय सहायक के पद पर नियुक्त किया गया था और याची के अधिवक्ता के निवेदन के मुताबिक मंजूर पद पर प्रबंधकीय कमिटि द्वारा नियुक्त कर्मचारियों को विश्वविद्यालय की सेवा में ले लिया जाएगा। वह रिट याचिका दिनांक 19 अगस्त, 2002 के आदेश के तहत याची को पटना उच्च न्यायालय के पास जाने की स्वतंत्रता देते हुए इस आधार पर खारिज कर दी गयी थी कि इस न्यायालय को इस रिट याचिका को ग्रहण करने की अधिकारिता नहीं है क्योंकि प्रश्नगत विश्वविद्यालय बिहार राज्य के अंतर्गत दरभंगा में अवस्थित था और महाविद्यालय, जिसमें याची अभिकथित रूप से कार्यरत था, भी उक्त विश्वविद्यालय के अंतर्गत आता था। याची ने रजिस्ट्रार के हस्ताक्षराधीन दिनांक 1 सितंबर, 1998 के कार्यालय आदेश, जैसा परिशिष्ट-5 में अंतर्विष्ट है, पर विश्वास किया है जिसके अनुसार याची की सेवा दिनांक 1 अप्रिल, 1998 के प्रभाव से पुस्तकालय सहायक के मंजूर रिक्त पद पर समायोजित की जानी थी।

4. प्रत्यर्थी आचार्य बिनोबा भावे विश्वविद्यालय, जिसके अंतर्गत अब उक्त महाविद्यालय आता है, उपस्थित हुआ है और अपना प्रतिशपथपत्र दाखिल किया है। प्रत्यर्थी ने स्पष्टत: कथन किया कि दिनांक 10.8.1999 का पत्र सं॰ S.U.-32/99-3743/RS राज्यपाल सचिवालय से के॰ एस॰ डी॰ एस॰ विश्वविद्यालय के कुलपति, दरभंगा को भेजा गया था जिसमें स्पष्टत: उपदर्शित किया गया था कि याची को पुस्तकालय सहायक का वेतनमान और वेतन प्रदान करने का कारण नहीं है। इसे पुन: दिनांक 5 नवंबर, 1999 के

पत्र परिशिष्ट-B के तहत, संसूचित किया गया था और याची पाँच वर्ष बीतने के बाद इस न्यायालय के समक्ष आया है और वर्तमान रिट याचिका में उक्त पत्र को चुनौती नहीं दी गयी है। आचार्य बिनोबा भावे विश्वविद्यालय का स्पष्ट बयान है कि राज्य के विभाजन और उक्त बालानंद संस्कृत महाविद्यालय, देवघर को वर्तमान आचार्य बिनोबा भावे विश्वविद्यालय को अंतरित करने के बाद याची का नाम उक्त बालानंद संस्कृत महाविद्यालय, देवघर के कर्मचारियों की सूची में नहीं आता है। प्रत्यर्थीगण का आगे मामला यह है कि याची का दावा बिल्कुल अमान्य है क्योंकि उसे किसी मंजूर रिक्त पद पर नियुक्ति नहीं किया गया था और शासी निकाय छह माह से अधिक समय के बाद ऐसे पद के विरुद्ध नियुक्ति करने के लिए सक्षम नहीं था। प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया कि उसकी पहली रिट याचिका भी इस न्यायालय द्वारा ग्रहण नहीं की गयी थी और इसने अंतिमता प्राप्त कर लिया है।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने प्रमुख सचिव, माननीय कुलाधिपति को संबोधित रजिस्ट्रार के॰ एस॰ डी॰ एस॰ विश्वविद्यालय, दरभंगा द्वारा जारी दिनांक 18 जून, 2010 के पत्र को भी प्रस्तुत किया है किंतु जो स्वयं उपदर्शित करता है कि विश्वविद्यालय ने इसे स्पष्ट किया है कि उक्त विश्वविद्यालय द्वारा याची को वेतन का कोई भुगतान कभी नहीं किया गया था। उक्त विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार द्वारा जारी बताया गया दिनांक 1 अप्रिल, 1998 का उक्त पत्र (परिशिष्ट-5) को चांसलर सचिवालय के दिनांक 1 नवंबर, 2009 के पत्र की दृष्टि में अविद्यमान के रूप में माना गया है क्योंकि उक्त पत्र बिहार विश्वविद्यालय अधिनियम, 1976 की धारा 35 के उल्लंघन में जारी किया गया था।

6. अत:, पूर्वोक्त तथ्यों से यह प्रतीत होता है कि बालानंद संस्कृत महाविद्यालय, देवघर में पुस्तकालय सहायक के पद पर अप्रिल, 1981 से वेतन के भुगतान के लिए याची का दावा किसी विधिक आधार पर संपोषणीय नहीं है क्योंकि उक्त महाविद्यालय में किसी रिक्त मंजूर पद पर याची को कभी नियुक्त नहीं किया गया है जैसा उसके द्वारा दावा किया गया है। विश्वविद्यालय के प्रति शपथपत्र के परिशिष्ट-A के तहत उसको संसूचित दिनांक 10 अगस्त, 1999 का चांसलर का उक्त पत्र, जिसे स्वयं सिंतबर, 1999 में ही संसूचित किया गया था, को वर्तमान रिट याचिका में याची द्वारा चुनौती भी नहीं दी गयी है। अत:, यह प्रतीत होता है कि पुस्तकालय सहायक के पद पर स्वयं अप्रिल, 1981 से उसको वेतन का भुगतान करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश दिए जाने का दावा करते हुए वर्तमान मामला किसी विधिक और ताथ्यिक रूप से संपोषणीय अधिकारों पर आधारित नहीं है जैसा याची ने दावा किया है।

मैं इस रिट याचिका में गुणागुण नहीं पाता हूँ जिसे तद्नुसार खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn] U;k;efr

दीपंकर हलदर

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 749 of 2010. Decided on 9th January, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 498A सह-पठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3/4—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973— धारा 482—क्रूरता–संज्ञान–दहेज की मांग करने का और दहेज की मांग पूरी नहीं किए जाने के कारण क्रूरता के अध्यधीन किए जाने का अभिकथन

है–याची की ओर से किया गया निवेदन कि वर्तमान मामला द्वेषपूर्ण है क्योंकि परिवाद मामला तलाक याचिका दाखिल किए जाने पर दाखिल किया गया है, सारहीन है क्योंकि तलाक याचिका दाखिल करने के लिए बिल्कुल भिन्न वाद हेतुक होगा जिसका भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के अधीन और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अधीन भी दर्ज मामले पर प्रभाव नहीं होगा–संज्ञान लेने वाले आदेश में अवैधता नहीं है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 8 से 11)

निर्णयज विधि.–(2007)12 SCC 369—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Kaushik Sarkhel, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता और राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन दिनांक 11.1.2010 के आदेश, जिसके द्वारा और जिसके अधीन तत्कालीन न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद ने भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अधीन भी याची के विरुद्ध संज्ञान लिया, सहित सी॰ पी॰ केस सं॰ 1377 वर्ष 2009 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता संज्ञान लेने वाले आदेश का विरोध इस कारण से दोषपूर्ण होने के रूप में कर रहे हैं कि दो परिवादों को दाखिल किया गया है, एक विरोधी पक्षकार सं॰ 2 द्वारा और दूसरा विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के बहन द्वारा याची के भाई के विरुद्ध जिसने विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की छोटी बहन से विवाह किया, और कि दोनों परिवाद अक्षरश: एक ही है और तद्द्वारा यह कहा जा सकता है कि वर्तमान अभियोजन द्वेषपूर्वक आरंभ किया गया है।

4. आगे निवेदन किया गया था कि इस याची ने इस आवेदन को दाखिल किए जाने के पहले संबंधित मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी और संबंधित पुलिस थाना के प्रभारी-अधिकारी के समक्ष सूचनात्मक याचिका दाखिल किया था जिसमें कथन किया गया था कि उसे विरोधी पक्षकार सं॰ 2 द्वारा मामले में झूठा आलिप्त किया जा सकता है।

5. आगे निवेदन किया गया था कि परिवाद दर्ज करने के पहले याची ने विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विरुद्ध तलाक आवेदन दाखिल किया है और तद्द्वारा कोई भी निश्चय ही इस निष्कर्ष पर आ सकता है कि वर्तमान अभियोजन द्वेष से कलंकित है और इसलिए, यह अभिखंडित किए जाने योग्य है।

6. इसके विरुद्ध, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि परिवाद में दहेज मांग करने और दहेज मांग पूरी नहीं किए जाने के कारण क्रूरता के अध्यधीन करने का अभिकथन है और तद्द्वारा मामला बनाया गया है जिसके अधीन अपराधों का संज्ञान लिया गया है और इसलिए, संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडन किए जाने की अपेक्षा कभी नहीं करता है।

7. मैं विरोधी पक्ष की ओर से किए गए निवेदन में सार पाता हूँ।

8. परिवाद के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि दहेज मांग करने और दहेज की मांग पूरी नहीं किए जाने के कारण क्रूरता के अध्यधीन करने का अभिकथन है और तद्द्वारा न्यायालय भारतीय दंड संहिता

की धारा 498A के अधीन और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अधीन भी अपराध का संज्ञान लेने में अवैधता करता प्रतीत नहीं होता है।

9. जहाँ तक याची की ओर से किए गए निवेदन कि वर्तमान आवेदन द्वेषपूर्ण है क्योंकि परिवाद मामला तलाक याचिका दाखिल करने पर दाखिल किया गया है, का संबंध हैं, यह सारहीन है क्योंकि तलाक याचिका दाखिल करने के लिए बिल्कुल भिन्न वाद हेतुक होगा जिसका भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अधीन भी दर्ज मामले पर प्रभाव नहीं होगा।

10. इस संबंध में, मैं **प्रतिभा बनाम रामेश्वरी देवी एवं अन्य, (2007)12 SCC 369,** मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट कर सकता हूँ।

11. इस प्रकार, मैं इस आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ। अतः, यह आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o ç'kkr dekj] U;k;efrx.k

सरिता देवी एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (DB) No. 928 of 2012. Decided on 11th December, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—हत्या–दंडादेश के निलंबन के लिए आवेदन–मृतक महिला को अपीलार्थीगण/अभियुक्तगण के घर में जलाया गया था–दांडिक अपील लंबित है–तथ्य अपीलार्थीगण/अभियुक्तगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला गठित करते हैं–अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसमें अपीलार्थीगण/अभियुक्तगण अपराध में अंतर्ग्रस्त हैं को देखते हुए न्यायालय दंडादेश निलंबित करने का इच्छुक नहीं है–दंडादेश के निलंबन के लिए आवेदन अस्वीकार किया गया। (पैराएँ 3 से 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Ananda Sen, For the Appellants; Mr. Amresh Kumar, For the Respondent.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति के मुताबिक.–वर्तमान अपील दिनांक 7 नवंबर, 2012 के आदेश के तहत पहले ही ग्रहण की गयी है। सत्र विचारण सं॰ 337 वर्ष 2007 के अभिलेख और कार्यवाही को विचारण न्यायालय से मंगाया गया था ताकि दंडादेश के निलंबन के लिए तर्क का अधिमूल्यन किया जा सके।

2. हमने सत्र विचारण सं॰ 337 वर्ष 2007 में सत्र न्यायाधीश, गढ़वा द्वारा इन अपीलार्थीगण को अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुना है।

3. हमने अभिलेख और कार्यवाही का परिशीलन किया है। अपीलार्थीगण के अधिवक्ता ने अभियोजन गवाहों के अभिसाक्ष्यों पर आधारित बेहतरीन तर्कों के साथ विस्तारपूर्वक तर्क किया। अभिलेख पर गवाहों के साक्ष्य को देखते हुए दोनों अपीलार्थीगण/अभियुक्तगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर साक्ष्य का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि:–

> *(i) ?kVuk fnukd 22 eb] 2007 dk çkr% 7 ct gb gA çkFkfedh fnukd 22 eb] 2007 dk çkr% 10 ct nt dh x;h FkhA vfHk;tu d ekey d erkfcd erdk bn noh dk vihykFkhx.k@vfHk;Drx.k d ?kj e tyk;k x;k FkkA*

(ii) vfHk;ktu dk ekeyk ;g g fd tc mlI uxj mÙrjh e jQjy vLirky yk;k x;k Fkk] og gk'k e Fkh vkj mlu tyu migfr;k ik;h Fkh vkj vkbO vkO (vO lkO 13) d le{k viuk Qnc;ku fn;k Fkk ftle mlu nkuk vihykFkhx.k@vfHk;Drx.k }kjk fuHkk;h x;h Hkfedk dk Li"V fooj.k fn;k FkkA rRi'pkr] bl ij vkbO vkO vO lkO 13 }kjk gLrk{kj fd;k x;k Fkk vkj bl ij luhy dekj tk erdk dk ifr vO lkO 7 g d }kjk Hkh gLrk{kj fd;k x;k Fkk ftl çn'k 2 d :i e fpfÙgr fd;k x;k gA

(iii) vfHky[k ij lk{; l ;g çrhr gkrk g fd vfHk;ktu xokgk fo'k"kr% vkbO vkO dk foLrkjiod çfr&ijh{k.k fd;k x;k g ftlu çfr ijh{k.k d ijkxkQ lO 10 ij dFku fd;k g fd og bn noh l vLirky e feyk Fkk] og gk'k e Fkh vkj mlu viuk c;ku fn;k Fkk ftl y[kc) fd;k x;k Fkk vkj ckn e mlh fnu mldh eR; gk x;h vkj mld c;ku dk eR;dkfyd dFku d :i e ugh ekuk x;k gA mldh cgk'kh d ckj e vfHk;Drx.k }kjk çfr ijh{k.k ugh fd;k x;k gA

(iv) blh çdkj l] MkDVj dk Hkh vO lkO 12 d :i e ijh{k.k fd;k x;k g ftul çfr ijh{k.k e dkb ç'u ugh iNk x;k g fd D;k bn noh ckyu e l{ke Fkh ;k ughA

4. इस प्रकार, ये तथ्य अपीलार्थीगण/अभियुक्तगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला गठित करते हैं। अपीलार्थीगण के अधिवक्ता ने तर्क किया है कि घर बाहर से बंद था, किंतु आई॰ ओ॰ का ऐसा कोई प्रति परीक्षण नहीं किया गया है जो घटनास्थल पर गया था।

5. अपीलार्थीगण के अधिवक्ता ने अन्यत्र उपस्थित होने का मामला बनाने का तर्क किया है, किंतु अपने तर्क के समर्थन में कोई साक्ष्य नहीं दिया है। अनेक अन्य बिंदुओं का भी उल्लेख किया गया है।

6. चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम साक्ष्यों के विवरण में नहीं जा रहे हैं, किंतु अभियोजन गवाहों के साक्ष्य को देखते हुए अपीलार्थीगण/अभियुक्तगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है और अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा और तरीका जिसमें अपीलार्थीगण/अभियुक्तगण अपराध में अंतर्ग्रस्त हैं, जैसा अभियोजन द्वारा अधिकथित किया गया है, हम विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थीगण को अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं। अतः अपीलार्थीगण/अभियुक्तगण के दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना एतद् द्वारा अस्वीकार की जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

तुषार मजूमदार

cuke

राँची विश्वविद्यालय, राँची एवं अन्य

W.P.(S) No. 1826 of 2005. Decided on 29th November, 2012.

विश्वविद्यालय विधि–सेवानिवृत्ति लाभ–वेतन एवं अन्य सेवा निवृत्ति पश्चात लाभों के बकाया के भुगतान के लिए याची का दावा संतुष्ट होगा यदि दिनांक 1.1.1991 के प्रभाव से ऐसी प्रोन्नति के प्रदान पर याची को देय राशि के वास्तविक संवितरण के लिए महाविद्यालय, विश्वविद्यालय और राज्य सरकार द्वारा आवश्यक कदम उठाए जाते हैं–याची को प्रोन्नति के प्रदान से संबंधित मामले पर विचार किया गया है और काफी पहले वर्ष 2008 में जे॰ पी॰ एस॰

सी॰ द्वारा सहमति और अनुमोदन दिया गया था–विश्वविद्यालय और एच॰ आर॰ डी॰ को याची के पुनरीक्षित वेतन के बकाया और पेंशन के भुगतान के लिए निधि की निर्मुक्ति के लिए कदम उठाने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 7 और 8)

अधिवक्तागण.–M/s Dr. M.K. Laik, Smita Mitra, B.N. Tiwary, For the Petitioner; Mr. Rajesh Kumar, For the State; M/s Sanjoy Piprawall, M. Thakur, Amitabh, For the J.P.S.C.; M/s S.P. Roy, Ranjit Kumar, For the State of Bihar; Mr. Amit Kumar Sinha, For the University.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. वर्तमान रिट याचिका रीडर के पद पर उसकी सम्यक प्रोन्नति पर विचार करने के बाद याची के पक्ष में वेतन के बकाया और अन्य सेवा निवृत्ति पश्चात लाभों को निर्मुक्त करने के लिए, जिसका भुगतान उसके बारंबार मांग के बावजूद नहीं किया गया था, प्रत्यर्थीगण पर निर्देश जारी करने के लिए दाखिल की गयी है। याची ने कतिपय अन्य व्यक्ति के मुकाबले भेदभाव का भी मामला बनाया है।

3. पक्षों के बीच विनिमय किए गए शपथ पत्रों और राँची विश्वविद्यालय की ओर से दाखिल पूरक शपथ पत्र के परिशीलन के बाद यह प्रतीत होता है कि दिनांक 1.1.1991 के प्रभाव से रीडर के पद पर याची को प्रोन्नति प्रदान करने से संबंधित मामले को जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा दिनांक 18.2.2008 के अपने पत्र के तहत सहमति प्रदान की गयी थी।

4. तत्पश्चात्, इसे दिनांक 20.6.2008 को सिंडीकेट के समक्ष प्रस्तुत किया गया था और संकल्प सं॰ 217/08 के तहत सिंडीकेट ने पूरक शपथ पत्र के विश्वविद्यालय ज्ञापन सं॰ B/1316/08 दिनांक 25.7.2008 (परिशिष्ट–B) द्वारा अधिसूचित दिनांक 1.1.1991 के प्रभाव से याची की प्रोन्नति को अनुमोदित किया है।

5. आगे यह प्रतीत होता है कि तत्पश्चात मामला पुनरीक्षित ग्रेड में याची के वेतन के नियतिकरण के लिए मानव संसाधन विभाग, झारखंड सरकार, राँची को भेजा गया था। मानव संसाधन विभाग, झारखंड सरकार, राँची ने दिनांक 9.10.2009 के अपने ज्ञापन सं॰ 1256 (परिशिष्ट–6) के तहत पुनरीक्षित वेतनमान (परिशिष्ट–C) में तीन अन्य अध्यापकों के साथ याची के अनंतिम वेतन नियतिकरण को अनुमोदित किया। तद्नुसार, विश्वविद्यालय ने दिनांक 18.11.2009 के अपने ज्ञापन सं॰ B/1150/09 (परिशिष्ट–D) के तहत याची सहित चार अध्यापकों के अनंतिम वेतन नियतिकरण को अधिसूचित किया है। तत्पश्चात् संबंधित महाविद्यालय को दिनांक 1.1.1991 से रीडर के पद पर प्रोन्नति से दिनांक 30.11.2004 तक उसकी सेवानिवृत्ति तक याची के वेतन के बकाया की संगणना दर्शाते हुए विवरण तैयार करने के लिए कहा गया था। तत्पश्चात्, यह प्रतीत होता है कि मामला अंतिम रूप से इस अर्थ में निष्कर्षित नहीं किया गया है कि याची के अधिवक्ता के अनुदेश के मुताबिक याची के वेतन के बकाया का भुगतान निर्मुक्त नहीं किया गया है।

6. विश्वविद्यालय ने उक्त पूरक प्रतिशपथपत्र में दृष्टिकोण अपनाया है कि महाविद्यालय से विवरण की प्राप्ति पर इसे कोषों की वसूली हेतु राज्य सरकार को अनुशंसा की जायेगी एवं, तत्पश्चात, निधि की प्राप्ति पर इसे विश्वविद्यालय द्वारा याची जैसे व्यक्तियों को संवितरित किया जाएगा। आगे उपदर्शित किया गया है कि जहाँ तक पेंशन के बकाया का संबंध है; विश्वविद्यालय को याची को नवंबर, 2004 के पश्चात आगे भुगतान की जाने वाली राज्य सरकार द्वारा नियत राशि संगणित करना चाहिए।

7. पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों में, यह प्रतीत होता है कि वेतन के बकाया और अन्य सेवा निवृत्ति पश्चात लाभों के भुगतान के लिए याची का दावा संतुष्ट होगा यदि दिनांक 1.1.1991 के प्रभाव से ऐसी

प्रोन्नति के प्रदान पर याची को देय राशि के वास्तविक संवितरण के लिए महाविद्यालय, विश्वविद्यालय और राज्य सरकार द्वारा आवश्यक कदम उठाए जाते हैं। किंतु, याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रत्यर्थी सं॰ 8, जिसे भी वर्ष 1977 में नियुक्त किया गया था और वर्ष 1981 में संपुष्ट किया गया था किंतु केवल वर्ष 1987 के प्रभाव से परिशिष्ट-8 के तहत रीडर के पद पर प्रोन्नति प्रदान किया गया था, के मुकाबले याची के साथ भेदभाव किया गया है। यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं॰ 8 के संबंध में प्रोन्नति आदेश काफी पहले जारी किया गया था। आगे यह प्रतीत होता है कि याची को प्रोन्नति के प्रदान से संबंधित मामले पर विचार किया गया है और काफी पहले जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा वर्ष 2008 में सहमति और अनुमोदन दिया गया था, जिसके बाद विश्वविद्यालय ने पारिणामिक अधिसूचना जारी किया था और याची को देय राशि के संवितरण के लिए संबंधित महाविद्यालय से बकाया विवरणों की संगणना इप्सित किया था, जिसे राज्य सरकार से निधि की प्राप्ति पर किया जा सकता था। याची की दिनांक 1.1.1991 के प्रभाव से प्रोन्नति के उक्त आदेश/अधिसूचना, जिसे पूरक शपथ पत्र का प्रत्युत्तर दाखिल नहीं किया गया है।

8. इन परिस्थितियों में, इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से 16 सप्ताह के भीतर याची के पुनरीक्षित वेतन के बकाया और पेंशन के भुगतान से संबंधित निधि की निर्मुक्ति के लिए विश्वविद्यालय और मानव संसाधन विभाग, झारखंड सरकार को निर्देश देते हुए पूरक शपथ पत्र में विश्वविद्यालय द्वारा लिए गए स्पष्ट दृष्टिकोण की दृष्टि में यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn] U;k;efr

रजिया खातुन उर्फ रबिया बेगम एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1007 of 2009. Decided on 7th January, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 397 एवं 498A सह-पठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धाराएँ 3/4—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—क्रूरता—परिवादी को दहेज की मांग पूरा न करने के कारण यातना के अध्यधीन किया गया—परिवादी को उसके पति की मृत्यु के बाद और अधिक प्रहार एवं यातना के अध्यधीन किया जाता था और कठोर श्रम करने के लिए मजबूर किया जाता था—आधार, जिस पर प्राथमिकी का अभिखंडन इप्सित किया जा रहा है, को कभी भी मान्य नहीं कहा जा सकता है क्योंकि प्राथमिकी में किए गए अभिकथन वस्तुतः अपराध गठित करते हैं जिसके अधीन मामला दर्ज किया गया है—आवेदन खारिज।

(पैराएँ 3 से 7)

अधिवक्तागण.—None, For the Petitioners; None, For the State.

आदेश

यह आवेदन को कोडरमा पी॰ एस॰ केस सं॰ 279 वर्ष 2009 की प्राथमिकी को अभिखंडित करने के लिए दाखिल किया गया है जिसे भारतीय दंड संहिता की धाराओं 379 और 498A तथा दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3/4 के अधीन संस्थापित किया गया था।

2. यह प्रतीत होता है कि परिवादी ने परिवाद मामला दर्ज किया था जिसे याचीगण के विरुद्ध परिवाद केस सं॰ 241 वर्ष 2009 के रूप में दर्ज किया गया था जिसमें अभिकथन किया गया था कि परिवादी का विवाह जफर अली अंजुम (जिसकी अब मृत्यु हो चुकी है) के साथ हुआ था। विवाहोपरांत, जब परिवादी अपने ससुराल आयी, अभियुक्त–याचीगण, सभी परिवादी के पति के संबंधीगण हैं। परिवादी को यातना के अध्यधीन करने लगे ताकि 5 लाख रुपयों की मांग पूरी की जाए। जब ऐसी मांग की गयी थी, परिवादी के पिता ने वर्ष 2002 में 95,000/- रुपयों की राशि का भुगतान किया था। पुनः अभियुक्तगण ने आगे मांग किया था और इस पर वर्ष 2004 और वर्ष 2005 में 50,000/- और 40,000/- रुपयों का भुगतान किया गया था। इसके बावजूद, अभियुक्तगण दहेज की अतिरिक्त मांग पूरा नहीं किए जाने के कारण परिवादी को यातना के अध्यधीन करते रहे।

3. आगे अभिकथन है कि जब परिवादी के पति की मृत्यु हो गयी, अभियुक्तगण परिवादी पर और भी प्रहार करने लगे और इस कारण उसे समस्त कामों को करने के लिए मजबूर किया कि विवाह के समय पर अथवा इसके बाद पर्याप्त दहेज नहीं दिया गया था।

4. उक्त परिवाद इसके अन्वेषण और दर्जकरण के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) के अधीन संबंधित पुलिस थाना को भेजा गया था।

5. जब संबंधित पुलिस थाना ने कोडरमा पी॰ एस॰ केस सं॰ 279 वर्ष 2009 के रूप में मामला दर्ज किया, इस आधार पर प्राथमिकी के अभिखंडन के लिए आवेदन दाखिल किया गया था कि प्राथमिकी/परिवाद में किए गए अभिकथन झूठे हैं और कि दहेज मांग का प्रश्न कभी नहीं उद्‌भूत होता है क्योंकि याचीगण सम्मानित मुस्लिम परिवार से आते हैं और अभिकथन बेतुके और झूठ से भरे हैं।

6. आधार, जिस पर प्राथमिकी का अभिखंडन इप्सित किया जा रहा है, कभी मान्य नहीं हो सकता है क्योंकि प्राथमिकी में किए गए अभिकथन अपराध गठित करते हैं जिसके अधीन मामला दर्ज किया गया है। यदि ऐसा है, प्राथमिकी के अभिखंडन का प्रश्न उद्‌भूत नहीं होता है।

7. तद्‌नुसार, मैं इस आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ और इसलिए इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

विमल कुमार भलोटिया

cuke

शैलेश शरण

WP(C) No. 5116 of 2012. Decided on 11th January, 2013.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 6, नियम 17—वाद पत्र का संशोधन–बेदखली वाद–संशोधन याचिका अनुज्ञात करते हुए, अन्य पक्ष को संशोधन में किए गए प्रकथनों का उत्तर देने के लिए अतिरिक्त लिखित कथन दाखिल करने का अवसर देने की आवश्यकता है–याची को अतिरिक्त लिखित कथन दाखिल करने का अवसर देने की आवश्यकता है जिसमें याची वाद की पोषणीयता के बिंदु सहित उसको उपलब्ध अनेक विवाद्यकों को उठा सकता है।

(पैराएँ 2 एवं 3)

अधिवक्तागण.–M/s Ayush Aditya, Shashank Shekhar, D.N. Sen, For the Petitioner; None, For the Respondent.

आदेश

याची ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन इस रिट याचिका को दाखिल करके हक (बेदखली) वाद सं॰ 4/2010 में विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी-सह-अपर जिला न्यायाधीश, जूनियर डिविजन, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 28.7.12 के आदेश (परिशिष्ट-8) जिसके द्वारा वादी-प्रत्यर्थी की ओर से दाखिल संशोधन याचिका, जिसमें कतिपय संशोधनों को इप्सित किया गया था, अनुज्ञात की गयी है, का अभिखंडित और अपास्त करने के लिए प्रार्थना किया है।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और आक्षेपित आदेश तथा अभिलेख पर प्रस्तुत अन्य सामग्रियों के परिशीलन पर, यह प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय ने वर्तमान मामले में अंतर्ग्रस्त तथ्यों और परिस्थितियों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद विधि के अनुरुप वादी द्वारा दाखिल संशोधन आवेदन अनुज्ञात किया है और इसलिए, इस न्यायालय का दृष्टिकोण है कि अवर न्यायालय ने उक्त आवेदन अनुज्ञात करने में अपने पर निहित अधिकारिता का प्रयोग करते हुए अनियमितता अथवा अवैधता नहीं किया है और इसलिए, इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। किन्तु, यह स्पष्ट किए जाने की आवश्यकता है कि संशोधन याचिका अनुज्ञात करते हुए संशोधन में किए गए प्रकथनों का उत्तर देने के लिए अतिरिक्त लिखित कथन दाखिल करने के लिए अन्य पक्ष को अवसर देने की आवश्यकता है।

3. वर्तमान मामले में, अवर न्यायालय द्वारा बाद में ऐसा अवसर नहीं दिया गया है और इसलिए इस बिंदु को स्पष्ट करने की आवश्यकता है कि इस रिट याचिका को निपटाते हुए वर्तमान याची को अतिरिक्त लिखित कथन दाखिल करने का अवसर देने की आवश्यकता है जिसमें वर्तमान याची-प्रतिवादी वाद की पोषणीयता के बिंदु सहित उसको उपलब्ध अनेक विवाद्यकों को उठा सकता है। याची प्रतिवादी तीस दिनों की अवधि के भीतर अतिरिक्त लिखित कथन दाखिल करेगा।

4. अतिरिक्त लिखित कथन प्रस्तुत किए जाने के बाद अवर न्यायालय मामला में आगे अग्रसर होगा ताकि याची (प्रतिवादी) हित संकट में न पड़े।

5. उक्त संप्रेक्षण और निर्देश के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o ç'kkr dekj] U;k;efrx.k

जोसेफ हेम्ब्रम एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (DB) No. 1006 of 2012. Decided on 6th December, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—दंडादेश का निलंबन–तीनों अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है और दांडिक अपील लंबित है–गवाह द्वारा एक अपीलार्थी का नाम नहीं दिया गया है–न्यायालय तीनों अपीलार्थीगण जो मूल अभियुक्त हैं को अपर सत्र न्यायाधीश द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित करने का इच्छुक नहीं है–किंतु, एक अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित किया गया। (पैराएँ 3 से 7)

अधिवक्तागण.–M/s. K.K. Ojha, Rakesh Kumar, For the Appellants; Mr. Ravi Prakash, For the State.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–वर्तमान दांडिक अपील पहले ही इस न्यायालय द्वारा दिनांक 8 नवंबर, 2012 के आदेश के तहत ग्रहण की गयी है। सत्र विचारण सं॰ 175 वर्ष 2007 के अभिलेख और कार्यवाही को संबंधित विचारण न्यायालय से मंगाया गया था ताकि विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थीगण को अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए तर्क का अधिमूल्यन किया जा सके।

2. सत्र विचारण सं॰ 175 वर्ष 2007 के अभिलेख और कार्यवाही प्राप्त की गयी है और हमने इनका परिशीलन किया है।

3. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और सत्र विचारण के अभिलेख और कार्यवाही का परिशीलन करने पर और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य को देखते हुए, यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी सं॰ 2, 3, और 4 के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, अत: हम अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि अभियोजन का मामला चश्मदीद गवाह जो अ॰ सा॰ 3 है पर आधारित है। अ॰ सा॰ 3 के अभिसाक्ष्य का अन्य अभियोजन गवाहों, के अभिसाक्ष्य द्वारा, विशेषत: अ॰ सा॰ 1 जो डॉ॰ सिंगरॉय सोरेन है के अभिसाक्ष्य द्वारा पर्याप्त संपुष्टिकरण किया गया है। अ॰ सा॰ 3 के अभिसाक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि उसने अपीलार्थी सं॰ 2, 3 और 4,जो मूल अभियुक्त सं॰ 2, 3 और 4 हैं के नामों को दिया है किंतु अ॰ सा॰ 3 ने अपीलार्थी सं॰ 1 जो मूल अभियुक्त सं॰ 1 है का नाम नहीं दिया है।

4. इन तथ्यों की दृष्टि में, हम सत्र विचारण सं॰ 175 वर्ष 2007 में अपीलार्थी सं॰ 2, 3 और 4 जो मूल अभियुक्त सं॰ 2, 3 और 4 है को अपर सत्र न्यायाधीश I, पाकुड़ द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं। अत:, अपीलार्थी सं॰ 2, 3 और 4 के दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना एतद्द्वारा खारिज की जाती है।

5. जहाँ तक अपीलार्थी सं॰ 1 जो मूल अभियुक्त सं॰ 1 अर्थात् जोसेफ हेम्ब्रम का संबंध है, यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी सं॰ 1 के पक्ष में प्रथम दृष्टया मामला है।

6. इन तथ्यों की दृष्टि में और अपीलार्थी सं॰ 1 द्वारा निभायी गयी भूमिका को देखते हुए, हम एतद् द्वारा इस दांडिक अपील के लंबित रहने के दौरान सत्र विचारण सं॰ 175 वर्ष 2007 में अपर सत्र न्यायाधीश-I, पाकुड़ द्वारा अपीलार्थी सं॰ 1 अर्थात् जोसेफ हेम्ब्रम को अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित करते हैं जिसे इस शर्त के अध्यधीन कि अपीलार्थी सं॰ 1 न्यायालय की पूर्वानुमति के बिना अपना पता नहीं बदलेगा और जब तथा जैसे ही उसकी उपस्थिति की आवश्यकता है वह उपलब्ध होगा, सत्र विचारण सं॰ 175 वर्ष 2007 के संबंध में अपर सत्र न्यायाधीश I, पाकुड़ की संतुष्टि हेतु समान राशि की दो प्रतिभूतियों के साथ 10,000/- (दस हजार) रुपयों का जमानत बंध पत्र प्रस्तुत करने पर जमानत पर निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है।

7. इस प्रकार, जहाँ तक अपीलार्थी सं॰ 1 का संबंध है, विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए प्रार्थना अनुज्ञात की जाती है जबकि इसे अस्वीकार किया जाता है जहाँ तक अपीलार्थी सं॰ 2, 3 और 4 का संबंध है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

डी॰ टी॰ सी॰ सिक्यूरिटीज लिमिटेड

cuke

झारखंड राज्य खनिज विकास निगम एवं अन्य

W.P. (C) No. 981 of 2012. Decided on 6th October, 2012.

खनन विधि–खनन करार की समाप्ति–याची सफल बोली लगाने वाला था–करार काम आरंभ करने के संबंध में करार के खंड के उल्लंघन के लिए और बाध्यताओं एवं जिम्मेदारियों के निर्वहन में विफलता के लिए समाप्त किया गया था–वन अनापत्ति प्रमाणपत्र की आवश्यकता थी–वन अनापत्ति प्रमाण पत्र प्राप्त नहीं किया गया है जो काम शुरू करने के लिए पूर्वशर्त थी–अनेक अनापत्तियों को प्राप्त करने में याची की कोई भूमिका नहीं थी–वैकल्पिक उपचार अन्याय कारित करने वाले आदेश का विखंडन करने में उच्च न्यायालय की रिट अधिकारिता का अवलंब लेने के लिए कोई पूर्ण वर्जना सृजित नहीं करता है–समाप्ति आदेश अभिखंडित किया गया–याचिका अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 10, 13, 18 से 25)

निर्णयज विधि.–(2011) 5 SCC 697—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s Indrajit Sinha, Kumar Vimar, For the Petitioner; M/s R. Krishna, Rupes Kumar, For the Respondents.

आदेश

इस रिट याचिका में, याची ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा जारी दिनांक 17.1.2012 के पत्र सं॰ 134 के अभिखंडन के लिए प्रार्थना की है जिसके द्वारा बिसरामपुर–महुगेन–तुलबुला, ग्रेफाइट खान के खनन के संबंध में दिनांक 4.5.2011 का करार सं॰ 20 तुरन्त के प्रभाव से समाप्त कर दिया गया है और याची द्वारा जमा किए गए अग्रिम धन को वापस लौटाने का निर्देश दिया गया है। याची ने चरण I और II के वन अनापत्ति/अनुमति को त्वरित करने के लिए और अन्य आवश्यक विधिक औपचारिकताओं को पूरा करने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 को निर्देश देने के लिए भी प्रार्थना की है ताकि याची करार सं॰ 20 वर्ष 2011 के निबंधनों के अनुरुप खनन काम शुरू करने में सक्षम हो सके।

2. संक्षेप में याची का मामला यह है कि झारखंड राज्य खनिज विकास निगम लिमिटेड (संक्षेप में जे॰ एस॰ एम॰ डी॰ सी॰) ने अपने पट्टा धृत महुगेन–तुलबुला क्षेत्र से प्रतिमाह ग्रेफाइट ढेलों के न्यूनतम 2000 टनों के खनन के लिए उपकरण भाड़े पर लेने के लिए और इन्हें खरीदने के लिए प्रतिष्ठित प्रतिष्ठानों से निविदा आमंत्रित किया। याची जो ग्रेफाइट के खनन, खनन से लाभ प्राप्त करने और विपणन के क्षेत्र में सुस्थापित है, ने समस्त प्रासंगिक दस्तावेजों के साथ निविदा दाखिल किया। प्रत्यर्थी सं॰ 3 भी निविदा प्रक्रिया में भाग लेने वालों में से एक था। संवीक्षण के बाद, याची को सफल घोषित किया गया था और उसे काम आवंटित किया गया था। तद्नुसार, याची और प्रत्यर्थी जे॰ एस॰ एम॰ डी॰ सी॰ के प्रबंध निदेशक के बीच दिनांक 4.5.2011 का करार निष्पादित किया गया था।

3. करार के खंड 14 (1) ने प्रावधानित किया कि खनन का काम संकर्म आदेश जारी किए जाने से अथवा वन विभाग से चरण I और II के वन अनापत्ति के बाद करार पर हस्ताक्षर किए जाने, जो भी बाद में है, से 30 दिनों के भीतर आरंभ किया जाना है। वन अनापत्ति प्रत्यर्थीगण द्वारा प्राप्त किया जाना था। उक्त खंड में, यह स्पष्टत: प्रावधानित किया गया है कि गेस्टेशन अवधि काम आरंभ करने के 30 दिनों बाद शुरू होगी।

4. याची के अनुसार, वन विभाग से चरण I और II की वन अनापत्ति प्रत्यर्थीगण द्वारा प्राप्त नहीं की गयी थी। चूँकि वन विभाग द्वारा चरण I और II के वन अनापत्ति के बाद काम आरंभ करने का स्पष्ट शर्त था, याची काम आरंभ नहीं कर सका था और उसने वन अनापत्ति के प्रमाण पत्र के लिए प्रतीक्षा

किया। वन अनापत्ति प्राप्त करने और याची को काम आरंभ करने की अनुमति देने के बजाए प्रत्यर्थी जे॰ एस॰ एम॰ डी॰ सी॰ ने दिनांक 4.5.2011 का याची का करार सं॰ 20 वर्ष 2011 मनमाने रूप से समाप्त कर दिया और महाप्रबंधक (खान) द्वारा हस्ताक्षरित दिनांक 17.1.2012 के पत्र सं॰ 134 द्वारा इसे याची को संसूचित किया गया था।

5. यह निवेदन किया गया है कि झूठा अभिकथन करते हुए कि याची बाध्यता और जिम्मेदारी का निर्वहन करने में विफल रहा है जैसा एन॰ आई॰ टी॰ और दिनांक 4.5.2011 के करार सं॰ 20 वर्ष 2011 के खंड 4 द्वारा परिकल्पित किया गया है, और उसने प्रत्यर्थी जे॰ एस॰ एम॰ डी॰ सी॰ द्वारा जारी पत्र के निबंधन का उल्लंघन किया, याची का करार समाप्त कर दिया गया है। चरण I और II के वन अनापत्ति को प्राप्त किए बिना काम आरंभ करने से संबंधित समस्त पत्र तुच्छ और आधारहीन थे और समाप्ति द्वेषपूर्ण और अवैध है और यह अभिखंडित किए जाने की दायी है। असद्भाव इस तथ्य से प्रकट है कि याची के करार को समाप्त करने के तुरन्त बाद प्रत्यर्थी सं॰ 3 को काम आवंटित किया गया है जो एल-II है और जिसका अग्रिम धन पहले ही वापस लौटा दिया गया था। वन अनापत्ति जो काम शुरू करने के शर्तों में से एक है। प्राप्त किए बिना करार पर हस्ताक्षर किया गया है उक्त प्रत्यर्थी सं॰ 3 को वन और पर्यावरण अनापत्ति लिए बिना काम शुरू करने की अनुमति दी गयी है।

6. याची ने प्रत्यर्थी सं॰ 3 के साथ हुए करार के रद्दकरण के लिए भी प्रार्थना किया है।

7. प्रत्यर्थी सं॰ 1 जे॰ एस॰ एम॰ डी॰ सी॰ द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 3 जिसके पक्ष में याची के करार को समाप्त करने के बाद काम आवंटित किया गया है, द्वारा भी याचिका का प्रतिवाद किया गया है।

8. जे॰ एस॰ एम॰ डी॰ सी॰ की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने याची की प्रार्थना का विरोध इस आधार पर किया कि आदेश के विरुद्ध अपील दाखिल करने का वैकल्पिक उपचार है और उसकी दृष्टि में यह रिट याचिका पोषणीय नहीं है। याची ने करार भंग का अभिकथन किया है जो तथ्य का प्रश्न है और रिट अधिकारिता में इस पर न्यायनिर्णयन और विनिश्चय नहीं किया जा सकता है। यह कथन भी किया गया है कि याची करार के खंड 4 के मुताबिक अपने संविदात्मक दायित्व का निर्वहन करने में विफल रहा और अपना वादा भी पूरा नहीं किया था जैसा इसके पत्रों से स्पष्ट होगा। जे॰ एस॰ एम॰ डी॰ सी॰ द्वारा जारी आक्षेपित आदेश में कोई मनमानापन अथवा अवैधता नहीं है। यह कथन भी किया गया है कि एजेंसी को मेटलीफेरस खान विनियमन की आवश्यकताओं के मुताबिक खनन संकार्य करना होगा और यह भारतीय खान अधिनियम, मजदूरी भुगतान अधिनियम, आदि सहित समस्त अधिनियमों, नियमावलियों और विनियमनों का पालन करेगी। याची ने प्रमाण पत्रों को प्रस्तुत नहीं किया है और प्रासंगिक नियमों और विनियमनों की आवश्यकताओं को परिपूर्ण नहीं किया है। याची वन अनापत्ति प्राप्त करने में सहायता देने में भी विफल रहा। जे॰ एस॰ एम॰ डी॰ सी॰ के पास याची के करार को समाप्त करने और इसे प्रत्यर्थी सं॰ 3 जो एल॰ II है को आवंटित करने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था।

9. प्रत्यर्थी सं॰ 3 ने भी याची की याचिका का विरोध करने के लिए लगभग इन्हीं बिंदुओं को उठाया है। उन्होंने निवेदन किया कि उसकी कोई गलती नहीं है और उसे काम इसलिए आवंटित किया गया है क्योंकि वह एल॰ II है। उसका खनन क्षेत्र में व्यापक अनुभव है। उसे उन्हीं शर्तों और निबंधनों पर काम आवंटित किया गया है और उसने भारी निवेश किया है। वह गलती पर नहीं है।

10. मैंने पक्षों को सुना है और अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों और सामग्रियों पर विचार किया है। यह स्वीकृत अवस्था है कि याची सफल बोली लगाने वाला था और उसे एल॰ I घोषित किया गया था।

यह भी स्वीकार किया गया है कि दिनांक 4.5.2011 का करार सं॰ 20 वर्ष 2011 पक्षों के बीच निबंधनों और शर्तों पर किया गया था।

11. उक्त करार का खंड 14 (i) काम आरंभ करने के लिए प्रावधान बनाता है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *"14 (i) **dke dk ikjEHk**-&dke **ou foHkkx l pj.k** I **vkj** II **dh ou vukifÙk d ckn** lde vkn'k tkjh dju vFkok djkj ij gLrk{kj dju d 30 fnuk d Hkhrj 'k: fd;k tk,xkA xLV'ku vofèk dke vkjHk dju d 30 fnuk ckn vkjHk gkxh tlk Åij dFku fd;k x;k gA***

12. उक्त करार का खंड 4 विनिर्दिष्टत: प्रावधानित करता है कि निगम वन के अपयोजन के लिए वन विभाग से और पर्यावरण एवं वन मंत्रालय (संक्षेप में एम॰ ओ॰ ई॰ एफ॰) भारत सरकार से वन अनापत्ति (चरण I और II) प्राप्त करेगा। यह आगे प्रावधनित करता है कि खान के सुचारु संकार्य के लिए आवश्यक वन अनापत्ति प्राप्त करने में एजेंसी निगम की सहायता करेगी।

13. याची का करार दिनांक 4.5.2011 के करार के उक्त खंड 4 के उल्लंघन के लिए और बाध्यताओं एवं जिम्मेदारियों जैसा दिनांक 30.11.2010 के एन॰ आई॰ टी॰, जे॰ एस॰ एम॰ डी॰ सी॰ के दिनांक 14.2.2011 के पत्र सं॰ 320 और याची के दिनांक 24.2.2011 के पत्र में परिकल्पित किया गया है, के निर्वहन में विफलता के लिए समाप्त किया गया है।

14. याची द्वारा किए गए करार के खण्ड 4 के उल्लंघन पर प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा काफी जोर दिया गया है, जो स्पष्टत: जे॰ एस॰ एम॰ डी॰ सी॰ द्वारा तथा एम॰ ओ॰ ई॰ एफ॰ द्वारा भी वन विभाग से चरण I और II की वन अनापत्ति की आवश्यकता प्रावधानित करता है। यद्यपि जे॰ एस॰ एम॰ डी॰ सी॰ को पूर्वोक्तानुसार वन अनापत्ति प्राप्त करने की आवश्यकता है, यह स्वीकार किया गया है कि आज की तिथि तक वन विभाग और एम॰ ओ॰ ई॰ एफ॰, भारत सरकार से ऐसी वन अनापत्ति प्राप्त नहीं की गयी है।

15. प्रत्यर्थीगण की ओर से तर्क किया गया है कि खानों के सुचारु संकार्य के लिए आवश्यक वन अनापत्ति प्राप्त करने में एजेंसी को निगम की सहायता करनी होगी किंतु याची ने खानों के संकार्य के लिए वन अनापत्ति प्राप्त करने में सहायता नहीं किया है जैसा दिनांक 14.2.2011 के पत्र और दिनांक 24.2.2011 के याची के पत्र से स्पष्ट होगा।

16. पक्षों के बीच उक्त पत्रों/संसूचनाओं के परिशीलन पर, मैं पाता हूँ कि याची द्वारा खंड 4 का उल्लंघन नहीं किया गया है।

17. खंड 4 का पठन निम्नलिखित है:–

> *^^fuxe dk ou foHkkx l vkj ,e0 vk0 b0 ,Q0] Hkkjr ljdkj l Hkh ou vukifÙk (pj.k I vkj II) çkIr dju dh vko';drk gA [kku d lpk# ldk; d fy, vko';d vud vukifÙk;k dk çkIr dju e ,tlh fuxe dh lgk;rk djxhA***

18. खंड 4 से स्पष्ट है कि निगम को वन अनापत्ति प्राप्त करना है और खानों के सुचारु संकार्य के लिए आवश्यक अतिरिक्त अनापत्ति प्राप्त करने में एजेंसी को निगम की सहायता करना है। यह स्वीकृत अवस्था है कि संकार्य आरंभ नहीं किया जा सका था क्योंकि निगम ने वन विभाग से और एम॰ ओ॰ ई॰ एफ॰, भारत सरकार से भी वन अनापत्ति प्राप्त नहीं किया था। जब संकार्य आरंभ नहीं किया गया है, खानों के सुचारु संकार्य का प्रश्न ही नहीं है। इस चरण पर अनेक अनापत्ति प्राप्त करने में जैसा खंड 4 में प्रावधानित किया गया है, याची की कोई भूमिका नहीं है।

19. चूँकि काम वन अनापत्ति के बाद आरंभ किया जाना था जिसे निगम को प्राप्त करना था, काम आरंभ नहीं होने के लिए याची को दोषी नहीं कहा जा सकता है। यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है कि याची ने खंड 4 का अथवा एन॰ आई॰ टी॰ के किसी निबंधन का उल्लंघन किया है, जिसे याची के पक्ष में निष्पादित दिनांक 4.5.2011 के करार की समाप्ति का आधार बताया गया है। इस प्रकार, आधार जिस पर याची के करार को समाप्त किया गया है, आधारहीन तुच्छ और बेबुनियाद है।

20. ऐसे तुच्छ आधार पर आधारित आदेश अविद्यमान है और स्वीकृत ताथ्यिक अवस्था की दृष्टि में आगे किसी न्याय निर्णयन की आवश्यकता नहीं है।

21. अन्याय कारित करने वाले किसी आदेश को विखंडित करने में इस न्यायालय की रिट अधिकारिता का अवलंब लेने के लिए कोई संपूर्ण वर्जना नहीं है। **भारत संघ एवं अन्य बनाम ताँतिया कंस्ट्रक्शन प्राईवेट लिमिटेड, (2011)5 SCC 697,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के नवीनतम निर्णय के प्रति निर्देश किया जा सकता है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दोहराया है कि अन्याय, जहाँ कहीं भी और जब कभी भी इसे किया जाता है, को विधि के शासन और संविधान के प्रावधानों के प्रति अभिशाप के रूप में विखंडित करना ही होगा।

22. चूँकि आक्षेपित आदेश पूर्णत: मनमाना और विकृत है, यह संपोषणीय नहीं है। ऐसा अवैध आदेश किसी पक्ष के किसी अधिकार को सृजित करने के लिए आधार नहीं बनाया जा सकता है।

23. वर्तमान मामले में, यह स्वीकृत तथ्य है कि चरण I और II की वन अनापत्ति प्राप्त नहीं की गयी है जो काम आरंभ करने की पूर्व शर्त थी। उस तुच्छ आधार पर याची का करार समाप्त किया गया है और बिल्कुल अगले दिन अर्थात् दिनांक 18.1.2012 को अत्यन्त मनमाने तरीके से प्रत्यर्थी सं॰ 3 को काम आवंटित किया गया है और दिनांक 20.1.2012 को करार भी कर लिया गया था। प्रत्यर्थी सं॰ 3 को काम आरंभ करने की अनुमति दी गयी है, यद्यपि विधि की आवश्यकता के मुताबिक इसके लिए वन अनापत्ति अभी भी प्राप्त की जानी है।

24. चूँकि याची के करार की समाप्ति के उक्त अवैध आदेश के आधार पर प्रत्यर्थी सं॰ 3 और प्रत्यर्थी सं॰ 1 के बीच दिनांक 20.1.2012 का पश्चातवर्ती करार किया गया बताया गया है, उक्त आभासी कृत्य और करार प्रत्यर्थी सं॰ 3 को कोई अधिकार नहीं देता है।

25. उक्त चर्चा की दृष्टि में, यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है। दिनांक 17.1.2012 का समाप्ति आदेश (परिशिष्ट-17) अभिखंडित किया जाता है।

26. परिणामस्वरुप, कोई पश्चातवर्ती आदेश, करार आदि निराकृत किया जाता है।

27. चूँकि पहले ही अत्यधिक विलंब हो चुका है, कार्य आरंभ करने के लिए याची को सक्षम बनाने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 1 को करार के खंड 4 के निबंधनानुसार वन विभाग और एम॰ ओ॰ ई॰ एफ॰ भारत सरकार से वन अनापत्ति प्राप्त करने की प्रक्रिया को त्वरित करने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr ;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t ;k jk;] U;k;efr

गुजरात सहकारी दुग्ध विपणन फेडरेशन लिमिटेड एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No. 1627 of 2002. Decided on 6th December, 2012.

बिहार कृषि उत्पाद बाजार अधिनियम, 1960—धारा 2 (1) (a)—दुग्ध उत्पाद–बाजार फीस का उद्ग्रहण–फीस वर्ष 1960 के अधिनियम के अधीन वस्तु और इसके उत्पाद पर है और न कि ट्रेड नाम पर–यह ट्रेड नाम के आधार पर नहीं हो सकता है–ट्रेड नाम स्वयं में वस्तु नहीं है और ट्रेड नाम ट्रेड नाम धारक की संपत्ति है और विनिर्दिष्ट केंद्रीय विधि द्वारा शासित है–अमूल चीज स्प्रेड, सुगर टी कॉफी, अमूल श्रीखंड, अमूल होल मिल्क पाउडर, सागर स्किम्ड मिल्क, बाल अमूल, अमूल्या, अमूल स्प्रे दुग्ध उत्पाद हैं–किंतु अमूल चॉकलेट स्वतंत्र और पृथक उत्पाद है और प्रत्यर्थीगण अमूल चॉकलेट के ऊपर फीस उद्ग्रहित नहीं कर सकते है–मक्खन और घी वाणिज्यिक रूप से सुभिन्न है और पृथक वस्तु के रूप में लोगों को ज्ञात हैं–अनुसूची में मक्खन और घी की विनिर्दिष्ट प्रविष्टि उसे संकुचित बनाए गए दुग्ध की प्रविष्टि (तरल दूध को छोड़कर) उपदर्शित नहीं करते हैं जिसका अर्थ ऐसी परिभाषा के अंतर्गत सूखा दुध, दूध पाउडर नहीं है। (पैराएँ 9, 11, 13 एवं 14)

निर्णयज विधि.–(1996) 9 SCC 681; (1999)9 SCC 620; (2012) 9 SCC 368; 2009(14) STR 289 (Bom.)—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s Subhro Sanyal, Sunil Kr. Mahto, For the Petitioners; M/s. Vijoy Pratap Singh, Amrita Kumari, Rashmi Kumar, For the Respondents; M/s. Ramit Satender, Rajneesh Vardhan, For the State of Bihar.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. याची अपने उत्पादों के निर्माण और विक्रय के व्यवसाय में लगी सहकारी दुग्ध विपणन फेडरेशन है जो प्रत्यर्थीगण के अनुसार दुग्ध अथवा दुग्ध उत्पाद हैं और चूँकि याची के समस्त उत्पाद दुग्ध अथवा दुग्ध उत्पाद हैं जो पशुपालन उत्पादों की कोटि के अधीन आते हैं, वर्ष 1960 के अधिनियम की धारा 2(1) (a) के अधीन आने वाली वस्तु के रूप में वर्णित बिहार कृषि उत्पाद बाजार अधिनियम, 1960 के साथ संलग्न अनुसूची के खंड 8 के प्रविष्टि सं॰ 9 के अधीन आच्छादित है। याची का प्रतिवाद यह है कि राज्य सरकार ने दिनांक 21.8.1984 को अधिसूचना जारी किया और ''तरल दूध'' को 'पशुपालन उत्पाद' के शीर्षक के अधीन प्रविष्टि सं॰ 9 'दुग्ध' से अपवर्जित कर दिया, अत: तरल दूध अब अपवर्जित है। किंतु, याची के समस्त उत्पाद तरल दूध नहीं है और विनिर्दिष्ट उत्पाद हैं तथा जब इस प्रकार, इन उत्पादों को ऊपर निर्दिष्ट अनुसूची में दर्शाया नहीं गया था, बिहार राज्य ने याची के उत्पादों में से कुछ को उनके व्यवसायिक नाम से अधिसूचना द्वारा अनुसूची में अंत:स्थापित किया, जो 10.4.2001 को निर्गत किया गया है। इस अधिसूचना से पहले, बिहार राज्य से झारखंड राज्य का सृजन किया गया था तथा यह सत्य हो सकता है कि बिहार कृषि उत्पाद विपणन अधिनियम, 1960 को झारखंड राज्य द्वारा अंगीकार किया गया था, पर दिनांक 10.4.2001 की अधिसूचना न तो अंगीकार की जा सकती थी तथा न ही इसे अंगीकार किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि 1960 के अधिनियम की अनुसूची में कतिपय उत्पादों को शामिल करने वाली अधिसूचना विधायी कृत्य है तथा झारखंड राज्य के सृजन के बाद केवल राज्य की विधायिका ही किसी सांविधिक अनुसूची को संशोधित, परिवर्तित या उपांतरित करने का निर्णय ले सकती थी। अनुसूची में कुछ उत्पादों को जोड़ने तथा शामिल करने का बिहार राज्य द्वारा लिया गया कोई निर्णय बिहार राज्य की विधायिका के विधायी सक्षमता के अंतर्गत था। अत:, उस अनुसूची का

झारखंड राज्य में कोई बल नहीं है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि जब किसी अनुसूची में कोई प्रविष्टि नहीं होती है तथा इसे अधिसूचना के माध्यम से अंत:स्थापित करने की ईप्सा की जाती है, तब उसका अर्थ यह होता है कि मूल अनुसूची में उस उत्पाद को शामिल नहीं किया गया था। अत: याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, बिहार राज्य द्वारा अधिसूचना का निर्गतीकरण स्पष्टत: इंगित करता है कि याची के उत्पाद अनुसूची में शामिल नहीं किया गया था। याची के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी निवेदन किया कि अनुसूची में ''दूध'' एक विनिर्दिष्ट प्रविष्टि है तथा याची के उत्पाद के पृथक तथा विनिर्दिष्ट नाम हैं और उनके विनिर्दिष्ट उपयोग हैं जैसे 'अमूल स्प्रे' बेबीफूड और मिल्क पाउडर हैं जो केवल नवजात शिशुओं के लिए है और इसी प्रकार से अन्य उत्पादों को तैयार किया गया है, और उनके अपने विनिर्दिष्ट उपयोग हैं और उनके नाम ज्ञात हैं और इसलिए, इस तथ्य की दृष्टि में कि बिहार राज्य में राज्य विधानमंडल ने भी अपनी बुद्धिमत्ता में याची की अपनी कंपनी के उत्पादों को सम्मिलित करने का आशय रखा और तब इसने याची के उत्पादों को उनके अपने वाणिज्यिक नाम से सम्मिलित किया, उन्हें उनके अपने नाम (ट्रेड नाम, जेनरिक नाम अथवा वाणिज्यिक नाम) से अनुसूची में होने की आवश्यकता है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता श्री सुभ्रो सान्याल ने यह निवेदन भी किया कि झारखंड राज्य के सृजन के बाद यद्यपि ''दुग्ध'' की प्रविष्टि अनुसूची में हो सकती है, किंतु नए राज्य के सृजन के बाद उसे पुन: धारा 3 और 4 के अधीन अधिसूचित नहीं किया गया है, अत:, अनुसूची में प्रविष्टि मात्र धाराओं 3 और 4 के अधीन घोषणा के बिना कोई दायित्व सृजित नहीं कर सकती है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी निवेदन किया कि **बेलसंड सुगर कं॰ लि॰ बनाम बिहार राज्य, (1999)9 SCC 620** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने ''लेक्टोडेक्स'' और ''राप्टाकॉस'' ट्रेड नाम में बेबीफूड के एक अन्य निर्माता के मामले में तथ्यों पर विचार किया है और उन उत्पादों के समस्त अवयवों को देखने के बाद माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्टत: घोषणा किया कि वे दो उत्पाद ''दुग्ध'' अथवा ''दुग्ध उत्पाद'' की कोटि के अधीन आच्छादित नहीं हैं और इसलिए, अभिनिर्धारित किया कि कोई बाजार फीस उद्ग्रहित नहीं किया जा सकता है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया कि उक्त निर्णय पर **कृषि उपज मंडी समिति, नरसिंहपुर बनाम शिव शक्ति खांडसारी उद्योग एवं अन्य, (2012)9 SCC 368,** मामले में विचार किया गया था और उक्त निर्णय के निर्णयाधार को पुन: माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनुमोदित किया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने अपने पहले के तर्कों कि यदि नयी प्रविष्टि की पुर:स्थापना होती है और उस प्रविष्टि में कतिपय सेवाओं का सम्मिलित किया जाना पूर्वधारित करता है कि उक्त सेवा को आच्छादित करती हुई कोई पूर्व प्रविष्टि नहीं थी, के समर्थन में **इंडियन नेशनल शिप ओनर्स एसोशिएशन बनाम भारत संघ, 2009 (14) STR 289 (Bom.),** मामले में दिए गए बॉम्बे उच्च न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय पर भी विश्वास किया है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने हमारा ध्यान दिनांक 8.8.2011 को दाखिल पूरक शपथ पत्र की ओर आकृष्ट किया जिसे इस न्यायालय के दिनांक 7.7.2011 के आदेश के बाद दाखिल किया गया था जिसके द्वारा इस न्यायालय ने याची को अपने प्रश्नगत उत्पाद के अवयवों को केवल यह कथन करते हुए प्रस्तुत करने का निर्देश दिया था कि वजन के अनुसार अपने उत्पादों में मात्रा वार कितना सूखा दूध पाउडर का उपयोग किया जाता है और प्रोटीन, फैट, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन A, D, B6, B12, C और K, थियामाइन, रिबोफ्लेविन, माइकोटिनमाइड, फोलिक एसिड, पैंटोथेनिक एसिड, बायोटिन, चोलिन, कैल्शियम, फॉस्फोरस, आयरन, कॉपर, आयोडीन, मैगनीज, जिंक, सोडियम, पोटाशियम, क्लोराइड, मैगनेशियम और कैलारी जो सूखे पाउडर में बने रहते हैं का विवरण देने के लिए और यह बताने कि पूर्व निर्दिष्ट वस्तुओं में कितनी मात्रा उत्पाद के निर्माण की प्रक्रिया में बढ़ायी जाती है। अपने शपथ पत्र

के साथ एक परिशिष्ट भी उत्पादों में से एक को वस्तुओं का विवरण देते हुए संलग्न किया गया है। तत्पश्चात, याची ने दिनांक 25.8.2011 का एक अन्य पूरक शपथ पत्र दाखिल किया और अपने अन्य उत्पादों के घटकों का विवरण दिया। सार संक्षेप में, याची का प्रतिवाद प्रथमत: यह है कि बिहार कृषि उत्पाद बाजार अधिनियम, 1960 के साथ संलग्न अनुसूची में 'दुग्ध' का उल्लेख मात्र याची के उत्पाद को सम्मिलित नहीं करेगा जिनका अभिप्राय विनिर्दिष्ट प्रयोजन के लिए है और विभिन्न रूप से उनका उपयोग होना है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया कि यदि विधानमंडल का आशय याची द्वारा निर्मित उत्पादों पर बाजार फीस उद्ग्रहित करना था, तब याची द्वारा निर्मित प्रत्येक दुग्ध उत्पाद को अनुसची में जोड़ा जाना चाहिए था जैसा किया जाना बिहार राज्य द्वारा इप्सित किया गया था जिसने अनुसूची में विनिर्दिष्ट वस्तुओं को सम्मिलित करने के लिए अधिसूचना जारी किया था। यह निवेदन भी किया गया है कि मक्खन और घी के नाम में प्रविष्टि 7 और 8 वस्तुत: दूध की एक प्रजाति है और दूध जेनरिक नाम है, अत:, जब एक बार मक्खन तथा घी के अनुसूची में प्रविष्टियों में विनिर्दिष्टत: उल्लिखित किया गया है, तब राज्य को शब्द 'बेबी फूड' भी अनुसूची में जोड़ना चाहिए था जिसे नहीं जोड़ा गया है, अत: राज्य बाजार फीस उद्ग्रहित नहीं कर सकता है। विद्वान अधिवक्ता ने अपना तर्क केवल एक उत्पाद अर्थात् 'अमूल स्प्रे' तक सीमित रखा और सिवाए इसके उत्पाद चॉकलेट के अन्य उत्पादों पर बाजार फीस के उद्ग्रहण को गंभीर रूप से चुनौती नहीं दिया।

5. तर्कों का खंडन करते हुए विपणन कमिटि के विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री वी॰ पी॰ सिंह ने जोरदार निवेदन किया कि विवाद्यक अब इस तथ्य की दृष्टि में अनिर्णीत विषय नहीं है कि इस न्यायालय की पूर्ण पीठ ने **बेलसंड सुगर कं॰ (ऊपर)** मामले पर विचार करते हुए **लिप्टन इंडिया लि॰ बनाम बिहार राज्य, (2003)4 JCR 197,** मामले में अभिनिर्धारित किया है कि ''अनिक स्प्रे'' सूखा स्किम्ड मिल्ड पाउडर है और दुग्ध उत्पाद है और दूध के मूल अवयव स्किम्ड मिल्क पाउडर में बने रहते हैं और इसलिए प्रत्यर्थीगण अनिक स्प्रे के विक्रय पर बाजार फीस की मांग कर सकते हैं। यह निवेदन किया गया है कि याची का उत्पाद लिप्टन कंपनी के उत्पाद की तुलना में भिन्न नहीं है जो उसी प्रकृति के वस्तु का निर्माण कर रही है। यह निवेदन किया गया है कि भिन्न नाम वास्तविक उत्पाद को भिन्न नहीं बनाएँगे यदि यह वस्तुत: भिन्न नहीं है। केवल यही नहीं, याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत **सासा मूसा सुगर वर्क्स बनाम बिहार राज्य, (1996)9 SCC 681, बेलसंड सूगर कं॰ (ऊपर)** और अन्य अनेक निर्णयों पर इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा **प्लाइवुड एसोसिएशन एवं अन्य बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य** और संबंधित याचिकाओं के मामले में विचार किया गया है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि वुड प्लाइवुड, प्लाईबोर्ड सम्मिलित करता है जिनका यद्यपि वाणिज्यिक रूप से भिन्न नाम है, किंतु वे कृषि उत्पाद हैं।

6. निवेदन किया गया है कि वर्ष 1960 के अधिनियम की धारा 2 की उपधारा (1) के उपखंड (a) में कृषि उत्पाद की परिभाषा दी गयी है जो अत्यन्त व्यापक है और यह परिभाषा खंड में उल्लिखित कोटियों के समस्त उत्पादों को आच्छादित करती है जो पशुपालन उत्पादों को सम्मिलित करती है। दूध पशुपालन उत्पाद है और याची द्वारा उत्पादित और निर्मित समस्त वस्तुएँ केवल दुग्ध उत्पाद है। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया कि इस न्यायालय की पूर्ण पीठ के बाध्यकारी निर्णय की दृष्टि में जिसने अंतिमता प्राप्त कर लिया है और जिसे **बेलसंड सूगर (ऊपर)** मामले के निर्णय पर विचार करने के बाद दिया गया है, चॉकलेट के सिवाए प्रश्नगत उत्पाद दुग्ध उत्पाद है और, इसलिए, प्रत्यर्थीगण ने सही प्रकार से बाजार फीस उद्ग्रहित किया है।

7. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया कि झारखंड राज्य के सृजन के पहले समस्त विधियाँ जो प्रवृत्त थी और जिन्हें अपनाया गया है, वे इस सरल कारण से समस्त अधिसूचनाओं के साथ अपनायी गयी है जिन्हें झारखंड राज्य के सृजन के पहले जारी किया गया था क्योंकि जब एक बार अधिनियम अपनाया जाता है, समस्त नियम और कार्रवाई, आदेश और उन आदेशों के अधीन जारी अधिसूचनाएँ भी अपनायी जाती हैं। किंतु, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता याची के विद्वान अधिवक्ता के तर्कों का खंडन नहीं कर सके थे कि झारखंड राज्य के सृजन के पश्चात बिहार राज्य द्वारा जारी अधिसूचना झारखंड राज्य पर बाध्यकारी नहीं है और झारखंड राज्य में प्रवर्तनीय नहीं है।

8. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों पर विचार किया है और मामले के तथ्यों का परिशीलन किया है।

9. हमारा सुविचारित मत है कि बिहार कृषि उत्पाद बाजार अधिनियम, 1960 की धारा 2(1) (a) में दी गयी और बिहार राज्य द्वारा अपनायी गयी परिभाषा असंदिग्ध रूप से स्पष्ट है और यह कृषि बागवानी, रोपण, पशुपालन, वन, मत्स्य पालन, रेशम उत्पादन, आदि के समस्त उत्पादों, चाहे प्रसंस्कृत हो या अप्रसंस्कृत, निर्मित हों या नहीं, को सम्मिलित करती है और पशुधन अथवा मुर्गीपालन जैसा अनुसूची VIII में विनिर्दिष्ट है को सम्मिलित करती है। शब्द 'दूध' की प्रविष्टि है। दिनांक 21.8.1984 की अधिसूचना द्वारा 'दूध' से 'तरल दूध' अपवर्जित किया गया है। जिसका तद्द्वारा अर्थ है कि विधानमंडल ने काफी पहले वर्ष 1984 में बाजार फीस के उद्ग्रहण की परिधि से ''तरल दूध'' को अपवर्जित करने का और बाजार फीस उद्ग्रहित करने के लिए ''तरल दूध'' से भिन्न उत्पाद को रखने का सोच समझकर निर्णय लिया। यदि शब्द 'दूध' अनुसूची में है, यह दिनांक 21.8.2008 की अधिसूचना के बाद 'सूखा दूध' अथवा पाउडर फॉर्म में दूध के रूप में अर्थ लगाए जाने के लिए आशयित नहीं था, तब विधानमंडल ने उक्त अनुसूची से स्वयं प्रविष्टि 'दूध' को काट दिया होता। हम याची के विद्वान अधिवक्ता के तर्क को स्वीकार करने में अक्षम हैं कि दूध जेनरिक नाम है और मक्खन तथा घी इसकी प्रजातियाँ है और स्वतंत्र वस्तु नहीं हैं, अत: मक्खन और घर पृथक रूप से अनुसूची में उल्लिखित किए गए हैं। हमारे मत में, मक्खन और घी वाणिज्यिक रूप से सुभिन्न हैं और पृथक वस्तु के रूप में लोगों को ज्ञात है जिसे आम आदमी भी बोलचाल की भाषा में पूरी तरह समझता है, अत:, मक्खन और घी को उक्त प्रविष्टि में पृथक रूप से सम्मिलित किया गया है। किंतु अनुसूची में मक्खन तथा घी की विनिर्दिष्ट प्रविष्टि उस संकुचित बनाए गए दूध (तरल दूध को अपवर्जित करते हुए) की प्रविष्टि उपदर्शित नहीं करती है जिसका अर्थ सूखा दूध पाउडर है अथवा ऐसी परिभाषा के अंतर्गत नहीं है।

10. अब याची के उत्पाद, विशेषत: जिसे बेबी फूड के नाम में खासकर बेचा जाता है, के संबंध में प्रश्न बना रहता है जिस पर काफी जोर दिया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने परिश्रमपूर्वक तर्क किया है कि याची अत्यन्त परिष्कृत मशीनरी की मदद से और वैज्ञानिकों के सलाह के अधीन उक्त उत्पाद का उत्पादन कर रहा है और शिशुओं के लिए भोजन तैयार कर रहा है जो शिशु के आहार के लिए विटामिनों और आवश्यक अवयवों को सम्मिलित करते हैं और याची के उत्पाद को उनके जेनरिक नाम, वाणिज्यिक नाम अथवा ट्रेडनाम से अनुसूची में सम्मिलित नहीं किया गया है।

11. हमारा सुविचारित मत है कि यथासंभव अनुसूची में वस्तु के आच्छादन को स्पष्ट बनाने के लिए वस्तुओं का उल्लेख किया गया है और कभी-कभी जेनरिक नाम का भी उल्लेख किया गया है ताकि जेनरिक नाम के अनेक उत्पादों को आच्छादित किया जा सके किंतु ऐसा स्पष्टीकरण किसी प्रयोजन से

किया गया है और न कि अनुसूची में मुख्य प्रविष्टि के अन्य उत्पाद को अपवर्जित करने के प्रयोजन से जो वर्ष 1960 के अधिनियम की धारा 2(1) (a) के फलस्वरुप आच्छादित हैं। किंतु, अनुसूची में ब्रांड नाम अथवा ट्रेड नाम देना सामान्यत: अज्ञात है। हमारे मत में, फीस वर्ष 1960 के अधिनियम के अधीन वस्तु और इसके उत्पाद पर है और न कि ट्रेड नाम पर और हमारे मत में यह ट्रेड नाम के आधार पर इस कारण से नहीं हो सकता है क्योंकि स्वयं ट्रेड नाम वस्तु नहीं है और विनिर्दिष्ट केंद्रीय विधि द्वारा शासित है। केवल यही नहीं, अनुसूची में ट्रेड नाम का उल्लेख किया जाना इस कारण से विधि को बिल्कुल अकरणीय बनाएगा क्योंकि एक ही और समरुप उत्पाद अनेक निर्माताओं द्वारा उत्पादित किए जा सकते हैं और उस स्थिति में, अनुसूची में उनके ट्रेड नाम के समस्त उत्पादों का उल्लेख करने की आवश्यकता होगी जो संभव नहीं है। समस्त निर्माताओं के समस्त उत्पादों के नाम का उल्लेख अनुसूची में करके समस्या का समाधान नहीं होगा बल्कि समस्या गंभीर होगी क्योंकि उसी अथवा नए निर्माताओं के उसी कृषि अथवा पशुपालन उत्पाद से और उसी उत्पाद के लिए अपने नए ट्रेड नाम के साथ आने की संभावना है। तब, उस स्थिति में, ट्रेड नाम से वस्तु को सम्मिलित करने के लिए किसी सरकार के लिए अधिसूचना जारी करना बिल्कुल अकरणीय होगा। अत:, याची का प्रतिवाद कि बिहार राज्य में उनके ट्रेड नाम में याची के उत्पादों में से कुछ को जैसे अमूल स्प्रे को सम्मिलित करने के लिए अधिसूचना जारी की गयी थी, का आवश्यकत: अर्थ है कि अनुसूची में सम्मिलित नहीं की गयी वस्तु विधायी बुद्धिमता के कारण सम्मिलित किए जाने के लिए आशयित नहीं थी, स्वीकार नहीं किया जा सकता है। उस स्थिति में, एक और समस्या होगी क्योंकि जब कोई किसी ट्रेड नाम के बिना उत्पाद बेच रहा होगा और इस प्रकार, तब वह फीस का भुगतान करने का दायी नहीं होगा, किंतु यदि वह ट्रेड नाम का उपयोग करके वस्तु बेचता है, तब वह फीस के भुगतान का दायी होगा। अत:, अनुसूची में वस्तु के जेनरिक नाम अथवा वाणिज्यिक रूप से ज्ञात नाम देना पर्याप्त होगा और वर्ष 1960 के अधिनियम की धारा 2(1) (a) के अधीन आच्छादित उनके समस्त उत्पाद बाजार फीस के उद्ग्रहण के अध्यधीन है।

12. याची के विद्वान अधिवक्ता के तर्कों का अधिकतम जोर **बेलसंड सूगर कं॰ मामले (ऊपर)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निष्कर्ष पर आधारित है जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय में विस्तारपूर्वक ''लैक्टोडेक्स'' और ''राप्टाकॉस'' के अवयवों का उल्लेख किया और घोषणा किया कि उक्त दो उत्पाद नवजात शिशु के उपयोग के लिए अभिप्रेत हैं जो इसकी प्राकृतिक रूप से दूध नहीं पी सकते हैं। याची के विद्वान अधिवक्ता ने **लिप्टन इंडिया लि॰ के मामले** में दिए गए इस न्यायालय की पूर्णपीठ के निर्णय को सुभिन्न करने का प्रयास भी किया और निवेदन किया कि **लिप्टन इंडिया मामले** में पूर्णपीठ द्वारा निर्णय दिया गया था क्योंकि रिट याची ने अभिवचनों में पूर्णपीठ के समक्ष तात्विक विशिष्टियों को प्रस्तुत नहीं किया था और, इसलिए, उक्त वस्तु, जो इस न्यायालय के पूर्ण पीठ के समक्ष विचाराधीन थी, को कृषि उत्पाद अभिनिर्धारित किया गया था। किंतु, यह विवादित नहीं है कि लिप्टन का उत्पाद भी सूखा दूध है और पाउडर के रूप में है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची के बेबीफूड के उत्पाद के अवयव ''लैक्टोडेक्स'' और ''राप्टाकॉस'' के जैसे हैं, अत:, **बेलसंड सूगर कं॰ लि॰ के मामले** में दिए गए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की दृष्टि में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ के निर्णय पर विश्वास नहीं किया जा सकता है।

13. हमारा सुविचारित मत है कि अधिनियम में पशुपालन की परिभाषा अत्यन्त स्पष्ट है और याची का उत्पाद विशेषत: बेबी फूड की कोटि के नाम में, केवल सूखा दूध पाउडर है। यह उत्पाद दूध के जल तत्व को वाष्पीकृत करने के लिए हॉट रॉलर्स पर दूध छिड़क कर मशीन द्वारा उत्पादित किया जाता है

जो पाउडर के रूप में दूध के ठोस तत्व में परिणत होता है। निर्विवादत: यदि पानी डाला जाता है, तब उक्त दूध पाउडर दूध के गुणों को देता है और इस प्रकार उपदर्शित प्रक्रिया को और अवयवों, जिन्हें परिशिष्ट 32 और 33 के रूप में पूरक शपथ पत्र के साथ संलग्न परिशिष्टों में दर्शाया गया है, को देखते हुए हमारा सुविचारित मत है कि दूध पाउडर केवल तरल दूध की भौतिक रूप से परिवर्तित रूप है। याचिका में यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि यदि सूखा दूध अथवा दूध पाउडर 'दूध' के अंतर्गत नहीं आ रहे हैं, तब दिनांक 21.8.1984 की अधिसूचना द्वारा 'दूध' से 'तरल दूध' को विलोपित करने का अर्थ क्या है। उक्त अधिसूचना माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष नहीं रखी गयी थी जैसा **बेलसंड सूगर कं॰ लि॰** के निर्णय में दिए गए कारणों से प्रकट है। तरलीकृत पाउडर दूध का उपयोग उन समस्त प्रयोजनों से किया जा सकता है जिनके लिए तरल दूध का उपयोग किया जा सकता है, अत:, हमारा सुविचारित मत है कि याची का उत्पाद, विशेषत: दूध पाउडर जिस पर याची द्वारा काफी जोर दिया गया है, दूध का ठोस रूप है और निश्चय ही दुग्ध उत्पाद में आता है। जहाँ तक मक्खन और घी का संबंध है, उन्हें प्रविष्टि सं॰ 7 और 8 में अनुसूची में पहले ही विनिर्दिष्टत: सम्मिलित किया गया है। याची द्वारा किसी ट्रेड नाम के अधीन बेचे गए समस्त दूध पाउडर, स्किम्ड दूध पाउडर, 'दूध' और दुग्ध उत्पाद की कोटि में आते हैं। किंतु, इस चरण पर याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उन्हें बाजार फीस के उद्ग्रहण के लिए आच्छादित किया जा सकता है, किंतु अमूल स्प्रे विनिर्दिष्टत: नवजात शिशु के लिए आशयित बेबी फूड होने के नाते आच्छादित नहीं है। किंतु, हमने याची के उस प्रतिवाद को अस्वीकार किया है।

14. हमारा दृष्टिकोण है कि अमूल चीज, अमूल चीज स्प्रेड, सागर चाय कॉफी, अमूल श्रीखंड, अमूल होल मिल्क पाउडर, सागर स्किम्ड मिल्क, बाल अमूल, अमूल्या, अमूल स्प्रे दुग्ध उत्पाद हैं। किंतु, हमारा सुविचारित मत है कि अमूल चॉकलेट स्वतंत्र और पृथक उत्पाद है और प्रत्यर्थीगण अमूल चॉकलेट के ऊपर फीस उद्ग्रहित नहीं कर सकते हैं।

15. जहाँ तक वर्ष 1960 के अधिनियम की धाराओं 3 और 4 के अधीन नयी अधिसूचना नहीं जारी करने के संबंध में याची के विद्वान अधिवक्ता के प्रतिवाद का संबंध है, हमारा मत है कि इस निवेदन में बल नहीं है क्योंकि विधियाँ जो झारखंड राज्य के सृजन के पहले से प्रवृत्त हैं, यदि उन्हें अपनाया जाता है, तब वे अधिसूचना और अधिनियम के अधीन पारित आदेशों, जिन्हें झारखंड राज्य के सृजन के पहले जारी किया गया था, के साथ अपनाया गया माना जाएगा।

16. अत:, याची की रिट याचिका खारिज की जाती है किंतु, व्यय के आदेश के बिना।

17. दिनांक 13.3.2002 का अंतरिम आदेश रिक्त किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o ç'kkUr dekj] U;k;efrx.k

श्रीमती मीरा देवी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (H.B.) No. 331 of 2012. Decided on 10th December, 2012.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका–लड़के की अभिरक्षा–याची के गायब पुत्र को प्रत्यर्थी की अभिरक्षा में पाया गया था–प्रत्यर्थी लड़के की अभिरक्षा याची को देने का इच्छुक नहीं है–लड़के का डी॰ एन॰ ए॰ प्रोफाइल याची के डी॰ एन॰ ए॰ प्रोफाइल से मेल खाता है–प्रश्नगत लड़का याची की जैविक संतान है–प्रत्यर्थी लड़के की माता नहीं है जिसने अपने भाई-बहन को भी पहचाना है–उचित सत्यापन करने पर, बाल संप्रेक्षण गृह के निदेशक ने लड़के की अभिरक्षा याची को सौंपने का निर्देश दिया। (पैराएँ 4 से 7)

अधिवक्तागण.–M/s N. K. Pasari, Sudhir Kumar Singh, P.A.S. Pati, For the Petitioner; M/s. R. Mukhopadhyay, Ramesh Kumar Singh, Ashish Verma, For the Respondents.

आदेश

वर्तमान याचिका याची द्वारा लड़के अर्थात् सुनील ओराँव उर्फ रविश उर्फ किट्टू कुमार की अभिरक्षा पाने के लिए दाखिल की गयी है। याची के अधिवक्ता द्वारा प्रतिवाद किया गया है कि लड़का जिसे प्रत्यर्थी सं॰ 7 की अभिरक्षा में पाया गया था याची का पुत्र है और वह लड़का (अपना पुत्र) पहले ही खो चुकी थी। याची का पुत्र दिनांक 17 मार्च, 2010 से गायब था। इस प्रभाव की सूचना सुखदेवनगर पुलिस थाना, राँची को दी गयी थी, किंतु पुलिस द्वारा कोई कदम नहीं उठाया गया था। तत्पश्चात्, याची को अपने पुत्र का पता चला और अंतत: उन्होंने अपने पुत्र की तलाश कर ली। वे संबंधित पुलिस थाना गए और पुन: प्रत्यर्थी सं॰ 7 के घर गए थे। याची द्वारा और लड़के के भाई-बहन द्वारा लड़के को पहचाना गया था, किंतु प्रत्यर्थी सं॰ 7 ने याची को लड़के की अभिरक्षा देने से इनकार किया और, इसलिए, याची ने सुनील ओराँव उर्फ रविश उर्फ किट्टू कुमार की अभिरक्षा पाने के लिए वर्तमान याचिका दाखिल किया है।

2. इस न्यायालय ने दिनांक 7 नवंबर, 2012 के आदेश के तहत लड़के को पुलिस के साथ और गणेशपुर गाँव, पी॰ एस॰ चान्हो, जिला राँची की फूलचंद माहली की पत्नी किसी पछवा देवी जो गणेशपुर गाँव, पी॰ एस॰ चान्हो, जिला-राँची के बोर्ड की सदस्य है के साथ न्यायालय में बुलाया था। मामला दिनांक 8 नवंबर, 2012 के लिए नियत किया गया था। उस दिन, इस न्यायालय ने प्रत्यर्थी राज्य प्राधिकारियों को मातृत्व के विनिश्चियकरण के लिए याची, प्रत्यर्थी सं॰ 7 और लड़के का डी॰ एन॰ ए॰ टेस्ट करवाने का निर्देश दिया था। न्यायालयिक औषधि एवं विष विज्ञान, राजेन्द्र आयुर्विज्ञान संस्थान, राँची (आर॰ आई॰ एम॰ एस॰) द्वारा आवश्यक रक्त नमूना लिया गया था। रक्त नमूनों को समुचित रूप से मुहरबंद किया गया था और मुहर के अंकण के साथ रक्त नमूनों को राजकीय न्यायालयिक प्रयोगशाला, राँची को अग्रसारित किया गया था। उक्त आदेश द्वारा, इस न्यायालय ने न्यायालयिक प्रयोगशाला की रिपोर्ट को इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए निर्देश दिया गया था। उक्त रिपोर्ट दिनांक 27 नवंबर, 2012 को प्राप्त की गयी थी और पुन: इस न्यायालय द्वारा विस्तृत आदेश पारित किया गया था। मुहरबंद लिफाफे को खोला गया था और रिपोर्ट की प्रति दोनों पक्षों के अधिवक्ता को दी गयी थी। न्यायालयिक प्रयोगशाला, राँची द्वारा दिए गए उक्त रिपोर्ट को देखते हुए, सुनील ओराँव उर्फ रविश उर्फ किट्टू कुमार का डी॰ एन॰ ए॰ प्रोफाइल याची के डी॰ एन॰ ए॰ प्रोफाइल के साथ मेल खाता है। उक्त रिपोर्ट इस रिट याचिका के अभिलेख पर है। न्यायालयिक प्रयोगशाला की रिपोर्ट में आगे स्पष्टता दी गयी है कि सुनील ओराँव उर्फ रविश उर्फ किट्टू कुमार का डी॰ एन॰ ए॰ प्रोफाइल श्रीमती बोलो ओराँव (प्रत्यर्थी सं॰ 7) के डी॰ एन॰ ए॰ प्रोफाइल से मेल नहीं खाता है और न्यायालयिक प्रयोगशाला, राँची के निदेशक द्वारा रिपोर्ट में दिया गया निष्कर्ष

यह है कि सुनील ओराँव उर्फ रविश उर्फ किट्टू कुमार श्रीमती मीरा देवी (याची) की जैविक संतान है। प्रत्यर्थी सं॰ 7 भी उक्त दिन न्यायालय में थी। अधिवक्ता के माध्यम से प्रतिनिधित्व किए जाने का अवसर देने की दृष्टि से हमने वरीय अधिवक्ता और अभिलेख अधिवक्ता नियुक्त किया था। अगली तिथि पर अर्थात् दिनांक 4 दिसंबर, 2012 को उक्त वरीय अधिवक्ता श्री विनोद पोद्दार, जो प्रत्यर्थी सं॰ 7 की ओर से अधिवक्ता के रूप में उपस्थित हो रहे थे, ने उपस्थित होने में अपनी असमर्थता व्यक्त की। तब, हमने विद्वान अधिवक्ता श्री रमेश कुमार सिंह को नियुक्त किया जिनकी सहायता श्री आशीष वर्मा द्वारा की जानी थी। आज हमनें दोनों पक्षों के अधिवक्ताओं को विस्तारपूर्वक सुना है।

3. प्रत्यर्थी सं॰ 7 के अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया है कि डी॰ एन॰ ए॰ टेस्ट में गलती का न्यूनतम मौका है, किंतु तथ्य बना रहता है कि याची को लड़के की अभिरक्षा देने के लिए न्यायालय को अनन्य रूप से केवल डी॰ एन॰ ए॰ टेस्ट पर विश्वास नहीं करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, तीन व्यक्तियों के रक्त नमूनों, जिन्हें न्यायालयिक औषधि एवं विष विज्ञान, राजेन्द्र आयुर्विज्ञान संस्थान, राँची द्वारा लिया गया था, को पुलिस को सौंपा गया था और, तत्पश्चात, पुलिस ने इसे राज्य न्यायालयिक प्रयोगशाला, राँची को सौंपा था और, इसलिए, रक्त नमूनों के छल साधन का कुछ अवसर है। प्रत्यर्थी सं॰ 7 के अधिवक्ता ने यह भी इंगित किया है कि याची को लड़के की अभिरक्षा देने के लिए अथवा लड़के के मातृत्व या लड़के के पितृत्व को विनिश्चित करने के लिए अभिलेख पर कुछ अन्य साक्ष्य होने चाहिए।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया है कि पुलिस द्वारा दर्ज बयान को देखते हुए प्रत्यर्थी सं॰ 7 का मामला यह नहीं है कि वह जैविक माता है। पुलिस द्वारा पहले ही मामला दर्ज किया गया है और पुलिस ने कतिपय बयानों को दर्ज किया है। प्रत्यर्थी सं॰ 7 ने पुलिस के समक्ष कथन किया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 7 को किसी जितेन्द्र पांडे जो ट्रक चालक है द्वारा लड़के की अभिरक्षा दी गयी थी। अब प्रश्न यह है कि जितेन्द्र पांडे की अभिरक्षा में किसका लड़का था। पुलिस ने कथन किया है कि जितेन्द्र पांडे ने नामकुम रेलवे क्रॉसिंग से लड़के की अभिरक्षा पायी थी जहाँ उसने लड़के को बिल्कुल अकेला टहलते देखा था और वहाँ से उसने लड़के की अभिरक्षा ली थी और, अंततः चूँकि ट्रक चालक गाँव गणेशपुर का था, अभिरक्षा प्रत्यर्थी सं॰ 7 को दी गयी थी, जबकि याची पहले ही पुलिस थाना अर्थात सुखदेव नगर पुलिस थाना, राँची गया था कि लड़का दिनांक 17 मार्च, 2010 से गायब था। इसके अतिरिक्त, लड़के ने भी वर्तमान याची को पहचाना था जब याची प्रत्यर्थी सं॰ 7 के पास गयी थी। याची को एक और पुत्री और पुत्र है जो प्रश्नगत लड़के के भाई-बहन हैं। इस लड़के सुनील ओराँव उर्फ रविश उर्फ किट्टू कुमार ने अपने भाई-बहन को भी पहचाना है जो वर्तमान याची के पुत्र और पुत्री हैं। इसके अतिरिक्त, डी॰ एन॰ ए॰ टेस्ट रिपोर्ट ने स्पष्टतः कथन किया है कि याची लड़के अर्थात् सुनील ओराँव उर्फ रविश उर्फ किट्टू कुमार की जैविक माता है और इसकी दृष्टि में लड़के की अभिरक्षा याची को सौंपी जा सकती है। याची के अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची लड़के और प्रत्यर्थी सं॰ 7 के रक्त नमूनों को लेने में प्रत्यर्थी राज्य प्राधिकारियों द्वारा कोई गलती नहीं की गयी है। तीन व्यक्तियों के रक्त नमूनों को न्यायालयिक औषधि एवं विष विज्ञान, राजेन्द्र आयुर्विज्ञान संस्थान, राँची द्वारा लिया गया था। समस्त तीनों रक्त नमूनों को समुचित रूप से मुहरबंद किया गया था। मुहर का अंकण भी किया गया था और मुहरबंद लिफाफे में यह न्यायालयिक प्रयोगशाला, राँची पहुँचाया गया था। न्यायालयिक प्रयोगशाला, राँची द्वारा दिए गए रिपोर्ट को देखते हुए, मुहर कायम थी। द्वितीयतः, मुहर न्यायालयिक औषधि एवं विष विज्ञान,

राजेन्द्र आयुर्विज्ञान संस्थान, राँची द्वारा दिए गए मुहर के अंकण के साथ मेल खाता था। इस प्रकार, समुचित रूप से मुहरबंद दशा में रक्त के नमूने न्यायालयिक प्रयोगशाला, राँची पहुँचे थे, जहाँ उन्हें खोला गया था और आवश्यक परीक्षाएँ की गयी थी और लड़के का डी॰ एन॰ ए॰ प्रोफाइल अब याची के डी॰ एन॰ ए॰ प्रोफाइल से मेल खा रहा है। न्यायालयिक प्रयोगशाला द्वारा दिए गए रिपोर्ट में यह भी कथन किया गया है कि लड़के का डी॰ एन॰ ए॰ प्रोफाइल प्रत्यर्थी सं॰ 7 के डी॰ एन॰ ए॰ प्रोफाइल के साथ मेल नहीं खाता है और न्यायालयिक प्रयोगशाला, राँची के निदेशक और उपनिदेशक द्वारा पहुँचा गया निष्कर्ष यह है कि सुनील ओराँव उर्फ रविश उर्फ किट्टू कुमार श्रीमती मीरा देवी (याची) की जैविक पुरुष संतान है। राज्य के अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 7 के मुताबिक भी लड़का प्रत्यर्थी सं॰ 7 का पुत्र नहीं है। वस्तुतः, लड़का बिल्कुल अकेले नामकुम रेलवे क्रॉसिंग के निकट टहल रहा था। राज्य के अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया था कि याची का पति गोरखपुर (उत्तर प्रदेश) गया था, जहाँ उन्होंने अपना पुत्र खो दिया था जबकि राज्य के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि सुनील ओराँव उर्फ रविश उर्फ किट्टू कुमार, जब यह लड़का बिल्कुल अकेले नामकुम रेलवे क्रॉसिंग जो झारखंड राज्य की राजधानी के निकट है के पास टहल रहा था, की अभिरक्षा आरंभ में किसी जितेन्द्र पांडे द्वारा पायी गयी थी जो ट्रक चालक था। उसने लड़के की अभिरक्षा लिया और चूँकि वह गाँव गणेशपुर, पी॰ एस॰ चान्हो, जिला राँची का था, वह लड़के के साथ गणेशपुर गाँव पहुँचा और प्रत्यर्थी सं॰ 7 को लड़के की अभिरक्षा सौंपा। इस प्रकार, प्रत्यर्थी सं॰ 7 सुनील ओराँव उर्फ रविश उर्फ किट्टू कुमार की माता नहीं है और मामले के इस पहलू को अब राजकीय न्यायालयिक प्रयोगशाला, राँची द्वारा दिए गए रिपोर्ट द्वारा वैज्ञानिक रूप से स्पष्ट किया गया है, अतः, लड़के की अभिरक्षा याची को सौंपी जा सकती है। राज्य के अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि यदि प्रत्यर्थी सं॰ 7 यह सिद्ध करने के लिए कि वह लड़के की माता है, कोई घोषणात्मक वाद दाखिल करना चाहती है, वह स्वतंत्र कार्यवाही आरंभ करके ऐसा कर सकती है, किंतु, जहाँ तक इस कार्यवाही का संबंध है, याची के पक्ष में डी॰ एन॰ ए॰ रिपोर्ट है और, इसलिए, लड़के की अभिरक्षा याची को सौंपी जा सकती है।

5. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, यह प्रतीत होता है कि वर्तमान याची का पुत्र दिनांक 17 मार्च, 2010 से गायब था। उस प्रभाव की सूचना सुखदेव नगर पुलिस थाना को दी गयी थी। उस प्रभाव का समाचार पत्र प्रकाशन भी था। तत्पश्चात् लड़के का पता नहीं लगाया जा सका था। याची को अपने पुत्र के ठिकाने का पता चला कि लड़का किसी के साथ स्थान विशेष पर रह रहा था। वह चान्हो पुलिस थाना (राँची) के अधीन गणेशपुर गाँव पहुँची जहाँ याची का पुत्र प्रत्यर्थी सं॰ 7 के साथ खेल रहा था। लड़के ने भी याची को पहचाना। याची का एक और पुत्र एवं पुत्री है जो प्रश्नगत लड़के के भाई-बहन हैं। इस लड़के ने अपने भाई-बहन को भी पहचाना, किंतु प्रत्यर्थी सं॰ 7 ने सुनील ओराँव उर्फ रविश उर्फ किट्टू कुमार की अभिरक्षा याची को देने से इनकार किया, अतः वर्तमान याचिका दाखिल की गयी है। जैसा यहाँ ऊपर कथन किया गया है, हमने प्रत्यर्थीगण पर नोटिस जारी किया है। लड़के को इस न्यायालय के समक्ष पेश करने का आदेश दिया गया था। इस न्यायालय ने याची के व्यय पर आवश्यक रक्त नमूनों को लेकर डी॰ एन॰ ए॰ टेस्ट करने का एक अन्य आदेश भी पारित किया। याची, प्रत्यर्थी सं॰ 7 और प्रश्नगत लड़के का रक्त नमूना लिया गया था। जैसा राज्य के अधिवक्ता द्वारा कथन किया गया है, न्यायालयिक औषधि एवं विष विज्ञान, राजेन्द्र आयुर्विज्ञान

संस्थान, राँची द्वारा रक्त नमूनों को लिया गया था। तत्पश्चात्, रक्त नमूनों को समुचित रूप से मुहरबंद किया गया था। न्यायालयिक प्रयोगशाला, राँची द्वारा समुचित मेल मिलाने के लिए सील अंकण भी किया गया था। तत्पश्चात् रक्त नमूनों को न्यायालयिक प्रयोगशाला, झारखंड राज्य, राँची भेजा गया था। हमने उक्त तीनों व्यक्तियों के रक्त नमूनों का रिपोर्ट प्राप्त किया और न्यायालयिक प्रयोगशाला, राँची के निदेशक और उपनिदेशक द्वारा संयुक्त रूप से दिए गए रिपोर्ट में कथन किया गया है कि मुहर कायम थी और वे सील के अंकण के साथ मेल भी खा रही थी। डी॰ एन॰ ए॰ टेस्ट किया गया था और सुनील ओराँव उर्फ रविश उर्फ किट्टू कुमार का डी॰ एन॰ ए॰ प्रोफाइल याची के डी॰ एन॰ ए॰ प्रोफाइल से मेल खाता था। न्यायालयिक प्रयोगशाला द्वारा दिए गए रिपोर्ट में यह कथन भी किया गया है कि लड़के का डी॰ एन॰ ए॰ प्रोफाइल प्रत्यर्थी सं॰ 7 के डी॰ एन॰ ए॰ प्रोफाइल के साथ मेल नहीं खाता है और, न्यायालयिक प्रयोगशाला के निदेशक और उपनिदेशक द्वारा पहुँचा गया निष्कर्ष यह है कि सुनील ओराँव उर्फ रविश उर्फ किट्टू कुमार श्रीमती मीरा देवी (याची) की जैविक पुरुष संतान है। त्वरित निर्देश के लिए न्यायालयिक प्रयोगशाला, राँची के निदेशक एवं उपनिदेशक द्वारा संयुक्त रूप से किए गए संप्रेक्षण तथा निष्कर्ष निम्नलिखित हैं:–

lç{k.k%

1. çn'k fpfUgr A (lkr% bO MhO VhO ,O ok;y e vkj #b e lk[kk x;k luhy vkjko mQ jfo'k mQ fdVV dekj dk jDr) l fudky x, MhO ,uO ,O l çklr MhO ,uO ,O çkQkby i#"k dk gA

2. çn'k fpfUgr B (lkr% bO MhO VhO ,O ok;y e vkj #b e lk[kk gvk Jherh ehjk noh dk jDr) vkj çn'k fpfUgr C (lkr% bO MhO VhO ,O ok;y e vkj #b e lk[kk gvk Jherh ckyk vkjko dk jDr) e l çR;d lkr l fudkyk x;k MhO ,uO ,O l çklr MhO ,uO ,O çkQkby nk fHkUu ekuo fL=;k dk gA

3. çn'k fpfUgr A (lkr% bO MhO VhO ,O ok;y e vkj #b e lk[kk gvk luhy vkjko mQ jfo'k mQ fdVV dekj dk jDr) d lkr dk ekrd alleles çn'k fpfUgr B (lkr% bO MhO VhO ,O ok;y e vkj #b e lk[kk gvk Jherh ehjk noh dk jDr) d MhO ,uO ,O çkQkby e mifLFkr ik;k x;k gA

4. çn'k fpfUgr A (lkr% bO MhO VhO ,O ok;y e vkj #b e lk[kk gvk luhy vkjko mQ jfo'k mQ fdVV dekj dk jDr) dk ekrd alleles çn'k fpfUgr C (lkr% bO MhO VhO ,O ok;y e vkj #b e lk[kk gvk Jherh ckyk vkjko dk jDr) d MhO ,uO ,O çkQkby l Ng fofHkUu loci ij ey ugh [kkrk gA

fu"d"k%

Åij è;ku e fy, x, çn'kk ij fd, x, MhO ,uO ,O VLV ;g fu"df"kr dju d fy, i;klr g fd

1. luhy vkjko mQ jfo'k mQ fdVV dekj Jherh ehjk noh (çn'k B dk lkr) dh tfod i#"k lrku gA**"

6. इसके अतिरिक्त, प्रत्यर्थी सं॰ 7 को सुनवाई का पर्याप्त अवसर दिया गया था। वह पूर्व अवसरों पर भी न्यायालय में उपस्थित थी। आरंभ में उसने कुछ भी तर्क करने से इनकार किया। मामले की गंभीरता

और रिट याचिका के परिणामों को देखते हुए हमने अभिलेख अधिवक्ता के साथ वरीय अधिवक्ता को नियुक्त किया। वरीय अधिवक्ता श्री बिनोद पोद्दार को प्रत्यर्थी सं॰ 7 की ओर से मामले पर तर्क करने के लिए नियुक्त किया गया था। सुनवाई की अगली तिथि पर उक्त वरीय अधिवक्ता ने अपनी असमर्थता जाहिर की, अत:, हमने एक अन्य अधिवक्ता श्री रमेश कुमार सिंह को अभिलेख अधिवक्ता श्री आशीष वर्मा के साथ नियुक्त किया था। उन्होंने प्रत्यर्थी सं॰ 7 के साथ बात किया, किंतु प्रत्यर्थी सं॰ 7 ने रिपोर्ट का खंडन करते हुए कोई शपथ पत्र दाखिल नहीं किया है और न ही प्रत्यर्थी सं॰ 7 द्वारा दस्तावेज अथवा साक्ष्य पेश किया गया है, जबकि याची ने यहाँ ऊपर कथन किया है कि उसने अपने पुत्र के गायब होने के बारे में पुलिस को सूचना दी है। तत्पश्चात्, समाचारपत्र प्रकाशन भी किया गया था, लड़के के रंगीन फोटो, को याची द्वारा दाखिल याचिका के मेमो में परिशिष्ट 5 पर संलग्न किया गया था। इसके अतिरिक्त, याची के पक्ष में डी॰ एन॰ ए॰ प्रोफाइल टेस्ट है। इस बीच हमने बालक संप्रेक्षण गृह, दुमरदगा, बूटी मोड़ राँची को लड़के की अभिरक्षा सौंपा है। अत:, हम बालक संप्रेक्षण गृह, दुमरदगा, बूटी मोड़, राँची के निदेशक को सुनील ओराँव उर्फ रविश उर्फ किट्टू कुमार की अभिरक्षा याची की समुचित शिनाख्त पर याची को तुरन्त सौंपने का निर्देश देते हैं। प्रत्यर्थी सं॰ 7, यदि वह ऐसा चुनती है, समुचित फोरम के समक्ष घोषणात्मक वाद दाखिल करने के लिए स्वतंत्र है।

7. हम विद्वान अधिवक्ता श्री रमेश कुमार सिंह और श्री आशीष वर्मा द्वारा दी गयी सहायता की सराहना करते हैं। चूँकि आशीष वर्मा झारखंड राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण, राँची के अभिलेख पर अधिवक्ता हैं, उनका व्यय और शुल्क झारखंड राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण द्वारा वहन किया जाएगा। जहाँ तक अधिवक्ता श्री रमेश कुमार सिंह के व्यय और शुल्क का संबंध है, हम वर्तमान मामले में उनके तर्कों के लिए कुल फीस की ओर 10,000/- रुपयों का भुगतान करने का निर्देश झारखंड राज्य को एतद् द्वारा देते हैं। इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से चार सप्ताह के भीतर विद्वान अधिवक्ता श्री रमेश कुमार सिंह को शुल्क का भुगतान करना होगा। राज्य के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि श्री रमेश कुमार सिंह की उक्त फीस झारखंड राज्य के गृह विभाग द्वारा वहन की जाएगी।

8. लड़के अर्थात सुनील ओराँव उर्फ रविश उर्फ किट्टू कुमार जो आज न्यायालय में उपस्थित है, को आदेश के अनुपालन के लिए बालक संप्रेक्षण गृह, दुमरदगा बूटी मोड़, राँची वापस भेजने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; ,p~ lh~ feJk] U;k;efr

प्रदीप कुमार रॉय एवं एक अन्य (505 में)

जसदेव चौधरी (512 में)

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य (दोनों में)

Cr. Rev. No. 505 with 512 of 2001. Decided on 10th January, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406, 420 एवं 120B—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 239—न्यास का दांडिक भंग, छल एवं षडयंत्र–उन्मोचन याचिका अस्वीकार किया गया–यह अचल संपत्ति के बिक्री के लिए मौखिक करार है–परिवादी और याचीगण के बीच

प्रत्यक्ष लेन-देन नहीं हुआ है–याचीगण के विरुद्ध विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं है–अभिलेख पर यह दर्शाने के लिए सामग्री नहीं है कि अभियुक्तगण की ओर से आरंभ से ही परिवादी के साथ छल करने का कोई आशय था–पक्षों के बीच संविदा भंग का अभिकथन मात्र छल के लिए दांडिक अभियोजन को उद्भूत नहीं कर सकता है–विवाद, जो शुद्धतः सिविल प्रकृति का है, को दांडिक अपराध का आवरण पहनाया गया है–भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420 अथवा 120B के अधीन याचीगण के विरुद्ध कोई अपराध बनता हुआ नहीं कहा जा सकता है–केवल प्रच्छन्न हेतु के साथ परिवादी द्वारा वर्तमान अभियोजन दर्ज किया गया है–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया–याची उन्मोचित किया गया। (पैराएँ 10 से 13)

निर्णयज विधि.–(2007)14 SCC 776; 2011 (4) Crimes 179(SC)—Applied.

अधिवक्तागण.–Mr. Anil Kumar, For the Petitioners; Mr. S.S. Sahay, For the State; None, For the Opp. Party No. 2.

आदेश

एच॰ सी॰ मिश्रा, न्यायमूर्ति.–ये दोनों आवेदन एक ही मामले से उद्भूत होते हैं, अतः इन दोनों आवेदनों को साथ सुना गया था और इस एक ही आदेश द्वारा निपटाया जा रहा है।

2. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए। बार-बार बुलाए जाने के बावजूद और उसको अवसर देने के लिए मामले को स्थगित करके विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता को पर्याप्त अवसर देने के बाद भी परिवादी विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ है।

3. याचीगण परिवाद केस सं॰ 94 वर्ष 1996 में श्री ए॰ के॰ जायसवाल, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, राँची द्वारा पारित दिनांक 31.8.2001 के आदेश से व्यथित हैं जिसके द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 236 के अधीन अभियुक्तगण की ओर से दाखिल उन्मोचन के लिए आवेदन अवर न्यायालय द्वारा याचीगण को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420 और 120B के अधीन आरोप विरचित किए जाने के लिए कहते हुए अस्वीकार कर दिया गया था।

4. याचीगण को परिवाद मामला सं॰ 94 वर्ष 1996 में अभियुक्त बनाया गया है जिसे परिवादी अरुण प्रसाद अग्रवाल द्वारा मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, राँची के न्यायालय में दाखिल किया गया था जिसमें तीनों याचीगण को अभियुक्त बनाया गया था। परिवादी ने अभिकथित किया कि अभियुक्त जसदेव चौधरी उसके पास आया था और उसको सूचित किया था कि वह गाँव मधुकाम, पी॰ एस॰ सदर, राँची में अवस्थित खेवट सं॰ 3 के अधीन आर॰ एस॰ भूखंड सं॰ 5, खाता सं॰ 108 वाले 'नीलांचल कोठी' के रूप में ज्ञात उस पर खड़े भवन के साथ 4 एकड़ भूमि से संबंधित विक्रय का करार अन्य दो अभियुक्तगण के साथ किया था जो मेसर्स ग्रेट बंगाल प्रोपर्टीज एन्ड कंस्ट्रक्शन (प्रा॰) लि॰ के निदेशक थे। अभियुक्तगण के बीच परस्पर उक्त करार के शर्तों में से एक यह था कि भूमि का अंतरण प्रत्यक्षतः अभियुक्त जसदेव चौधरी को अथवा उसके नाम निर्देशितियों के पक्ष में किया जाएगा। यह अभिकथित किया गया है कि ऐसा व्यपदेशित किए जाने पर परिवादी 9500/- रुपया प्रति कट्ठा की दर पर भूमि और भवन खरीदने के लिए सहमत हुआ और उसने अभियुक्त जसदेव चौधरी को कुल 1,50,000/- रुपयों का अग्रिम भी दिया। परिवाद याचिका में यह अभिकथित किया गया है कि अभियुक्त जसदेव चौधरी को अग्रिम का भुगतान

करने के पहले परिवादी ने अन्य अभियुक्त याचीगण के साथ भी संपर्क किया था, जिन्होंने अभियुक्त जसदेव चौधरी द्वारा किए गए व्यपदेशन को अभिपुष्ट किया। तत्पश्चात, यह अभिकथित किया गया है कि उनको कानूनी नोटिस दिए जाने के बावजूद परिवादी को भूमि नहीं बेची गयी थी और परिवादी को पता चला कि उच्चतर मूल्य पर अन्य व्यक्तियों को भूमि का अंश बेच दिया गया था। परिवाद याचिका में यह कथन किया गया है कि परिवादी ने पहले ही निविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद दाखिल किया था, किंतु इसने परिवाद दाखिल करने के परिवादी के अधिकार को प्रभावित नहीं किया था। यह अभिकथन करते हुए कि अभियुक्तगण का आरंभ से ही छल करने का आशय था, परिवाद मामला दाखिल किया गया था।

5. परिवादी का बयान सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान पर दर्ज किया गया था जिसमें उसने अपने मामले का समर्थन किया और जाँच के चरण पर उसने दो गवाहों का परीक्षण किया जिन्होंने परिवादी के मामले का समर्थन किया और तद्नुसार, अभियुक्तगण याचीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया अपराध पाए गए थे और उनके विरुद्ध आदेशिकाएँ जारी की गयी थी। परिवादी ने आरोप के पहले स्वयं सहित तीन गवाहों का परीक्षण किया, और तत्पश्चात याचीगण ने उन्मोचन के लिए अपना आवेदन दाखिल किया, जिसे आक्षेपित आदेश द्वारा अवर न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था।

6. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश पूर्णत: अवैध है, क्योंकि परिवाद याचिका से यह प्रकट होगा है कि पक्षों के बीच लिखित करार नहीं था। याचीगण प्रदीप कुमार रॉय और अशोक कुमार मंडल की ओर से यह निवेदन किया गया है कि इन याचीगण और परिवादी के बीच मौखिक करार तक नहीं था और यद्यपि परिवाद याचिका में यह अभिकथित किया गया है कि अभियुक्त जसदेव चौधरी को 1,40,000/- रुपयों का ड्राफ्ट और 10,000/- रुपया नगद दिया गया था किंतु कंपनी द्वारा उक्त ड्राफ्ट को नगद नहीं कराया गया है।

7. विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि स्वीकृत रूप से याचीगण प्रदीप कुमार रॉय और अशोक कुमार मंडल को मेसर्स ग्रेट बंगाल प्रोपर्टीज एण्ड कंस्ट्रक्शन (प्रा॰) लि॰ का निदेशकगण होने के नाते अभियुक्त बनाया गया है, किंतु परिवाद याचिका में ऐसा कुछ भी नहीं है ताकि याचीगण को कंपनी द्वारा किए गए अपराधों, यदि हो, के लिए प्रतिनिधिक रूप से दायी बनाया जा सके और वर्तमान मामले में कंपनी को अभियुक्त नहीं बनाया गया है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याचीगण प्रदीप कुमार रॉय और अशोक कुमार मंडल के विरुद्ध कोई अपराध बनता हुआ नहीं कहा जा सकता है भले ही परिवाद याचिका में किए गए संपूर्ण अभिकथन को स्वीकार किया जाता है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे यह निवेदन किया गया है कि किसी भी स्थिति में मामला केवल पक्षों के बीच संविदा के भंग मात्र के अभिकथन के साथ विक्रय के मौखिक करार से संबंधित है, जिसके लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 406 अथवा 420 के अधीन कोई अपराध बनता हुआ नहीं कहा जा सकता है। यह निवेदन किया गया है कि स्वीकृत रूप से संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए पक्षों के बीच सिविल वाद लंबित है और विधि सुनिश्चित है कि विक्रय का करार अचल संपत्ति में कोई हित सृजित नहीं करता है जब तक सक्षम अधिकारिता के न्यायालय द्वारा परिवादी के पक्ष में संविदा के विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री पारित नहीं की जाती है।

8. अपने प्रतिवाद के समर्थन में, विद्वान अधिवक्ता ने **ऑल कारगो मूवर्स (इंडिया) प्राईवेट लिमिटेड एवं अन्य बनाम धनेश बदरमल जैन एवं एक अन्य, (2007)14 SCC 776** में भारत के

सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि संविदा का भंग मात्र अपराध गठित नहीं करता है। **मेसर्स थर्मेक्स लि॰ एवं अन्य बनाम के॰ एम॰ जॉनी एवं अन्य, 2011 (4) Crimes 179 (SC)** में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भी विश्वास किया गया है, जिसमें भी यह अभिनिर्धारित किया गया था कि संविदा का भंग मात्र छल के लिए दांडिक अभियोजन को उद्भूत नहीं कर सकता है जब तक संव्यवहार के आरंभ से ही कपटपूर्ण अथवा गैर ईमानदार आशय दर्शाया नहीं जाता है। उक्त मामले में यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रतिनिधिक दायित्व की धारणा दांडिक विधि में अज्ञात है और किसी व्यक्ति के विरुद्ध विनिर्दिष्ट अभिकथन की अनुपस्थिति में बोर्ड के सदस्यों अथवा कंपनी के वरीय कार्यपालक को प्रतिनिधिक रूप से दायी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है। इन निर्णयों पर विश्वास करते हुए विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420 अथवा 120B के अधीन अपराध बनता हुआ नहीं कहा जा सकता है और यह याचीगण के उन्मोचन के लिए सुयोग्य मामला है।

9. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है, क्योंकि आक्षेपित आदेश अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर आधारित है और परिवाद याचिका में अभिकथन है कि अभियुक्तगण का आरंभ से ही परिवादी के साथ छल करने का आशय था। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप लायक आक्षेपित आदेश में अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं है।

10. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर, मैं पाता हूँ कि यह अचल संपत्ति के विक्रय के लिए करार का मामला है और वह भी पक्षों के बीच केवल मौखिक संविदा का मामला है। स्वीकृत रूप से, परिवादी और याचीगण प्रदीप कुमार रॉय और अशोक कुमार मंडल, जिन्हें मेसर्स ग्रेट बंगाल प्रोपर्टीज एण्ड कंस्ट्रक्शन (प्रा॰) लि॰ के निदेशकगण होने के नाते अभियुक्तगण के रूप में कतारबद्ध किया गया है, के बीच प्रत्यक्ष ब्यौहार नहीं है। उनके विरुद्ध इसके सिवाए विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं है कि अभियुक्त जसदेव चौधरी के साथ अभिकथित मौखिक करार करने के पहले परिवादी ने इन याचीगण से संपर्क किया जिन्होंने अभियुक्त जसदेव चौधरी द्वारा किए गए व्यपदेशन को अभिपुष्ट किया। इसके अतिरिक्त, मैं अभिलेख से पाता हूँ कि यद्यपि परिवाद याचिका में अभिकथित किया गया है कि याचीगण का आरंभ से ही परिवादी के साथ छल करने का आशय था, किंतु इस अभिकथन के समर्थन में अभिलेख पर कोई भी साक्ष्य नहीं लाया गया है। परिवादी का बयान सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान पर दर्ज किया गया था और उसने जाँच के चरण पर दो और गवाहों का परीक्षण किया था, किंतु न तो परिवादी और न ही उसके गवाहों ने अभिसाक्ष्य दिया है कि अभियुक्तगण का आरंभ से ही परिवादी के साथ छल करने का आशय था। तत्पश्चात, परिवादी सहित तीनों गवाहों का आरोप के पहले परीक्षण किया गया था, किंतु उस चरण पर भी न तो परिवादी ने और न ही उसके द्वारा परीक्षण किए गए किसी गवाह ने कथन किया कि अभियुक्त याचीगण का आरंभ से ही परिवादी के साथ छल करने का आशय था।

11. इस प्रकार, अभिलेख पर यह दर्शाने के लिए सामग्री नहीं है कि अभियुक्तगण की ओर से आरंभ से ही परिवादी के साथ छल करने का कोई आशय था और परिवाद याचिका में इस अभिकथन के बिना केवल पक्षों के बीच मौखिक संविदा के भंग मात्र का अभिकथन है। मैं याचीगण के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन में बल पाता हूँ कि पक्षों के बीच संविदा भंग का अभिकथन मात्र छल के लिए

दांडिक अभियोजन को उद्भूत नहीं कर सकता है और इस मामले के तथ्य **ऑल कारगो मूवर्स (इंडिया) प्राईवेट लिमिटेड (ऊपर)** और **मेसर्स थर्मेक्स लि॰ (ऊपर)** मामलों में भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों से पूर्णत: आच्छादित हैं। मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि भले ही परिवाद याचिका में किए गए संपूर्ण अभिकथन और अभिलेख पर लाए गए सामग्री को इस तथ्य कि स्वयं परिवाद याचिका में उल्लेख है कि परिवादी ने संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए सिविल वाद दाखिल किया था जो अभी भी लंबित है, के साथ उनकी संपूर्णता में स्वीकार किया जाता है, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420 और 120B के अधीन याचीगण के विरुद्ध अपराध बनता हुआ नहीं कहा जा सकता है, और वर्तमान अभियोजन परिवादी द्वारा केवल प्रच्छन्न हेतु के साथ दर्ज किया गया है। वस्तुत:, विवाद, जो शुद्ध सिविल प्रकृति का है, को दांडिक अपराध का आवरण पहनाया गया है। इस प्रकार, आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

12. पूर्वोल्लिखित चर्चा की दृष्टि में, परिवाद केस सं॰ 94 वर्ष 1996 में श्री ए॰ के॰ जायसवाल, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, राँची द्वारा पारित दिनांक 31.8.2001 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। परिणामस्वरुप, याचीगण उन्मोचित किए जाते हैं।

13. तद्नुसार, इन आवेदनों को अनुज्ञात किया जाता है। अवर न्यायालय अभिलेख को तुरन्त वापस भेजा जाए।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn] U;k;efr

बिनोद कुमार मित्तल

cuke

झारखंड राज्य

Cr. M.P. No. 1165 of 2012. Decided on 7th January, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 287 एवं 304(A)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 4 एवं 482—कारखाना अधिनियम, 1948–धारा 92—औद्योगिक उपेक्षा–मजदूर की मृत्यु–संज्ञान–प्राथमिकी में किए गए अभिकथन कारखाना अधिनियम की धारा 92 में अंतर्विष्ट प्रावधानों के परिधि के बिल्कुल भीतर हैं–कारखाना अधिनियम के विशेष विधान होने के नाते इसके प्रावधान दं॰ प्र॰ सं॰ के प्रावधान के ऊपर अभिभावी होंगे–विशेष विधान के अंतर्गत आने वाले मामले से संबंधित अन्वेषण, जाँच अथवा विचारण को सामान्य विधि के अधीन करने की अनुज्ञा नहीं है–संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की गयी–आवेदन अनुज्ञात।

(पैराएँ 13 से 17)

अधिवक्तागण.–M/s M.M. Sharma, K.M. Verma, For the Petitioner; Mr. Tapas Kabiraj, For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन दिनांक 8.3.2011 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन तत्कालीन मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, सरायकेला-खरसाँवा ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 287 और 304A के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया।

3. यह प्रतीत होता है कि कोई जन्मेजय उर्फ जर्मेन्द्र माँझी, जो मेसर्स मोहित देव आटा चक्की में कार्यरत था, की मृत्यु हो गयी जब वह दिनांक 24.8.2010 को दुर्घटनाग्रस्त हुआ, जब वह कारखाना में काम कर रहा था। जब ऐसी सूचना कारखाना निरीक्षक को दी गयी, उसने आटा चक्की का दौरा किया। उसने मामले की जाँच करने पर पाया कि चूँकि प्लांट शिफ्टर को बाड़ से घेरा नहीं गया था और कि उस मशीन के ऊपर पर्यवेक्षक के पर्यवेक्षण के बिना काम किया जा रहा था दुर्घटना हुई थी जिसमें मृतक की मृत्यु हो गयी।

4. ऐसे निष्कर्ष पर आने पर परिवाद दर्ज किया गया था जिसे जी॰ पी॰ सं॰ 125 वर्ष 2010 के रूप में दर्ज किया गया था जिसमें दिनांक 23.11.2010 के आदेश के तहत कारखाना अधिनियम की धारा 92 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया था।

5. इसके बावजूद, इसी घटना के लिए प्राथमिकी दर्ज की गयी थी जिसे आदित्यपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 247 वर्ष 2010 के रूप में दर्ज किया गया था जिसमें अभिकथित किया गया है कि कारखाना प्रबंधक ने सुरक्षा बेल्ट, जूते, आदि को दिए बिना मृतक मजदूर से मशीन के ऊपर काम करने को कहा और जब वह काम कर रहा था, वह गिर गया और उसकी मृत्यु हो गयी।

6. मामले का अन्वेषण किया गया था। अन्वेषण पूरा होने पर, आरोप-पत्र दाखिल किया गया था जिस पर याची जो कारखाना का प्रबंधक हुआ करता है के विरुद्ध दिनांक 8.3.2011 के आदेश के तहत भारतीय दंड संहिता की धाराओं 287 और 304A के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया था जो चुनौती के अधीन है।

7. याची के विद्वान अधिवक्ता श्री शर्मा निवेदन करते हैं कि प्राथमिकी में जो भी अभिकथन है, वे कारखाना अधिनियम के अधीन अभियोजन के विषयवस्तु होंगे और कारखाना अधिनियम के विशेष विधान होने के नाते सामान्य विधि के प्रावधानों के ऊपर अध्यारोही प्रभाव होगा और, इसलिए, सामान्य विधि के अधीन अभियोजन अनुज्ञेय नहीं है और इसलिए, संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

8. प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है जिसमें दोहराया गया है कि चूँकि सुरक्षा उपायों को किए बिना मृतक को काम करने की अनुमति दी गयी थी, दुर्घटना हुई, अतः, याची को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 287 और 304A के अधीन अपराध करता कहा जा सकता है।

9. पक्षों की ओर से अपनाए गए दृष्टिकोण के संदर्भ में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 4 में अंतर्विष्ट प्रावधान को ध्यान में लेने की आवश्यकता है जो भारतीय दंड संहिता अथवा किसी विशेष अधिनियम के अधीन आने वाला मामले के अन्वेषण और जाँच पर विचार करती है जिसका पठन निम्नलिखित है:-

^^Hkkjrh; n.M lfgrk vkj vU; fofèk;k d vèkhu vijkèkk dk fopkj.k-&

1. Hkkjrh; n.M lfgrk (46 o"k 1860) d vèkhu lc vijkèkk dk vUo"k.k] tkp] fopkj.k vkj mud lEcUèk e vU; dk;okgh ble bld i'pkr vUrfo"V micUèkk d vulkj dh tk,xhA

*2. fdlh vU; fofèk d vèkhu lc vijkèkk dk vUo"k.k] tkp] fopkj.k vkj mud lEcUèk e vU; dk;okgh bUgh micUèkk d vulkj fdUr ,l vijkèkk d vUo"k.k] tkp] fopkj.k ;k vU; dk;okgh dh jhfr ;k LFkku dk fofu;eu dju okyh rRle; çoÙk fdlh vfèkfu;fefr d vèkhu jgr g,] dh tk,xhA***

10. इस प्रकार, संहिता की धारा 4 की उपधारा (1) प्रावधानित करती है कि किसी विपरीत विनिर्दिष्ट प्रावधान की अनुपस्थिति में संहिता में कोई चीज तत्समय प्रवृत्त किसी विशेष अथवा स्थानीय विधि को

प्रभावित नहीं करेगी। किंतु, उस प्रावधान और धारा 4 की उपधारा (2) का संयुक्त प्रभाव निम्नलिखित होगा:–

"1. fd leLr vijkèkk] pkg n.M lfgrk d vèkhu gk vFkok fdlh vU; fofèk d vèkhu] dk vUo"k.k] tkp] fopkj.k vFkok bu ij vU;Fkk fopkj lfgrk d çkoèkkuk d vulkj fd;k tk,xkA

2. ;g fu;e ml 'kr d vè;èkhu g fd vU; fofèk;k d vèkhu vFkkr Hkkjrh; nM lfgrk l fHkUu fofèk;k d vèkhu vijkèkk d lcèk e ;fn ,l vijkèkk d vUo"k.k] tkp] fopkj.k vFkok vU;Fkk fopkj dju d rjhdk dk fofu;fer dju okyk vfèkfu;eu g] ,lk vfèkfu;eu lfgrk d Åij vfHkHkkoh gkxkA

3. fo'k"k vFkok LFkkuh; fofèk d çkoèkku lfgrk e vrfo"V çkoèkkuk ij Åij vfHkHkkoh gkx tcrd fofufn"V foijhr çkoèkku ugh gA

11. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 4 के प्रावधान को ध्यान में लेने पर कारखाना अधिनियम की धारा 92 को ध्यान में लेने की आवश्यकता है ताकि अभिनिश्चित किया जा सके कि क्या प्राथमिकी में किया गया अभिकथन कारखाना अधिनियम की धारा 92 के अंतर्गत आता है।

12. कारखाना अधिनियम की धारा 92 का पठन निम्नलिखित है:–

"vijkèkk d fy, lkekU; nM-*&vfHk0;Dr :i l tlk vU;Fkk micfèkr g] mld flok, vkj èkkjk 93 d çkoèkkuk d vè;èkhu ;fn fdlh dkj[kkuk e] vFkok bld lcèk e bl vfèkfu;e vFkok bld vèkhu cuk, x, fdlh fu;ekoyh d çkoèkkuk e l fdlh d vFkok bld vèkhu fyf[kr e fn, x, fdlh vkn'k dk mYy?ku fd;k tkrk g] dkj[kkuk dk vfèkHkkxh vkj çcèkd çR;d vijkèk dk nk"kh gkxk vkj dkjkokl dh vofèk ftl nk o"kk rd c<k;k tk ldrk g vFkok tekuk ftl ,d yk[k #i;k rd c<k;k tk ldrk g vFkok nkuk d lkFk nMuh; gkx vkj ;fn nk"kfl f) d ckn mYy?ku tkjh jgrk g] vfrfjDr tekuk ftl ,d gtkj #i;k çfrfnu d fy,] tc mYy?ku bl çdkj tkjh jgrk g] vfrfjDr tekuk l nMuh; gkxA*

*ijUrq ;g fd tgk vè;k; 4 vFkok bld vèkhu cuk, x, fdlh fu;e vFkok èkkjk 87 d vèkhu fdlh çkoèkku d mYy?ku dk ifj.kke eR; vFkok xHkhj 'kkjhfjd migfr dkfjr dju okyh n?kVuk e gvk g] tekuk eR; dkfjr dju okyh n?kVuk d ekey e iPpl gtkj #i;k l vkj xHkhj 'kkjhfjd migfr dkfjr dju okyh n?kVuk d ekey e ikp gtkj #i;k l de ugh gkxhA***

13. कारखाना अधिनियम की धारा 92 में अंतर्विष्ट प्रावधानों के परिशीलन पर यह स्पष्ट है कि प्राथमिकी में किए गए अभिकथन अच्छी तरह से कारखाना अधिनियम की धारा 92 में अंतर्विष्ट प्रावधान की परिधि के अंतर्गत आते हैं।

14. इसके अतिरिक्त, मैं पाता हूँ कि कारखाना अधिनियम की धारा 105 में अंतर्विष्ट प्रावधान उस तरीके के बारे में कथन करते हैं जिस तरीके से कारखाना अधिनियम के अधीन अपराध पर विचार करना होगा। उक्त प्रावधान का पठन निम्नलिखित है:–

^vijkèk dk lKku-*&(1) fujh{kd }kjk vFkok mldh io etjh d lkFk fd, x, ifjokn d flok, bl vfèkfu;e d vèkhu fdlh vijkèk dk lKku ugh fy;k tk,xkA*

*2. çfl MIlh eftLVV vFkok çFke J.kh d nMkfèkdkjh d U;k;ky; l voj U;k;ky; bl vfèkfu;e d vèkhu nMuh; vijkèk dk fopkj.k ugh djxkA***

15. इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि कारखाना अधिनियम के प्रावधान कारखाना अधिनियम के अधीन आने वाले अपराध के अन्वेषण, जाँच और विचारण से संबंधित प्रावधान अनुबंधित करते हैं और, इसलिए, कारखाना अधिनियम के विशेष विधान होने के नाते इसके प्रावधान दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधान पर अभिभावी होंगे। दूसरे शब्दों में, विशेष विधान के अंतर्गत आने वाले मामले से संबंधित अन्वेषण, जाँच अथवा विचारण सामान्य विधि के अधीन अनुज्ञेय नहीं है।

16. इन परिस्थितियों के अधीन, आदित्यपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 247 वर्ष 2010 में संपूर्ण दांडिक कार्यवाही, जिसके अधीन भारतीय दंड संहिता की धारा 287 और 304A के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया था, एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

17. परिणामस्वरुप यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

डॉ॰ जोयेन किस्कू उर्फ जैन किस्कू उर्फ जैनेन किस्कू एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Criminal Revision No. 1044 of 2006. Decided on 11th January, 2013.

दांडिक अपील सं॰ 58 वर्ष 2002 में विद्वान तृतीय अपर सत्र न्यायाधीश फास्ट ट्रैक कोर्ट, दुमका द्वारा पारित दिनांक 26.9.2006 के निर्णय के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 304A—चिकित्सीय उपेक्षा–मरीज की मृत्यु–निजी परिवाद तब तक ग्रहण नहीं किया जाना चाहिए जब तक परिवादी ने एक अन्य सक्षम डॉक्टर द्वारा दिए गए विश्वसनीय मत के रूप में न्यायालय के समक्ष प्रथम दृष्टया साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है–प्रसव के लिए ऑपरेशन के बाद पीड़िता की मृत्यु हो गयी–मृतका का शव परीक्षण भी नहीं किया गया था–परिवादी द्वारा परीक्षित गवाह चिकित्सा विशेषज्ञ नहीं है–परिवादी द्वारा दाखिल परिवाद अवर न्यायालय द्वारा ग्रहण नहीं किया जा सकता था–आक्षेपित निर्णय, जिसके द्वारा मामला दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 311 के अधीन गवाहों के नए सिरे से परीक्षण के लिए विचारण न्यायालय के पास वापस भेजा गया था, संपोषित नहीं किया जा सकता है–अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्ति का निर्णय अभिपुष्ट किया गया–पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात।

(पैराएँ 10 एवं 11)

निर्णयज विधि.–(2005) 6 SCC 1; (2010)3 SCC 480—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Anil Kumar, For the Petitioners; A.P.P., For the State; Mrs. Sarita Gupta, For the O.P. No.2.

न्यायालय द्वारा.–याचीगण के विद्वान अधिवक्ता, राज्य के विद्वान अधिवक्ता और परिवादी वि॰ प॰ सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याचीगण दांडिक अपील सं॰ 58 वर्ष 2002 में विद्वान तृतीय अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, दुमका द्वारा पारित दिनांक 26.9.2006 के निर्णय से व्यथित हैं, जिसके द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 304A के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध अभियुक्त याचीगण

द्वारा दाखिल अपील में यद्यपि अपील अनुज्ञात की गयी थी और विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश को अपास्त कर दिया गया था किंतु मामला अपीलीय न्यायालय द्वारा किए गए संप्रेक्षणों के अनुरुप निपटाए जाने के लिए अवर विचारण न्यायालय को वापस भेजा गया था। यह कथन किया जा सकता है कि याचीगण को दोषी पाया गया था और भारतीय दंड संहिता की धारा 304A के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया था और दंडादेश के बिन्दु पर सुनवाई किए जाने पर उन्हें पी॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 205/वर्ष 1999/टी॰ आर॰ सं॰ 1626 वर्ष 2002 में विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, दुमका द्वारा पारित दिनांक 21.6.2002 के निर्णय और आदेश द्वारा प्रत्येक को एक वर्ष का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था।

3. यह प्रतीत होता है कि मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, दुमका के समक्ष परिवादी प्रदीप प्रसाद साह द्वारा परिवाद मामला दाखिल किया गया था जिसे परिवाद केस सं॰ 205 वर्ष 1999 के रूप में दर्ज किया गया था जिसमें याचीगण को अभियुक्त बनाया गया था। आक्षेपित निर्णय से यह प्रतीत होता है कि याचीगण मोहुल पहाड़ी क्रिश्चियन अस्पताल, शिकारीपाड़ा, जिला–दुमका में चिकित्सा पेशेवर थे जहाँ मृतका रेखा देवी को प्रसव के लिए भर्ती किया गया था क्योंकि वह गर्भवती थी। उसकी दशा को देखते हुए दिनांक 16.5.1999 को उसकी शल्य चिकित्सा की गयी थी और अंततः, दिनांक 30.5.1999 को अस्पताल में उसकी मृत्यु हो गयी। दिनांक 17.6.1999 को मृतका के भाई द्वारा अपनी बहन के इलाज में अभियुक्त डॉक्टरों की ओर से चिकित्सीय उपेक्षा का अभिकथन करते हुए परिवाद याचिका दाखिल की गयी थी। यह प्रतीत होता है कि याचीगण का अंततः भारतीय दंड संहिता की धारा 304A के अधीन अपराध के लिए विचारण किया गया था। विचारण के क्रम में, अभियोजन ने तीन गवाहों का परीक्षण किया है, जो अ॰ सा॰ 1 पप्पू खान, अ॰ सा॰ 2 प्रमोद कुमार साह और अ॰ सा॰ 3 परिवादी प्रदीप प्रसाद साह हैं। अभियोजन गवाहों में से कोई भी चिकित्सा विशेषज्ञ नहीं था जो याचीगण की ओर से चिकित्सीय उपेक्षा, यदि हो, को सिद्ध कर सकता था। बचाव पक्ष की ओर से भी गवाहों का परीक्षण किया गया था और यह प्रतीत होता है कि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर अवर विचारण न्यायालय ने याचीगण को भारतीय दंड संहिता की धारा 304A के अधीन अपराध का दोषी पाया था और उनको पूर्वोक्तानुसार दोषसिद्ध और दंडादेशित किया था।

4. अवर अपीलीय न्यायालय के समक्ष याचीगण द्वारा दाखिल अपील में अवर अपीलीय न्यायालय इस निष्कर्ष पर आया कि किसी चिकित्सा विशेषज्ञ का परीक्षण नहीं किया गया था और दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन दर्ज उनके बयानों में अभियुक्तगण के समक्ष अपराध में फँसाने वाली परिस्थितियाँ नहीं रखी गयी थीं, और तद्नुसार, अवर विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के आदेश को अपास्त कर दिया, किंतु इसी समय पर परिवादी को अपने दावों के संबंध में चिकित्सा विशेषज्ञ का परीक्षण करने, यदि वह ऐसा करना चाहता है, का अवसर देने का और तत्पश्चात् उसके विरुद्ध सामने आने वाली अपराध में फँसाने वाली परिस्थितियों को रखते हुए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अभियुक्त याचीगण के बयानों को दर्ज करने का भी निर्देश दिया।

5. अवर अपीलीय न्यायालय के निर्णय से यह प्रकट है कि मृतका की मृत्यु के बाद परिवादी मृतका के मृत शरीर को अपने पुश्तैनी गाँव ले गया था जहाँ उसकी अंत्येष्टि की गयी थी और तत्पश्चात् मृतका के पति के अनुरोध पर दिनांक 17.6.1999 को परिवाद दाखिल किया गया था। आगे यह प्रकट है कि उसके दाह–संस्कार के पहले मृतका का शव परीक्षण भी नहीं किया गया था।

6. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याचीगण को इस मामले में झूठा आलिप्त किया गया है, क्योंकि मृतका का सम्यक इलाज किया गया था और अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित

निर्णय से प्रकट है कि एक भी चिकित्सा विशेषज्ञ का परीक्षण नहीं किया गया था और न ही मृतका का शव परीक्षण किया गया था ताकि चिकित्सीय उपेक्षा का कोई मामला प्रथम दृष्टया स्थापित किया जा सके। यह निवेदन भी किया गया है कि चिकित्सीय उपेक्षा के लिए चिकित्सीय पेशेवरों के अभियोजन के संबंध में **जैकब मैथ्यू बनाम पंजाब राज्य एवं एक अन्य, (2005)6 SCC 1,** में भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विधि सुनिश्चित की गयी है जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

*"52. ..... çkboV ifjokn rc rd xg.k ugh fd;k tk ldrk g tc rd ifjoknh u vfHk;Dr MkDVj dh vkj l ykijokgh vFkok mi{kk d vkjki i= dk leFku dju d fy, ,d vU; l{ke MkDVj }kjk fn, x, fo'oluh; er d :i e U;k;ky; d le{k çFke n"V;k lk{; çLrr ugh fd;k x;k g---------***

7. कुसुम शर्मा एवं अन्य बनाम बत्रा अस्पताल एवं मेडिकल रिसर्च सेन्टर एवं अन्य, (2010)3 SCC 480, में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के ऊपर याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विश्वास किया गया है जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने चिकित्सीय उपेक्षा के बिन्दु पर विस्तारपूर्वक पूर्व निर्णयों पर चर्चा की है और सिद्धांतों को अधिकथित किया है जिनको यह विनिश्चित करने के लिए कि क्या चिकित्सीय पेशेवर चिकित्सीय उपेक्षा का दोषी है, ध्यान में रखना होगा जिनका विवरण निम्नलिखित है:–

"89. gekj n'k e vkj vU; n'k e fo'k"kr% ;ukbVM fdXMe e fpfdRlh; mi{kk d vx fu.k;k d loh{k.k ij fpfdRlh; mi{kk d ekey ij fopkj djr g, dN ey fl)kr lkeu vkr gA ;g fofuf'pr djr g, fd D;k fpfdRlh; i'koj fpfdRlh; mi{kk dk nk"kh g] fuEufyf[kr fl)krk dk è;ku e j[kuk gkxk%

I. mi{kk fdlh pht dk dju d fy, yki djd fd, x, dr0; dk Hkx g tk mu vufpruk] tk lkekU; r% ekuoh; dk;dyki dk fofu;fer djr g] l ekx nf'kr ;fDr;Dr 0;fDr djxk vFkok fdlh pht dk dju d fy, tk food'khy vkj ;fDr;Dr 0;fDr ugh djxkA

II. mi{kk vijkèk dk vko';d vo;o gA vfHk;ktu }kjk LFkkfir dh tkuokyh mi{kk vkijkfèkd gkuk gh pkfg, vkj u fd doy fu.k; dh xyrh ij vkèkkfjr mi{kk ek=A

III. fpfdRlh; i'koj d ikl n{krk ,o Kku dh ;fDr;Dr Lrj gku dh mEehn dh tkrh g vkj ml n[kHkky d ;fDr;Dr Lrj dk ç;kx djuk gkxkA çR;d ekey d fo'k"k ifjfLFkfr;k d vkykd e tkph x;h u rk n[kHkky vkj n{krk dh mPpre vkj u gh U;ure Lrj fofèk }kjk vko';d cuk;h x;h gA

IV. fpfdRlh; i'koj doy rc nk;h gkxk tgk ml dk vkpj.k ml {k= e ;fDr;Dr :i l l{ke i'koj d ekud dh ryuk e uhp dk gkxkA

V. Mk;Xukfl l vkj bykt d {k= e okLrfod er fHkUurk dh xtkb'k g vkj dkb i'koj MkDVj Li"Vr% ek= blfy, mi{kkoku ugh g D;kfd ml dk er vU; i'koj MkDVj l fHkUu gA

VI. fpfdRlh; i'koj dk çk;% ,lh çfØ;k viuku d fy, dgk tkrk g tk tkf[ke dk mPprj rRo vrxLr djrh g] fdr ft l og ejht d fy, de tkf[ke fdr foQyrk d mPprj volj dk vrxLr dju okyh çfØ;k dh ryuk e

lQyrk d mPprj volj d :i e gku e bekunkjh l fo'okl djrk gA doy blfy, fd i'koj u chekjh dh xHkhjrk dk n[kr g, ejht dk mldh ihMk l eDr dju d fy, tkf[ke dk mPprj rRo viuk;k g ftlu bfPNr ifj.kke ugh fn;k] mi{kk d rY; ugh gk ldrk gA

VII. MkDVj dk mi{kkoku ugh dgk tk ldrk g tc rd og ;fDr;Dr n{krk vkj l{kerk d lkFk viu dr0;k dk ikyu djrk gA ek= blfy, fd MkDVj vU; miyCèk bykt dh ryuk e fdlh [kkl jkLr dk purk g] og nk;h ugh gkxk ;fn mld }kjk fd;k x;k bykt fpfdRlk i'kk dk Lohdk; FkkA

VIII. ;g fpfdRlh; i'kk dh çHkko'khyrk dk lgk;d ugh gkxk ;fn MkDVj viu xy e iVV d fcuk vk"kfèk ugh n ldrk gA

IX. ;g lfuf'pr djuk gekjk vkj flfoy lklkbVh dk ckè;dkjh dr0; g fd fpfdRlh; i'kojk dk vuko';d :i l ij'kku vFkok viekfur ugh fd;k tk; rkfd o Hk; vkj vk'kdk d fcuk viu i'koj dr0;k dk ikyu dj ldA

X. dHkh&dHkh fpfdRlh; i'kojk dk ifjokfn;k d ,l ox l cpkuk Hkh gkxk tk vuif{kr evkotk fudyoku d fy, fpfdRlh; i'kojk@vLirkyk fo'k"kr% futh vLirkyk vkj fDyfud ij ncko Mkyu d fy, vktkj d :i e nkfMd çfØ;k dk mi;kx djr gA fpfdRlh; i'kojk d fo#) ,lh }"ki.k dk;okgh R;Dr fd, tku ;kX; gA

*XI. fpfdRlh; i'koj lj{k.k iku d gdnkj g tc rd o ;fDr;Dr n{krk vkj l{kerk d lkFk vkj ejht d fgr e viu dr0; dk ikyu djr gA ejht dk fgr vkj dY;k.k fpfdRlh; i'koj d fy, lokifj gkuk gkxkA***

8. इन निर्णयों पर विश्वास करते हुए याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि वर्तमान मामले के तथ्यों में चूँकि चिकित्सीय उपेक्षा के किसी प्रथम दृष्टया मामले को स्थापित करने के लिए न तो मृतका का शव परीक्षण रिपोर्ट है और न ही अवर न्यायालय में किसी चिकित्सा विशेषज्ञ का परीक्षण किया गया था, मामले को वापस भेजने में अवर अपीलीय न्यायालय का दृष्टिकोण देश की विधि को अज्ञात है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आक्षेपित निर्णय, जहाँ तक यह मामला अवर न्यायालय को वापस भेजता है, विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

9. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ और परिवादी विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि आक्षेपित निर्णय में अवैधता नहीं है क्योंकि अवर न्यायालय ने पाया कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन उनके बयानों में अभियुक्तगण के सामने अपराध में फँसाने वाली परिस्थितियाँ नहीं रखी गयी थी और इस प्रकार, सर्वोच्च न्यायालय और अन्य उच्च न्यायालयों के निर्णयों पर विश्वास करते हुए अवर अपीलीय न्यायालय ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अभियुक्तगण के बयानों को दर्ज करने के लिए मामला वापस भेज दिया है और परिवादी को चिकित्सा विशेषज्ञ, यदि हो, का परीक्षण करने का अवसर भी दिया है।

10. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि स्वीकृत रूप से मृतका की मृत्यु के बाद उसका मृत शरीर परिवादी द्वारा अपने गाँव ले जाया गया था जहाँ उसकी अंत्येष्टि की गयी थी। स्वीकृत रूप से, मृतका का शव परीक्षण नहीं किया गया था। परिवादी द्वारा परीक्षण किए गए गवाह चिकित्सा विशेषज्ञ नहीं हैं बल्कि एक गवाह वाहन का चालक है

और अन्य दो गवाह स्वयं परिवादी और उसका संबंधी है। **जैकब मैथ्यू (ऊपर)** के मामले में इस संबंध में विधि सुनिश्चित है, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विनिर्दिष्टत: अभिनिर्धारित किया गया है कि प्राईवेट परिवाद ग्रहण तब तक नहीं किया जाना चाहिए जब तक परिवादी ने अभियुक्त डॉक्टर की ओर से लापरवाही अथवा उपेक्षा के आरोप का समर्थन करने के लिए एक अन्य सक्षम डॉक्टर द्वारा दिए गए विश्वसनीय मत के रूप में न्यायालय के समक्ष प्रथम दृष्टया साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है। इसी प्रकार से, **कुसुम शर्मा (ऊपर)** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने अनेक पूर्व निर्णयों पर चर्चा की है और सिद्धांतों को अधिकथित किया है जिन्हें चिकित्सीय पेशेवर की चिकित्सीय उपेक्षा का विनिश्चय करने में ध्यान में रखना होगा। इन मार्गदर्शक सिद्धांतों को विचार में लेते हुए मेरा सुविचारित मत है कि परिवादी द्वारा दाखिल परिवाद भी अवर न्यायालय द्वारा ग्रहण नहीं किया जा सकता था। तद्नुसार, विद्वान तृतीय अपर सत्र न्यायाधीश, दुमका द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय, जहाँ तक गवाहों का नए सिरे से परीक्षण करने के लिए और दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अभियुक्तगण के बयानों को नए सिरे से दर्ज करने के लिए मामला अवर विचारण न्यायालय को वापस भेजे जाने का संबंध है, इसे विधि की दृष्टि में, संपोषित नहीं किया जा सकता है।

11. पूर्वोल्लिखित चर्चा की दृष्टि में, दांडिक अपील सं॰ 58 वर्ष 2002 में विद्वान तृतीय अपर सत्र न्यायाधीश, दुमका द्वारा पारित दिनांक 26.9.2006 का निर्णय, केवल जहाँ तक इसने मामला अवर विचारण न्यायालय को वापस भेजा, एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्ति का निर्णय एतद् द्वारा संपुष्ट किया जाता है। तद्नुसार, यह पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात किया जाता है। अवर न्यायालय अभिलेख को तुरन्त वापस भेजा जाए।

---

ekuuh; vkykd flg] U;k;efr

मेसर्स लक्ष्मी बिजनेस एण्ड सीमेन्ट कंपनी प्राईवेट लिमिटेड (5802 में)

मेसर्स मथुरा इंगौट्स एण्ड स्टील कंपनी प्राईवेट लिमिटेड (7489 में)

श्री नानाक फेरो एल्वॉयज प्राईवेट लिमिटेड (7494 में)

ग्लोब स्टील एण्ड एल्वॉयज प्राईवेट लिमिटेड (7497 में)

मेसर्स वैष्णवी फेरो टेक प्राईवेट लिमिटेड (7498 में)

cuke

झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड एवं अन्य (सभी में)

W.P. (C) Nos. 5802, 7489, 7494, 7497 with 7498 of 2012. Decided on 9th January, 2013.

विद्युत अधिनियम, 2003—धारा 47 (1) (a)—प्रतिभूति जमा–पूर्व भुगतान मीटर–प्रतिभूति जमा के भुगतान से छूट का दावा–उपभोक्ता को प्रतिभूति राशि जमा करने के लिए नहीं कहा जाएगा यदि उपभोक्ता पूर्व भुगतान मीटर के माध्यम से आपूर्ति चुनता है–यदि प्रतिभूति राशि पहले ही जमा कर दी गयी है और तत्पश्चात् उपभोक्ता चुनता है और उसे पूर्व भुगतान मीटर के माध्यम से आपूर्ति प्राप्त करने की अनुमति दी जाती है, उपभोक्ता द्वारा ऐसा प्रतिभूति जमा वापस लौटा दिया जाएगा–बोर्ड की गलती और उपेक्षा के लिए उपभोक्ता को जो पूर्व भुगतान मीटर के माध्यम से आपूर्ति लेने में दिलचस्पी रखता है, सन्नियम के मुताबिक, उसे अतिरिक्त प्रतिभूति राशि जमा करने के लिए कहकर पीड़ित किए जाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए–बोर्ड को 10 माह के भीतर पूर्व भुगतान मीटर प्राप्त करने का निर्देश दिया गया–मांग पर पूर्व भुगतान आपूर्ति

मीटर को स्थापित करने के बाद इस प्रकार जमा की गयी अतिरिक्त प्रतिभूति बकाया बिलों को समायोजित करने के बाद याचीगण को लौटा दी जाएगी। (पैराएँ 5 से 10)

अधिवक्तागण.–M/s. N.K. Pasari, D.K. Pathak, For the Petitioners; M/s. Ajit Kumar, Rupesh Kumar Singh, For the Respondent.

आदेश

इन समस्त रिट याचिकाओं में अंतर्ग्रस्त विधि का सदृश प्रश्न यह है कि क्या उपभोक्ता को विद्युत अधिनियम, 2003 (संक्षेप में ''अधिनियम'') की धारा 47 की उपधारा (1) के खंड (a) के अनुसरण में प्रतिभूति जमा करने के लिए कहा जा सकता है यदि उपभोक्ता ने पूर्व भुगतान मीटर के माध्यम से आपूर्ति लेना चुना है?

2. निर्विवादत: समस्त याचीगण अधिनियम के प्रवर्तन के पहले झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड के उपभोक्तागण है। लाइसेंसी ने अधिनियम की धारा 47 की उपधारा (1) के खंड (a) के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए प्रतिभूति राशि जमा करने के लिए उपभोक्तागण अर्थात् याचीगण को विभिन्न नोटिस जारी किया। नोटिस पाने पर, समस्त याचीगण ने इसलिए उन्हें अधिनियम की धारा 47(5) की दृष्टि में प्रतिभूति जमा करने से छूट दिया जा सकता है।

3. अधिनियम की धारा 47 का पठन निम्नलिखित है:-

*"47. **çfrHkfr dh vi{kk dju dh 'kfDr-**—(1) bl èkkjk d micUèkk d vèkhu jgr g,] dkb forj.k vuKfIrèkkjh fdl h 0;fDr l] tk èkkjk 43 d vulj.k e fo|r d çnk; dh vi{kk djrk g] ml , lh ;fDr;Dr çfrHkfr nu dh vi{kk dj ldxk tk , l lHkh èku d] tk fuEufyf[kr d fy,] ml dk n; gk tk;] lnk; d fy, fofu;ek }kjk voèkkfjr dh tk,&*

(a) , l 0;fDr dk çnk; dh xb fo|r dh ckcr(;k

(b) tgk dkb fo|r ykbu ;k fo|r l;= ;k fo|r ehVj , l 0;fDr dk çnk; d fy, miyCèk djk;k tkuk g] ogk , lh ykbu ;k l;= ;k ehVj dh ckcr]

vkj ;fn og 0;fDr , lh çfrHkfr nu e vlQy jgrk g] rk forj.k vuKfIrèkkjh] ;fn og Bhd le>] ml vofèk d fy, ftl d nkjku vlQyrk tkjh jgrh g] fo|r dk çnk; dju l ;k ykbu ;k l;= ;k ehVj miyCèk djku l bUdkj dj ldxkA

(2) tgk fdl h 0;fDr u mièkkjk (1) e mfYyf[kr , lh çfrHkfr ugh nh g ;k fdl h 0;fDr }kjk nh xb çfrHkfr vfofèkekU; ;k vi;kIr gk xb g] ogk forj.k vuKfIrèkkjh ml 0;fDr l lpuk }kjk] ;g vi{kk dj ldxk fd og lpuk dh rkehy l rh l fnu d Hkhrj , l lHkh èku d lnk; d fy, tk fo|r d çnk; ;k , lh ykbu ;k l;= ;k ehVj dh ckcr ml dk n; gk x, gk] ml ;fDr;Dr çfrHkfr nA

(3) ;fn mièkkjk (2) e fufn"V 0;fDr , lh çfrHkfr nu e vlQy jgrk g rk forj.k vuKfIrèkkjh] ;fn og Bhd le>] ml vofèk d fy, ftl d nkjku vlQyrk tkjh jgh g fo|r d çnk; dk jkd ldxkA

(4) forj.k vuKfIrèkkjh mièkkjk (1) e fufn"V çfrHkfr ij cd nj d cjkcj ;k ml l vfèkd C;kt dk] tl k lc) jkT; vk;kx fofufn"V dj] lnk; djxk vkj ml 0;fDr d] ftl u , lh çfrHkfr nh g] vujkèk ij , lh çfrHkfr ykVk nxkA

*(5) dkbZ forj.k vuKfIrèkkjh mièkkjk (1) d [k.M (a) d vulj.k e çfrHkfr dh vi{kk dju dk gdnkj ugh gkxk] ;fn çnk; dh vi{kk dju okyk 0;fDr io lnk; ehVj d ekè;e l çnk; yu d fy, r;kj gk tkrk gA***

4. विद्युत आपूर्ति संहिता विनियमन, 2005 के खंड 10.1 का पठन निम्नलिखित है:–

"10.1. forj.k ykbZlsalh fdlh 0;fDr] ftldk fo|r dh vkifr vFkok vfrfjDr vkifÙk etj dh x;h g] d fy, çfrHkfr tek djuk vko';d cuk ldrk gA

ijUrq ;g fd 0;fDr] ftldk io Hkxrku ehVj d ekè;e l fo|r dh vkifr etj dh x;h g] d fy, dkbZ çfrHkfr jkf'k tek djuk vko';d ugh gkxkA

*ijUrq vkx ;g fd miHkkDrk] ftlu çfrHkfr jkf'k tek fd;k g vkj ckn e purk g vkj io Hkxrku d ekè;e l vkifr çkIr dju d fy, vuefr ikrk g] ,lh çfrHkfr tek ,l miHkkDrk d [kkr ftlls mld Hkkoh miHkkx dk eY; dkVk tkuk g d io Hkxrku ØfMV dk lek;kftr djd okil ykVk fn;k tk,xkA***

5. इस बिंदु पर विवाद नहीं है कि विद्युत अधिनियम की धारा 181 की उपधारा (2) के खंड (x) सह–पठित धारा 50 द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए झारखंड राज्य विद्युत नियामक आयोग ने दिनांक 28.7.2005 को विद्युत आपूर्ति संहिता, 2005 अधिसूचित किया है। यदि अधिनियम की धारा 47 और आपूर्ति संहिता विनियमन के खंड (x) के प्रावधान का संयुक्त पठन किया जाता है, एकमात्र व्याख्या यह होगी कि उपभोक्ता को प्रतिभूति राशि जमा करने के लिए नहीं कहा जाएगा, यदि उपभोक्ता पूर्व भुगतान मीटर के माध्यम से आपूर्ति चुनता है। किंतु, यदि प्रतिभूति राशि पहले ही जमा कर दी गयी है, और तत्पश्चात उपभोक्ता चुनता है और उसे पूर्व भुगतान मीटर के माध्यम से आपूर्ति प्राप्त करने की अनुमति दी जाती है, उपभोक्ता द्वारा ऐसा प्रतिभूति जमा उसे वापस लौटा दिया जाएगा।

6. जैसा यहाँ पर संप्रेक्षित किया गया है, वर्तमान मामले में समस्त उपभोक्ता अधिनियम, 2003 के प्रवर्तन के पहले से उपभोक्ता हैं और उन्होंने विद्युत ऊर्जा की आपूर्ति के लिए आरंभ में प्रतिभूति राशि जमा किया है। किंतु, आपूर्ति संहिता के प्रावधान के मुताबिक इसकी संगणना करने के बाद बोर्ड द्वारा प्रतिभूति की अतिरिक्त राशि मांगी जा रही है। यह भी अविवादित है कि अतिरिक्त प्रतिभूति जमा करने का नोटिस पाने पर वर्तमान समस्त उपभोक्ताओं ने पूर्व भुगतान मीटर के माध्यम से आपूर्ति का विकल्प चुना है। उनमें से किसी ने भी अतिरिक्त प्रतिभूति जमा करने की नोटिस पाने के पहले पूर्व भुगतान मीटर की आपूर्ति के लिए कभी कोई आवेदन नहीं दिया था।

7. लाइसेंसी बोर्ड के विद्वान अधिवक्ता श्री अजित कुमार निवेदन करते हैं कि एक या दूसरे कारण से आज तक लाइसेंसी द्वारा पूर्व भुगतान मीटर प्राप्त नहीं किया जा सका था और न ही आज तक पूर्व भुगतान मीटर की आपूर्ति के लिए कोई निविदा आमंत्रित की गयी है। किंतु, वह निवेदन करते हैं कि अब उन्होंने यह निवेदन करने के लिए अनुदेश पाया है कि पूर्व भुगतान मीटर प्राप्त करने के लिए लाइसेंसी द्वारा प्रत्येक प्रयास किया जाएगा ताकि इसे उपभोक्ता के अनुरोध पर लगाया जा सके जो पूर्व भुगतान मीटर के माध्यम से आपूर्ति लेना चाहते हैं। श्री अजित कुमार आगे निवेदन करते हैं कि वर्तमान याचीगण उपभोक्तागण, जिन्होंने पहले ही प्रतिभूति राशि जमा नहीं किया है, को चार समान मासिक किश्तों में अतिरिक्त प्रतिभूति राशि जमा करने की रियायत दी जा सकती है।

8. दूसरी ओर, याचीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री डी॰ के पाठक और डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 5802 वर्ष 2012 में याची के विद्वान अधिवक्ता श्री एन॰ के॰ पसारी ने निष्पक्षत: प्रतिवाद किया कि वे बोर्ड की मुश्किल समझते हैं कि लाइसेंसी बोर्ड उसको ज्ञात कारणों से पूर्व भुगतान मीटर प्राप्त नहीं कर सका था। किंतु, बोर्ड की गलती और उपेक्षा के लिए उपभोक्ता को जो पूर्व भुगतान मीटर के माध्यम से आपूर्ति लेने में दिलचस्पी रखता है, सन्नियम के मुताबिक, विद्युत आपूर्ति संहिता विनियमन के अनुरुप उस पर की गयी संगणना के मुताबिक अतिरिक्त प्रतिभूति राशि जमा करने के लिए कहकर पीड़ित किए जाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

9. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर इस न्यायालय के विनम्र मत में इस राज्य में लाइसेंसी बोर्ड मामले पर सोता प्रतीत होता है। लाइसेंसी बोर्ड को पूर्व भुगतान मीटर की आपूर्ति के लिए तत्परतापूर्वक कृत्य करना चाहिए था ताकि उपभोक्ताओं के अनुरोध पर इन्हें लगाया जा सके।

10. किंतु, तथ्य बना रहता है कि बोर्ड ने अभी तक पूर्व भुगतान मीटर की आपूर्ति के लिए नहीं कहा है। अत:, बोर्ड के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री अजित कुमार द्वारा दिए गए वचन को ध्यान में रखते हुए मामले के विचित्र तथ्यों और परिस्थितियों में मैं बोर्ड को आज के दिन से दस माह के भीतर किसी भी स्थिति में पूर्व भुगतान मीटर प्राप्त करने और आज के दिन से एक वर्ष के भीतर याचीगण के अनुरोध पर इसको लगाने का निर्देश देता हूँ। याचीगण-उपभोक्तागण जिन्होंने पहले ही अतिरिक्त प्रतिभूति जमा नहीं किया है, इसे बोर्ड के पास जमा करेंगे। उपभोक्ता, जो किस्तों के माध्यम से प्रतिभूति जमा पर रियायत इप्सित करने का आशय रखता है, आज के दिन से 15 दिनों के भीतर बोर्ड के समक्ष आवेदन दे सकता है और ऐसा आवेदन तथा वचन प्राप्त करने पर, बोर्ड छह समान मासिक किश्तों की रियायत प्रदान करेगा ताकि तद्नुसार अतिरिक्त प्रतिभूति मांग जमा किया जा सके। किंतु, स्पष्ट किया जाता है कि मांग पर पूर्व भुगतान मीटर लगाए जाने के बाद बकाया बिल यदि हो, समायोजित करने के बाद इस प्रकार जमा की गयी अतिरिक्त प्रतिभूति उपभोक्तागण-याचीगण को वापस लौटा दी जाएगी। किंतु, यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि बोर्ड आज के दिन से एक वर्ष के भीतर याचीगण के अनुरोधानुसार पूर्व भुगतान आपूर्ति मीटर लगाने में विफल रहता है, उस स्थिति में बोर्ड को बकाया बिल, यदि हो, समायोजित करने के बाद याचीगण-उपभोक्तागण द्वारा जमा की गयी अतिरिक्त प्रतिभूति राशि को लौटाना होगा। एक वर्ष के भीतर पूर्व भुगतान मीटर नहीं लगाए जाने की स्थिति में बोर्ड बकाया बिल, यदि हो, के समायोजन के बाद याचीगण-उपभोक्तागण को प्रतिभूति राशि 8% वार्षिक दर पर ब्याज के साथ वापस लौटा देगा। उपभोक्ता द्वारा पहले जमा की गयी कोई राशि अतिरिक्त प्रतिभूति की मांग की ओर समायोजित की जा सकती है।

11. तद्नुसार, समस्त रिट याचिकाएँ निपटायी जाती हैं।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

एस॰ पी॰ सिंह उर्फ सुरेश प्रसाद सिंह

cuke

भारत संघ, सी॰ बी॰ आई॰ के माध्यम से

Cr. Rev. No. 7 of 2012. Decided on 11th January, 2013.

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988—धाराएँ 7 एवं 12—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 239—अवैध परितोषण–उन्मोचन आवेदन अस्वीकार किया गया–अनुकूल रिपोर्ट पाने के लिए याची ने अभिकथित रूप से परिवादी को 5 लाख रुपया देने का प्रयास किया–याची प्रथम दृष्टया पी॰ सी॰ अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध दुष्प्रेरित करता प्रतीत होता है–उन्मोचन याचिका खारिज करते हुए आक्षेपित आदेश पारित करने में विचारण न्यायालय पूर्णतः न्यायोचित है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 10 से 16)

अधिवक्तागण.–Mr. R.S. Majumdar, For the Petitioner; Mr. M. Khan, For the C.B.I.

आदेश

यह पुनरीक्षण आवेदन आर॰ सी॰ सं॰ 10A/11D में विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा पारित दिनांक 20.12.2011 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 के अधीन याची की ओर से दाखिल उन्मोचन याचिका अस्वीकार कर दी गयी थी।

2. अभियोजन का मामला यह है कि जब अभिकथन प्राप्त किया गया था कि कुस्तोर क्षेत्र के बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के अधिकारियों ने मिट्टी/पत्थर मिला कर कोयला के स्टॉक का छल साधन किया है, सी॰ बी॰ आई॰ पदधारियों ने राजनगर ओ॰ सी॰ पी॰ का औचक निरीक्षण किया। सत्यापन के दौरान, याची, जी॰ एम॰, कुस्तोर एरिया, बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ भी उपस्थित था जिसने दिनांक 3.8.2011 की शाम किसी श्याम लामा, पुलिस इंस्पेक्टर, सी॰ बी॰ आई॰ को कोयला स्टॉक में कमी के संबंध में उससे मिलने के लिए कहा। अगली सुबह, याची ने परिवादी से उसके आधिकारिक फोन पर संपर्क किया और कोयला के स्टॉक के संबंध में संयुक्त औचक निरीक्षण टीम से अनुकूल रिपोर्ट पाने के लिए 5 लाख रुपयों के अवैध परितोषण का प्रस्ताव उसको दिया। परिवादी ने तुरन्त एस॰ पी॰, सी॰ बी॰ आई॰ को मामला सूचित किया। एस॰ पी॰, सी॰ बी॰ आई॰ ने मामले का सत्यापन करवाया और अभिकथन को सत्य पाया। तद्नुसार, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 12 के अधीन प्राथमिकी दर्ज की गयी थी। तत्पश्चात् ट्रैप टीम गठित की गयी थी।

3. आगे मामला यह है कि दिनांक 4.8.2011 को याची अपने आधिकारिक वाहन में रेलवे साइडिंग पहुँचा जहाँ कोयला स्टॉक का माप लिया जा रहा था। वहाँ याची ने श्री श्याम लामा को कुस्तोर गेस्ट हाऊस आने को कहा। तद्नुसार, श्याम लामा अतिथि गृह गया। जब वह अतिथि गृह जा रहा था, उसने अपने मोबाइल पर याची से टेलीफोन कॉल पाया जिसके द्वारा उसे कुस्तोर अतिथि गृह के प्रवेश द्वार के ठीक बाहर कार के अंदर प्रतीक्षा करने का अनुरोध किया गया था। कॉल प्राप्त करने के बाद, उसने ऐसा ही किया। तद्नुसार, परिवादी श्याम लामा ने कार में उसकी प्रतीक्षा की जहाँ याची आया और श्याम लामा से 5% से अधिक कोयले की कमी नहीं दर्शाने के लिए कहा और तब करेंसी नोट का बंडल निकाला और श्याम लामा को दिया। उसे तुरन्त पकड़ा गया था और करेंसी नोट बरामद किया गया था।

4. अन्वेषण पूरा होने के बाद, जब आरोप-पत्र दाखिल किया गया था, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 12 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया था। इस पर उन्मोचन के लिए आवेदन दाखिल किया गया था जिसे दिनांक 20.12.2011 के आदेश के तहत अस्वीकार किया गया था।

5. उस आदेश से व्यथित होकर, यह पुनरीक्षण आवेदन दाखिल किया गया है।

6. याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री मजूमदार ने निवेदन किया कि याची के विरुद्ध किए गए संपूर्ण अभिकथन को सत्य स्वीकार करने पर भी भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 12 के अधीन

अपराध नहीं बनता है, बल्कि यह अधिनियम की धारा 10 की रिष्टि के अंतर्गत आएगा किंतु उसके लिए मंजूरी आवश्यक है और चूँकि मंजूरी नहीं है, याची को न तो भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 12 के अधीन और न ही धारा 10 के अधीन अभियोजित किया जा सकता है, तद्द्वारा आक्षेपित आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

7. इसके विरुद्ध, सी॰ बी॰ आई॰ के विद्वान अधिवक्ता श्री एम॰ खान ने निवेदन किया कि चूँकि इस याची ने सी॰ बी॰ आई॰ इंस्पेक्टर को घूस देने का प्रयास किया, उसे भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध करता कहा जा सकता है और तद्द्वारा याची को सही प्रकार से भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 12 के अधीन अभियोजित किया जा रहा है।

8. निवेदन के संदर्भ में, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधान को विचार में लेने की आवश्यकता है। भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 12 का पठन निम्नलिखित है;–

> *12.* ***èkkjk 7 ;k èkkjk 11 e ifjHkkf"kr vijkèkk d n"çj.k d fy, nM&***
>
> *^^tk dkb èkkjk 7 ;k èkkjk 11 d vèkhu nMuh; fdlh vijkèk dk n"çj.k djxk] pkg ml n"çj.k d ifj.kkeLo:i dkb vijkèk ?kfVr gvk gk ;k ugh] ,lh vofèk d dkjkokl l nfMr fd;k tk,xk ftldh vofèk ikp o"k rd dh gk ldxh fdUr tk Ng ekl l de ugh gkxh vkj teku l nMuh; gkxkA***

9. धारा 7 आधिकारिक कृत्य के संबंध में विधिक पारिश्रमिक से भिन्न परितोषण लेने वाले लोक सेवक के बारे में कथन करती है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *7. ^^tk dkb ykd lod gkr g, ;k gku dh çR;k'kk j[kr g,] oèk ikfjJfed l fHkUu çdkj dk Hkh dkb ifjrk"k.k fdlh ckr dju d ç;ktu l ;k buke d :i e fdlh 0;fDr l çfrxghr ;k vfHkçkIr djxk ;k dju dk lger gkxk ;k dju dk ç;Ru djxk fd og ykd lod dkb inh; dk; dj ;k inh; dk; dju dk yki dj ;k fdlh 0;fDr dk viuh inh; dk;k d ç;kx l dkb vuxg dj ;k dju l çfrfojr dj vFkok dUnh; ljdkj ;k fdlh jkT; ljdkj ;k lln ;k jkT; d foèkku eMy ;k fdlh LFkkuh; çkfèkdkjh fuxe ;k èkkjk 2 d [kM (c) e of.kr 'kkldh; dEiuh vFkok fdlh ykd lod l] pkg ukfer gk ;k vU;Fkk ,l dkjkokl l ftldh vofèk ikp o"k rd dh gk ldxh fdUr tk Ng ekl l de dh ugh gkxh nfMr fd;k tk,xk vkj teku l Hkh nMuh; gkxkA***

10. इसके पठन से स्पष्ट है कि यदि लोक सेवक किसी व्यक्ति के पक्ष अथवा विपक्ष में अपने आधिकारिक कृत्य के प्रयोग में किसी चीज को करने अथवा नहीं करने के लिए हेतु अथवा पुरस्कार के रूप में विधिक पारिश्रमिक से भिन्न कोई परितोषण किसी व्यक्ति से स्वीकार करता है अथवा प्राप्त करता है अथवा स्वीकार करने के लिए सहमत होता है अथवा प्रयास करता है, यह कारावास से दंडनीय है जबकि कोई धारा 12 के अधीन दंडित किए जाने का दायी है यदि वह भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध करने के लिए किसी लोक सेवक को दुष्प्रेरित करता है।

11. यहाँ वर्तमान मामले में, अभियोजन के अनुसार याची ने कोयला की कमी का सही आँकड़ा

नहीं रिपोर्ट करने के लिए 5 लाख रुपया घूस के रूप में देने का प्रयास किया और तद्द्वारा याची प्रथम दृष्टया भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध दुष्प्रेरित करता प्रतीत होता है।

12. जहाँ तक याची की ओर से किए गए निवेदन कि मामला भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 10 के अधीन आता है, का संबंध है, यह सारहीन है।

13. धारा 10 धारा 8 अथवा 9 में परिभाषित अपराधों के लोक सेवक द्वारा दुष्प्रेरण के लिए दंड के बारे में कहती है। भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 8 अनुबंधित करती है कि जो कोई भी किसी लोक सेवक को किसी आधिकारिक कर्तव्य को करने अथवा नहीं करने के लिए अनुग्रह या अननुग्रह दर्शाने के लिए भ्रष्ट अथवा अवैध साधनों द्वारा उत्प्रेरित करने के लिए हेतु अथवा पुरस्कार के रूप में किसी व्यक्ति से कोई परितोषण स्वीकार अथवा प्राप्त करता है अथवा स्वीकार करने के लिए सहमत होता है, वह कारावास के साथ दंडनीय होगा। इसी प्रकार, धारा 9 लोक सेवक के साथ व्यक्तिगत प्रभाव का प्रयोग करने के लिए परितोषण लेने के बारे में कथन करती है।

14. यहाँ अभियोजन का मामला कभी नहीं है कि याची ने सी॰ बी॰ आई॰ इंस्पेक्टर को घूस देने का प्रयास किया ताकि वह किसी लोक सेवक को किसी आधिकारिक कृत्य करने अथवा नहीं करने के लिए भ्रष्ट अथवा अवैध साधनों द्वारा उत्प्रेरित कर सके और न ही अभियोजन का यह मामला है कि याची ने सी॰ बी॰ आई॰ के उक्त अधिकारी को घूस देने का प्रयास किया ताकि वह व्यक्तिगत प्रभाव का प्रयोग करके किसी लोक सेवक को आधिकारिक कृत्य करने अथवा नहीं करने के लिए उत्प्रेरित कर सके।

15. इस प्रकार, याची की ओर से किए गए निवेदन में कोई सार प्रतीत नहीं होता है।

16. मामले के विधिक पहलू जैसा ऊपर कथन किया गया है और ऊपर गौर किए गए मामले के तथ्यों को ध्यान में लेने पर विचारण न्यायालय उन्मोचन याचिका अस्वीकार करते हुए आक्षेपित आदेश पारित करने में पूर्णतः न्यायोचित प्रतीत होता है। तद्नुसार, यह आवेदन खारिज किया जाता है।

17. किंतु, इस आदेश से अलग होने के पहले यह दर्ज किया जाए कि इस मामले के निपटान के लिए किया गया कोई संप्रेक्षण पक्षों के मामले पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डाल सकता है।

---

ekuuh; ,p lhh feJk] U;k;efr

भानु प्रताप शाही

cuke

झारखंड राज्य, सी॰ बी॰ आई॰ के माध्यम से

B.A. No. 9532 of 2011. Decided on 9th January, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 120B, 420, 467, 468 एवं 471 सह-पठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1998 की धाराएँ 13 (2), (13)(1) (c) एवं 13 (1) (d)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 439—छल, कूटरचना एवं षडयंत्र–जमानत–स्वास्थ्य विभाग के उच्चाधिकारियों ने कपटपूर्वक और बेईमानी से दवाओं, चिकित्सीय उपकरण/यंत्र, छिटपुट वस्तुओं, आदि खरीदा–सी॰ बी॰ आई॰ का अन्वेषण चल रहा है–याचीगण को आपूर्तिकर्त्ता से विपुल कमीशन पाता हुआ अभिकथित किया गया है–सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा यह स्वीकृत तथ्य है कि याची का

स्वास्थ्य मंत्री होने के नाते एन॰ आर॰ एच॰ एम॰ योजना के अधीन किए जाने वाले खरीद में दखल नहीं था–भले ही याची द्वारा फाइल में कोई अनुमोदन है, यह विधि की दृष्टि में अविद्यमान है–याची को अवैध परितोषण का भुगतान सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है–याची अगस्त, 2011 से अभिरक्षा में है–शर्त के विरुद्ध जमानत दी गयी। (पैराएँ 8 से 11)

अधिवक्तागण.–M/s. Mahesh Tewari, Pankaj Kumar Dubey, Anjana Kumari, For the Petitioner; Mr. Md. Mokhtar Khan, For the C.B.I..

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और सी॰ बी॰ आई॰ के विद्वान अधिवक्ता सुने गये।

2. याची को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 120B, 420, 467, 468, 471 सह-पठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धाराओं 13 (2) सह-पठित धारा 13(1) (c) और 13 (1) (d) के अधीन अपराध के लिए आर॰ सी॰ केस सं॰ 11(A) वर्ष 2009 ए॰ एच॰ डी॰ (आर॰) के संबंध में अभियुक्त बनाया गया है।

3. प्रासंगिक समय पर याची झारखंड राज्य में स्वास्थ्य मंत्री के रूप में कार्यरत था और उसकी पदावधि दिनांक 8.2.2007 से दिनांक 23.8.2008 तक और पुनः दिनांक 27.8.2008 से दिनांक 12.1.2009 तक थी। यह मामला झारखंड राज्य में मेडिसिन स्कैम से संबंधित है जिसमें स्वास्थ्य विभाग के उच्चाधिकारियों के विरुद्ध अभिकथन है कि दांडिक षडयंत्र अग्रसर करने में और लोक सेवक के रूप में अपने आधिकारिक हैसियत का दुरुपयोग करके उन्होंने भारत सरकार द्वारा प्रायोजित एवं वित्तदत्त राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (इसके बाद 'एन॰ आर॰ एच॰ एम॰' के रूप में निर्दिष्ट) के लिए आवंटित निधि में से 1,30,50,79,951.74/- रुपयों के मूल्य की औषधि, चिकित्सीय यंत्र/उपकरण, छिटपुट वस्तु, आदि उन्नीस आपूर्तिकर्ताओं से खरीदा। खरीद अत्यन्त बढ़ी दरों पर की गयी थी और लोक सेवकों के विरुद्ध अत्यंत ऊँची दर पर आपूर्ति के लिए आदेश देने के लिए आपूर्तिकर्ताओं से करोड़ों रुपए का अवैध परितोषण स्वीकार करने का अभिकथन है। यह कथन किया जा सकता है कि याची को प्राथमिकी में नामित नहीं किया गया है और प्राथमिकी में याची के विरुद्ध अभिकथन नहीं है।

4. यह प्रतीत होता है कि सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा मामले के अन्वेषण के दौरान खरीद पर अनुमोदन करने में याची की अंतर्ग्रस्तता पायी गयी थी और यह अभिकथित किया गया है कि याची ने भी झारखंड राज्य का स्वास्थ्य मंत्री होने के नाते किसी राजेश कुमार फोगला, आपूर्तिकर्त्ता, से उसके फर्म पर अनुचित कृपा दर्शाने के लिए कमीशन/पुरस्कार के रूप में 2,16,00,000/- रुपयों की राशि प्राप्त किया था। यह भी अभिकथित किया गया है कि याची का भतीजा अर्थात् अभिषेक कुमार मेसर्स सोनांचल इंटरप्राइजेज के भागीदारों में से एक था और उक्त मेसर्स सोनांचल इंटरप्राइजेज के माध्यम से उच्च दरों पर आपूर्ति की गयी थी।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि एन॰ आर॰ एच॰ एम॰ केंद्र सरकार की प्रायोजित योजना है और राज्य सरकार के स्वास्थ्य मंत्री को उक्त परियोजना में कोई वित्तीय शक्ति नहीं थी। यह निवेदन किया गया है कि एन॰ आर॰ एच॰ एम॰ योजना में संपूर्ण निर्णय कार्यपालिका कमिटि द्वारा लिया जाना है जिसकी अध्यक्षता स्वास्थ्य सचिव और शासी निकाय के अध्यक्ष, जो राज्य के मुख्य सचिव हैं, द्वारा की जाती है और ठीक यही कारण है कि याची को आरंभ में प्राथमिकी में नामित क्यों नहीं किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि याची को केवल उक्त राजेश कुमार फोगला के बयान के आधार

पर मामले में अभियुक्त बनाया गया है, जिसके बयान को दो बार दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 164 के अधीन दर्ज किया गया था। आरंभ में उसका बयान दिनांक 5.10.2009 को दर्ज किया गया था जिसमें उसने याची का नाम बिल्कुल नहीं लिया था बल्कि उसने कथन किया था कि उसके द्वारा कमीशन के रूप में जो भी धन दिया गया था, इसे किसी श्यामल चक्रवर्ती को दिया गया था जो स्वास्थ्य विभाग के सचिव डॉ॰ प्रदीप कुमार का एजेन्ट था जो भी इस मामले में अभियुक्त है। बाद में, राजेश कुमार फोगला का बयान लगभग दस माह बीतने के बाद अर्थात् दिनांक 17.6.10 को दर्ज किया गया था जिसमें इस सह–अभियुक्त ने कथन किया है वर्ष 2008-09 के दौरान उसके फर्म ने 42,11,20,214/- रुपयों के खरीद आदेश के विरुद्ध 8,39,00,000/- रुपयों के कमीशन का भुगतान किया था जिसमें याची भानु प्रताप शाही का हिस्सा 4% और 7% था और उसे विजय शंकर सिंह और श्यामल चक्रवर्ती के माध्यम से 2,16,00,000/- रुपयों की राशि दी गयी थी। इस बयान में उक्त सह–अभियुक्त ने अन्य सह–अभियुक्त व्यक्तियों को भी किए गए भुगतान का विवरण दिया है। राजेश कुमार फोगला ने कमीशन के भुगतान का विवरण दिया है जिसमें उसने कथन किया है कि अक्टूबर, 2008 के प्रथम सप्ताह में श्यामल चक्रवर्ती को 1,40,00,000/- रुपयों का भुगतान किया गया था, पुनः नवंबर, 2008 में किसी पप्पू को 50,00,000/- रुपया दिया गया था और जनवरी, 2009 में श्यामल चक्रवर्ती को 1,40,00,000/- रुपये दिए गए थे। तत्पश्चात् मार्च, 2009 के महीने में श्यामल चक्रवर्ती को 2,50,00,000/- रुपया दिया गया था और पुनः अप्रिल, 2009 में श्यामल चक्रवर्ती और पप्पू को 2,25,00,000/- रुपया दिया गया था।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने इस बयान से इंगित किया है कि स्वास्थ्य मंत्री के रूप में याची की पदावधि दिनांक 12.1.2009 को समाप्त हो गयी और तत्पश्चात, याची पद पर कभी नहीं था। यह निवेदन किया गया है कि उक्त भुगतान के विवरण से यह प्रकट होगा कि इस बयान में अभिकथन नहीं है कि याची को प्रत्यक्ष भुगतान किया गया था। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि स्वीकृत अवस्था की दृष्टि में कि याची का राज्य सरकार के स्वास्थ्य मंत्री के रूप में एन॰ आर॰ एच॰ एम॰ योजना में किए गए खरीद में दखल नहीं था, याची को कोई भुगतान करने का अवसर नहीं था। भले ही यह स्वीकार किया जाता है कि याची को कमीशन का भुगतान किया गया था, तब भुगतानों के मुख्य अंश को स्वास्थ्य मंत्री के रूप में याची की पदावधि के बाद का दर्शाया गया था, जिसके लिए बिल्कुल अवसर नहीं था। विद्वान अधिवक्ता ने आगे इंगित किया कि धन प्राप्त करने का मुख्य अभिकथन श्यामल चक्रवर्ती के विरुद्ध है और बी॰ ए॰ सं॰ 127 वर्ष 2010 में दिनांक 30.1.2010 के आदेश के तहत इस न्यायालय द्वारा उक्त श्यामल चक्रवर्ती को पहले ही जमानत प्रदान किया जा चुका है और अन्य सह–अभियुक्त अर्थात् सियाराम प्रसाद सिन्हा, जो झारखंड राज्य में तत्कालीन स्वास्थ्य सचिव थे और एन॰ आर॰ एच॰ एम॰ के मिशन निदेशक भी थे, को एस॰ एल॰ ए॰ (दां॰) सं॰ 3425 वर्ष 2012 में दिनांक 2.1.2013 के आदेश द्वारा माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जमानत प्रदान किया जा चुका है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची दिनांक 6.8.2011 से अभिरक्षा में है और तद्नुसार जमानत को प्रार्थना की गयी है।

7. दूसरी ओर, सी॰ बी॰ आई॰ के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन करते हुए जमानत प्रार्थना का जोरदार विरोध किया है कि खरीद में अनियमितता स्वास्थ्य मंत्री के रूप में याची की पदावधि के दौरान की गयी थी और अन्वेषण के दौरान यह आया है कि स्वास्थ्य मंत्री होने के नाते याची द्वारा खरीद का अनुमोदन किया गया था। यद्यपि सी॰ बी॰ आई॰ के प्रतिशपथ पत्र में यह स्वीकार किया गया है कि याची को एन॰ आर॰ एच॰ एम॰ के अधीन शक्ति नहीं है, किंतु तथ्य बना रहता है कि याची ने संबंधित फाइल

में खरीद के लिए अनुमोदन दिया था। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची के विरुद्ध प्रत्यक्ष अभिकथन है कि याची द्वारा दिखायी गयी कृपा के लिए कमीशन के रूप में याची को 2,16,00,000/- रुपया दिया गया था और अन्वेषण के दौरान यह भी आया है कि किसी धीरेन्द्र कुमार सिंह के माध्यम से याची को 16,94,00,000/- रुपयों का भी भुगतान किया गया था। धीरेन्द्र कुमार सिंह का बयान भी दर्शाता है कि विजय शंकर नारायण सिंह और श्यामल चक्रवर्ती के माध्यम से धन का भुगतान किया गया था जिसमें याची का कमीशन भी सम्मिलित था। विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया कि किसी मेसर्स माइक्रोजेन हाइजिन प्रा॰ लि॰ को भी आपूर्ति आदेश दिया गया था जिसने मेसर्स सोनांचल इंटरप्राइजेज के माध्यम से आपूर्ति किया जिसमें याची का भतीजा भागीदार था। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची ने भी 2,16,00,000/- रुपयों और 16,94,600/- रुपया का भी अवैध परितोषण प्राप्त किया था और तद्नुसार जमानत की प्रार्थना का विरोध किया है।

8. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर, मैं पाता हूँ कि यह सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा स्वीकृत तथ्य है कि एन॰ आर॰ एच॰ एम॰ योजना के अधीन किए जाने वाले खरीद में याची का स्वास्थ्य मंत्री होने के नाते दखल नहीं था और मामले के उस दृष्टिकोण में, भले ही याची द्वारा फाइल में कोई अनुमोदन है, यह विधि की दृष्टि में अविद्यमान है। जहाँ तक अवैध परितोषण प्राप्त करने का संबंध है यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है कि 2,16,00,000/- रुपयों और 16,94,600/- रुपयों का भुगतान याची को प्रत्यक्षत: किया गया था। अवैध धन के समस्त संव्यवहार श्यामल चक्रवर्ती और विजय शंकर नारायण सिंह के माध्यम से किए गए हैं और श्यामल चक्रवर्ती को इस न्यायालय द्वारा पहले ही जमानत प्रदान किया गया है। यह भी प्रतीत होता है कि अन्य सह-अभियुक्त अर्थात् सियाराम प्रसाद सिन्हा, जो स्वास्थ्य सचिव और योजना का मिशन निदेशक कुछ अवधि के लिए था, को भी एस॰ एल॰ ए॰ सं॰ 3425 वर्ष 2012 में दिनांक 2.1.2013 के आदेश द्वारा माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जमानत प्रदान किया गया है। याची दिनांक 6.8.2011 से अभिरक्षा में है और वह लगभग एक वर्ष चार माह से अभिरक्षा में बना हुआ है।

9. मामले के उस दृष्टिकोण में, मैं याची को जमानत पर निर्मुक्त करने का इच्छुक हूँ। तद्नुसार, याची भानु प्रताप शाही को आर॰ सी॰ केस सं॰ 11(A) वर्ष 2009 AHD (R) के संबंध में विद्वान विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰ (ए॰ एच॰ डी॰), राँची की संतुष्टि हेतु 50,000/- (पचास हजार रुपये) के दो प्रतिभूतियों के साथ समान राशि का जमानत बंध प्रस्तुत करने पर जमानत पर निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है।

10. याची को अवर न्यायालय में अपना पारपत्र जमा करने का निर्देश दिया जाता है जिसे विचारण के लंबित रहने के दौरान न्यायालय में अभिरक्षा में रखा जाएगा और इस बीच याची न्यायालय की अनुमति के बिना देश नहीं छोड़ेगा।

11. आगे निर्देश दिया जाता है कि मामला लंबित रहने के दौरान याची स्वयं को आरोप-पत्र में नामित गवाहों से दूर रखेगा और यदि यह दर्शाने के लिए कुछ पाया जाता है कि याची किसी भी तरीके से आरोप-पत्र में नामित गवाहों में से किसी को प्रभावित कर रहा है, सी॰ बी॰ आई॰ को याची के जमानत के रद्दकरण के लिए समुचित आवेदन दाखिल करने की छूट होगी जिस पर अवर न्यायालय द्वारा इस आदेश से प्रभावित हुए बिना स्वयं इसके अपने गुणागुण पर विचार किया जाएगा।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

जे॰ आर॰ रक्षित

cuke

हेवी इंजीनियरिंग कॉरपोरेशन एवं एक अन्य

WP(C) No. 6513 of 2005. Decided on 4th January, 2013.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–क्वार्टर–अवकाश अनुमति और अनुज्ञप्ति के आधार पर क्वार्टर के आवंटन के लिए आवेदन इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया था कि याची का पुत्र दांडिक मामले में आलिप्त था–चूँकि याची के पुत्र को वर्ष 2009 में दोषमुक्त कर दिया गया था, इस अवधि के दौरान रिट याचिका लंबित बनी रही और रिट आवेदन के लंबित रहने के दौरान दीर्घकालिक पट्टा आधार पर एच॰ ई॰ सी॰ क्वार्टर के आवंटन के लिए परिपत्र आया था, अतः प्रत्यर्थीगण को दीर्घकालिक पट्टा आधार पर क्वार्टर के आवंटन के लिए नए परिपत्र के आधार पर याची के मामले पर विचार करने का निर्देश दिया गया–प्रत्यर्थीगण परिपत्र में अंतर्विष्ट विद्यमान मानकों और नीति के आधार पर याची के मामले पर विचार करेंगे।

(पैराएँ 8 एवं 9)

अधिवक्तागण.–M/s M.M. Pal, Mahua Palit, Ruby Pandey, For the Petitioner; Mr. R. Mukhopadhyay, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह रिट याची प्रबंधक (संपदा) द्वारा जारी दिनांक 29 अक्टूबर, 2005 के आदेश के विरुद्ध इस न्यायालय के समक्ष आया है जिसके द्वारा क्वार्टर सं॰ E/215/II के अवकाश अनुमति और अनुज्ञप्ति के प्रदान के लिए उसका आवेदन परिशिष्ट-5 के तहत अस्वीकार कर दिया गया था। इनकार का आधार यह था कि याची के पुत्र को दिनांक 15.10.2005 को दर्ज दांडिक मामले अर्थात् जगन्नाथपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 181/2005, में जी॰ आर॰ केस सं॰ 3256/2005 के तत्सम में, भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 341, 328, 504 और 326 के अधीन आलिप्त पाया गया था। तत्पश्चात्, प्रत्यर्थीगण ने याची को क्वार्टर खाली करने का निर्देश दिया और याची के मुताबिक अंततः इसे दिनांक 26 अक्टूबर, 2006 को खाली कर दिया गया था।

3. याची ने दिनांक 19.6.2012 को दाखिल अपने पूरक शपथ पत्र के माध्यम से न्यायिक दंडाधिकारी, राँची के विद्वान न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 7 मई, 2009 के आदेश की प्रति को अभिलेख पर लाया है जिसके द्वारा पक्षों के बीच सुलह के आधार पर याची के पुत्र को पूरक शपथ पत्र के परिशिष्टों 10 और 11 के तहत दोषमुक्त कर दिया गया था।

4. प्रत्यर्थीगण ने अपने प्रतिशपथ पत्र में आक्षेपित आदेश का जारी किया जाना इस आधार पर न्यायोचित ठहराया है कि याची का पुत्र, जो याची को आवंटित क्वार्टर में निवास कर रहा था, ने ऐसी स्थिति सृजित किया था जो पड़ोस की शांति को भंग कर रहा था और, इसलिए, आक्षेपित आदेश जारी किया गया था।

5. याची ने समय के प्रासंगिक बिंदु पर परिशिष्ट-3 के मुताबिक अवकाश अनुमति और अनुज्ञप्ति आधार पर क्वार्टर के आवंटन के लिए अपना आवेदन दिया था जिसे 11 माह की अवधि के लिए प्रदान किया गया था। तत्पश्चात, याची ने अंतर्वर्ती आवेदन दाखिल किया जिसके द्वारा मुख्य रिट आवेदन में

कतिपय संशोधनों को सम्मिलित करने की अनुमति दी गयी थी। याची ने नयी जोड़ी गयी प्रार्थना के माध्यम से परिपत्र, जो दिनांक 29 अगस्त, 2012 को दाखिल उत्तर के परिशिष्ट–14 में अंतर्विष्ट है जिसे आक्षेपित आदेश जारी किए जाने और रिट याचिका दाखिल किए जाने के बाद दिनांक 6 अप्रिल, 2006 को पुर: स्थापित किया गया था, के आधार पर दीर्घकालिक पट्टा पर ई॰ टाइप क्वार्टर के आवंटन के लिए याची के मामले पर विचार करने के लिए प्रत्यर्थीगण पर निर्देश इप्सित किया। याची के अनुसार, उसने उक्त उत्तर के परिशिष्ट–15 के तहत परिपत्र सं॰ 3/2006 के मुताबिक दीर्घकालिक पट्टा आधार पर ई॰ टाइप क्वार्टर के आवंटन के लिए भी आवेदन दिया था।

6. याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अवकाश अनुमति और अनुज्ञप्ति आधार पर क्वार्टर के आवंटन के लिए उसके आवेदन की अस्वीकृति का मूल आधार पूर्णत: बाह्य है, क्योंकि याची ने उसको किए गए आवंटन के किसी निबंधन का उल्लंघन कभी नहीं किया था और केवल याची के पुत्र और उसके पड़ोसी के बीच लघु विवाद जो सुलह में समाप्त हुआ के कारण था। अत:, अस्वीकृति का आधार अविद्यमान बना दिया गया है। याची की ओर से निवेदन किया गया है कि याची ने परिपत्र सं॰–3 वर्ष 2006 के अधीन अधिकथित शर्तों को परिपूर्ण किया और दिनांक 26 दिसंबर, 2006 को अंतिम रूप से क्वार्टर खाली कर दिया। अत: दीर्घकालिक आधार पर उक्त क्वार्टर के आवंटन के लिए याची के मामले पर पुनर्विचार करने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को दिया जा सकता है।

7. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी निगम के अधिवक्ता श्री आर॰ मुखोपाध्याय निवेदन करते हैं कि भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन दंडनीय अपराधों में लिप्त होने के कारण अपने पड़ोसी के साथ याची के पुत्र के विरुद्ध संस्थापित दांडिक मामले की दृष्टि में आक्षेपित आदेश पूर्णत: न्यायोचित है। विचार किए जाने के लिए पात्र होने के कारण परिपत्र सं॰ 3 वर्ष 2006 के मुताबिक याची वैध आवंटी नहीं था। याची ने दीर्घकालिक पट्टा आधार पर क्वार्टर के आवंटन के लिए विचार किए जाने के लिए आवश्यक प्रारूप में आवेदन भी नहीं दिया है। यह निवेदन भी किया गया है कि याची भूतपूर्व कर्मचारी है और काफी पहले सेवानिवृत्त हो चुका है।

8. मैंने पक्षों के अधिवक्ता को विस्तारपूर्वक सुना है। तथ्यों जिन्हें अभिलेख पर लाया गया है से और पक्षों को सुनने पर यह प्रकट है कि प्रचलित परिपत्र के अधीन अवकाश अनुमति और अनुज्ञप्ति आधार पर क्वार्टर के आवंटन के लिए याची का आवेदन दिनांक 29 अक्टूबर, 2005 के आक्षेपित आदेश द्वारा झगड़े और दांडिक अभित्रास के कतिपय कृत्यों पर पड़ोसी द्वारा याची के पुत्र के विरुद्ध दांडिक मामले के संस्थापन के आधार पर अस्वीकार कर दिया गया था। उक्त दांडिक मामला दिनांक 7.5.2009 के निर्णय और आदेश द्वारा याची के पुत्र की दोषमुक्ति की ओर ले जाने वाले पक्षों के बीच सुलह में समाप्त हुआ। याची के प्रतिवाद के मुताबिक जब उसने दिनांक 6 अप्रिल, 2006 को प्रकाशित परिशिष्ट–14 के तहत दीर्घकालिक पट्टा आधार पर क्वार्टर के आवंटन के लिए पात्र व्यक्तियों से आवेदन आमंत्रित करने वाले परिपत्र जारी किए जाने पर दिनांक 30 जुलाई, 2006 को परिशिष्ट–15 के तहत आवेदन दिया था, याची क्वार्टर पर काबिज बना हुआ था। रिट याचिका दिनांक 30 नवंबर, 2005 को आक्षेपित आदेश पारित किए जाने के तुरन्त बाद दाखिल की गयी थी और तत्पश्चात् अप्रिल, 2006 में दीर्घकालिक पट्टा आधार के लिए प्रत्यर्थीगण द्वारा परिपत्र जारी किया गया था। अत:, रिट आवेदन के लंबित रहने के दौरान दाखिल पश्चातवर्ती अंतर्वर्ती आवेदन के माध्यम से प्रार्थना सम्मिलित करने की अनुमति याची को दी गयी थी, क्योंकि याची ने दर्शाया था कि उसने स्वयं रिट आवेदन के लंबित रहने के दौरान जारी परिपत्र के अधीन आवंटन के लिए आवेदन दिया था।

9. चूँकि याची के पुत्र को वर्ष 2009 में दोषमुक्त किया गया है, इस अवधि के दौरान रिट याचिका लंबित बनी रही और दीर्घकालिक पट्टा आधार पर एच॰ ई॰ सी॰ क्वार्टर के आवंटन के लिए परिपत्र दिनांक

6 अप्रिल, 2006 को रिट आवेदन के लंबित रहने के दौरान आया है, दीर्घकालिक पट्टा आधार पर क्वार्टर के आवंटन के लिए, जिसके लिए याची दिनांक 31 जुलाई, 2006 को आवेदन देता प्रतीत होता है और जिसे निगम के कार्यालय में प्राप्त भी किया गया था, नए परिपत्र के आधार पर याची के मामले पर विचार करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश देना समुचित होगा। अतः, प्रत्यर्थीगण इस शर्त के अध्यधीन कि याची इसे प्रदान किए जाने के लिए आवश्यक शर्त को परिपूर्ण करने का वचन दे, दीर्घकालिक पट्टा आधार पर एच॰ ई॰ सी॰ क्वार्टर के आवंटन के लिए परिपत्र में अंतर्विष्ट नीति और विद्यमान मानक के आधार पर याची के मामले पर विचार करेंगे। परिवर्तित परिस्थितियों में, चूँकि याची के पुत्र को आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया है, जैसा यहाँ ऊपर उपदर्शित किया गया है, याची के मामले पर नए सिरे से विचार किए जाने पर प्रत्यर्थीगण द्वारा पहले पारित दिनांक 29 अक्टूबर, 2005 के आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट-5) के कारण प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा। इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से 12 सप्ताह की अवधि के भीतर यह कार्य पूरा किया जाए।

10. पूर्वोक्त संप्रेक्षण और निर्देश के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; vkjs vkjs çlkn] U;k;efr

अखिल भारतीय आदिवासी विकास परिषद्

cuke

भारत संघ, सचिव के माध्यम से एवं अन्य

Civil Review No. 93 of 2009. Decided on 10th January, 2013.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—धारा 114—पुनर्विलोकन–आदिवासी कार्यकलाप मंत्रालय द्वारा सदायता अनुदान से संबंधित मामला–अन्य सोसाइटी को सदायता अनुदान दिया गया है किंतु याची सोसाइटी को इससे इनकार किया गया है–किसी व्यक्ति को राज्य से अनुदान पाने का कोई अधिकार सक्षम प्राधिकारी द्वारा विनिर्दिष्ट नीति निर्णय विरचित किए जाने तक नहीं है–पहले रिट याचिका इस कारण से खारिज कर दी गयी थी कि याची ने यह तथ्य छुपाया था कि वह इसी अनुतोष के लिए उच्च न्यायालय के पास गया था–अभिलेख पर प्रकटतः कोई गलती नहीं है–पुनर्विलोकन आवेदन खारिज। (पैराएँ 2, 9, 12 एवं 13)

अधिवक्तागण.–Mr. Rajiv Kumar, For the Petitioner; Mr. Prabhash Kumar, For the Respondent.

आदेश

यह पुनर्विलोकन आवेदन सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3618 वर्ष 2000 में पारित दिनांक 8.3.2002 के आदेश में किए गए उस टिप्पणी को निकालने के लिए आदेश के पुनर्विलोकन के लिए दाखिल किया गया है कि याची ने इस तथ्य कि उसने पहले भी आवेदन दिया था, को छुपाते हुए द्वितीय रिट आवेदन दाखिल किया था।

2. यह प्रतीत होता है कि याची, सोसाइटी रजिस्ट्रेशन अधिनियम, 1860 के अधीन रजिस्टर्ड सोसाइटी, को आदिवासी कार्यकलाप मंत्रालय द्वारा वर्ष 2000 में वर्ष 1997-98 की अवधि के लिए सदायता अनुदान दिया गया था। पश्चातवर्ती वर्ष के लिए जब सदायता अनुदान इस कारण से नहीं दिया गया था कि किसी डॉ॰ दुर्गा भगत द्वारा विवाद किए जाने पर याची ने रिट आवेदन सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3618 वर्ष 2000 दाखिल किया। जब मामला लंबित था, याची सोसाइटी को ज्ञात हुआ कि अन्य

सोसाइटी को सदायता अनुदान दिया गया है किंतु याची सोसाइटी को इससे इनकार किया गया है, याची ने एक अन्य रिट आवेदन डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 5228 वर्ष 2001 दाखिल किया। उस रिट आवेदन को दिनांक 12.1.2001 को सुना गया था, जिस तिथि पर यह अभिनिर्धारित करने के बाद इसे निपटाया गया था कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा विनिर्दिष्ट नीति निर्णय विरचित किए जाने तक राज्य से अनुदान पाने का कोई अधिकार नहीं है। किंतु सचिव, आदिवासी कार्यकलाप मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली के समक्ष भेदभाव का विवाद्यक उठाने की स्वतंत्रता दी गयी थी ताकि सकारण आदेश द्वारा याची के दावा को विनिश्चित किया जा सके। उस रिट आवेदन को निपटाने के बाद, सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3618 वर्ष 2000, जिसे पहले दाखिल किया गया था, को दिनांक 8.3.2002 को ग्रहण के बिन्दु पर सुनवाई के लिए लिया गया था। सुनवाई के दौरान, प्रत्यर्थीगण ने इस प्रभाव की प्रारंभिक आपत्ति को उठाया कि सोसाइटी इसी अनुतोष के लिए डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 5228 वर्ष 2001 में इस न्यायालय के पास आयी थी। इस पर न्यायालय ने डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 5228 वर्ष 2001 में पारित आदेश को ध्यान में लेकर यह अभिनिर्धारित करने के बाद कि न्यायालय ने पहले इप्सित किए गए अनुतोष को अननुज्ञात कर दिया था, रिट आवेदन खारिज कर दिया।

3. आदेश पारित किए जाने के लगभग नौ वर्षों बाद सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3618 वर्ष 2000 में पारित आदेश के पुनर्विलोकन के लिए इस पुनर्विलोकन आवेदन को दाखिल किया गया था।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता श्री राजीव कुमार ने निवेदन किया कि रिट आवेदन सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3618 वर्ष 2000 मात्र इस कारण से अस्वीकार कर दिया गया था कि याची ने इस तथ्य को छुपाया था कि याची ने पहले रिट आवेदन डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 5228 वर्ष 2001 दाखिल किया था और तद्द्वारा न्यायालय ने रिट आवेदन खारिज करने में प्रकट गलती किया क्योंकि याची रिट आवेदन सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3618 वर्ष 2000 में विवरण नहीं दे सकता था कि उसने इस अनुतोष के लिए इस न्यायालय में डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 5228 वर्ष 2001 दाखिल किया था क्योंकि सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3618 वर्ष 2000 समय के पूर्व बिन्दु पर दाखिल की गयी थी।

5. आगे निवेदन किया गया है कि चूँकि उक्त कथित कारण से सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3618 वर्ष 2000 अस्वीकार कर दिया गया था, डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 5228 वर्ष 2001 में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में याची सोसाइटी द्वारा दाखिल अभ्यावेदन अस्वीकार कर दिया गया था यद्यपि प्राधिकारी ने याची द्वारा अपने पक्ष में सदायता अनुदान पाने के दावा को अस्वीकार करने के लिए अन्य आधार भी दिया और इसने पुनर्विलोकन आवेदन दाखिल करने को आवश्यक बनाया।

6. इसके विरुद्ध, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री प्रभाष कुमार ने निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश पारित किए जाने के सात वर्षों से अधिक समय के बाद दाखिल यह पुनर्विलोकन आवेदन तुरन्त अस्वीकार कर दिए जाने योग्य है।

7. आगे यह निवेदन किया गया था कि सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3618 वर्ष 2000 में पारित दिनांक 8.3.2002 के आदेश में अभिलेख पर प्रकट गलती नहीं है और इस प्रकार, पुनर्विलोकन आवेदन पोषणीय नहीं है और कि यदि याची उस आदेश से व्यथित था, उसे इस न्यायालय के समक्ष अंतरा न्यायालय अपील दाखिल करना चाहिए था।

8. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर यह प्रतीत होता है कि सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3618 वर्ष 2000 में पारित दिनांक 8.3.2002 का पुनर्विलोकन इस आधार पर इप्सित किया जा रहा है कि उस आदेश, जिसके अधीन रिट आवेदन खारिज किया गया था, इस आधार पर पारित किया गया था कि याची ने इसी अनुतोष के लिए पहले भी इस न्यायालय के पास जाने के तथ्य को छुपाया था जबकि याची पहले दाखिल किए गए रिट आवेदन में यह उल्लेख नहीं कर सकता था क्योंकि द्वितीय रिट आवेदन डब्ल्यू॰ पी॰

(सी॰) सं॰ 5228 वर्ष 2001 सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3618 वर्ष 2000 को दाखिल किए जाने के बाद दाखिल किया गया था।

9. दिनांक 8.3.2002 के आदेश का परिशीलन करने पर यह कभी नहीं कहा जा सकता है कि रिट आवेदन इस आधार पर खारिज किया गया था जिसे याची की ओर से प्रक्षेपित किया गया था बल्कि रिट आवेदन इसलिए खारिज किया गया था क्योंकि न्यायालय ने रिट आवेदन डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 5228 वर्ष 2001 में अनुतोष से इनकार किया था।

10. न्यायालय ने दिनांक 8.3.2002 के आदेश को पारित करते हुए डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 5228 वर्ष 2001 में पारित दिनांक 12.10.2001 के आदेश को ध्यान में लिया जिसे दिनांक 8.3.2002 के आदेश में भी दर्ज किया गया था। मामले के बेहतर अधिमूल्यन के लिए इसे यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

^^;g vkonu vf[ky Hkkjrh; vkfnoklh fodkl ifj"kn dk lnk;rk vunku d ekey e HknHkko ugh dju d fy, çR;Fkhx.k dk fun'k nu d fy, ;kph }kjk nkf[ky fd;k x;k gA

LohÑr :i l] l{ke çkfèkdkjh }kjk fofufn"V uhfr fu.k; fojfpr fd, tku rd fdlh 0;fDr dk jkT; l vunku iku dk dkb vfèkdkj ugh gA

iokDr i"BHkfe e] Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 226 d vèkhu bl U;k;ky; }kjk bfllr fd;k x;k vurk"k çnku ugh fd;k tk ldrk gA

;fn vU; tk lefLFkr g] d edkcy ;kph d lkFk HknHkko fd;k x;k Fkk] og ekey dk lfpo] vkfnoklh dk; dyki e=ky;] Hkkjr ljdkj] u;h fnYyh d è;ku e yk ldrk g ftll ,l vH;konu nkf[ky dju dh frfFk l pkj llrkg d Hkhrj ldkj.k vkn'k }kjk nkok dk fofuf'pr dju dh mEehn dh tkrh gA

*rnulkj ;g fjV ;kfpdk fuiVk;h tkrh gA***

11. इस पर, न्यायालय ने दर्ज किया कि पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में, डब्ल्यू॰ पी॰ सी॰ (सं॰) 5228 वर्ष 2001 में इसी याची की ओर से पहले इप्सित किया गया अनुतोष अनुज्ञात नहीं किए जाने पर न्यायालय ने रिट आवेदन खारिज कर दिया।

12. इस प्रकार, यह कभी नहीं प्रतीत होता है कि रिट आवेदन सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3618 वर्ष 2000 इस कारण से खारिज किया गया था कि याची ने इस तथ्य को छुपाया था कि वह इसी अनुतोष के लिए पहले इस न्यायालय के पास आया था। ऐसी स्थिति में, अभिलेख पर प्रकट कोई गलती प्रतीत नहीं होती है।

13. मामले के उस दृष्टिकोण में, गुणागुण रहित होने के कारण यह पुनर्विलोकन आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Mh´ ,u´ iVy] U;k;efr

खूबलाल पंडित

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 4364 of 2011. Decided on 6th August, 2012.

अधिवक्ता कल्याण निधि अधिनियम, 2001—धाराएँ 2(4) एवं 27(1) सह-पठित बिहार राज्य अधिवक्ता कल्याण निधि अधिनियम, 1983 की धाराएँ 2(n), 22(1) एवं 23—सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश III नियम 4 (5)—अधिवक्ता द्वारा उपस्थिति ज्ञापन दाखिल किया

जाना–किसी अधिनियम अथवा किसी नियमावली के अधीन ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो राज्य सरकार और केंद्र सरकार को उपस्थिति ज्ञापन दाखिल करने से छूट देता है–झारखंड उच्च न्यायालय नियमावली, 2001 के मुताबिक, सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 148A के अधीन केवियट आवेदन दाखिल किए बिना वे उच्च न्यायालय में दाखिल मुकदमा की प्रति पाने के हकदार हैं किंतु राज्य का अथवा भारत संघ का अधिवक्ता उपस्थिति ज्ञापन दाखिल किए बिना न्यायालय के समक्ष उपस्थित नहीं हो सकता है–शेष संस्थानों को कल्याण स्टांप सहित समुचित स्टांप के साथ अपना वकालतनामा दाखिल करना होगा। (पैरा 13)

अधिवक्तागण.–Mr. Ayush Aditya, For the Petitioner; M/s A. Allam, S. Piprawall, Mr. Rajeev Ranjan *(Amicus Curiae),* For the Respondent.

आदेश

राज्य के और झारखंड लोक सेवा आयोग के अधिवक्ता प्रतिशपथ पत्र दाखिल करने के लिए समय इप्सित करते हैं।

2. जब इस न्यायालय ने प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता से प्रश्न पूछा कि क्या उन्होंने अपना वकालतनामा दाखिल किया है, उन्होंने निवेदन किया कि चूँकि उन्होंने पहले ही इस रिट याचिका की प्रति प्राप्त कर लिया है, उनका नाम कॉजलिस्ट में दर्शाया जाना चाहिए।

3. झारखंड लोक सेवा आयोग के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री संजय पिपरवाल ने निवेदन किया कि इस न्यायालय में प्रचलित पुरानी प्रथा के कारण उन्होंने अपना वकालतनामा दाखिल नहीं किया है किंतु अब वे आज दिन के क्रम में अपना वकालतनामा दाखिल करने के लिए तैयार और इच्छुक हैं।

4. अत:, मैं श्री संजय पिपरवाल को प्रत्यर्थी झारखंड लोक सेवा आयोग की ओर से अधिवक्ता के रूप में उपस्थित होने की अनुमति देता हूँ।

5. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के प्रावधान विशेषत: आदेश III नियम 4 (5) का पठन निम्नलिखित है:–

^^tk dkb lyhMj doy vfHkopu dju d ç;ktu l edjj fd;k x;k g og fdlh i{kdkj dh vkj l rc rd vfHkopu ugh djxk tc rd mlu LogLrk{kfjr vkj fuEufyf[kr dk dFku dju okyk mil tkfr dk Kkiu U;k;ky; e Qkby u dj fn;k gk&

(a) okn d i{kdkjk d uke]

(b) ml i{kdkj dk uke] ftld fy, og mil tkr gk jgk g] rFkk

(c) ml 0;fDr dk uke ftld }kjk og mil tkr gku d fy, çkfèkÑr fd;k x;k g%

*ijUr bl mifu;e dh dkb Hkh ckr , l fdlh lyhMj dk ykx ugh gkxh tk fdlh i{kdkj dh vkj l vfHkopu dju d fy, , l fdlh vU; lyhMj }kjk edjj fd;k x;k g ftl , l i{kdkj dh vkj l U;k;ky; e dk; dju d fy, lE;d :i l fu;Dr fd;k x;k gA*** ¼tkj Mkyk x;k½

इस प्रकार, राज्य के लिए और झारखंड लोक सेवा आयोग के लिए उपस्थित होने वाले दोनों अधिवक्ता को इस मामले में अपना उपस्थिति ज्ञापन दाखिल करना होगा। यद्यपि मामला बार-बार अर्थात् दिनांक 25.7.2012 और दिनांक 30.7.2012 को स्थगित किया गया है और आज भी प्रत्यर्थीगण ने अपना उपस्थिति ज्ञापन दाखिल नहीं किया है।

6. अधिवक्ता कल्याण कोष अधिनियम, 2001 की धारा 2(u) निम्नवत पठित है:–

*"(u) ^^odkyrukek** e mifLFkr dk Kkiu (memorandum of appearance) vFkok dkb , lk nLrkot 'kkfey g ftl d }kjk fdlh vfèkoDrk dk fdlh U;k;ky; ;k U;k;kfèkdj.k vU; ikfèkdkjh d lEe[k iLrr gku d fy, l'kDr fd;k x;k gA ¼tkj Mkyk x;k½*

*iokDr ikoèkku dk iBu **vfèkfu;e] 2001 dh èkkjk 27** d lkFk djuk gkxk tk odkyrukek ij fpidk; tku oky LVkik d vk'k; l gA ¼tkj Mkyk x;k½*

*"27. **LVkEik lfgr odkyrukek-**&(1) çR;d vfèkoDrk , l eY; dk LVkEi&*

(a) tk 5#i; dk gkxk odkyruke d lkFk lyXu djxk tk Lo; }kjk tuin U;k;ky; ;k vèkhuLFk U;k;ky;k dk Qkby d le; gkxk]

(b) 10#i; dk çR;d odkyrukek U;k;kfèkdj.k ;k vU; çkfèkdkjh ;k mPp U;k;ky; ;k mPpre U;k;ky; d lEe[k yxk;k tk,xk¼

ijr ;g fd lE;d ljdkj bl mièkkjk d vèkhu LVkEi dk eY; tk lyXu fd;k tk,xk 25#i; l vfèkd dk ugh fofgr dj ldrh g¾

*ijr vkx ;g vkj fd lE;d ljdkj çR;d odkyruke ij fofoèk eY; d LVkEik dk yxk; tku d fy, fofgr dj ldrh g tk tuin U;k;ky; ;k vèkhuLFk U;k;ky; ;k fdlh U;k;kfèkdj.k ;k vU; çkfèkdkjh ;k mPp U;k;ky; ;k mPpre U;k;ky; d lEe[k çLrr fd;k tkrk gA***

7. बिहार राज्य अधिवक्ता कल्याण निधि अधिनियम, 1983 की धारा 2 (n) जो वकालतनामा परिभाषित करती है का पठन निम्नलिखित है:–

*"2(n) ^^odkyrukek** l vfHkçr g odkyrukek vkj ;g mifLFkfr Kkiu vFkok dkb vU; nLrkot lfEefyr djrk g ftl d }kjk vfèkoDrk dk fdlh U;k;ky;] vfèkdj.k vFkok vU; çkfèkdkjh d le{k mifLFkr gku d fy, vFkok odkyr dju d fy, l'kDr cuk;k x;k gA fdr ;g jkT; vFkok jkT; ;k ljdkj dk çfrfufèkRo dju oky dk;ky; dh vkj l nkf[ky mifLFkfr Kkiu lfEefyr ugh djxkA** (tkj fn;k x;k)*

8. इस परिभाषा का पठन वर्ष 1983 के अधिनियम की धाराओं 22 (1) और 23 के साथ करना होगा जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*"22. **jkT; }kjk vfèkoDrk dY;k.k LVki dk en.k vkj forj.k-**&(1) jkT; ckj dkfly d çrhd fpUg d lkFk vkj ml ij vfdr bld eY; d lkFk nk#i, ipkl il eY; d foØ; d fy, vfèkoDrk dY;k.k fufèk LVki efnr rFkk forfjr djxkA*

*23. **odkyrukek vFkok 'kiFk i= dk dY;k.k LVki èkkj.k djuk gkxk-**&dkb odkyrukek vFkok 'kiFki= fdlh U;k;ky;] vfèkdj.k vFkok vU; çkfèkdkjh }kjk çkIr ugh fd;k tk,xk vFkok nkf[ky ugh fd;k tk,xk tc rd bl ij dY;k.k LVki ugh g tk èkkjk 22 e mYy[k fd;k x;k gA**(tkj fn;k x;k)*

9. यह न्यायालय श्री राजीव रंजन, अधिवक्ता को इस मामले में न्याय मित्र के रूप में नियुक्त करता है जो न केवल अपर महाधिवक्ता हैं बल्कि झारखंड राज्य बार कौंसिल के अध्यक्ष भी हैं। श्री राजीव रंजन ने निवेदन किया है कि कम से कम राज्य को उपस्थिति ज्ञापन दाखिल करना चाहिए था। राज्य और केंद्र सरकार की ओर से उपस्थिति ज्ञापन पर न्यायालय शुल्क स्टांप और कल्याण स्टांप चिपकाने की आवश्यकता नहीं है। विद्वान न्यायमित्र ने आगे निवेदन किया कि जो राज्य सरकार के लिए अथवा केंद्र सरकार के लिए अथवा भारत संघ के लिए उपस्थित नहीं हो रहे हैं, उन्हें अपना वकालतनामा दाखिल करना ही होगा वे निम्न के अधिवक्ता हो सकते हैं:–

(i) >kj[kM ykd lok vk;kx(

(ii) fdlh cd]

(iii) dn ljdkj vFkok jkT; ljdkj d LokfeRo oky ykd {k= miØe]

(iv) jkph {k=h; fodkl çkfèkdj.k] jkph uxj fuxe] jkt Un vk;foKku lLFkku] jkph] vkfn?; ij vk|kfxd fodkl çkfèkdj.k] [kfut {k= fodkl çkfèkdj.k] goh bthfu;fjx dkjikj'ku] lVy dky QhYMl fyfeVM] Hkkjr dkfdx dky fyfeVM] ifjogu fuxe] foÙkh; fuxe] fo'ofo|ky;] egkfo|ky;] fo|ky;] ipk;r ckM] ftyk ckM] jyo vkfn tl lkfofèkd fudk; d vfèkoDrk gk ldr gA

bu leLr lLFkkuk] ;fn o lii.k >kj[kM jkT; e fdlh U;k;ky; d le{k ednek e i{k g] tl fo}ku U;k;fe= }kjk fuonu fd;k x;k g] mUg lefpr U;k;ky; 'kYd LVki vkj vfèkoDrk dY;k.k LVki d lkFk viuk odkyrukek nkf[ky djuk gkxkA

10. विद्वान न्यायमित्र ने अपना प्रतिवाद सिद्ध करने के लिए **(1995)5 SCC 333** में प्रकाशित मामले की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट किया है। उन्होंने **(1975)2 SCC 609** के पैराग्राफों 7 से 11 में प्रकाशित निर्णय की ओर भी मेरा ध्यान आकृष्ट किया है।

11. विद्वान न्यायमित्र ने मेरा ध्यान **(2008)17 SCC 37** में प्रकाशित निर्णय की ओर आकृष्ट किया है। इस निर्णय में वकालतनामा दाखिल करने की प्रक्रिया और प्रथा और वकालतनामा दाखिल नहीं किए जाने के प्रभाव का उल्लेख किया है।

12. प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि झारखंड उच्च न्यायालय नियमावली, 2001 के मुताबिक अग्रिम में याचिका की प्रति तामील करने का प्रावधान है, अत:, काफी दिनों से वकालतनामा अथवा उपस्थिति ज्ञापन नहीं दाखिल करने की प्रथा है।

13. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता और न्याय मित्र को सुनने पर यह प्रतीत होता है कि:–

(A) fdlh vfèkfu;e vFkok fu;ekoyh d vèkhu , lk dkb çkoèkku ugh g tk jkT; ljdkj vkj dn ljdkj dk mifLFkfr Kkiu nkf[ky dju l NV nrk gA

(B) >kj[kM mPp U;k;ky; fu;ekoyh] 2001 d erkfcd] flfoy çfØ;k lfgrk] 1908 dh èkkjk 148A d vèkhu dfo;V vkonu nkf[ky fd, fcuk o mPp U;k;ky; e nkf[ky edne dh çfr iku d gdnkj g fdr bldk vFk ;g ugh g fd jkT; d fy, vFkok Hkkjr l?k d fy, vfèkoDrk mifLFkfr Kkiu nkf[ky fd, fcuk U;k;ky; d le{k mifLFkr gk ldrk gA

(C) jkT; ljdkj vkj dn ljdkj tl bu nk lLFkkuk d flok, 'k"k lLFkku] ;fn o ednek d i{k g] dk vfèkfu;e d vèkhu dY;k.k LVki lfgr lefpr LVki d lkFk viuk odkyrukek nkf[ky djuk gkxk tlk ;gk Åij dgk x;k gA

(D) >kj[kM ykd lok vk;kx] cd] ykd {k= miØe] uxj fuxe] vkfn tl vU; leLr lLFkkuk dk viuk odkyrukek nkf[ky djuk gkxk ;fn mUgku ednek e vfèkoDrk d :i e mifLFkr gkuk puk gA

14. अत: मैं रजिस्ट्री को इस न्यायालय के माननीय मुख्य न्यायाधीश के समक्ष इस मामले को इस प्रयोजन से रखने का निर्देश देता हूँ कि **झारखंड उच्च न्यायालय नियमावली, 2001** के अधीन प्रक्रिया विकसित की जा सके कि जिन्होंने केवियट दाखिल किए बिना याचिका/आवेदन का ज्ञापन प्राप्त करने के बाद भी अपना उपस्थिति ज्ञापन अथवा वकालतनामा दाखिल नहीं किया है, उनके नामों को ब्रैकेट में इस उल्लेख ''वकालतनामा अभी दाखिल किया जाना शेष है'' के साथ दर्शाना होगा। ब्राकेट में नोट के साथ इस प्रकार का नाम दो अथवा तीन स्थगनों के लिए एडमिशन बोर्ड पर दर्शाया जा सकता है और तत्पश्चात, पक्षों की ओर से अधिवक्ता के नाम को दर्शाया नहीं जाएगा यदि वकालतनामा अभी भी दाखिल नहीं किया गया है अथवा पक्षों की ओर से उपस्थिति ज्ञापन अथवा वकालत नामा के समुचित दाखिले को चेक करने के लिए किसी अन्य प्रकार की प्रक्रिया विकसित की जा सकती है। इसका अधिवक्ता कल्याण स्टांप के साथ प्रत्यक्ष संबंध है क्योंकि इसे वकालतनामा पर चिपकाना है।

15. मामले को दिनांक 13 अगस्त, 2012 को सूचीबद्ध किए जाने तक स्थगित किया जाता है।

---

ekuuh; Mhm ,uh iVy ,o Jh pæ'k[kj] U;k;efrx.k

संजय मंडल (307 में)

अरूण मंडल (441 में)

cuke

झारखंड राज्य (दोनों में)

Cr. Appeal (DB) No. 307 with 441 of 2012. Decided on 4th February, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34—दंडादेश का निलम्बन—हत्या के लिए दोषसिद्धि—चिकित्सीय साक्ष्य ने सम्पोषित किया कि अपीलार्थी ने मृतक के शरीर पर आग्नेयायुध उपहति कारित किया है—मृतक के शरीर पर सह अभियुक्त द्वारा उपहतियां कारित की गयीं हैं और वह साथ ही भाग गया है—चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य द्वारा प्रथम दृष्टया साझा आशय भी सिद्ध किया गया है—न्यायालय दंडादेश को निलंबित करने का इच्छुक नहीं—अपील खारिज। (पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.—M/s Gautam Kumar, Anil Kumar Singh (in both), For the Appellant; A.P.P., For the State.

आदेश

ये दोनों अपीलें सत्र विचारण सं॰ 80 वर्ष 2007 में सत्र न्यायाधीश प्रथम राज महल, जिला साहेबगंज द्वारा उन्हें अधिनिर्णित दंडादेश के निलम्बन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन दाखिल की गयी है, जिसके द्वारा उन्हें मुख्यत: भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सह पठित धारा 34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दंडित किया गया है।

2. हमनें दोनों पक्षों के अधिवक्ताओं को सुना है तथा सत्र विचारण सं॰ 80 वर्ष 2007 के अभिलेख एवं कार्यवाहियों का परिशीलन किया है।

3. अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों को देखने पर, इन दोनों अपीलार्थीगण-अभियुक्तों विरुद्ध प्रथम दृष्टया एक मामला है। अभियोजन का मामला कई चश्मदीद गवाहों पर आधारित है जो अ॰सा॰ 1, अ॰सा॰ 3, अ॰सा॰ 4, अ॰सा॰ 5 एवं अ॰सा॰ 8 हैं। उनके अभिसाक्ष्य इन अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रथम

दृष्टया मामला बनाते हैं। इन दोनों अपीलार्थीगण द्वारा निभायी गयी भूमिका इन चश्मदीद गवाहों द्वारा स्पष्ट रूप से वर्णित की गयी है। इससे भी बढ़कर, उनके अभिसाक्ष्य अ०सा० 9 द्वारा भी सम्पोषण प्राप्त कर रहे हैं जो कि चिकित्सक मधुरेंद्र नाथ सिन्हा हैं जिन्होंने मृतक का पोस्टमार्टम किया है। मृतक के शरीर पर पांच आग्नेयायुध की उपहतियां हैं।

4. अपीलार्थी संजय मंडल (दांडिक अपील सं० 307 वर्ष 2012) में अपीलार्थी के लिए उपस्थित होनेवाले अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि इस अपीलार्थी–अभियुक्त पर आग्नेयायुध द्वारा उपहति कारित करने का कोई अभिकथन नहीं है और अतएव, उसे अधिनिर्णित दंडादेश निलंबित किया जा सकता है तथा उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 307 सह पठित धारा 34 के अधीन आरोप से भी बरी किया जाना चाहिए। हम भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सह पठित धारा 34 के अधीन उसे अधिनिर्णित दंडादेश के निलम्बन के इस तर्क को मुख्यत: इस कारण स्वीकार करने के लिए इच्छुक नहीं हैं कि :–

(a) vfHk;ktu lkf{k;k }kjk ,lk vfHkdFku fd;k x;k g fd ; lkj vihykFkhx.k] ftudh l0 4 g] rFkk oreku vihykFkh] tk l= fopkj.k l0 80 o"k 2007 e ey vfHk;Dr l0 4 g] viu gkFkk e vkXu;k;èk ydj ,d lkFk vk; FkA

(b) p'enhn xokgk d lk{;k dk n[ku ij Hkh] oreku vihykFkh ler ; vfHk;Dr lpuknkrk d lkFk xkyh&xykt dj jg Fk rFkk mUgku erd dk ?kj fy;k Fkk vkj idM fy;k FkkA

(c) vfHk;Dr iekn eMy ,o v#.k eMy u xkyh pyk;h Fkh rFkk erd dk migfr vk;h Fkh ftldh ekd ij gh eR; gk x;h FkhA

(d) rRi'pkr] oreku vihykFkh ler o lHkh vijkèk gku d LFkku l Hkkx x; FkA

अभिलेख पर साक्ष्यों को देखने पर प्रथम दृष्टया यह प्रतीत होता है कि वर्तमान अपीलार्थी अन्य सह अभियुक्तों के साथ आग्नेयायुध लेकर आये थे। उन्होंने मृतक को घेर लिया था। मृतक के शरीर पर सह अभियुक्त द्वारा उपहतियां कारित की गयी थीं और वह एक साथ भाग गया था। चश्मदीद गवाहों, जो कि अ०सा० 1, अ०सा० 2, अ०सा० 3, अ०सा० 5 एवं अ०सा० 8 हैं, के अभिसाक्ष्यों द्वारा भी प्रथम दृष्टया साझा आशय सिद्ध किया गया है। इस अपीलार्थी को दंड भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सह पठित धारा 34 के अधीन दिया गया है, अतएव, हम इस अपीलार्थी को अधिनिर्णित दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं।

जहां तक अरूण मंडल (दांडिक अपील सं० 441 वर्ष 2012 में अपीलार्थी) का सवाल है, पूर्वोक्त चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्यों ने स्पष्ट रूप से इस अपीलार्थी द्वारा निभायी गयी भूमिका का वर्णन किया है। वह अन्य सह अभियुक्त के साथ एक आग्नेयायुध लेकर आया था, उसने वार किया था तथा मृतक के शरीर पर आग्नेयायुध की उपहति कारित की थी। इस प्रकार, चिकित्सीय साक्ष्य इसका सम्पोषण करता है कि वर्तमान अपीलार्थी ने मृतक के शरीर पर आग्नेयायुध की उपहति कारित की है।

5. अभिलेख पर मौजूद इन साक्ष्यों की दृष्टि में, इस अपीलार्थी के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। अतएव, हम उसे भी अधिनिर्णित दंड आदेश का निलंबन करने के इच्छुक नहीं हैं। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों, अपराध की गंभीरता, दंड की मात्रा तथा उस ढ़ंग, जिस ढ़ंग से ये दोनों अपीलार्थीगण मृतक की हत्या के अपराध में संलिप्त हैं, को देखते हुए हम दंडादेश को निलंबित करने के इच्छुक नहीं हैं तथा दंडादेश को निलंबित करने के आग्रह में कोई गुण नहीं है।

6. अतएव, इसे एतद द्वारा खारिज किया जाता है।

ekuuh; vkykkd flg] U;k;efr

राकेश कुमार रजक

cuke

झारखंड पर्यटन विकास निगम एवं अन्य

W. P. (C) No. 7302 of 2012. Decided on 24th January, 2013.

बिहार मकान (पट्टा, किराया एवं निष्कासन) नियंत्रण अधिनियम, 1982—धारा 5—उचित किराये का निर्धारण—मकान मालिक एक पक्षीय रूप से किराया नहीं बढ़ा सकता, परन्तु मकान मालिक एवं किरायेदार पारस्परिक सहमति के अनुसार किराया बढ़ाने पर सहमत हो सकते हैं तथा पारस्परिक सहमति की दशा में, उपयुक्त किराये के निर्धारण के लिए अधिनियम की धारा 5 के अधीन किराया नियंत्रक के पास जाने की कोई आवश्यकता नहीं है—याची को आशंका थी कि किराया नियंत्रक संभवतः उच्चतर दर पर किराया निर्धारित करेगा और उसने वर्धित किराया स्वीकार कर लिया था—अब, याची यह कहने से विबंधित है कि मकान मालिक ने किराया बढ़ाया है—किरायेदार-याची प्रति महीने 30 रुपये प्रति वर्ग फुट की दर से किराया देने के लिए कर्त्तव्यबद्ध है, तथापि, उस अवधि के लिए याची से कोई किराया वसूला नहीं जा सकता जब दुकान पर निगम का ताला लगा हुआ था। (पैराएँ 3 से 6)

अधिवक्तागण.—Mr. Shresth Gautam, For the Petitioner; Mr. Sumeet Gadodia, For the Respondents.

आदेश

प्रश्नाधीन दुकान दिनांक 19.5.2000 के पट्टा विलेख के माध्यम से याची को किराये पर दी गयी थी। जैसा कि पट्टा विलेख, परिशिष्ट सं॰ 1 के खंड 1 में अनुध्यात है, 6 रुपये प्रति वर्ग फीट प्रति वर्ष की दर से प्रारंभ में आधार किराया निर्धारित किया गया था। वर्ष 2010 में, प्रत्यर्थी-मकान मालिक ने बिहार भवन (पट्टा, किराया एवं निष्कासन) नियंत्रण अधिनियम, 1982 (संक्षेप में 'अधिनियम') के अधीन उपयुक्त किराये के निर्धारण के लिये एक याचिका दाखिल की थी जिसे BBC केस सं॰ 39 वर्ष 2010 के तौर पर पंजीकृत किया गया था। उपयुक्त किराये के निर्धारण के लिए किराया नियंत्रक के समक्ष मामले के लंबित रहने के दौरान, निगम-मकान मालिक ने विभिन्न किरायेदारों से बातचीत करके प्रति महीने 30 रुपये प्रति वर्ग फीट की दर से किराया बढ़ाने का निर्णय लिया था जिसके परिणामतः उपयुक्त किराये के निर्धारण के लिए एक लंबित मामले में याची ने एक आवेदन प्रस्तुत किया था उसमें यह कथन करते हुए कि मकान मालिक ने प्रति महीने 30 रुपये प्रति वर्ग फीट की दर से किराया बढ़ाया है तथा निर्धारित किया, अतएव, उपयुक्त किराये के अभिनिर्धारण के लिए मामला आवश्यक रूप से हटा दिया जाना चाहिए। मामले के लंबित रहने के दौरान, निगम ने 30.7.2011 को दुकान में ताला लगा दिया था। याची को दुकान में ताला लगाने की निगम- मकान मालिक की कार्रवाई को चुनौती देते हुए इस न्यायालय के समक्ष WPC सं॰ 4166 वर्ष 2011, राकेश कुमार रजक बनाम झारखंड राज्य पर्यटन विकास निगम, दाखिल करना पड़ा था। अपनी गलती को समझते हुए, निगम ने दुकान का ताला खोलने का निर्णय लिया था तथा WPC सं॰ 4166 वर्ष 2011 में इस न्यायालय में एक कथन किया गया था कि निगम ताला हटा देगा तथा एक सप्ताह के भीतर याची को शांतिपूर्ण रूप से कब्जा सौंप देगा। निगम के बयान को अभिलिखित करके इस प्रकार इस न्यायालय ने दिनांक 19.9.2012 के आदेश से रिट याचिका निस्तारित कर दिया था। 24.10.2012 को ताला खोलने के उपरांत दुकान का कब्जा याची के हवाले कर दिया गया था। इस दौरान, याची समेत विभिन्न किरायेदारों द्वारा किये गये ऐसे कथनों के आधार पर कि निगम ने प्रति महीने 30 रुपये प्रति वर्ग फीट की दर से किराया बढ़ाया है, अतएव उपयुक्त किराया को निर्धारित करने की कोई आवश्यकता नहीं है, दिनांक 16.9.2011 के निर्णय से उपयुक्त किराये के निर्धारण के लिए निगम द्वारा दाखिल मामला वापस ले लिया गया था। निगम ने प्रति महीने 30 रुपये प्रति वर्ग फीट

की दर से किराये के भुगतान की मांग करते हुए दिनांक 22.10.2012 की आक्षेपित नोटिस, परिशिष्ट सं॰ 7 निर्गत की है। व्यथित अनुभव करते हुए, याची ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय की रिट अधिकारिता का आलम्ब लिया है।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता श्री श्रेष्ठ गौतम ने अधिनियम की धारा 4 एवं 5 को निर्दिष्ट करते हुए जोरदार रूप से तर्क दिया है कि निगम को एक पक्षीय रूप से 30 रुपये प्रति वर्ग फीट की दर से किराया बढ़ाने की कोई अधिकारिता ही नहीं है। उन्होंने यह भी निवेदन किया है कि अधिनियम की धारा 5 के अधीन केवल किराया नियंत्रक के निर्देशानुसार किराया बढ़ाया जा सकता है।

3. जैसा कि इसमें ऊपर सम्परीक्षित किया गया है, निगम ने किराया नियंत्रक के समक्ष उपयुक्त किराये के निर्धारण हेतु एक आवेदन दाखिल किया था तथा उपयुक्त किराये के निर्धारण के लिए मामले के लंबित रहने के दौरान, निगम ने विभिन्न किरायेदारों से विचार विमर्श करके प्रति महीना 30 रुपया प्रतिवर्ग फीट की दर से किराया बढ़ाने का प्रस्ताव रखा था। प्रति महीना 30 रुपये प्रति वर्ग फीट की दर से किराया बढ़ाने का प्रस्ताव प्राप्त होने पर, याची ने इस बढ़ोत्तरी का विरोध नहीं किया था, अपितु उसने स्वयं उपयुक्त किराये के निर्धारण के लंबित मामले में कार्यवाही को हटा लेने के लिए एक आवेदन दाखिल किया था। इसकी दृष्टि में, यह अनुमान लगाया जा सकता है कि याची को आशंका थी कि किराया नियंत्रक संभवत: उच्चतर दर पर किराया निर्धारित करेगा, अतएव, उसने बढ़ाया गया किराया स्वीकार कर लिया था और परिणामत: स्वयं मामले में कार्यवाही न करने का किराया नियंत्रक से इस दृष्टि में एक आग्रह किया था कि मकान मालिक ने प्रति महीने 30 रुपये प्रति वर्ग फीट की दर से किराया बढ़ा दिया था।

4. इसमें कोई संदेह नहीं है कि मकान मालिक एक पक्षीय रूप से किराया नहीं बढ़ा सकता, परन्तु मकान मालिक एवं किरायेदार पारस्परिक सहमति के अनुसार किराया बढ़ाने पर सहमत हो सकते हैं तथा पारस्परिक सहमति की दशा में, उपयुक्त किराये के निर्धारण हेतु अधिनियम की धारा 5 के अधीन किराया नियंत्रक के पास जाने की कोई आवश्यकता नहीं है।

5. इस न्यायालय की विनम्र राय में, अब याची यह कहने से विबंधित है कि मकान मालिक ने एक पक्षीय रूप से प्रति महीने 30 रुपये प्रति वर्ग फीट की दर से किराया बढ़ा दिया है।

6. अतएव, किरायेदार-याची प्रति महीना 30 रुपये प्रति वर्ग फीट की दर से किराये का भुगतान करने के लिए आबद्ध है, तथापि उस अवधि के लिए याची से कोई किराया नहीं वसूला जा सकता है जिस दौरान दुकान में निगम का ताला लगा हुआ था।

7. तद्नुसार, यह रिट याचिका निस्तारित की जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

मिथिलेश्वर वर्मा एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 4843 of 2006. Decided on 23rd January, 2013.

बिहार अंगीकृत बुनियादी विद्यालय शिक्षक प्रोन्नति नियमावली, 1993—वरीयता—याचीगण को नियमावली, 1993 के प्रभाव में आने के पहले B.Sc प्रशिक्षित वेतनमान प्रदान किया गया था—B.Sc. प्रशिक्षित के वेतनमान पर प्रदत्त प्रोन्नति उन भूतलक्षी तिथियों से प्रभावित होनी थी जिन तिथियों को उन्होंने प्रशिक्षण की अर्हता अर्जित की थी—सुसंगत समय पर B.Sc.

प्रशिक्षित वेतनमान पर याचीगण को प्रदत्त प्रोन्नति उस समय प्रचलित किसी विद्यमान नियमावली या परिपत्र के विरुद्ध नहीं थी—याचीगण ने ऐसी प्रोन्नति प्रदान किये जाने पर निहित अधिकार अर्जित किया था जिसे आक्षेपित आदेश निर्गत करके अर्थहीन किये जाने की इप्सा की गयी है—याचीगण की प्रोन्नति रद्द करने वाला तथा उनकी वरीयता घटाने वाला प्रत्यर्थीगण का आक्षेपित कार्य अपास्त किया जाता है—रिट याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 7 से 10)

निर्णयज विधि.—2009(1) JLJR 338—Relied on.

अधिवक्तागण.—M/s Anoop Kr. Mehta, H.K. Mahato, Ahalya Mahato, For the Petitioners; Mr. yogendra Prasad, For the Respondents.

आदेश

पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना।

2. याचीगण मूलत: प्रत्यर्थी सं॰ 3 जिला शिक्षा अधीक्षक, पश्चिमी सिंहभूम, चाईबासा द्वारा निर्गत ज्ञाप सं॰ 1645 दिनांक 2.5.2006 में अंतर्विष्ट वरीयता सूची को अभिखंडित करने के लिए आए थे क्योंकि याचीगण को श्रेणी-1, अर्थात्, प्रवेशिका प्रशिक्षित वेतनमान के अधीन रखा गया दर्शाया गया था, यद्यपि इन याचीगण के अनुसार वे पहले से ही बिहार अंगीभूत बुनियादी विद्यालय शिक्षक प्रोन्नति नियमावली, 1993 के प्रभाव में आने के पूर्व उन भिन्न-भिन्न तिथियों के प्रभाव से श्रेणी-IV में स्नातक प्रशिक्षित विज्ञान शिक्षक के वेतनमान में थे जिन तिथियों को उन्होंने प्रशिक्षण की अर्हता अर्जित की थी। याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि इन याचीगण को विभिन्न मध्य विद्यालयों में 680-965 के वेतनमान में विज्ञान शिक्षकों के रिक्त पद पर नियुक्त किया गया था।

3. याचीगण के अधिवक्ता ने दिनांक 5.5.1992 के ज्ञापन (परिशिष्ट-2 एवं 2/1), 29.9.1992 के ज्ञापन) (परिशिष्ट-2/2) तथा 3.9.1992 के ज्ञापन (परिशिष्ट 2/3) तथा 9.9.1992 के ज्ञापन में अंतर्विष्ट आदेशों पर भरोसा किया है इसका समर्थन करने के लिए कि इन याचीगण को उन तिथियों के प्रभाव से B.Sc. प्रशिक्षित वेतनमान प्रदान किया गया था जिन तिथियों को उन्होंने शिक्षक प्रशिक्षण की अर्हता अर्जित की थी और उक्त आदेशों के अनुसार याचीगण को सुसंगत समय पर प्रचलित 1640-2900 रुपये का B.Sc. प्रशिक्षित वेतनमान प्रदान किया गया था। इन याचीगण ने आक्षेपित पत्रों को निर्दिष्ट करके कथन किया था कि यह स्पष्टत: दर्शाता है कि याची सं॰ 1 एवं 2 के प्रशिक्षण के अर्जन की तिथियों से संबंधित स्तंभ में ये 8.6.1987 है और याची सं॰ 3, 4 एवं 5 के लिए 24.6.1992 है और इन्हें क्रमश: उक्त सूची के क्रम सं॰ 20, 21, 52, 53 एवं 58 पर दर्शाया गया है। रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान प्रत्यर्थीगण ने याची सं॰ 3, 4 एवं 5 के संबंध में एक आदेश निर्गत किया था, जो परिशिष्ट-10 श्रृंखला में अंतर्विष्ट है, जिसके द्वारा स्नातक प्रशिक्षित विज्ञान शिक्षक के वेतनमान का उन्हें प्रदान किया जाना तात्पर्यित रूप से अंकेक्षण अभ्यापत्ति के आधार पर अवैधानिक कथन नियमावली के विरुद्ध अभिनिर्धारित किया गया था।

4. याचीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि उक्त आदेशों द्वारा, जिन्हें इस न्यायालय द्वारा आई॰ सं॰ 558 वर्ष 2007 के अनुज्ञात कर दिये जाने के अनुसरण में चुनौती दी गयी है, इन याचीगण को प्रदत्त B.Sc. प्रशिक्षित वेतनमान की प्रोन्नति भी रद्द कर दी गयी है। अतएव, याचीगण के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रत्यर्थीगण की आक्षेपित कार्रवाई दर्जे, श्रेणी-I से श्रेणी-IV में वेतनमान के घटाये जाने के समतुल्य है जिसका याचीगण 1987 से 1992 के दौरान ऐसे प्रशिक्षण की अपनी अर्हता का अर्जन करने की भिन्न भिन्न तिथियों से B.Sc. प्रशिक्षित वेतनमान प्रदान किये जाने के कारण उपभोग कर रहे थे। याचीगण के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि बिहार अंगीकृत बुनियादी विद्यालय शिक्षक नियमावली, 1993, जिस पर प्रत्यर्थीगण द्वारा भरोसा किया गया है, को भविष्यलक्षी रूप से प्रयोज्य अभिनिर्धारित किया गया

है तथा 2009(1) JLJR 338 में रिपोर्ट किये गये 5.12.2008 के निर्णय के माध्यम से **अरविंद भूषण डे** एवं अन्य सदृश मामलों में इस न्यायालय द्वारा प्रदत्त निर्णय की दृष्टि में, यह निवेदन किया गया है कि 1.3.2012 को निर्णित **CWJC सं० 2115 वर्ष 2001** में **बिजेंद्र कुमार सिन्हा** के मामले में भी इस न्यायालय द्वारा बाद में उक्त निर्णय का अनुसरण किया गया है। अतएव, याचीगण के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आक्षेपित कार्रवाईयां पूर्णत: मनमानी, अवैधानिक एवं विधि में असमर्थनीय हैं। याचीगण ने 1993 की नियमावली के प्रभाव में आने के पहले सुसंगत समय पर सक्षम प्राधिकार द्वारा पारित वैध आदेशों के आधार पर क्रमश: 1987 एवं 1992 में B.Sc. प्रशिक्षित वेतनमान में बने रहने के कारण निहित अधिकारों को अर्जित किया है जिन्हें प्रत्यर्थी-प्राधिकारों द्वारा आक्षेपित आदेशों के माध्यम से छीना जा रहा है। यह भी निवेदन किया गया है कि दर्जे के अल्पीकरण के समतुल्य यह कार्रवाईयां केवल भारत के संविधान के अनुच्छेद 309 से 311 के प्रावधान के अनुसार ही की जा सकती हैं।

5. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण-राज्य के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वह सूची, जो कि रिट याचिका में परिशिष्ट-5 के तौर पर संलग्न है और जिसे चुनौती दी गयी है, केवल सिंहभूम जिले के भीतर कार्यरत प्राथमिक शिक्षकों की अस्थायी औपबंधिक पदक्रम सूची है। तथापि, याचीगण एवं अन्य शिक्षकों के लिये, जो उस पदक्रम सूची द्वारा व्यथित अनुभव करते हैं, समर्थनकारी दस्तावेजों के साथ अपनी अभ्यापत्तियां दाखिल करने का विकल्प खुला है ताकि अंतिम सूची तैयार करने के पहले उनके दावे की संवीक्षा की जा सके। याचीगण द्वारा अपनी अभ्यापत्तियां दर्ज करा दिये जाने की दशा में, इन पर विहित नियमावली के अनुसार विचार किया जाएगा। प्रत्यर्थीगण ने I.A. सं० 558 वर्ष 2007 के अपने जवाब में संशोधन के आग्रह के जवाब में यह भी कथन किया है कि जिला स्थापना समिति के निर्णय के आधार पर अंकेक्षण अभ्यापत्तियों के अनुसरण में यह आदेश पारित किये गये हैं और उक्त अंकेक्षण अभ्यापत्तियों का अनुपालन करने के लिए परिशिष्ट-10 श्रृंखला पर मौजूद आक्षेपित आदेश पारित किये गये हैं।

6. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को विस्तार से सुना है तथा अभिलेख पर मौजूद सुसंगत सामग्रियों का अवलोकन किया है। परिशिष्ट-10 में अंतर्विष्ट आक्षेपित आदेशों के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थीगण इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि 1993 की नियमावली 1.1.1986 के प्रभाव से प्रयोज्य थी और तद्नुसार, श्रेणी-IV, अर्थात् B.Sc. प्रशिक्षित वेतनमान के अधीन प्रोन्नत किये जाने हेतु विचारित किये जाने के लिए ग्रेड श्रेणी-1, अर्थात्, प्रवेशिका-इंटरमीडियट वेतनमान के अधीन शिक्षकों के लिए 8 वर्षों की अवधि तक उक्त वेतनमान में रहने की आवश्यकता है। इन याचीगण को 8 वर्षों की कालावधि की पूर्वोक्त अपेक्षा का अनुपालन किये बिना B.Sc. प्रशिक्षित वेतनमान पर प्रोन्नति प्रदान किया गया पाया गया था तथा अंकेक्षण अभ्यापत्ति के आधार पर उनकी पिछली प्रोन्नति तथा वेतनमान प्रदान किये जाने को रद्द करते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया गया है तथा नयी पदक्रम के सूची के आधार पर प्रोन्नति प्रदान करने के लिए आदेश भी निर्गत किया था।

7. यह मुद्दा कि 1993 की नियमावली 1.1.1986 के प्रभाव से प्रयोज्य बनायी गयी थी या भविष्य लक्षी प्रकृति की है, इस न्यायालय द्वारा **अरविंद भूषण डे (ऊपर)** के मामले में विचार की विषय वस्तु थी। उक्त मामले में याचीगण उस तिथि के प्रभाव से स्नातक प्रशिक्षित वेतनमान प्रदान किये जाने के लिए न्यायालय गये थे जिस तिथि को उन्होंने शिक्षक प्रशिक्षण अर्जित किया था। जो मुद्दा उठाया गया था तथा इस न्यायालय द्वारा विचारित किया गया था, उसे उक्त निर्णय के पैरा 7 में इंगित किया गया है। मुद्दों में से एक यह था कि क्या याचीगण को प्रोद्भूत, निहित एवं वैधानिक अधिकार को छीनते हुए 1993 के नियमावली को 1986 से भूतलक्षी प्रभाव प्रदान किया जा सकता है। उक्त निर्णय के पैरा 11 में इस न्यायालय द्वारा उक्त प्रश्न का जवाब दिया गया है जिसे इसमें नीचे उत्कथित किया गया है:

*^^ijk 11- jkT; d fo}ku vfèkoDrk dk ;g rd fd ikUufr fu;ekoyh] 1993 1 tuojh] 1986 l iHkkoh gb Fkh vkj ;g Hkh fd inØe l rkRi; orueku g rFkk ;kphx.k Lukrd foKku if'kf{kr orueku d gdnkj ugh Fk D;kfd mUgku 1989 e gh viu if'k{k.k dh vgrk ikIr dh Fkh] Hkked ,o v leFkuh; gA jkT; d fo}ku vfèkoDrk u ;g Hkh fuonu fd;k g fd fdlh Hkh fLFkfr e fu;e Hkry{kh iHkko l 1986 l ykx gkxkA ;g rd Hkh nk"ki.k g rFkk LFkkfir fofèk d fo#) gA***

8. वर्तमान मामले में उन तथ्यों, जिन्हें अभिलेख पर लाया गया है, से यह विवादित नहीं है कि इन याचीगण को परिशिष्ट–2 श्रृंखला में अंतर्विष्ट आदेशों के द्वारा नियमावली, 1993 के प्रभाव में आने के पहले अर्थात्, 1993 के पहले स्नातक प्रशिक्षित वेतनमान प्रदान किया गया था। स्नातक विज्ञान प्रशिक्षित वेतनमान पर प्रदत्त उक्त प्रोन्नति उन तिथियों से प्रभावी होनी थी जिन तिथियों को उन्होंने प्रशिक्षण की अर्हता अर्जित की थी। याची सं० 1 एवं 2 ने उक्त प्रशिक्षण वर्ष 1987 में अर्जित किया था जबकि अन्य तीन याचीगण ने वर्ष 1992 में उक्त प्रशिक्षण अर्जित किया था। तत्पश्चात् ये याचीगण ऐसी प्रोन्नति प्रदान किये जाने पर आक्षेपित आदेशों तथा वरीयता सूची के निर्गत होने तक B.Sc. प्रशिक्षित वेतनमान में बने रहे थे। इन परिस्थितियों में स्पष्ट रूप से सुसंगत समय पर याचीगण को B.Sc. प्रशिक्षित वेतनमान पर प्रदान की गयी प्रोन्नति उस समय प्रचलित किसी विद्यमान नियमावली या परिपत्र के विरुद्ध नहीं थी क्योंकि 1993 की नियमावली को 1993 में इसकी अधिसूचना के उपरांत भविष्यलक्षी प्रकृति का अभिनिर्धारित किया गया है। प्रत्यर्थीगण की आक्षेपित कार्रवाई प्रथम दृष्टया याचीगण के दर्जे में कमी करने के समतुल्य है जिसे केवल भारत के संविधान के प्रावधान के अधीन यथा अनुबद्ध विधि के अंतर्गत अधिकथित प्रक्रियाओं के अनुसार ही किया जा सकता है। अतएव, याचीगण ने ऐसी प्रोन्नति प्रदान किये जाने के कारण निहित अधिकार अर्जित किया है, जिसे परिशिष्ट–10 श्रृंखला के माध्यम से आदेश निर्गत करके निष्फल करने की इप्सा की गयी है और परिशिष्ट–5 में अंतर्विष्ट वरीयता सूची में उन्हें श्रेणी–1 के अधीन दर्शाया गया है।

9. परिचर्चा किये गये तथ्यों एवं परिस्थितियों की संपूर्णता में तथा इसमें ऊपर इंगित किये गये कारणों से, याचीगण की प्रोन्नति को रद्द करनेवाली तथा वरीयता सूची में उन्हें श्रेणी–1 के अधीन दर्शानेवाली भी प्रत्यर्थीगण की आक्षेपित कार्यवाही विधि में समर्थित नहीं की जा सकती, क्योंकि, यह 1993 की नियमावली के प्रभावी होने के पहले प्रोद्‌भूत निहित अधिकारों को छीन लेने के तुल्य है। तदनुसार, परिशिष्ट–10 श्रृंखला के द्वारा विधि की प्रक्रियाओं का अनुपालन किये बिना दर्जे/श्रेणी में कमी करने के तुल्य आक्षेपित कार्यवाही निरस्त की जाती है। जहां तक श्रेणी–1 के अधीन याचीगण को दर्शाने वाली परिशिष्ट–5 में अंतर्विष्ट सूची का सवाल है, उन्हें भी असमर्थनीय अभिनिर्धारित किया जाता है जहां तक यह याचीगण से संबंधित है। प्रत्यर्थीगण तद्नुसार वरीयता सूची की परिशुद्धि के लिए उपाय करेंगे।

10. रिट याचिका पूर्वोक्त निबंधनों में अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vkykd flg] U;k;efr

नजमा खातून एवं अन्य

cuke

बीबी हलिमा खातून

S.A. No. 15 of 1997 (R). Decided on 18th January, 2013.

सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अपील।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—धारा 100—वादी-प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल वाद अपीलार्थीगण-प्रतिवादीगण को सम्पत्तियों के किरायेदारों से किराया न वसूलने का निर्देश देते हुए डिक्री किया गया—वादी पक्षकारों के पिता द्वारा निष्पादित दो निबंधित विक्रय विलेखों के माध्यम से विवादित सम्पत्ति पर अभिधान का दावा कर रहा है—प्रतिवादी यह सिद्ध करने में विफल रही थी कि प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से उसका अभिधान परिपक्व हो गया था—प्रतिकूल कब्जे का दावा सदैव सम्पत्ति के मालिक के विरुद्ध किया जाता है—अज्ञात स्वामी के विरुद्ध प्रतिकूल कब्जे का अभिवाक नहीं हो सकता—जिस क्षण प्रतिवादी अभिवाक लेता है कि उसने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से वादी के विरुद्ध अभिधान परिपक्व कर लिया है, वादी का अभिधान सिद्ध उपधारित कर लिया जाएगा—अपीलार्थी यह नहीं दर्शा सकी थी कि वादी के पक्ष में उसके पिता द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख कपट के परिणाम हैं—व्ययों के साथ अपील खारिज।

(पैराएँ 12 से 15)

अधिवक्तागण.—M/s L.K. Lal, K.K. Ambastha, A.K. Sinha, Sandeep Verma, For the Appellants; M/s V.K. Prasad, A.K. Verma, For the Respondent.

न्यायालय द्वारा.-सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन दाखिल वर्तमान दूसरी अपील में, T.S. सं. 42 वर्ष 1981 बीबी हलिमा खातून बनाम हाजीमुइद्दीन एवं अन्य में अपर मुंसिफ, गुमला द्वारा पारित दिनांक 11.4.1991 के निर्णय तथा डिक्री एवं प्रथम अपील-अभिधान अपील सं॰ 25 वर्ष 1991, हाजीमुइद्दीन एवं अन्य बनाम बीबी हलिमा खातुन- में जिला न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 25.2.1997 के निर्णय की भी आलोचना की जा रही है, जिसके द्वारा विद्वान मुंसिफ ने वादी को कब्जा रखनेवाला स्वामी घोषित करते हुए वादी-प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल वाद डिक्री कर दिया था तथा प्रश्नाधीन सम्पत्तियों के किरायेदारों से किराया वसूलने/संकलित करने से भी प्रतिवादी को निर्बंधित कर दिया था। प्रतिवादी द्वारा दाखिल प्रथम अपील प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गयी थी।

2. अन्य के साथ-साथ वर्तमान मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि वादी एवं मूल प्रतिवादी सं॰ 1, दोनों ही स्वर्गीय शेख नियामत मियाँ के पुत्री एवं पुत्र हैं। वादी ने अपने आप को सम्पत्ति का स्वामी घोषित करने के लिए तथा प्रश्नाधीन सम्पत्ति के विभिन्न हिस्सों का अधिभोग कर रहे विभिन्न किरायेदारों से किराया वसूल/एकत्रित न करने से भी प्रतिवादी को निर्बंधित करते हुए स्थायी निषेधात्मक व्यादेश के लिए मूल वाद दाखिल किया था। स्वर्गीय शेख नियामत मियां, जो कि पक्षकारों का पिता था, द्वारा अभिकथित रूप से निष्पादित दिनांक 17.3.1958 एवं 25.6.1956 के दो निबंधित विक्रय विलेखों के माध्यम से विवादित सम्पत्ति पर अपने अभिधान का दावा कर रही है। वादी का आगे यह मामला है कि वादी ने उसके पिता से सम्पत्ति खरीदने के उपरांत इस पर इमारत का निर्माण कर लिया है तथा सम्पत्ति के विभिन्न हिस्सों को विभिन्न किरायेदारों को किराये पर लगा दिया है। प्रतिवादी वादी का सगा भाई होने के कारण वादी द्वारा उसके द्वारा लगाये गये किरायेदारों से उसकी ओर से किराया एकत्रित करने के लिए प्राधिकृत किया गया था। प्रतिवादी वादी की ओर से लंबे समय तक किराया संकलित करता रहा था परन्तु अचानक ही उसने कपटपूर्ण आशय के साथ सम्पत्ति पर अभिधान का दावा करना प्रारंभ कर दिया था, अतएव, घोषणा के लिए और स्थायी व्यादेश के लिए या प्रतिवादी के विरुद्ध विकल्प में कब्जे की डिक्री के लिए वाद दाखिल करने की आवश्यकता हुई थी।

3. प्रतिवादी संख्या 1 ने अपना लिखित कथन यह बचाव लेते हुए दाखिल किया है कि अभिकथित रूप से शेख नियामत मियां द्वारा निष्पादित दिनांक 17.3.1958 एवं 25.6.1956 के विक्रय विलेख मिथ्या एवं जाली दस्तावेज हैं तथा वस्तुतः कभी भी शेख नियामत मियां द्वारा निष्पादित नहीं किये गये थे। उसका

आगे बचाव यह है कि उसने स्वयं सम्पत्ति के विभिन्न हिस्सों में किरायेदार लगाये थे तथा उसके स्वामी तथा मकान मालिक के तौर पर किराया एकत्रित करता रहा है। उसका आगे बचाव है कि वाद अभित्यजन, प्रतिकूल कब्जे एवं परिसीमा द्वारा वर्जित है।

4. विद्वान विचारण न्यायालय ने 7 मुद्दे विरचित किये हैं जिन्हें इसमें नीचे प्रत्युत्पादित किया गया है:

eí %

*1- D;k okn voeY;kfdr g *

2- D;k okn vfHkR;tu] ifrdy dCt ,o ifjlhek dh fofèk }kjk oftr g

3- D;k oknh d i{k e 'k[k fu;ker }kjk fu"ikfnr fnukd 17-3-1958 ,o 25-6-1956 d nkuk foØ; foy[k oèk ,o fo'k) g vkj D;k oknh u bu vrj.k foy[kk d ekè;e l okn lEifÙk ij oèk vfHk/kku vftr fd;k g

4- D;k oknh dk okn lEifÙk ij dCtk g

5- D;k ifroknh lO 1 u fdjk;nkjk l fdjk; dh oly d fy, viuh cgu&oknh d ,d vfHkdÙkk d rkj ij dk; fd;k g

6- D;k oknh d ikl okn d fy, oèk okn grd g vkj D;k og nkok fd; x; vurk"kk dk gdnkj g

*7- og vkj fdl vU; vurk"k ;k vurk"kk dh gdnkj g**

5. दोनों पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत समूचे साक्ष्य पर परिचर्चा करके, विद्वान विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि शेख नियामत मियां ने दिनांक 17.3.1958 एवं 25.6.1956 के दो विशुद्ध निबंधित विक्रय विलेखों द्वारा वादी के पक्ष में प्रश्नाधीन सम्पत्ति बेच दी थी; प्रतिवादी प्रतिकूल कब्जा सिद्ध करने में सक्षम नहीं रहा था और यह भी कि वाद अभित्यजन के सिद्धांत या परिसीमा द्वारा वर्जित नहीं था। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा यह भी सम्परीक्षित किया गया है कि प्रतिवादी सं॰ 1 वादी का भाई होने के नाते सम्पत्ति के विभिन्न किरायेदारों से किराया संकलित करने के लिए वादी द्वारा प्राधिकृत किया गया था और, अतएव, वह वादी के एक अभिकर्त्ता के तौर पर किराया एकत्रित करता रहा था।

6. व्यथित अनुभव करते हुए, प्रतिवादी ने प्रथम अपील दाखिल किया था जो दिनांक 25.2.1997 के आक्षेपित निर्णय से खारिज कर दी गयी थी।

7. प्रथम अपील की खारिजी के उपरांत, प्रतिवादी ने वर्तमान दूसरी अपील दाखिल किया है।

8. इस न्यायालय ने अपील को ग्रहण करते समय 3.12.1997 के विधि के दो तात्विक प्रश्न विरचित किये थे।

^^a. D;k voj U;k;ky;k u bl lcèk e dkb eík fojfpr u djd fofèk dh ,d xHkhj =fV dkfjr dh g fd okn ifrdy dCt }kjk oftr g

*b. D;k vihyh; U;k;ky; dk vihykFkhx.k }kjk nkf[ky nlj fyf[kr dFku dk vLohdkj dju dh vfèkdkfjrk g tc fopkj.k U;k;ky; e iR;Fkh }kjk ,lk dkb vfHkokd ugh fy;k x;k Fkk vkj D;k bl dkj.k vihy d U;k;ky; dk lepk fu.k; nf"kr g**

9. हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को विस्तार से सुना है तथा सावधानीपूर्वक अभिलेख का परिशीलन किया है।

10. विधि का तात्विक प्रश्न सं० 1–

विचारण न्यायालय द्वारा यथा विरचित मुद्दा सं० 2 निम्नवत् पठित है :–

*^^D;k okn vfHkkR;tu] ifrdy dCt ,o ifjlhek dh fofèk }kjk oftr g**

11. मुद्दा सं० 2 की दृष्टि में, यह नहीं कहा जा सकता कि अवर न्यायालयों ने प्रतिकूल कब्जे के अभिवाक पर कोई मुद्दा विरचित न करके कोई त्रुटि कारित किया है। वस्तुतः, प्रतिकूल कब्जे के अभिवाक पर, मुद्दा सं० 2 विरचित किया गया था तथा पक्षकारों ने अपने–अपने साक्ष्य पेश किये थे तथा मुद्दा दोनों अवर न्यायालयों द्वारा सिद्ध नहीं पाया गया था, अतएव, विधि का तात्विक प्रश्न सं० 1 उद्‌भूत ही नहीं होता है और दोषपूर्ण रूप से विरचित प्रतीत होता है।

12. इससे भी बढ़कर, मैंने सावधानीपूर्वक अभिलेख पर मौजूद समूची सामग्री का अवलोकन किया है। मेरी सुविचारित राय में, मुद्दा सं० 2 पर यह निष्कर्ष कि प्रतिवादी यह सिद्ध करने में विफल रहा था कि उसने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से अभिधान परिपक्व कर दिया है, सही प्रतीत होता है और किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता इसके साथ नहीं है। अतएव, इसका जवाब अपीलार्थी के विरुद्ध दिया जाता है।

13. <u>विधि का तात्विक प्रश्न सं० 2 :</u>

वर्तमान मामले में, प्रतिवादी/अपीलार्थी का मुख्य बचाव यह है कि प्रतिवादी–अपीलार्थी ने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से अभिधान परिपक्व कर लिया है। वर्तमान अपील में जिरह करते हुए अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिकूल कब्जे के बिंदु पर जोरदार तरीके से बल दिया है। इस न्यायालय की विनम्र राय में, जिस क्षण प्रतिवादी अभिवाक लेता है कि उसने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से वादी के विरुद्ध अभिधान परिपक्व कर लिया है, वादी का अभिधान सिद्ध उपधारित किया जाएगा। प्रतिकूल कब्जे का दावा सदैव सम्पत्ति के स्वामी के विरुद्ध किया जाता है। प्रतिकूल कब्जे का अभिवाक अज्ञात स्वामी के विरुद्ध नहीं हो सकता है। दोनों अवर न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्य का इस प्रभाव का सहवर्ती निष्कर्ष है कि वादी ने दो निबंधित विक्रय विलेखों द्वारा अपने पिता से प्रश्नाधीन सम्पत्ति खरीदी है। तथ्य के सहवर्ती निष्कर्ष में कोई अनुचितता या अवैधानिकता निर्दिष्ट नहीं की गयी है।

4. उपरोक्त परिचर्चा की दृष्टि में, प्रतिवादी–अपीलार्थी यह दर्शाने में सक्षम नहीं है कि वादी के पक्ष में उसके पिता द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख कपट या धोखे के परिणाम हैं। इस प्रकार, मेरी सुविचारित राय में, अपीलीय न्यायालय द्वारा तथा विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय दूषित नहीं है। विधि के तात्विक प्रश्न सं० 2 का भी जवाब अपीलार्थी के विरुद्ध दिया जाता है।

15. विधि के किसी अन्य तात्विक प्रश्न को न तो इंगित किया गया है और न ही उद्‌भूत होता है। इससे भी बढ़कर, मैं दोनों अवर न्यायालयों के निष्कर्षों में कोई अनुचितता या अवैधानिकता नहीं पाता हूं। अतएव, अपील विफल होती है और समूचे व्यय के साथ एतद् द्वारा खारिज की जाती है। प्रत्यर्थी के अधिवक्ता का शुल्क 10 हजार रुपये आकलित किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o ,lñ pn'k[kj] U;k;efrx.k

कल्लू उर्फ बिरेन्द्र यादव उर्फ बिरेन्द्र कुमार उर्फ कल्लू यादव

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (DB) No. 845 of 2008. Decided on 5th February, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389(1)—भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—दंडादेश का निलंबन–हत्या के लिए दोषसिद्धि–दांडिक अपील लंबित है–अपीलार्थी ने पुलिस के समक्ष संस्वीकृति किया है–प्रथम दृष्टया, अपीलार्थी के बताने पर मृत शरीर का भाग कभी बरामद नहीं किया गया था–किंतु, अपीलार्थी के पक्ष में प्रथम दृष्टया मामला है–शर्तों के विरुद्ध दंडादेश निलंबित। (पैराएँ 5 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. R.S. Mazumdar, For the Appellant; Mr. A.P.P.. For the Respondent.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–

आई॰ ए॰ सं॰ 1957 वर्ष 2011

वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन इस आवेदक (अपीलार्थी सं॰ 2) जो सत्र विचारण सं॰ 72 वर्ष 2006 में मूल अभियुक्त सं॰ 2 है, को अधिनिर्णीत दंडादेश के निलंबन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 (1) के अधीन दाखिल किया गया है। वर्तमान अपीलार्थी को सत्र विचारण सं॰ 72 वर्ष 2006 में मुख्यत: भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और भारतीय दंड संहिता की अन्य धाराओं के अधीन भी अपराध के लिए अपर न्यायिक आयुक्त, एफ॰ टी॰ सी॰ VIII, राँची द्वारा दोषसिद्ध किया गया है और आजीवन कारावास का दंडादेश दिया गया है।

2. हमने दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है। अभिलेख पर साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि अभियोजन का संपूर्ण मामला लड़के अर्थात् सूरज कुमार उर्फ डब्लू के मृत शरीर के भाग की बरामदगी पर आधारित है। अभियोजन द्वारा अभिकथित किया गया है कि मृतक के मृत शरीर के भाग की बरामदगी इस अपीलार्थी के बताए जाने पर की गयी थी।

3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने विस्तारपूर्वक अपने मामले पर तर्क किया है और इंगित किया है कि मूल अभियुक्त सं॰ 1 की संस्वीकृति पुलिस द्वारा दिनांक 13 सितंबर, 2005 को सायं 4.30 बजे अभिलिखित की गयी थी। तत्पश्चात्, मूल अभियुक्त सं॰ 2, वर्तमान अपीलार्थी को दिनांक 13.9.2005 को सायं 9 बजे गिरफ्तार किया गया था और तत्पश्चात पुलिस द्वारा उसी दिन रात्रि 8.25 बजे वर्तमान अपीलार्थी का इकबालिया बयान दर्ज किया गया था और मूल अभियुक्त सं॰ 1 राजेश कुमार उर्फ सेथु यादव के बताए जाने पर मृत शरीर का भाग बरामद किया गया था। जब एक बार मृत शरीर के भाग की बरामदगी कर ली गयी थी, वर्तमान अपीलार्थी को गिरफ्तार किया गया था। इस प्रकार, वर्तमान अपीलार्थी के बताए जाने पर किसी मृत शरीर की बरामदगी का कोई भी प्रश्न उद्भूत नहीं होता है।

4. इस प्रकार, वर्तमान अपीलार्थी द्वारा की गयी संस्वीकृति भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 26 के प्रतिकूल है। अन्यथा, सिवाए इसके वर्तमान अपीलार्थी के विरुद्ध कोई साक्ष्य नहीं था। तथाकथित अभिग्रहण सूची भी दिनांक 13 सितंबर, 2005 की है, जिस पर वर्तमान अपीलार्थी का हस्ताक्षर लिया गया था, किंतु विधि की दृष्टि में इसका भी कोई मूल्य नहीं है क्योंकि, दिनांक 13.9.2005 को सायं 5.15 बजे वर्तमान अपीलार्थी को गिरफ्तार तक नहीं किया गया था। वर्तमान अपीलार्थी को उसी दिन अर्थात् दिनांक 13 सितंबर, 2005 को रात्रि 9 बजे गिरफ्तार किया गया था। उसके पहले ही मृतक के मृत शरीर के भाग की बरामदगी की जा चुकी थी। यह तथ्य अन्वेषण अधिकारी (अ॰ सा॰ 9) के साक्ष्य द्वारा समर्थित की गयी है जिन्होंने कथन किया है कि मृतक सूरज कुमार उर्फ डब्लू के मृत शरीर के भाग की बरामदगी अभियुक्त राजेश कुमार उर्फ सेथु यादव के बताए जाने पर की गयी थी। अपीलार्थी के विद्वान

अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि विद्वान विचारण न्यायालय के निर्णय विशेषत: पैरा 14 और पैरा 17 में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा तथ्यों का गलत विवरण दिया गया है। निर्णय में गलत रूप से उल्लेख किया गया है कि सत्र विचारण सं॰ 72 वर्ष 2006 में इन दोनों अभियुक्तगण के बताए जाने पर मृत शरीर बरामद किया गया था। यह अभिलेख पर प्रकट गलती है और, इसलिए, जहाँ तक वर्तमान अपीलार्थी का संबंध है, दोषसिद्धि का आधार ही गलत है और, इसलिए, इस दांडिक अपील में लंबित रहने के दौरान और अंतिम सुनवाई तक विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित किया जा सकता है।

5. हमने राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ और सूचक राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता को सुना है जिन्होंने निवेदन किया है कि मृतक के मृत शरीर के भाग की बरामदगी वर्तमान अपीलार्थी सहित सत्र विचारण के दोनों अभियुक्तगण के बताए जाने पर की गयी थी। दिनांक 13.9.2005 की अभिग्रहण सूची पर वर्तमान अपीलार्थी का हस्ताक्षर है। इस प्रकार, मृतक के मृत शरीर का भाग इस अपीलार्थी के बताए जाने पर बरामद किया गया था और, इसलिए, पुलिस के समक्ष उसकी संस्वीकृति साक्ष्य में ग्राह्य है, क्योंकि उसकी संस्वीकृति मृतक के मृत शरीर के भाग की बरामदगी की ओर ले गयी और इसलिए वर्तमान अपीलार्थी के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है और, इसलिए, दंडादेश के निलंबन के लिए अंतर्वर्ती आवेदन खारिज किए जाने योग्य है।

7. दोनों पक्षों राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख पर साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि वर्तमान अपीलार्थी, जो सत्र विचारण सं॰ 72 वर्ष 2006 में मूल अभियुक्त सं॰ 2 है, के पक्ष में प्रथम दृष्टया मामला है। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम साक्ष्य का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं, किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि मृतक सूरज कुमार उर्फ डब्लू के मृत शरीर के भाग की बरामदगी वर्तमान अपीलार्थी के बताए जाने पर नहीं की गयी थी। हमने मूल अभियुक्त सं॰ 1 की संस्वीकृति का परिशीलन किया है जिसे दिनांक 13.9.2005 को सायं 4.30 बजे दर्ज किया गया है। उसने वर्तमान अपीलार्थी (मूल अभियुक्त सं॰ 2) का नाम दिया है और, इसलिए, वर्तमान अपीलार्थी को उसी दिन रात्रि 9 बजे गिरफ्तार किया गया था। उसकी गिरफ्तारी के पहले सायं 5.15 बजे मृतक सूरज कुमार उर्फ डब्लू के मृत शरीर के भाग की बरामदगी पहले ही की जा चुकी थी। तत्पश्चात्, वर्तमान अपीलार्थी ने दिनांक 13.9.2005 को रात्रि 10.25 बजे पुलिस के समक्ष इकबालिया बयान दिया था। प्रथम दृष्टया, मृत शरीर का भाग इस अपीलार्थी के बताए जाने पर कभी नहीं किया गया था। यह तथ्य आगे अ॰ सा॰ 9 अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य से संपुष्टिकरण पा रहा है जिसने स्पष्टत: अभिसाक्ष्य के पैरा 14 में कथन किया है कि मृतक के मृत शरीर के भाग की बरामदगी मूल अभियुक्त सं॰ 1 राजेश कुमार उर्फ सेथु यादव के बताए जाने पर की गयी थी। इस प्रकार, अभिलेख पर साक्ष्य को देखते हुए वर्तमान अपीलार्थी के पक्ष में प्रथम दृष्टया मामला है।

7. अत:, हम इस दांडिक अपील के लंबित रहने के दौरान सत्र विचारण सं॰ 72 वर्ष 2006 में उक्त नामित वर्तमान अपीलार्थी के विरुद्ध अपर न्यायिक आयुक्त एफ॰ टी॰ सी॰ VIII, राँची द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश को इस शर्त पर निलंबित करते हैं कि वह विचारण न्यायालय के संतुष्टि हेतु समान राशि की दो प्रतिभूतियों के साथ 10,000/- (दस हजार) रुपयों का जमानत बंध पत्र निष्पादित करेगा और इस शर्त

पर भी कि वह जब और जैसे ही उसकी आवश्यकता होगी, इस न्यायालय में उपस्थित रहेगा और इस शर्त पर भी कि वह इस न्यायालय की अनुमति के बिना अपना आवासीय पता नहीं बदलेगा।

8. तद्नुसार, आई॰ ए॰ सं॰ 1957 वर्ष 2011 अनुज्ञात की जाती है और निपटायी जाती है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

दीपक विद्या रतन मेहता

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1375 of 2010. Decided on 4th February, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 498A एवं 406—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—क्रूरता तथा न्यास का दांडिक भंग–संज्ञान–वर्तमान आवेदन के लंबित रहने के दौरान संयुक्त सुलह याचिका दाखिल की गयी है–याची को दोषसिद्ध किए जाने की संभावना नहीं होगी–याची को विचारण की कठोरता भुगतने की अनुमति देना निरर्थक होगा–संज्ञान आदेश अभिखंडित किया गया–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 2 से 4)

अधिवक्तागण.–Mr. Lukesh Kumar, For the Petitioner; Mr. APP, For the State; Mr. Shailesh, For the O.P. No.2.

आदेश

यह आवेदन आरंभ में सी॰ पी॰ केस सं॰ 1404 वर्ष 2006 में पारित दिनांक 2.2.2007 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया था जिसके द्वारा और जिसके अधीन भारतीय दंड संहिता की धाराओं 498A और 406 के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान याची के विरुद्ध लिया गया था किंतु इस आवेदन के लंबित रहने के दौरान पक्षों के बीच सुलह हो गया और, इसलिए, संज्ञान लेने वाले आदेश का अब अभिखंडन इस आधार पर इप्सित किया जा रहा है कि पक्षों ने अपना वैवाहिक विवाद सुलझा लिया है।

2. यह प्रतीत होता है कि वि॰ प॰ सं॰ 2 ने इस अभिकथन पर मामला दर्ज किया कि दहेज मांग पूरी नहीं किए जाने के कारण उसे इस याची द्वारा यातना के अध्यधीन किया जाता था और कि वि॰ प॰ सं॰ 2 का 'स्त्रीधन' याची द्वारा अपने पास रख लिया गया था। ऐसे अभिकथन पर, सी॰ पी॰ केस सं॰ 1404/2006 दर्ज किया गया था, जिसमें अपराधों का संज्ञान लिया गया था जिसे इस न्यायालय के समक्ष याची द्वारा चुनौती दी गयी थी।

3. आगे यह प्रतीत होता है कि पक्षों ने अपना वैवाहिक विवाद सुलझा लिया है और, तद्द्वारा, उन्होंने सुलह कर लिया है और संयुक्त सुलह याचिका दाखिल की गयी है। ऐसी स्थिति में, **बी॰ एस॰ जोशी एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य एवं एक अन्य, (2003)4 SCC 675** और **शिजी उर्फ पप्पू एवं अन्य बनाम राधिका एवं एक अन्य,** 2011 (4) JLJR (SC) 421 **[: 2012 (1) JLJ & BLJ 33 (SC)]** में प्रकाशित में दिए गए निर्णयों की दृष्टि में याची को विचारण की कठोरता भुगतने देना निरर्थक होगा क्योंकि याची को दोषसिद्ध किए जाने की संभावना नहीं होगी। तद्नुसार, दिनांक 2.2.2007 का संज्ञान लेने वाला आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

4. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

प्रताप सिन्हा उर्फ सनत सिन्हा

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 310 of 2012. Decided on 1st February, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 125 एवं 127—भरण-पोषण–त्यक्त पत्नी को भरण-पोषण के रूप में 2000/- रुपया प्रति माह अधिनिर्णीत किया गया–याची ने अवर न्यायालय में किसी गवाह का परीक्षण नहीं किया था और धारा 125 के अधीन कार्यवाही त्यक्त पत्नी की ओर से दिए गए साक्ष्य के आधार पर अनुज्ञात की गयी थी–अवर न्यायालय में धारा 127 के अधीन पक्षों द्वारा आवेदन दाखिल नहीं किया गया था–याची परिवर्तित परिस्थितियों को अभिलेख पर लाते हुए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 127 के अधीन अपना आवेदन दाखिल कर सकता है और अवर न्यायालय स्वयं इसके गुणागुण पर इसे निपटाएगा। (पैराएँ 4 से 7)

अधिवक्तागण.–M/s Rajeev Ranjan, V.K. Trivedi, For the Petitioner; A.P.P., For the State; Mr. D.D. Saha, For the O.P. No.2.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता, राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 जो याची की त्यक्त पत्नी है, के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची दांडिक विविध केस सं॰ 23 वर्ष 2009 में विद्वान प्रधान न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, साहिबगंज द्वारा पारित दिनांक 3.9.2011 के आदेश से व्यथित है, जिसके द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन कार्यवाही में याची को अपनी त्यक्त पत्नी को भरण-पोषण के रूप में 2000/- रुपया प्रतिमाह भुगतान करने का निर्देश दिया गया है।

3. मामले के गुणागुणों में गए, बिना याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि पक्षों के बीच भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन अपराध के लिए एक पृथक दांडिक मामला था, जिसमें वर्तमान विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने दिनांक 3.12.2010 को अभिसाक्ष्य दिया था कि दोनों पक्षों ने मामले में सुलह कर लिया है और वह आगे मामले पर अग्रसर होना नहीं चाहती है। उसने यह कथन भी किया है कि उसने भरण-पोषण के लिए आवेदन दाखिल किया था और उक्त मामले में भी सुलह कर ली गयी है। यह प्रतीत होता है कि उस समय तक अर्थात् दिनांक 3.12.2010 के पहले दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन कार्यवाही में समस्त गवाहों का परीक्षण पत्नी की ओर से किया गया था। तत्पश्चात्, याची ने अवर न्यायालय में किसी गवाह का परीक्षण नहीं किया था और त्यक्त पत्नी की ओर से दिए गए साक्ष्य के आधार पर दिनांक 3.9.2011 के आदेश द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन कार्यवाही ही अनुज्ञात की गयी थी। बाद में, दिनांक 24.2.2012 को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन कार्यवाही में पक्षों द्वारा संयुक्त सुलह याचिका भी दाखिल की गयी थी, किंतु इसे इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया था कि मामला पहले ही निपटा दिया गया था।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि इस मामले के विचित्र तथ्यों और परिस्थितियों में, भले ही दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन कार्यवाही अवर न्यायालय द्वारा निपटा दी गयी थी, अवर न्यायालय को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 127 के अधीन शक्ति का प्रयोग करना चाहिए था जो न्यायालय को परिस्थितियों में परिवर्तन के प्रमाण पर दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन पारित आदेश में आवश्यक परिवर्तन करने की पर्याप्त शक्ति देती है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

5. राज्य के और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है, किंतु वि॰ प॰ सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा स्वीकार किया गया है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन उक्त कार्यवाही को निपटाए जाने के बाद अवर न्यायालय में दोनों पक्षों की ओर से संयुक्त सुलह याचिका दाखिल की गयी थी।

6. दांडिक विविध केस सं॰ 23 वर्ष 2009 में पारित दिनांक 24.2.2012 के आदेश के परिशीलन से प्रतीत होता है कि पक्षों द्वारा केवल संयुक्त सुलह याचिका दाखिल की गयी थी। अवर न्यायालय में, पक्षों द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 127 के अधीन कोई आवेदन दाखिल नहीं किया गया था। मामले के उस दृष्टिकोण में, मेरा सुविचारित मत है कि याची परिवर्तित परिस्थितियों को अभिलेख पर लाते हुए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 127 के अधीन अपना आवेदन दाखिल कर सकता है और अवर न्यायालय स्वयं इसके अपने गुणागुण पर विधि के अनुरूप इसे निपटाएगा।

7. तद्नुसार, यह निर्देश दिया जाता है कि यदि आज के दिन से एक माह के भीतर याची द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 127 के अधीन आवेदन दाखिल किया जाता है, दांडिक विविध केस सं॰ 23 वर्ष 2009 में विद्वान प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, साहिबगंज द्वारा पारित दिनांक 3.9.2011 का आक्षेपित आदेश प्रास्थगन में तब तक रखा जाएगा जब तक अवर न्यायालय द्वारा विधि के अनुरुप दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 127 के अधीन आवेदन निपटाया नहीं जाता है।

8. इन निर्देश एवं संप्रेक्षण के साथ यह दांडिक पुनरीक्षण निपटाया जाता है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

श्री जलज कुमार चटर्जी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Cr. M.P. No. 1371 of 2010. Decided on 6th February, 2013.

खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, 1954—धारा 16 (1) (a) (i)—खाद्य अपमिश्रण निवारण नियमावली, 1955—नियम 32—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—मिसब्रैंडेड चिली पाउडर का विक्रय-संज्ञान–लेबल नियम 32 के अनुरूप नहीं था क्योंकि शब्द ''तीन माह तक सर्वोत्तम'' गहरे अक्षर में नहीं लिखा गया था–वे शब्द पैकेट के ऊपर में हैं, किंतु वे छोटे अक्षर में हैं–नियम का पर्याप्त अनुपालन प्रतीत होता है–आक्षेपित आदेश सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 4 से 11)

निर्णयज विधि.–2010(3) PLJR 31; Cr. M.P. No. 663 of 2009—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. B.P. Pandey, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता और राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री बी॰ पी॰ पांडे निवेदन करते हैं कि दिनांक 21.2.2007 को खाद्य निरीक्षक, राँची ने मेसर्स सुबालाल गोपीलाल जैन, रेडियम रोड, राँची के व्यवसायिक परिसर से 'आर्शीवाद चिली' पाउडर के नमूनों को संग्रहित किया। उक्त नमूना लोक विश्लेषक, खनिज क्षेत्र विकास प्राधिकार (एम॰ ए॰ डी॰ ए॰), धनबाद को इसके विश्लेषण के लिए भेजा गया था। इसका विश्लेषण करवाने के बाद, उसमें रिपोर्ट देते हुए रिपोर्ट दाखिल की गयी थी कि नमूना

'मिसब्रैंडेड' है क्योंकि लेबल खाद्य अपमिश्रण निवारण नियमावली, 1955 के नियम 32 के अनुरुप नहीं था क्योंकि शब्दों ''तीन माह तक सर्वोत्तम'' गहरे अक्षर में नहीं लिखा गया था।

3. रिपोर्ट के दाखिले पर, दिनांक 30.5.2007 को मंजूरी प्रदान की गयी थी और तद्द्वारा परिवाद दर्ज किया गया था जिसे C-IV केस सं॰ 3 वर्ष 2007 के रूप में दर्ज किया गया था जिसमें खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम की धारा 16 (1) (a) (i) के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान याची के विरुद्ध लिया गया था। वह आदेश चुनौती के अधीन है।

4. याची के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री बी॰ पी॰ पांडे निवेदन करते हैं कि यह सत्य है कि उन शब्दों को गहरे अक्षरों में लिखे जाने की आवश्यकता है किंतु यह वहाँ नहीं है किंतु निश्चय ही वे शब्द पैकेट के ऊपर हैं और इसलिए, इसे उक्त नियमावली के नियम 32 का पर्याप्त अनुपालन के रूप में माना जा सकता है और इस स्थिति के अधीन, याची को अभियोचित करना अपेक्षणीय नहीं है। अपने निवेदन के समर्थन में उन्होंने **एम॰ डी॰ आनन्द एक्वा बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य,** [2010 (3) PLJR 31] और **ऑस्कर जोसेफ एवं एक अन्य बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य** के मामले में दिए गए एक निर्णय पर भरोसा किया है। देखें इस न्यायालय द्वारा दिनांक 28.3.2012 को विनिश्चित दांडिक एम॰ पी॰ सं॰ 663 वर्ष 2009 के तहत)।

5. अधिनियम की धारा 2 (ix) में मिस ब्रैंडेड को परिभाषित किया गया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*(ix) ^^fel cMM**&[kk| oLr dk fel cMM le>k tk,xk*

(k) ;fn ;g bl vfèkfu;e vFkok bld vèkhu cuk;h x;h fu;ekoyh dh vko';drkvk d vu:i ugh gA

6. अत:, अभियोजन का मामला भी अधिनियम की धारा 2 (ix) की उपधारा (k) के अंतर्गत आता है।

7. अधिनियम का नियम 32 परिकल्पित करता है कि माह और वर्ष जिस तक उत्पाद उपभोग के लिए आधारित है, नीचे उपदर्शित तरीके में बड़े अक्षरों में लिखा जाना चाहिए।

*^^----------ekg vkj o"k rd lokZe***

8. अभियोजन का मामला यह है कि वे शब्द पैकेट के ऊपर है किंतु वे छोटे अक्षरों में है। उस स्थिति में, नियम का पर्याप्त अनुपालन प्रतीत होता है।

9. ऐसी स्थिति के अधीन, याची का अभियोजन अनपेक्षणीय प्रतीत होता है।

10. तद्नुसार, सबडिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी, राँची के न्यायालय में लंबित दिनांक 3.7.2007 के आदेश सहित सी॰–IV केस सं॰ 3 वर्ष 2007 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

11. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ,p lh feJk] U;k;efr

पंकज कुमार मेहता

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 964 of 2012. Decided on 1st February, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 451—शराब का अधिहरण–शराब के स्वामित्व, जिसे इस मामले में प्रथम दृष्टया स्थापित नहीं किया जा सका था, पर संदेह के आधार पर जब्त शराब

की निर्मुक्ति के लिए आवेदन अस्वीकार किया गया–शराब के स्वामित्व के बारे में वास्तविक संदेह की दृष्टि में प्रश्नगत शराब को निर्मुक्त करने से इनकार करते हुए अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है–याची को विरोधी दावेदार के साथ अवर न्यायालय में आवेदन देने की स्वतंत्रता दी गयी। (पैराएँ 7 से 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Prabhat Kumar Sinha, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ सुने गए।

2. याची तातीझरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 9 वर्ष 2012, जी॰ आर॰ सं॰ 671 वर्ष 2012 के तत्सम में पारित श्री संजय सिंह यादव, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, हजारीबाग के दिनांक 29.6.2012 के आदेश से व्यथित है, जिसके द्वारा मामले के संबंध में जब्त शराब की निर्मुक्ति के लिए आवेदन अवर न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दियाा गया है।

3. तातीझरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 9 वर्ष 2012 की प्राथमिकी दर्शाती है कि परिवहन के दौरान विदेशी शराब से लदे वाहन को पकड़ा गया था, किंतु वाहन का चालक इसके लिए दस्तावेज प्रस्तुत नहीं कर सका था। किंतु, उसने पुलिस को सूचित किया कि शराब किसी श्रवण कुमार की थी जिसने परिवहन के लिए परेषित परिमाण लदवाया था। याची ने बाद में जब्त शराब का स्वामी होने का दावा करते हुए प्रश्नगत शराब की निर्मुक्ति के लिए आवेदन दाखिल किया क्योंकि इसे दिनांक 4.3.2012 को किसी मेसर्स चंद्रशेखर झा, हजारीबाग से खरीदा गया था। याची ने अनुज्ञप्ति धारक होने का दावा भी किया और तद्नुसार, उसने इस मामले के संबंध में जब्त शराब की निर्मुक्ति के लिए आवेदन दाखिल किया।

4. अवर न्यायालय ने पाया है कि संपत्ति का स्वामित्व संदेहास्पद था, क्योंकि याची ने शराब का स्वामी होने का दावा किया, जबकि प्राथमिकी दर्ज किए जाने के समय पर पुलिस को सूचित किया गया था कि यह किसी श्रवण कुमार का था। अवर न्यायालय ने यह भी पाया कि याची को इस मामले में अभियुक्त नहीं बनाया गया था और तद्नुसार, प्रश्नगत शराब की निर्मुक्ति के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश बिल्कुल अवैध है, क्योंकि याची ने उसके द्वारा खरीदी गयी शराब के संबंध में दस्तावेज प्रस्तुत किया था और इसके लिए अनुज्ञप्ति भी प्रस्तुत किया था जिसे वास्तविक पाया गया था। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यह सुयोग्य मामला है जिसमें शराब याची के पक्ष में निर्मुक्त की जानी चाहिए।

6. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है।

7. आक्षेपित आदेश से यह प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय ने शराब के स्वामित्व, जिसे इस मामले में प्रथम दृष्टया स्थापित नहीं किया जा सका था, पर संदेह के आधार पर याची की प्रार्थना को अस्वीकार किया है। मामले के तथ्यों में, मैं शराब के स्वामित्व के बारे में वास्तविक संदेह की दृष्टि में प्रश्नगत शराब को निर्मुक्त करने से इनकार करते हुए अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता नहीं पाता हूँ।

8. इस स्थिति से सामना होने पर, याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि वह इस बयान के साथ कि जब्त संपत्ति श्रवण कुमार की नहीं थी बल्कि यह याची की थी, अवर न्यायालय में उक्त श्रवण कुमार के साथ संयुक्त आवेदन दाखिल करेगा। यदि याची अवर न्यायालय में ऐसा आवेदन दाखिल करता है, अवर न्यायालय अपने पूर्व आदेश से पूर्वाग्रहित हुए बिना विधि के अनुरुप इसे निपटाएगा।

9. तद्नुसार, यह दांडिक पुनरीक्षण उक्त संप्रेक्षण के साथ निपटाया जाता है।